इस्लाम की दावत

मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी

विषय-सूची

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'शुरू अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान निहायत रहमवाला है'

ग्यारहवें संशोधित उर्दू संस्करण के बारे में

इस्लाम अल्लाह का अपने बन्दों के नाम पैग़ाम है। यह पूरी दुनिया के सारे इनसानों के लिए एक दावत है। क़ुरआन ने इस दावत के उद्देश्य, काम के तरीक़े और लोक-परलोक में इसके अंजाम को बड़ी स्पष्टता और विस्तार से बयान किया है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) की पवित्र जीवनी और हदीसों में इस सिलसिले की बेहतरीन रहनुमाई मौजूद है। मैंने क़ुरआन और हदीस की रौशनी में इस विषय को जैसा कुछ और जितना कुछ समझा है, उसके विभिन्न पहलुओं को इस किताब में शब्दों का बेहतर-से-बेहतर जामा पहनाने की कोशिश की है। मैंने दावत को एक जीवन्त विषय के रूप में देखा है और इसी हैसियत से इसे इसमें पेश किया है। मुझे उम्मीद है कि इन पन्नों का अध्ययन करने से यही नहीं कि दावत का साफ़ और स्पष्ट स्वरूप उभरकर सामने आएगा, बल्कि दावत के काम के लिए उत्साह और उमंग महसूस होगी। इस किताब की आकर्षक वर्णन-शैली के कारण कुछ दोस्तों ने प्रेमवश इसे हमारे दावती लिटरेचर की सर्वोत्तम किताब कहा है। मुझे इसके पन्नों के अवलोकन का जब कभी अवसर मिलता है तो कहीं-कहीं आँखों से आँसू टपक पड़ते हैं और शर्मिन्दगी का एहसास दामनगीर होने लगता है कि छोटे मुँह से इसमें बड़ी बातें कही गई हैं और बेबस और कमज़ोर इनसान ने इरादा, साहस और हक़ पर जमे रहने की शिक्षा दी है।

यह किताब अब से पैंतालीस साल पहले 1968 में लिखी गई थी। इसके बाद भी यह विषय मेरे सामने रहा है। इस सिलसिले की कुछ रचनाएँ भी प्रकाशित होती रहीं। मेरा विचार विस्तार से इस किताब की नज़रे-सानी का था। लेकिन अपनी विभिन्न व्यस्तताओं के कारण इस काम में बहुत लम्बा समय लग गया। अल्लाह की मेहरबानी है कि

अब यह ख़िदमत किसी दरजे में पूरी हुई है। मैंने पूरी किताब पर नज़र डाली है। भाषा और शैली दोनों पहलुओं से इसे और अधिक बेहतर और अच्छी बनाने की कोशिश की है। जहाँ तक विषय-वस्तुओं का सम्बन्ध है, कुछ विषय-वस्तुओं में थोड़ा-बहुत संशोधन और सुधार हुआ है। कुछ का क्रम बदल गया है; कुछ को दोबारा लिखा गया है; ख़ास तौर पर दावत के लिए अपेक्षित गुणों के वर्णन में बहुत-सी नई चीज़ें बढ़ाई गई हैं। मेरी एक पुस्तिका 'इस्लाम : एक दीने-दावत' के नाम से बहुत दिनों से प्रकाशित हो रही है। उसका अंग्रेज़ी अनुवाद भी उपलब्ध है। उसकी कुछ चीज़ें इस किताब में शामिल कर ली गई हैं। मेरा मानना है कि अब यह किताब पहले के मुक़ाबले में और अधिक बेहतर रूप में पेश हो रही है। इनसान का कोई काम त्रुटियों से रहित नहीं होता। इसलिए हज़ार कोशिशों के बावजूद किताब में ग़लतियों और ख़ामियों का पाया जाना यक़ीनी है। विद्वानों से निवेदन है कि अगर वे इसमें कोई ग़लती पाएँ तो उससे अवगत कराएँ; अगर अल्लाह ने चाहा तो अगले संस्करण में सुधार कर दिया जाएगा। अल्लाह आपको अच्छा बदला देगा और यह ख़ाकसार दिल की गहराई से शुक्रगुज़ार होगा।

दावत के विषय पर एक और बड़ी किताब लिखी जा रही है। उसमें दावत के कुछ ज्ञानपरक और वैचारिक पहलुओं को उजागर करने की कोशिश की जाएगी। लेखन-शैली भी दावती और विचारपरक होने के बजाय ज्ञानपरक और विश्लेषणात्मक होगी। उसका बड़ा हिस्सा पूरा हो चुका है। दुआ है कि जो हिस्सा रह गया है, अल्लाह तआला जल्द उसे पूरा करने का सौभाग्य प्रदान करे।

إِنَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ وَبِالْإِجَابَةِ جَدِيرٌ.

(अल्लाह सर्वशक्तिमान है और वही हर चीज़ को क़बूल करने की सामर्थ्य रखता है।)

— जलालुद्दीन

10 जनवरी 2012

अन्य भाषाओं में अनुवाद

अल्लाह तआला का एहसान है कि उसने इस किताब को अपनी ख़ास मेहरबानी से लोकप्रियता प्रदान की। अब तक इसके ग्यारह संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। पाकिस्तान से भी इसका प्रकाशन हुआ है। कुछ शिक्षण-संस्थाओं के पाठ्यक्रम में यह शामिल है। अब की बार इसको और अधिक बेहतर बनाने की कोशिश की गई है। किताब के अनुवाद की तरफ़ भी दोस्तों का ध्यान है। तेलुगू और कन्नड़ भाषा में इसका अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध साहित्यकारों और लेखकों की कुछ किताबों के अनुवादक प्रोफ़ेसर उसमान मुहम्मद इक़बाल के क़लम सें इसका अंग्रेज़ी अनुवाद 'इनवाइटिंग टू इस्लाम' (Inviting to Islam) के शीर्षक से एम॰ एम॰ आई॰ पब्लिशर्स (नई दिल्ली) ने प्रकाशित किया है। अब हिन्दी में इसका अनुवाद आपके हाथों में सौंपते हुए ख़ुशी हो रही है। कुछ दूसरी भाषाओं में भी इसका अनुवाद हो रहा है। अल्लाह तआला इन कोशिशों को क़बूल फ़रमाए। इससे लाभ उठाने का दायरा बड़े-से-बड़ा हो और लेखक के लिए परलोक में मुक्ति और मोक्ष का साधन बने। आमीन!

20 जनवरी 2014 ई॰ —जलालुद्दीन

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है।'

भूमिका

इस्लाम ख़ुदा का प्रदान किया हुआ दीन (जीवन-विधान) है। आज का इनसान ख़ुदा से और उसके इस धर्म से लापरवाह और ग़ाफ़िल है, लेकिन यह इतिहास की कोई नई घटना नहीं; बल्कि इसका बहुत पुराना रोग है। उसने बार-बार ख़ुदा से मुँह मोड़ा और उसके दीन से लापरवाही बरती। इसके साथ यह भी एक सच्चाई है कि जब कभी इनसान लापरवाही में पाया गया, ख़ुदा के नेक बन्दों ने उसे जगाने की कोशिश की और ख़ुदा के दीन की तरफ़ उसका ध्यान दिलाया। लेकिन आज के दौर की सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि जिस उम्मत को उसे जगाने और ख़ुदा का दीन उस तक पहुँचाने का हुक्म दिया गया था, वह अपना फ़र्ज़ और ज़िम्मेदारी नहीं पहचान रही है, बल्कि सही अर्थों में उसको इस बात का एहसास तक नहीं है कि ख़ुदा को भूली हुई इस दुनिया में उसे कितना बड़ा काम अंजाम देना है। वह मौत-की सी नींद सो रही है और उसके साथ सारे ही इनसानों पर मौत का आलम तारी है।

इस उम्मत (मुस्लिम उम्मत) का एक अतीत भी है, जबकि ख़ुदा ने आख़िरी बार अपना दीन (जीवन-विधान) अवतरित किया और उसे हुक्म दिया कि वह इस दीन को उसके बन्दों के बीच फैलाए और इसे क़ायम करने और सफल बनाने की हर मुमकिन कोशिश करे। लोगों को भलाई का हुक्म दे और बुराई से रोके; भलाई की राह दिखाए और बुरे कामों से रोके; दुनिया से ज़ुल्म-ज़्यादती को मिटाए और इनसाफ़ क़ायम करे। इस उम्मत ने ख़ुदा के उस हुक्म को दिल से सुना और उसे पूरा

करने के लिए तैयार हो गई। विरोधी शक्तियों ने हर तरह से इसे दबाने की कोशिश की और हर पहलू से इसका मुक़ाबला किया। लेकिन वह इस हौसले और इरादे के साथ मैदान में जमी रही कि या तो ख़ुदा की मर्ज़ी पूरी होगी या वह इस राह में अपना सब कुछ लुटा देगी और जान तक दे देगी। वह अपने इस पक्के इरादे में सच्ची थी। इसलिए विरोधी शक्तियों को आख़िरकार मुँह की खानी पड़ी। हक़ के इनकारियों का परचम झुक गया और ख़ुदा के दीन को जीत हासिल हुई; बुराई का अन्धेरा छट गया और भलाई की सुबह रौशन हुई। यह इस उम्मत की सर्वोत्तम स्थिति थी।

एक मुद्दत तक उम्मत अपनी इस हालत पर क़ायम रही। फिर इसका पतन शुरू हो गया। इसकी वह तड़प कम हो गई जिसने झूठ और असत्य के ख़िलाफ़ इसको मुक़ाबले में ला खड़ा किया था। इसका वह इरादा और हौसला कमज़ोर पड़ गया, जिसकी बदौलत ख़ुदा के दीन को ग़लबा (वर्चस्व) प्राप्त हुआ था। इसका वह जोश और जज़्बा ठंडा पड़ने लगा, जिसने पूरी दुनिया में हलचल पैदा कर दी थी और झूठे विचार और सोच, अपसंस्कृति और सामाजिक रहन-सहन, नैतिक बिगाड़ और गन्दी राजनीति के केन्द्रों को हिलाकर रख दिया था। इस स्थिति में गिरावट आने के बाद इस्लाम दूसरे क्षेत्रों में क्या फैलता ख़ुद इस उम्मत के अन्दर इसके प्रभाव धुन्धले पड़ने लगे; लेकिन इसके बावुजूद अभी तक कुल मिलाकर पूरी उम्मत को इस्लाम के सिद्धान्तों और नियमों पर ईमान और दृढ़ विश्वास था। इसके क़ानून की श्रेष्ठता को वह मानती थी और उसको इस बात से बिलकुल ही इनकार नहीं था कि इस्लाम ही को इनसान की पूरी ज़िन्दगी और उसके सभी मामलों पर शासन और सत्ता का अधिकार प्राप्त है और यहाँ उसी का शासन होना चाहिए। उसके अन्दर इस तरह की बहसें नहीं होती थीं कि ख़ुदा का यह दीन सब पर छा जाने के लिए आया है या यह किसी के अधीन भी रह सकता है। उसका सब पर छा जाना और प्रभावी होना ज़रूरी है या

उसको दूसरों की पराधीनता स्वीकार कर लेनी चाहिए। असत्यवादियों के विरुद्ध मुक़ाबले में डटे रहना इसके लिए सही है या उसके साथ समझौते का रवैया भी यह उम्मत अपना सकती है?

जिस दौर से हम गुज़र रहे हैं, यह शायद इस उम्मत की बदतरीन गिरावट और पतन का बदतरीन दौर है। इसमें उम्मत अमली तौर पर ही नहीं, बल्कि सोच और विचार के स्तर पर भी गिरावट और पतन का शिकार है। इसके अन्दर ऐसे लोग पाए जाते हैं, बल्कि ऐसे लोगों की तादाद तेज़ी से बढ़ रही है, जिनको उन सिद्धान्तों और नियमों ही के बारे में भ्रम और सन्देह है, जिनपर इस्लाम की बुनियाद है। ख़ुदा ने इस उम्मत को जिस बड़े काम पर लगाया था, वह उसके महत्त्व और ऊँचे दरजे को समझने में भी असमर्थ है। इस्लाम की तरफ़ दावत देने और बुलाने तथा उसे क़ायम करने और प्रभावी बनाने के लिए दौड़-भाग करना उनके नज़दीक एक पागलपन का काम है। उनके प्रोग्राम में दुनिया की हर चीज़ शामिल हो सकती है और वे इसपर अमल भी कर सकते हैं, लेकिन दीन की दावत और उसको सफल और प्रभावी बनाने के प्रयास के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती। अधर्म (बातिल) को छेड़ना और उसके विरुद्ध एक साथ खड़े होना उनके नियम के विरुद्ध है। वे उन मुद्दों पर आलोचना करना नहीं चाहते, जो विधर्मियों को प्रिय हैं। वे हर उस काम के लिए क़दम उठाने से बचने ही में अपनी भलाई समझते हैं, जिससे समय के सत्ता-शासकों के माथे पर बल पड़े। उनके मन अच्छे कामों की उस कल्पना से ही ख़ाली हैं, जिसे ख़ुदा ने इस दुनिया में सार्वजनिक रूप से फैलाने का हुक्म दिया है।

यही नहीं इस समय उम्मत में ऐसे लोग भी पाए जाते हैं, जो इस्लाम के नाम पर ही इस्लाम को बुरी तरह बिगाड़ रहे हैं। अगर आप उनको अपनी ज़िन्दगी के मक़सद की तरफ़ आने की दावत दें, तो उनमें ख़ुदा के ऐसे 'नेक बन्दे' मौजूद हैं जो आपको दीन की सच्चाई से अनजान और जाहिल होने का ताना देंगे। अगर आप उनसे कहें कि वे

ख़ुदा के दीन को हर तरफ़ फैलाने और उसे प्रभावी बनाने के लिए अपनी सारी की सारी शक्ति लगा दें, तो उनमें ऐसे चिन्तक पल-बढ़ रहे हैं, जो आपको दीन की मंशा और लक्ष्य से बेख़बर कहेंगे। ख़ुदा का दीन ज़बरदस्त इंक़िलाब चाहता है। लेकिन उसमें ऐसे शोधकर्ताओं की कमी नहीं है जिनके नज़दीक क़ुरआन की हर उस आयत की व्याख्या मौजूद है, जो इस क्रान्ति का बखान करती है। उम्मत के उद्देश्य की हर वह व्याख्या उनके विचार में दीन में बिगाड़ पैदा करना है, जो उनके अन्दर दीन को ज़िन्दा करने का जज़्बा जगाए और अज्ञानता और गुमराही के ख़िलाफ़ मोर्चे पर ला खड़ा करे। सच्चाई यह है कि इस समय ख़ुदा का दीन जितना त्रस्त और पीड़ित है, शायद ही कोई विचारधारा इतनी त्रस्त और पीड़ित हो। इसपर ज़ुल्म करनेवाले केवल वही लोग नहीं हैं जो इसके इनकारी हैं, बल्कि इसके माननेवाले भी इसपर ज़ुल्म-ज़्यादती कर रहे हैं। इस्लाम धर्म दूसरों की ज़्यादती भी बरदाश्त कर रहा है और अपनों की ज़्यादती भी।

यहाँ यह ऐतिहासिक प्रश्न बहस का विषय नहीं है कि उम्मत का मिसाली दौर कब तक रहा है और इसका पतन कब और कैसे शुरू हुआ? इसका पहला मरहला कितनी अवधि तक फैला हुआ है और दूसरे का सम्बन्ध इतिहास के किस दौर से है। मौजूदा वैचारिक और व्यावहारिक पतन का रिश्ता अतीत से भी है या नहीं? क्या इसके लक्षण बहुत पहले प्रकट होने शुरू हो चुके थे या मौजूदा समय की ग़लत वैचारिक सोचों और राजनीतिक और सांस्कृतिक पराधीनता का नतीजा है? इन सवालों की खोज-बीन और जाँच-परख ज़रूर होनी चाहिए। यह फ़ायदेमन्द होगी। लेकिन यह एक सच्चाई है कि यह उम्मत उत्थान के बाद अचानक पतन का शिकार नहीं हुई, बल्कि इसमें क्रमबद्धता रही है। इसी को यहाँ मरहलों में बयान किया गया है।

इसके साथ यह भी एक सच्चाई है कि इस्लामी इतिहास के हर दौर में ऐसे लोग और कभी-कभी ऐसी जमाअतें और ऐसे संगठन तक मौजूद

रहे हैं, जिन्होंने उम्मत के अन्दर उठनेवाले फ़ितनों और फैलनेवाले बिगाड़ों का मुक़ाबला किया। जिन ग़लत विचारों और दर्शनों ने सिर उठाया उनके जवाब में बौद्धिक और प्रामाणिक दलीलों के द्वारा इस्लाम की सच्चाई साबित की है; समाज के सुधार की कोशिश जारी रखी; दीन के फैलाने का काम अंजाम दिया और उसकी सफलता, वर्चस्व और शासन-सत्ता की विचारधारा को ज़िन्दा रखा। आज भी उम्मत का दामन इस तरह की हस्तियों और जमाअतों से ख़ाली नहीं है। दीन की दावत का काम जारी है और इस्लाम को सफल और प्रभावी बनाने की भावना सीनों में हिलोरें मार रही है। इस मक़सद के तहत लिखनेवालों ने बहुत कुछ लिखा है और बड़े ऊँचे दरजे के सराहनीय काम अंजाम दिए हैं। इस किताब का विषय भी यही है। यह इस सिलसिले की बहुत छोटी-सी कोशिश है। लेकिन इन पन्नों के बारे में शायद इतनी बात ग़लत न होगी कि इनमें इस विषय के हर पहलू पर एक रूख से रौशनी डाली गई है। और इसके सम्बन्ध में पैदा होनेवाले क़रीब-क़रीब सभी सवालों का जवाब दिया गया है। इसलिए उम्मीद है कि बहुत-सी ज़रूरी और उपयोगी चीज़ें, जो इससे सम्बन्धित मोटी-मोटी ज्ञानप्रद किताबों में बिखरी पड़ी हैं, यही नहीं कि इस किताब में एक ही जगह उपलब्ध हैं, बल्कि इनके कुछ नए पहलू भी सामने आएँगे और वे एक व्यापक लिखित दस्तावेज़ का काम देंगी। इसमें चार विषयों को शामिल किया गया है। पहले में पैग़म्बरों के काम की व्याख्या की गई है और यह बताया गया है कि ख़ुदा के पैग़म्बर किसलिए दुनिया में आते हैं और किस तरह अपना ज़बरदस्त क्रान्तिकारी काम अंजाम देते हैं। यह जानना इसलिए ज़रूरी है कि इस उम्मत का जीवन-लक्ष्य वही है, जो पैग़म्बरों का लक्ष्य रहा है। इसे उन्हीं के आदर्श की रौशनी में उस जीवन-लक्ष्य की तरफ़ आगे बढ़ना है। इसी सम्बन्ध में अन्तिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के ज़रिए जो अज़ीम कारनामा अंजाम पाया उसकी तफ़सील बयान हुई है। दूसरा विषय सीधे-सीधे इस्लाम की दावत से

पैग़म्बरों के कामों की व्याख्या

- पैग़म्बरों का काम और उसका स्वरूप
- मुहम्मद (सल्ल॰) का महान दावती कार्य

पैग़म्बरों का काम और उसका स्वरूप

पैग़म्बर किसलिए आते हैं?

यह दुनिया परीक्षा की जगह है और इनसान आज़माइश की हालत में है। यहाँ ख़ुदा रात-दिन उसे आज़मा रहा है ताकि देखे कि कौन उसका फ़रमाँबरदार है और कौन उसका नाफ़रमान। दूसरे शब्दों में, इस बात को इस तरह कहा जा सकता है कि इनसान कुफ़्र (अधर्म) और इस्लाम के बीच खड़ा है। इस्लाम ख़ुदापरस्ती की दावत देता है और कुफ़्र ख़ुदा से बग़ावत का दूसरा नाम है। इनसान को इन्हीं दो रास्तों में से एक रास्ता अपनाना है। तीसरा कोई रास्ता उसके लिए नहीं है– इनसान को इतनी बड़ी आज़माइश में डालने से पहले ख़ुदा ने अपने पैग़म्बरों के ज़रिए उसे बता दिया कि उसके लिए सही रास्ता क्या है और ग़लत रास्ता क्या? वह सफल कैसे हो सकता है और उसकी असफलता किस चीज़ में है? ताकि जो आदमी ख़ुदा को ख़ुश करना चाहे ख़ुश कर ले और जो तबाह होना चाहे ख़ुद ही तबाह हो जाए–

إِنَّ عَلَيْنَا لَلْهُدٰى ﴿١٢﴾ وَإِنَّ لَنَا لَلْآخِرَةَ وَالْأُولٰى ﴿١٣﴾

"बेशक राह दिखाना हमारे ही ज़िम्मे है और हमारे ही हाथ में है लोक-परलोक।" (क़ुरआन, सूरा-92 लैल, आयतें-12,13)

ख़ुदा ने इनसान को अनगिनत नेमतें दी हैं। लेकिन उसकी सबसे बड़ी नेमत यह है कि उसने अपना दीन उसे प्रदान किया। उसे वह रास्ता दिखाया जो उसको लोक-परलोक में सफल बनाता है। ख़ुदा की यह नेमत उसके पैग़म्बरों ने इनसान तक पहुँचाई है। ख़ुदा के पैग़म्बर न आते, तो इनसान को उसका दीन न मिलता और वह

हिदायत से वंचित रहता। वह अपने ख़ुदा से शिकायत करता कि ऐ ख़ुदा! तूने मुझे पैदा किया और इस हाल में छोड़ दिया कि मुझे नहीं मालूम था कि तेरी ख़ुशी कैसे हासिल करूँ और तेरे ग़ज़ब (प्रकोप) से किस तरह बचूँ? मैं नहीं जानता था कि तू किन कामों से ख़ुश होता है और किन कामों से नाराज़? ऐसी हालत में तेरी ख़ुशी कैसे चाहता और तुझे कैसे ख़ुश करता? मैं जब सफलता की राह नहीं पा सका, तो असफल होने से कैसे बच पाता? लेकिन अब यह बहाना ख़ुदा के यहाँ नहीं चलेगा, क्योंकि ख़ुदा के पैग़म्बर हर दौर में आते रहे और इनसान को सीधा-सच्चा रास्ता दिखाते रहे–

رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ بَعْدَ الرُّسُلِ

"ख़ुदा ने इनसानों के पास अपने पैग़म्बर भेजे, जो उनको जन्नत की ख़ुशख़बरी देते और जहन्नम से डराते थे, ताकि पैग़म्बरों के आने के बाद ख़ुदा (जो फ़ैसला करे उस) के मुक़ाबले में इनसानों के पास कोई दलील न रहे।"

(क़ुरआन, सूरा-4, निसा, आयत-165)

पैग़म्बर कब आते हैं?

ख़ुदा ने इस ज़मीन पर जिस पहले इनसान को पैदा किया, वह उसका पैग़म्बर भी था। उसने सीधे-सीधे उसपर हिदायत और गुमराही वाज़ेह कर दी थी। उस पहले इनसान ने अपनी ज़िन्दगी ठीक उसी तरह गुज़ारी जिस तरह ज़िन्दगी गुज़ारने का उसे हुक्म मिला था। लेकिन उस नेक इनसान से जो नस्ल फैली उसने हमेशा वह रास्ता नहीं अपनाया, जो उसे ख़ुदा के इनाम का हक़दार बनाता; बल्कि उसने बार-बार उसकी नाफ़रमानी की और उसके ग़ुस्से को भड़काया; क्योंकि यह एक सच्चाई है कि जब इनसान की लापरवाही और ग़फ़लत हद से बढ़ जाती है और वह खुल्लम-खुल्ला ख़ुदा से बग़ावत करने लगता है तो वह उसकी ज़मीन पर एक बोझ बन जाता है और इस क़ाबिल हो जाता है कि उसे मिटा

दिया जाए। लेकिन ख़ुदा की रहमत (दयालुता) उसके ग़ज़ब (प्रकोप) पर हावी है। वह अपने बन्दों को आख़िरी साँस तक अज़ाब से बचाना चाहता है। इसलिए जब कभी इनसान ने ख़ुदा से बग़ावत की और उसकी मर्ज़ी को कुचल डाला, तो उसने अपने पैग़म्बर भेजे; ताकि उसका अज़ाब आने से पहले इनसान सचेत हो जाए। उसे मालूम हो जाए कि उसे किधर जाना चाहिए था और वह किधर जा रहा है। उसके बुरे आचरण और कामों पर पकड़ उस समय हो, जबकि उसे उनके नतीजों की अच्छी तरह जानकारी हो चुकी हो। ख़ुदा के ये पैग़म्बर हर दौर और हर क़ौम में आए और बिगड़े हुए इनसान को उसके अंजाम से सचेत करते रहे। उन्होंने उसके बग़ावत भरे रवैए पर चेतावनी दी और उसके बुरे चलन पर सहानुभूति भरी आलोचाना की और उसे बताया कि नाफ़रमानी उसे शोभा नहीं देती; क्योंकि उसके ख़ुदा ने उसे अपनी बन्दगी के लिए पैदा किया है। अगर वह अपने इस रवैए से बाज़ न आया तो ख़ुदा का अज़ाब उसपर इस तरह आएगा कि कहीं उसे पनाह न मिलेगी। जब तक यह बात स्पष्ट नहीं हो जाती, किसी क़ौम पर ख़ुदा का अज़ाब नहीं आता। यही सच्चाई क़ुरआन में इन शब्दों में बयान हुई है—

وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا۝

"हम किसी क़ौम को उस समय तक अज़ाब नहीं देते, जब तक कि उसके पास पैग़म्बर न भेज दें।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-15)

पैग़म्बरों का एहसान

ख़ुदा के पैग़म्बरों की मिसाल इस दुनिया में बहती हुई नदी की-सी है, जिससे हज़ारों और लाखों इनसान तृप्त होते हैं। इनसानियत की खेती जब भी लहलहाई और हरी-भरी हुई है उन्हीं से हुई है। वे न पैदा होते तो इनसानियत जल-भुनकर राख हो जाती। दुनिया उनको कुछ

देती नहीं, बल्कि उनसे ही पाती है। आप भौतिक दृष्टि से देखें तो उनका वुजूद अपने आप से अधिक दूसरों के लिए होता है। वे किसी से कुछ वसूल करने नहीं आते, बल्कि सबको 'मालामाल' करने आते हैं और कमाल यह है कि इस जान-तोड़ कोशिश में वे अपना सब कुछ लुटाकर दिली सुकून और इत्मीनान महसूस करते हैं। उनको पूरा यक़ीन होता है कि ख़ुदा ने उनको जो ऊर्जा, शक्ति और योग्यता दी थी, वह अकारथ नहीं गई, बल्कि सही जगह में लगी है। अपने काम के बारे में यह चैन और शान्ति ख़ुदा के पैग़म्बरों और उनकी पैरवी करनेवालों के सिवा इस दुनिया में किसी भी आदमी को नसीब नहीं होती। यह वह सच्चा इनाम है, जो उन्हें अपनी ख़िदमतों के बदले में यहाँ मिलता है।

आमतौर पर जो लोग इनसानियत का भला चाहनेवाले समझे जाते हैं और जिनके पीछे चलने में दुनिया गर्व महसूस करती है, वे किसी न किसी रूप में इनसान की सिर्फ़ दुनिया की कामयाबी चाहते हैं। उनमें से किसी के सामने आर्थिक स्कीम होती है, कोई शिक्षा-सम्बन्धी मनसूबा रखता है, कोई आज़ादी का आन्दोलन चलाता है, किसी को विज्ञान की तरक़्क़ी की चिन्ता होती है और कोई सांस्कृतिक जीवन और सामाजिक रहन-सहन को सुधारना और सँवारना चाहता है। लेकिन ख़ुदा के पैग़म्बर इस तरह का कोई आन्दोलन और योजना लेकर नहीं उठते, बल्कि वे केवल इसलिए आते हैं कि इनसानों को उनके पालनहार रब का पैग़ाम पहुँचाएँ और उन्हें इस सच्चाई से अवगत करें कि वे सब के सब ख़ुदा के बन्दे और उसके ग़ुलाम हैं और उन्हें अपने सारे ही मामलों में उसी की बन्दगी करनी चाहिए। इस पैग़ाम को जो आदमी क़बूल करता है, वह ख़ुदा की नेमतों का हक़दार होता है और जो इसे मानने से इनकार कर देता है, वह उसकी रहमतों से बहुत दूर चला जाता है। ख़ुदा के पैग़म्बरों का यह इतना बड़ा एहसान है कि इसे ठीक-ठीक और पूरी तरह समझने और मानने में भी हम और आप असमर्थ हैं।

पैग़म्बर इनसान की मूल समस्या हल करते हैं

इनसान की मूल समस्या यह नहीं है कि यहाँ आर्थिक समानता क़ायम हो जाए या शिक्षा इतनी अधिक फैल जाए कि हर आदमी पढ़-लिख सके या उद्योग-धंधे इतने विकसित हो जाएँ कि ज़रूरत की सारी चीज़ें आसानी के साथ मिलने लगें या ग़रीबी और मुहताजी ख़त्म हो जाए और कोई आदमी किसी का मुहताज और किसी के सहारे न रहे। देखने में यह बात बड़ी आश्चर्यजनक मालूम होगी और कुछ असम्भव नहीं कि इसे भोलेपन और नासमझी का नतीजा क़रार दिया जाए; क्योंकि दुनिया हमेशा इन्हीं मसलों को इनसान की मूल समस्या समझती रही है और आज भी इन्हीं को सबसे अधिक महत्त्व दे रही है। लेकिन सच्चाई यह है कि इन मसलों का अपनी जगह कितना ही अधिक महत्त्व क्यों न हो, ये सब छोटी-छोटी समस्याएँ हैं और एक बुनियादी समस्या की शाखें हैं। जो लोग इन शाखाओं की काट-छाँट और इनके बनाने-सँवारने में लगे हुए हैं, वे बहुत ही सतही और मामूली कामों में लगे हुए हैं। उनकी नज़र उस जड़ पर नहीं है, जहाँ से ये शाखाएँ फूटतीं और पूरी ज़िन्दगी पर छा जाती हैं। उस जड़ पर केवल उन लोगों की नज़र जाती और जाकर ज़िन्दगी के आख़िरी पल तक जमी रहती है, जिनको ख़ुदा की तरफ़ से ख़ास नज़र और समझ-बूझ हासिल होती है और जो सही अर्थों में दुनिया के मार्गदर्शक और इमाम बनाकर भेजे जाते हैं। उन्हीं को हम अपनी भाषा में ख़ुदा के रसूल और पैग़म्बर कहते हैं।

इनसान की मूल समस्या यह है कि वह अपने आदि और अन्त से बाख़बर रहे और अपने उस ख़ुदा को न भूले, जिसने उसे पैदा किया और जिसकी तरफ़ उसे पलटकर जाना है। लेकिन उसका हाल यह है कि वह अपने आपको हर बन्धन से आज़ाद समझता है। वह इस तरह काम कर रहा है, मानो क़ियामत (प्रलय) नहीं आएगी और हिसाब-किताब नहीं होगा। ख़ुदा की नाफ़रमानी उसके लिए एक अज़ाब

है; लेकिन वह अपने आपको उस अज़ाब से क़रीब करता जा रहा है। उसे ख़ुदा की नाराज़ी से बचना चाहिए। लेकिन वह अपने बुरे कामों से ख़ुदा के ग़ज़ब (प्रकोप) को लगातार दावत दे रहा है। मतलब यह है कि उसने अपने ख़ुदा के बारे में अत्यन्त ग़लत रवैया अपना रखा है, जो उसे किसी भी हाल में अपनाना नहीं चाहिए।

लोक-परलोक हर जगह इनसान की कामयाबी का दारोमदार इस बात पर है कि वह ख़ुदा का बन्दा बन जाए और उसकी ग़ुलामी क़बूल कर ले। इसी से उसका पारलौकिक जीवन भी सँवरेगा और इसी से उसके सांसारिक जीवन के सभी उलझे हुए मसले भी सुलझेंगे; क्योंकि ख़ुदा को मानना ही इनसानी ज़िन्दगी की सबसे सही और मज़बूत बुनियाद है और उसके न मानने ही से सारी ख़राबियाँ पैदा होती हैं। उस आदमी की क़िस्मत में नाकामी लिख दी गई है, जो ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी से मुँह मोड़े और उसकी पकड़ से लापरवाह हो जाए। यहाँ अन्याय-अत्याचार का वुजूद इसलिए है कि ख़ुदा और आख़िरत पर इनसान का विश्वास नहीं है। यहाँ राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में बिगाड़ इसलिए है कि वे ख़ुदा के क़ानून से आज़ाद हैं। यहाँ पर अनैतिकता और अश्लीलता इसलिए है कि लोगों के अन्दर ख़ुदा की दी हुई हिदायतों का आदर-सम्मान नहीं है। यहाँ शिक्षा के बावुजूद अज्ञानता इसलिए आम है कि इनसान ख़ुदा की दी हुई रौशनी से वंचित है। इसी लिए ख़ुदा के पैग़म्बर अपनी पूरी शक्ति के साथ एक ही बुनियादी मसले को छेड़ते हैं। वह यह कि एक ख़ुदा को मानो और उसी की बन्दगी करो। उनकी दावत इसके सिवा कुछ नहीं होती—

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ
تَتَّقُوْنَ ۝٢١ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا وَّالسَّمَآءَ بِنَآءً ۪ وَّاَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ
مَآءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ ۚ فَلَا تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ اَنْدَادًا وَّاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝٢٢

"ऐ लोगो! अपने पालनहार रब की बन्दगी करो, जिसने तुमको

भी और तुमसे पहले के लोगों को भी पैदा किया। उम्मीद है तुम उसकी पकड़ से बचोगे। तुम्हारा वह रब जिसने ज़मीन को तुम्हारे लिए फ़र्श और आसमान को छत बनाया और आसमान से पानी उतारा, उसके द्वारा तुम्हारे लिए खाने के फल पैदा किए। अतः तुम अल्लाह के साथ दूसरों को साझीदार न बनाओ; जबकि तुम जानते हो (कि उसके सिवा कोई इन चीज़ों का पैदा करनेवाला नहीं है)।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयतें-21, 22)

अल्लाह के पैग़म्बरों पर जो वह्य अवतरित होती है और जिस शिक्षा को लेकर वे इनसानों के सामने आते हैं, उसे क़ुरआन मजीद ने इन शब्दों में बयान किया है—

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا نُوْحِیْٓ اِلَيْهِ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنَا فَاعْبُدُوْنِ

"हमने तुमसे पहले जिस पैग़म्बर को भी भेजा, उसकी तरफ़ यही वह्य की कि मेरे सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है। अतः तुम मेरी इबादत करो।" (क़ुरआन, सूरा-21 अम्बिया, आयत-25)

अल्लाह के पैग़म्बर इनसानों से कहते हैं कि तुम अल्लाह तआला की बन्दगी और उसका डर और परहेज़गारी अपनाओ। इससे तुम्हारी ज़िन्दगी का बिगाड़ दूर होगा। उसके बाग़ियों और सरकशों के पीछे चलने की जगह हमारी पैरवी करो। हम तुम्हें सफलता की मंज़िल तक पहुँचा देंगे—

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوْنِ ۝ وَلَا تُطِيْعُوْٓا اَمْرَ الْمُسْرِفِيْنَ ۝ الَّذِيْنَ يُفْسِدُوْنَ فِى الْاَرْضِ وَلَا يُصْلِحُوْنَ ۝

"तो अल्लाह से डरो और मेरी बात मानो और उन मर्यादाहीन लोगों की आज्ञा का पालन न करो, जो ज़मीन में बिगाड़ फैलाते हैं और सुधार नहीं करते।।"

(क़ुरआन, सूरा-26 शुअ़रा, आयतें—150-152)

यह है अल्लाह के पैग़म्बरों की वह दावत, जिसे वे दुनिया के सामने लगातार पेश करते रहे हैं, जिसकी चिन्ता में उनके रात-दिन गुज़रते हैं और जिसके लिए उनकी बरकत से भरी ज़िन्दगी समर्पित होती है।

पैग़म्बर प्रभावी होते हैं

क़ुरआन मजीद में अल्लाह के पैग़म्बरों के बारे में यह क़ानून बयान हुआ है—

كَتَبَ اللّٰهُ لَاَغْلِبَنَّ اَنَا وَرُسُلِيْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ عَزِيْزٌ ۝۲۱

"अल्लाह ने लिख दिया है कि मैं और मेरे पैग़म्बर ज़रूर कामयाब होंगे। बेशक अल्लाह अत्यन्त प्रभुत्वशाली और बलवान है।" (क़ुरआन, सूरा-58 मुजादला, आयत-21)

इसका मतलब यह है कि अल्लाह अपने पैग़म्बरों को उनके विरोधियों पर निश्चय ही वर्चस्व प्रदान करता है। यह उसका फ़ैसला है। उसके फ़ैसले को कोई बदल नहीं सकता। यहाँ पैग़म्बरों के जिस वर्चस्व का उल्लेख है, उसके दो रूप हैं— एक बौद्धिक और तार्किक वर्चस्व और दूसरा आर्थिक और राजनीतिक वर्चस्व। यहाँ इन दोनों की थोड़ी-सी व्याख्या की जा रही है।

तार्किक वर्चस्व

अल्लाह के पैग़म्बर जिन क़ौमों में आते हैं, वे उन्हें तार्किक प्रमाणों और दलीलों के साथ इस हक़ को समझाते हैं और इसमें कामयाब भी रहते हैं कि ख़ुदा है और वह एक है; उसे मानें और उसका इनकार न करें। ख़ुदा को मानना लोक-परलोक में उनको कामयाब बनाएगा और उसका इनकार उनके लिए अत्यन्त विनाशकारी होगा। वे उनमें पाई जानेवाली वैचारिक और व्यावहारिक सभी छोटी-बड़ी बुराइयों की आलोचना करते हैं, जिनके कारण वे ख़ुदा के अज़ाब के निशाने पर होते

हैं और उनके सामने ऐसे जीवन-सिद्धान्त पेश करते हैं, जो ख़ुदा को पसन्द हैं और जिनको अपनाकर उनकी ज़िन्दगी सँवर सकती है। उनके पक्ष में वे इतने प्रभावी तार्किक प्रमाण और दलीलें पेश कर देते हैं कि विरोधी मजबूर हो जाते हैं और उनपर उनका वैचारिक प्रभुत्व स्थापित हो जाता है।

पैग़म्बर सच को सिद्ध कर देते हैं

इस काम के लिए ख़ुदा अपने पैग़म्बरों को कुछ ऐसे अलौकिक गुण प्रदान करता है, जो उनके सिवा किसी दूसरे इनसान को हासिल नहीं होते। ये गुण उनको इस योग्य बनाते हैं कि वे इस सबसे बड़े काम को इस तरह अंजाम दें कि किसी पहलू से भी इसमें कोई कमी न रह जाए। इनमें से पहला गुण यह है कि ख़ुदा के पैग़म्बर बुद्धि एवं चिंतन और आचरण एवं चरित्र की दृष्टि से इतने ऊँचे स्थान पर विराजमान होते हैं कि सारे इनसानों में एक भी आदमी उनके बराबर का नहीं होता। इसी कारण किसी ऐसे आदमी के अन्दर, जो उनसे परिचित हो, उनको झूठा या उनकी दावत को छल-कपट कहने की हिम्मत नहीं होती। किसी ने इसकी हिम्मत की तो ख़ुद उसका दिल अन्दर से उसे कोसने लगता है। दूसरा यह कि उनका दरजा सामाजिक रहन-सहन की हैसियत से भी इतना ऊँचा होता है कि वे ऊँचे से ऊँचे दरजे के इनसानों और उन लोगों को भी, जिनके हाथों में शासन-सत्ता होती है, सीधे तौर पर सम्बोधित कर सकते हैं और उन तक ख़ुदा का दीन पहुँचाने में उनको ज़रा भी झिझक नहीं होती। तीसरा यह कि इस काम में उन्हें सीधे-सीधे ख़ुदा का मार्गदर्शन और हिदायत हासिल होती है। हर जटिल और कठिन अवसर पर उनको ख़ुदा की तरफ़ से बताया जाता है कि वे क्या क़दम उठाएँ और किस तरह इस काम को पूरा करें। इसी मार्गदर्शन और हिदायत के कारण उनका पूरा काम इनसानी कमियों और ख़ामियों से बिलकुल पाक होता है। चौथे यह कि उनको ऐसे चमत्कार दिए जाते

हैं कि जिनको देखकर आसानी से यह विश्वास किया जा सकता है कि वे सचमुच ख़ुदा के पैग़म्बर हैं और उसी के हुक्म से लोगों को उनके अंजाम से सचेत कर रहे हैं। पाँचवें यह कि ख़ुदा उनपर अपने बोल (कलाम) ऐसी भाषा में उतारता है कि वह न तो दार्शनिकों की भाषा की तरह समझ से परे और पेचीदा होती है कि उसका समझना मुश्किल हो और न बिलकुल गँवारू भाषा होती कि जिसका सुनना और पढ़ना भी किसी संजीदा और सभ्य इनसान को नागवार गुज़रे, बल्कि वह इतनी साफ़-सुथरी, इतनी आकर्षक और इतनी सरस भाषा होती है कि दिल-दिमाग़ आप से आप उसकी तरफ़ खिंच पड़ते हैं। छठे यह कि ख़ुदा उनको प्रबल तर्कशक्ति प्रदान करता है, ताकि वे इस बोल में छिपे रहस्यों, उसकी हिकमतों और ख़ूबियों को पूरी तरह स्पष्ट कर सकें; यहाँ तक कि उसका कोई पहलू भी निगाहों से ओझल न रह जाए। इन ख़ूबियों के साथ ख़ुदा के पैग़म्बर उत्तम प्रेरणा, कड़ी चेतवनी और डरावे के द्वारा ख़ुदा से फिरे हुए इनसानों को उसकी तरफ़ बुलाते हैं और अन्तिम सीमा तक प्रयास करते हैं, ताकि वे अपने अंजाम को जान जाएँ और परलोक की यातना और अज़ाब से बचने का सामान कर लें। वे उनके छुटकारे और नजात के लिए अपनी प्रबल शक्तियाँ और असाधारण योग्यताएँ लगा देते हैं और उन्हें ख़ुदा से जोड़ने के जो सम्भव उपाय हो सकते हैं, उन सबको काम में लाते हैं। वे उनके सामने मज़बूत दलीलें पेश करते हैं, ताकि ख़ुदा का दीन उनके दिल में उतर जाए। वे उनकी आत्मा को झिंझोड़ते हैं, ताकि वे अतीत से शिक्षा ग्रहण करें और उन ग़लतियों से बचें, जो उनसे पहले क़ौमों और गिरोहों को तबाह कर चुकी हैं। यह बड़े संयम का काम है, जिसे ख़ुदा के पैग़म्बर एक लम्बी अवधी तक अंजाम देते रहते हैं, यहाँ तक कि यह सच्चाई पूरी तरह स्पष्ट कर देते हैं कि मोक्ष और नजात की राह केवल ख़ुदा की ग़ुलामी में है। इसके बाद उनके पैग़ाम के साथ विरोध का रवैया अपनाया जा सकता है, लेकिन कोई भी इनसान दलील के मैदान

में उन्हें हरा नहीं सकता। वे इस हद तक अपनी बात को साबित कर देते हैं कि उनके विरोधियों के दिल भी उसके सच होने की गवाही देने लगते हैं। हज़रत मूसा (अलैहि०) के सम्बन्ध में क़ुरआन में कहा गया है—

وَجَحَدُوا بِهَا وَاسْتَيْقَنَتْهَا أَنفُسُهُمْ ظُلْمًا وَعُلُوًّا

"उन्होंने केवल ज़ुल्म और घमंड की बुनियाद पर अल्लाह की आयतों (निशानियों) का इनकार किया, हालाँकि अन्दर से उनके दिल विश्वास के साथ कह रहे थे कि वे सच्च हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-27 नम्ल, आयत-14)

पैग़म्बर अपने उद्देश्य में सफल होते हैं

खुदा का पैग़म्बर जब इस तरह इनसानों पर हुज्जत पूरी कर देता है, तो इसका मतलब यह होता है कि वह अपने फ़र्ज़ को पूरा करने में सफल हो गया, चाहे वह इस ज़मीन पर अकेले ही काम करते हुए खुदा के पास पहुँच जाए और कोई एक आदमी भी उसका साथ न दे। उसने अगर दलील और हिकमत के साथ अल्लाह का दीन इनसानों तक पहुँचा दिया है तो उसने प्रचार-प्रसार (तबलीग़) की वह ज़िम्मेदारी पूरी कर दी, जो खुदा की तरफ़ से उसपर डाली गई थी। अब उसकी सफलता के लिए और अधिक किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है। खुदा के पैग़म्बर के द्वारा किए गए प्रचार-प्रसार के बाद भी अगर कोई आदमी खुदा की तरफ़ न पलटे तो यह उसका अपना दुर्भाग्य है कि जगाए जाने के बावुजूद ग़फ़लत में पड़ा सोता रहा—कामयाबी और नाकामी की राह उसपर वाज़ेह हो चुकी थी, लेकिन उसने नाकामी को पसन्द किया। लोग अगर जानते-बूझते सच बात को न मानें तो यह उसके पेश करनेवाले की कोताही नहीं है, बल्कि न माननेवालों की ज़िद और हठधर्मी है, जिसके लिए वे खुद जवाबदेह होंगे। अल्लाह के पैग़म्बरों से इसके बारे में हरगिज़ कोई पूछगछ न होगी। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल०)* कहते हैं—

"पैग़म्बरों के इतिहास में एक पैग़म्बर ऐसे भी गुज़रे हैं, जिनकी क़ौम के केवल एक आदमी ने उनकी पुष्टि की थी।"[1]

कौन कह सकता है कि वे इस दुनिया से नाकाम होकर गए। उन्होंने ख़ुदा की राह में अपनी सारी की सारी शक्तियाँ लगा दीं और जिद्दोजुहद का हक़ अदा कर दिया। इसलिए हमारा ईमान है कि वे पूरी कामयाबी के हक़दार थे और पूरी तरह कामयाब रहे।

अल्लाह के पैग़म्बर उसके रास्ते में मारे भी गए

दुनिया में ऐसी क़ौमें भी गुज़री हैं, जिन्होंने पैग़म्बरों के द्वारा निस्स्वार्थ और पूर्ण समर्पण भाव से जी-जान से हर मुमकिन कोशिश करने के बावुजूद उनकी दावत को ठुकरा दिया और उनकी जान के दुश्मन हो गए। कुछ अभागी और दुष्ट क़ौमों ने उन्हें निर्ममतापूर्वक मौत के घाट उतार डाला। यहूदियों के काले कारनामों में इसके उदाहरण मौजूद हैं—

أَفَكُلَّمَا جَاءَكُمْ رَسُولٌ بِمَا لَا تَهْوَىٰ أَنفُسُكُمُ اسْتَكْبَرْتُمْ فَفَرِيقًا كَذَّبْتُمْ وَفَرِيقًا تَقْتُلُونَ

"(क्या ऐसा नहीं है कि) जब तुम्हारे पास कोई पैग़म्बर ऐसी हिदायतें लेकर आया जो तुम्हारे मन को पसन्द नहीं थीं, तो तुमने घमंड का प्रदर्शन किया; फिर किसी को झुठलाया और किसी की हत्या कर डाली।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-87)

क़ुरआन मजीद ने केवल इसी एक जगह पर नहीं, बल्कि दूसरी कई जगहों पर भी कहा है कि यहूदियों के हाथ पैग़म्बरों के ख़ून से रंगे रहे हैं। (देखें—सूरा-3 आले-इमरान, आयत-181; सूरा-4 निसा, आयत-155)

---

[1] सहीह मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाब फ़ी क़ौलिन्नबी अना अव्वलुन-नास यश-फ़उ-फ़िल-जन्नति........आख़िर तक।

भौतिक वर्चस्व भी प्राप्त होता है

इस तरह की घटनाएँ पैग़म्बरों के साथ हालाँकि घटित हुई हैं, लेकिन आम तौर पर उन्हें अल्लाह की ख़ास मदद और उसकी हिमायत हासिल होती है और वे उसकी सुरक्षा और शरण में रहते हैं; ताकि प्रचार-प्रसार का पूरा-पूरा हक़ अदा कर सकें। इसलिए विरोधी लोग उनका रास्ता रोकते हैं। उन्हें बहुत दुख और कष्ट पहुँचाते हैं। उनके ख़िलाफ़ साज़िशें रचते हैं, लेकिन उनके ख़िलाफ़ कोई बड़ा क़दम उठाने और उन्हें ख़त्म करने में कामयाब नहीं होते। अल्लाह तआला उनकी सुरक्षा करता है और विरोधियों से उन्हें छुटकारा दिलाता है–

إِنَّا لَنَنصُرُ رُسُلَنَا وَالَّذِينَ آمَنُوا فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ يَقُومُ الْأَشْهَادُ ﴿٥١﴾

"हम मदद करते हैं अपने पैग़म्बरों की और उन लोगों की जो ईमान लाए, दुनिया की ज़िन्दगी में और उस दिन जबकि गवाही देनेवाले खड़े होंगे।" (क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयत-51)

पैग़म्बरों का इतिहास बताता है कि अगर कोई क़ौम ख़ुदा के पैग़म्बर के कठोर परिश्रम और निरन्तर प्रयास के बावुजूद हक़ की तरफ़ न पलटे और उसकी आवाज़ को दबाने और उसे ख़त्म करने की चालें चलने लगे, तो वह उससे दुआ करते हैं कि ऐ मेरे ख़ुदा! मैंने उनको तेरी तरफ़ बुलाने के लिए सारे ही प्रयास कर लिए, लेकिन उनके दिलों के दरवाज़े नहीं खुले। वे तेरी ज़मीन पर बोझ बन चुके हैं और इस लायक़ हैं कि मिटा दिए जाएँ। जब कोई पैग़म्बर इस हद तक अपने क़ौम के सुधार से निराश हो जाता है तो उस क़ौम की तबाही का समय आ जाता है। उस समय ख़ुदा उसको और अधिक छूट नहीं देता कि वह उसके पैग़म्बर के ख़िलाफ़ अपनी सोची-समझी किसी बड़ी साज़िश पर अमल कर सकें। वह पैग़म्बर को हुक्म देता है कि वह अपने साथियों के साथ उस क़ौम के बीच से निकल जाए और किसी दूसरी जगह चला जाए।

जब पैग़म्बर और उसके साथी हिजरत कर जाते हैं, तो अल्लाह तआला सीधे-सीधे कोई अज़ाब भेजकर उसे ख़त्म कर देता है। अल्लाह के पैग़म्बर और उसके साथी अज़ाब से सुरक्षित रहते हैं—

ثُمَّ نُنَجِّي رُسُلَنَا وَالَّذِينَ آمَنُوا كَذَٰلِكَ حَقًّا عَلَيْنَا نُنجِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٠٣﴾

"फिर हम बचा लेते हैं अपने पैग़म्बरों को और उन लोगों को जो ईमान लाए। इस तरह हमारे ज़िम्मे है कि ईमानवालों को बचा लें।" (क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-103)

किसी क़ौम के इस तरह तबाह होने के बाद अल्लाह के पैग़म्बर और उसके साथी ज़मीन के वारिस हो जाते हैं; या उनको कोई दूसरी ज़मीन मिलती है कि वे आज़ादी और चैन के साथ उसके दीन पर अमल कर सकें। यही बात सूरा इबराहीम की इन आयतों में बयान हुई है—

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لِرُسُلِهِمْ لَنُخْرِجَنَّكُم مِّنْ أَرْضِنَا أَوْ لَتَعُودُنَّ فِي مِلَّتِنَا ۖ فَأَوْحَىٰ إِلَيْهِمْ رَبُّهُمْ لَنُهْلِكَنَّ الظَّالِمِينَ ﴿١٣﴾ وَلَنُسْكِنَنَّكُمُ الْأَرْضَ مِن بَعْدِهِمْ ۚ ذَٰلِكَ لِمَنْ خَافَ مَقَامِي وَخَافَ وَعِيدِ ﴿١٤﴾

"जिन लोगों ने (हक़ की दावत का) इनकार किया, उन्होंने अपने पैग़म्बरों से कहा कि हम तुमको निश्चय ही अपनी ज़मीन से निकाल देंगे या फिर यह कि तुम हमारे दीन में लौट आओ; तो उनके रब ने उनपर वह्य (प्रकाशना) भेजी कि निश्चय ही हम ज़ालिमों को हलाक कर देंगे और तुमको उनके बाद ज़मीन में आबाद करेंगे। यह वादा उस आदमी के लिए है जो मेरे सामने जवाबदेही से डरे और मेरी चेतावनी से डरता हो।" (क़ुरआन, सूरा-14 इबराहीम, आयतें-13,14)

यह सूरते-हाल उस समय पैदा होती है, जबकि पूरी क़ौम या उसकी बहुत बड़ी तादाद ख़ुदा के पैग़म्बर की दावत को मानने से इनकार कर

दे और उसपर ईमान लानेवाले गिनती के कुछ आदमियों से अधिक न हों। लेकिन अगर सूरते-हाल यह न हो, बल्कि एक अच्छी-ख़ासी तादाद उस दावत पर ईमान ला चुकी हो, तो इनकार करनेवालों की तबाही के लिए कोई क़ुदरती अज़ाब (प्राकृतिक आपदा) नहीं उतरता; बल्कि ख़ुदा उसको अपने पैग़म्बर और उसके साथियों के ज़रिए एक लम्बी मुद्दत में ख़त्म करता है।

इस मुद्दत में पैग़म्बर के माननेवालों और उसका इनकार करनेवालों में कड़ा संघर्ष जारी रहता है और इसी संघर्ष के दौरान वे सब लोग जिनमें पैग़म्बर के पैग़ाम को स्वीकार करने की कुछ भी योग्यता होती है, धीरे-धीरे उसपर ईमान लाते रहते हैं। जब उनकी तादाद इतनी हो जाती है कि ख़ुद उन्हीं के ज़रिए इनकार करनेवालों का ज़ोर तोड़ा जा सके तो ख़ुदा उनको हुक्म देता है कि वे उनके ख़िलाफ़ कठोर क़दम उठाएँ और फिर दो-चार मुक़ाबलों के बाद किसी निर्णायक मोर्चे में वह इनकार करनेवालों को पूरी तरह घुटने टेकवा देता है और ज़मीन की सत्ता ईमानवालों के हवाले कर देता है। इसके बाद अल्लाह के पैग़म्बर उसकी ज़मीन को हक़ के इनकारियों और ख़ुदा का साझीदार बनानेवालों से पाक करके उसके दीन को पूरी तरह प्रभावी बना देते और लागू कर देते हैं और हर तरफ़ ख़ुदा की मर्ज़ी चलने लगती है।[1]

पैग़म्बरों के काम की रूप-रेखा

इस बात को ख़त्म करने से पहले यहाँ एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात पर रौशनी डालनी ज़रूरी है, वरना पैग़म्बरों के काम की सही रूप-रेखा स्पष्ट नहीं हो सकेगी। वह यह कि कोई क़ौम ख़ुदा के पैग़म्बर का विरोध करे या उसपर ईमान लाए और उसके द्वारा बताई

[1] इसका स्पष्ट उदाहरण हमें मुहम्मद (सल्ल॰) की पैग़म्बरी के दौर में मिलता है। विस्तार के लिए देखिए— पुस्तक का अगला अध्याय 'मुहम्मद (सल्ल॰) का सबसे बड़ा कारनामा।'

हुई अनुपालन-व्यवस्था को क़बूल कर ले। दोनों स्थितियों में वह उनके बीच दावत ही का काम अंजाम देता है। वह अपनी दावत से हट कर कोई क़दम नहीं उठाता, उसका हर काम उसके मार्गदर्शक होने की हैसियत की माँग करता है और उसकी दावत का हिस्सा होता है, जो क़ौम उसकी दावत को आख़िरी वक़्त तक न माने और अपने इनकार पर जमी रहे, वह उसपर तर्कों और प्रमाणों के द्वारा, अपने चरित्र के द्वारा, अपने निर्मल प्रेम और आचरण के द्वारा इस बात को प्रमाणित कर देता है कि वह ग़लत रास्ते पर चल रही है और उसका अंजाम अत्यन्त विनाशकारी होगा; लेकिन जिस क़ौम में पैग़म्बर के माननेवाले पैदा हों, उनके बीच उसका काम बहुत अधिक फैला हुआ होता है। लेकिन इस फैलाव के कारण उसकी असल हैसियत में कोई अन्तर नहीं आता। वह शुरू में भी दावत ही का काम करता है और आख़िर में भी दावत ही का काम अंजाम देता है।

जब कोई विचारधारा, विशेष रूप से कोई विश्वव्यापी विचारधारा, दर्शन और चिन्तन की सीमाओं से निकलकर व्यवहार के मैदान में प्रवेश करती है तो बहुत-से ऐसे सवाल पैदा होते हैं जो पहले नहीं पैदा हुए थे या अगर पैदा हुए थे तो उनका कोई विशेष महत्त्व नहीं था। ये सवाल सैद्धान्तिक भी होते हैं और व्यावहारिक भी। स्वाभाविक रूप से उसके माननेवालों की माँग होती है कि उनका स्पष्ट उत्तर दिया जाए और जिन लोगों ने अभी इसे क़बूल नहीं किया है, वे उसे विचार के मैदान ही में नहीं, अनुभवों की रौशनी में भी समझना चाहते हैं। इसलिए अगर आप उस विचारधारा की दावत देनेवाले हैं, तो आपके लिए ज़रूरी होगा कि इससे सम्बन्धित वैचारिक और व्यावहारिक दोनों तरह के प्रश्नों के उत्तर दें। उस समय आप उस विचारधारा की व्याख्या करनेवाले बनकर लोगों की वैचारिक उलझनें भी दूर करेंगे; राजनीतिज्ञ बनकर उनके मामलों को हल भी करेंगे और संस्कृति-निर्माता बनकर एक नई सभ्यता-संस्कृति के निर्माण में लगे भी होंगे और आपका यह पूरा काम

अपनी उस विचारधारा के ध्वजावाहक ही की हैसियत से होगा और दावत ही का काम होगा, कोई दूसरा काम न होगा। इन विभिन्न प्रकार के मामलों को अंजाम देने से आपके दीन के प्रचारक होने की हैसियत ख़त्म नहीं हो जाएगी, बल्कि और अधिक अटल और मज़बूत होगी।

ठीक इसी तरह ख़ुदा के पैग़म्बर की दावत जब बहुत अधिक फैल जाती है तो बहुत-सी नई-नई समस्याएँ सामने आती हैं और नई-नई परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। उदाहरणार्थ, यह सवाल उठता है कि उसके माननेवालों की अब तक की संस्कृति-सभ्यता और सामाजिक रहन-सहन, आचरण और आदतों में कौन-सी चीज़ इस दावत से मेल खाती है और कौन-सी चीज़ इससे टकरा रही है? उनके लिए ज़िन्दगी का कौन-सा नक़्शा सही है और कौन-सा ग़लत? जो लोग इस दावत को मान रहे हैं, उनके साथ क्या मामला किया जाए और जो इसके विरोधी हैं, वे किस बरताव के हक़दार हैं? सुलह के क्या नियम हों और युद्ध किन बुनियादों पर हों? ख़ुदा का पैग़म्बर इन सवालों से नज़र नहीं फेरता, बल्कि इनमें से हर एक का संतोषजनक उत्तर देता है। उस समय उसकी दावत में मानव-व्यवहार और सामाजिक रहन-सहन से सम्बन्धित हिदायतें भी आ जाती हैं; लेन-देन के नियम भी बयान होते हैं; शासन और राजनीति के बारे में आदेश भी शामिल हो जाते हैं; क़ानून और अदालत यानी दण्ड-विधान की शिक्षा भी शामिल हो जाती है और सन्धि और युद्ध के नियम भी जगह पा जाते हैं। मतलब यह कि इस मरहले में ख़ुदा का पैग़म्बर उसकी तरफ़ से सभ्यता-संस्कृति और मानव-जीवन के सारे मामलों का पूरा नक़्शा पेश करता है और इसी नज़रिए से उसके काम में रंगा-रंगी और विविधता पैदा हो जाती है।

अब आप देखेंगे कि वह एक ही समय में डरा भी रहा होता है और ख़ुशख़बरी भी दे रहा होता है। अपने माननेवालों को संगठित भी कर रहा है, उनके द्वारा अपना पैग़ाम दूसरों तक पहुँचाने का काम भी ले

रहा है; उनके बीच अदालत भी क़ायम किए हुए है और ख़ुदा के दुश्मनों से सन्धि और युद्ध भी कर रहा है। इसका हरगिज़ यह मतलब नहीं है कि वह पहले कुछ था और अब कुछ और हो गया है। नहीं, यह सब काम वह अपने दीन के प्रचारक-प्रसारक होने की हैसियत ही में अंजाम देता है, कभी उसकी कोई दूसरी हैसियत नहीं होती। ख़ुदा का पैग़म्बर चाहे दीन का प्रचारक-प्रसारक हो, चाहे जज और शासक-प्रशासक हो, चाहे नैतिक शिक्षक हो और संस्कृति-निर्माता हो, चाहे सेनानायक और नेतृत्वकर्त्ता हो, हर हाल में ख़ुदा के दीन का प्रचारक-प्रसारक ही होता है। उसकी दावत हज़ार रूप अपना ले, हर रूप की रूह दावत ही होती है। अगर उसकी पुकार का एक आदमी भी जवाब न दे और वह क़त्ल कर दिया जाए, तो भी वह दावत ही का काम करते हुए दुनिया से जाता है और उस समय भी वह दावत ही का काम करता है, जबकि वह जज बनकर इनसानों के बीच ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ फ़ैसले करता है। कोई भी दावत अगर किसी मरहले में दावत न रहे तो समझिए कि उसने अपनी अस्ल हैसियत खो दी। अब उसके सामने वह लक्ष्य नहीं रहा, जिसके लिए वह अस्तित्व में आई थी। बहुत-से लोग ख़ुदा के पैग़म्बर को केवल धर्म का प्रचारक-प्रचारक और उसकी दावत को केवल उपदेश और नसीहत का समानार्थी समझते हैं। इसका मतलब यह है कि अभी उन्होंने दावत का सही अर्थ नहीं समझा है और इसका बहुत व्यापक रूप और उसकी अपेक्षाएँ उनके सामने नहीं हैं। उनको गम्भीरतापूर्वक दावत के सही अर्थ, भावार्थ और उसकी व्यापक अपेक्षाओं पर सोच-विचार करना चाहिए।

मुहम्मद *(सल्ल.)* का सबसे बड़ा कारनामा

पैग़म्बरी का एलान

अतीत की तरफ़ पलट कर उस दौर की कल्पना कीजिए, जबकि हज़रत ईसा मसीह (अलैहि.) को दुनिया से विदा हुए पाँच सौ साल से अधिक गुज़र चुके थे। नबियों की शिक्षाएँ मिट चुकी थीं। दुनिया से एक ख़ुदा की बन्दगी का चलन ख़त्म हो चुका था और इनसान ख़ुदा को भूला हुआ था। उसे हुक्म केवल एक ख़ुदा की बन्दगी का मिला था, लेकिन वह अनगिनत ख़ुदाओं का बन्दा बना हुआ था। ख़ुदा ने उसे अपनी ग़ुलामी के सिवा हर ग़ुलामी से आज़ाद पैदा किया था; लेकिन उसके पाँव में बादशाहों, पुरोहितों और पूँजीपतियों की ग़ुलामी की ज़ंजीरें पड़ी हुई थीं। ख़ुदा ने उसे सबसे ऊँचा दरजा प्रदान किया था; लेकिन वह पतन के आख़िरी हद को पहुँच चुका था और उसे अपने पद और स्थान का कुछ भी एहसास नहीं था। ज़मीन, आसमान, चाँद, सूरज, पेड़, पहाड़, आग, पानी, हवा हर चीज़ उसके सामने झुकी हुई थी; लेकिन वह हर एक के सामने सिर झुकाने को तैयार था। इन परिस्थितियों में मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अपनी पैग़म्बरी का एलान किया और दुनिया के देखते-देखते वह ज़बरदस्त कारनामा अंजाम दिया कि इतिहास में न तो उससे पहले उसकी कोई मिसाल थी और न उसके बाद ही कोई मिसाल मिल सकी। अगर आप उसे दुनिया का सबसे बड़ा क्रान्तिकारी कारनामा कहें, तो ग़लत न होगा।

पालनहार रब की बन्दगी की दावत

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) की दावत पालनहार रब की बन्दगी की

दावत थी। यह इनसान की प्रतिष्ठा और महानता की दावत थी। यह उसे पतन से उत्थान की तरफ़ ले जानेवाली दावत थी। इनसान अपने आप से लापरवाह और बेसुध था, आप *(सल्ल॰)* ने उसे बताया कि उसका सही स्थान और दरजा क्या है। वह मुद्दतों से सोया पड़ा था, आप *(सल्ल॰)* ने उसे जगाया। वह अपनी हैसियत से अनजान था। आप *(सल्ल॰)* ने उसे उसकी सही हैसियत बताई। उसके चारों तरफ़ झूठे ख़ुदाओं की भीड़ थी, आप *(सल्ल॰)* ने उसे बताया कि उसका ख़ुदा केवल एक है और उसे केवल उसी एक ख़ुदा की बन्दगी करनी चाहिए। ख़ुदा के पैदा किए हुए प्राणियों में कुछ तो ख़ुदाई के दावेदार थे और कुछ को इनसानों ने ख़ुदा बना रखा था। आप *(सल्ल॰)* ने इन दोनों तरह के ख़ुदाओं को चैलेंज किया और कहा कि इनमें से ख़ुदाई का हर दावेदार झूठा है। ख़ुदाई का स्थान यहाँ ज़मीन और आसमान के बनानेवाले, केवल एक ख़ुदा के सिवाय किसी को प्राप्त नहीं है। इनसान ने जिस चीज़ को भी ख़ुदा बना रखा है, उसे अनुचित स्थान दे रखा है। जब तक वह उन झूठे ख़ुदाओं से बग़ावत न कर दे परलोक में सफलता नहीं पा सकता। आप *(सल्ल॰)* ने सचेत किया कि जब इनसान उस एकमात्र वास्तविक ख़ुदा की बन्दगी छोड़ देता है, जिसने इतना बड़ा विश्व पैदा किया है और ऐसे ख़ुदाओं की ग़ुलामी करने लगता है, जो किसी भी हैसियत से ख़ुदाई के हक़दार नहीं हैं तो वह ज़िन्दगी के मैदान में एक ग़लत स्थान पर खड़ा हो जाता है और उसका हर क़दम ग़लत दिशा में उठने लगता है। जो आदमी ज़िन्दगी भर ग़लत रास्ते पर दौड़ता रहे, उसके बारे में यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि वह अंत में सफल होगा। इनसान के लिए सही रवैया यह है कि वह इस कायनात (सृष्टि) पर एक ख़ुदा के सिवा किसी की सत्ता को न माने, न किसी को पैदा करनेवाला और मालिक समझे और न किसी को शासक और पूज्य-प्रभु माने; न किसी को रोज़ी देनेवाला समझे और न किसी को लाभ और हानि पहुँचानेवाला माने और हर ग़ुलामी को ठुकराकर केवल एक ही

ख़ुदा की ग़ुलामी अपना ले। कायनात (सृष्टि) की हर चीज़ ख़ुदा की पैदा की हुई है। उसे ख़ुदाई का स्थान देना सबसे बड़ा अपराध है, जो कभी माफ़ नहीं हो सकता।

मुहम्मद *(सल्ल.)* की यह दावत उस समय के प्रचलन के ख़िलाफ़ जंग का एलान था। इसका अर्थ यह था कि जो ख़ुदा बने बैठे हैं, वे ख़ुदाई का स्थान छोड़ दें और जो लोग अपने बनाए हुए ख़ुदाओं की बन्दगी में लगे हुए हैं, वे उनकी बन्दगी से तौबा करें। सारे ख़ुदाओं की ख़ुदाई ख़त्म करके केवल एक ख़ुदा की सत्ता क़ायम हो जाए। उसी की बन्दगी हो, उसी की इबादत की जाए, उसी का क़ानून चले, उसी से डरा जाए, उसी से उम्मीद लगाई जाए, उसी का हुक्म माना जाए, उसी की फ़रमाँबरदारी की जाए, उसी को ख़ुश किया जाए और उसी की नाराज़ी से बचा जाए।

इस दावत को सुनते ही अनगिनत ख़ुदाओं के सामने झुकनेवाली दुनिया चिल्ला उठी—

أَجَعَلَ الْآلِهَةَ إِلَٰهًا وَاحِدًا ۖ إِنَّ هَٰذَا لَشَيْءٌ عُجَابٌ ۝

"क्या उसने बहुत-से ख़ुदाओं को एक ख़ुदा बना दिया? निश्चय ही यह बड़ी ही अजीब बात है!"

(क़ुरआन, सूरा-38 सॉद, आयत-5)

प्रतिक्रिया हुई

पैग़म्बर *(सल्ल.)* की यह दावत बिजली बनकर अपने माहौल पर गिरी और इसकी कड़क से उन विचारधाराओं की वह इमारत हिलने लगी जिसके अन्दर सारे झूठे ख़ुदा और उनके पुजारी पनाह लिए हुए थे। इस दावत को जिसने भी सुना इसकी तरफ़ आकर्षित हो गया। इसके ज़ोर और शक्ति को वे लोग बिलकुल नज़रअन्दाज़ न कर सके, जिनको यह अपना पैग़ाम दे रही थी। उन्होंने महसूस किया कि यह एक ज़बरदस्त पैग़ाम है, जिसके प्रभाव बहुत दूर तक और बहुत गहरे

होंगे। यह उनके 'दीन' और मज़हब (धर्म और पंथ) पर हमला है; उनके अक़ीदों और विचारधाराओं के लिए मौत का पैग़ाम है, उनकी संस्कृति और सामाजिक रहन-सहन पर हमला है। इस दावत के आगे बढ़ने का मतलब यह है कि उनकी प्यारी दुनिया का खातिमा कर दिया जाए और एक 'नई दुनिया' बना दी जाए। इस 'ख़तरे' को महसूस करते ही उन्होंने आप *(सल्ल.)* के ख़िलाफ़ मोर्चाबन्दी शुरू कर दी और उस दावत के मुक़ाबले के लिए मैदान में आ गए, जिसे आप *(सल्ल.)* पेश कर रहे थे। हर झूठा खुदा अपनी खुदाई की सुरक्षा के लिए खड़ा हो गया और हर बुत के पुजारी ने अपने बुत के समर्थन में कमर कस ली। हर तरफ़ से आवाज़ आने लगी—

أَنِ امْشُوا وَاصْبِرُوا عَلَىٰ آلِهَتِكُمْ ۖ إِنَّ هَٰذَا لَشَيْءٌ يُرَادُ ۝ مَا سَمِعْنَا بِهَٰذَا فِي الْمِلَّةِ الْآخِرَةِ إِنْ هَٰذَا إِلَّا اخْتِلَاقٌ ۝

"चलो और अपने माबूदों (के समर्थन) पर जम जाओ। निश्चय ही (यह दावत अकारण नहीं है बल्कि) इसमें कोई-न-कोई ग़रज़ (छिपी हुई) है। ऐसी बात तो हमने पिछले दीन (धर्म) में भी नहीं सुनी थी। निश्चय ही यह गढ़ी हुई बात है।"

(क़ुरआन, सूरा-38 सॉद, आयतें-6,7)

अब उस माहौल में जिसमें मुहम्मद *(सल्ल.)* की दावत उठी थी, ज़बरदस्त कशमकश शुरू हो गई और आप *(सल्ल.)* को और आपके साथियों को इतनी कठिन आज़माइशों से गुज़रना पड़ा कि खुदा की बन्दगी करनेवालों के सिवा कोई उनको सहन ही नहीं कर सकता था। यह लोगों के बीच माल और दौलत का झगड़ा नहीं था, यह किसी जायदाद का विवाद नहीं था, ये क़बीलों के आपसी झगड़े और झड़पें नहीं थीं; यहाँ किसी गिरोह के सत्ता पाने और किसी गिरोह से सत्ता छिन जाने की बहस नहीं थी, बल्कि यह कशमकश इस दावत के कारण थी कि इनसान केवल एक खुदा की इबादत और बन्दगी क़बूल कर ले

और दिल-जान से उसके सामने झुक जाए। यह एक सच्चाई है कि इनसान ख़ुदा का बन्दा है और उसे ख़ुदा ही बन्दगी करनी चाहिए। मुहम्मद *(सल्ल.)* और आपके साथी (रज़ि.) इस सच्चाई को मान रहे थे और आपके विरोधी इस सच्चाई को झुठला रहे थे। यह सत्य और असत्य की कशमकश थी और एक प्रामाणिक दावा और बेबुनियाद बात का मुक़ाबला था। आप *(सल्ल.)* की दावत इनसान के स्वभाव के बिलकुल अनुकूल थी। इसलिए दिलों को अपील करती थी और घोर विरोध के बावुजूद फैलती जा रही थी। लोग हर तरफ़ से खिंच-खिंचकर इसकी तरफ़ आ रहे थे, यहाँ तक कि कट्टर से कट्टर दुश्मनों के घरों से भी इसके समर्थक पैदा होने लगे और इस तरह ख़ुदा के दीन का बोल क़ायम करने के लिए इसे हक़ के विरोधियों की अगली पंक्तियों तक से सिपाही मिलने शुरू हो गए।

ख़ुदा का बोल ऊँचा करनेवाले

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के माननेवालों के सामने एक महान उद्देश्य था। वे एक बहुत बड़ा काम लेकर उठे थे। उनपर यह ज़िम्मेदारी डाली गई थी कि वे उस दीन (धर्म) की गवाही दें, जिसको उन्होंने सच्चा दीन (सत्य धर्म) समझकर अपनाया है, और उस दावत को आम करें, जो ख़ुदा की तरफ़ से उन्हें मिली है। उनसे कहा गया कि दुनिया ख़ुदा को भूली हुई है, जाओ, इसे ख़ुदा के ज़िक्र और गुण-गान से भर दो। लोग अपने अंजाम से अनजान हैं, उठो, उन्हें अपने अंजाम से सचेत करो। इनसान विनाश की तरफ़ बढ़ रहा है, दौड़ो, उसे विनाश से बचाओ। दुनिया से इनसाफ़ और न्याय मिट रहा है, दौड़ो, उसे ज़िन्दा करो। भलाई ख़त्म हो रही है और बुराई फैल रही है, तुम्हारा फ़र्ज़ है कि भलाई को क़ायम करो और बुराई को ख़त्म कर दो।

इस तरह हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के नेतृत्व में एक ऐसी उम्मत

तैयार हुई, जो दुनिया की सारी उम्मतों और जमाअतों (जातियों और संगठनों) से बिलकुल अलग थी। दुनिया का हर गिरोह अपने निजी स्वार्थ की धुरी के चारों तरफ़ घूम रहा था। लेकिन ये लोग ख़ुदा के दीन के लिए अपने हितों को क़ुरबान कर रहे थे। यह व्यापारियों का गिरोह नहीं था, जो अपने व्यापार को बढ़ाने की कोशिश करता; यह पूँजीपतियों का वर्ग नहीं था कि उसे अपनी पूँजी बढ़ाने की चिन्ता होती; यह अपने कुछ अधिकार नहीं चाह रहा था कि समय के सत्ता-शासन से उन अधिकारों को पाकर ख़ुश हो जाता। यह अपने 'हितों' की रक्षा में नहीं लगा हुआ था कि उनकी सुरक्षा के बाद निश्चिन्त होकर बैठ जाता; यह ख़ुदा के दुश्मनों से किसी समझौते का इच्छुक नहीं था कि उस समझौते के साथ उसका काम ख़त्म हो जाता और उसको 'चैन' की नींद आ जाती; बल्कि यह ख़ुदा के वफ़ादारों का गिरोह था, सच्चे ईमानवालों और आज्ञाकारी इनसानों का गिरोह था; यह परलोक को पसन्द करनेवालों और ख़ुदा के चाहनेवालों का गिरोह था, जो दुनियावालों को ख़ुदा की इबादत की दावत देने और उसे एक मानने को उठा था। उसके सामने सिवाय इसके और कोई लक्ष्य नहीं था कि ख़ुदा के बन्दों तक ख़ुदा का दीन (जीवन-विधान) पहुँच जाए। वह अपनी जान-तोड़ कोशिश और कठोर परिश्रम में इससे कम किसी चीज़ पर तैयार न था कि इनसान दूसरे सब की बन्दगी छोड़कर केवल एक ख़ुदा की बन्दगी स्वीकार कर ले। उस गिरोह का हर आदमी ख़ुदा का सिपाही था, जो ख़ुदा के दीन को प्रभावी और सफल बनाने की प्रबल भावना से ओत-प्रोत था। वह इसी उद्देश्य के लिए जी रहा था और इस उद्देश्य पर जान दे रहा था।

आज़माइशें शुरू हो गईं

इस परिस्थिति ने वातावरण में एक ज़बरदस्त उथल-पुथल पैदा कर दी। जो लोग इस दावत का साथ दे रहे थे उनपर हर तरफ़ से मुसीबतों

के पहाड़ टूट पड़े, दोस्त दुश्मन बन गए, मुहब्बत नफ़रत में बदल गई, जिन होंठों पर मुस्कराहट थी, उनपर कठोरता के निशान ज़ाहिर होने लगे और हक़ का इनकार करनेवाली शक्तियाँ उन्मादी जोश के साथ पिल पड़ीं; भाई के हाथ से बहन चोट खा रही थी; माँ-बाप औलाद को सताने और नुक़सान पहुँचाने पर तुले थे; पत्नी पति के अत्याचार का निशाना बनी हुई थी, रिश्तेदार रिश्तेदार की जान के लिए अज़ाब बना हुआ था, लेकिन क़ुरआन की दावत जिनके दिलों पर उतर चुकी थी, वे ज़ख़्म पर ज़ख़्म खा रहे थे और मुस्करा रहे थे। दुश्मन तीर आज़मा रहा था और वे अपना सीना आज़मा रहे थे। तपती हुई रेत पर उन्हें घसीटा जाता, जलते हुए कोयलों पर लिटाया जाता, लेकिन उनके अटल क़दमों में लड़खड़ाहट न आती। परिन्दे तो ठंडी छाया में पनाह ले सकते थे, लेकिन उनके लिए कोई छाया नहीं थी। जंगल के जानवर तो आज़ादी से घूमते थे, लेकिन उनके पाँवों में 'बेड़ियाँ' थीं। ये एक ख़ुदा के बन्दे थे और दुनिया इन्हें हक़ पर चलने के अपराध की सज़ा दे रही थी। इन्होंने यह समझकर आप *(सल्ल.)* (मेरे माँ-बाप आप पर क़ुरबान) की दावत स्वीकार की थी कि कोई चीज़ अब उनकी अपनी नहीं रही, बल्कि ख़ुदा की हो गई और जहाँ ख़ुदा का हुक्म होगा, वहाँ वे उसे बेझिझक ख़र्च कर देंगे। ख़ुदा को ख़ुश करने के लिए उन्होंने अपने आपको बेच दिया था। वे अपनी जान की क़ीमत वसूल कर चुके थे। इसी लिए उन्हें इसकी कोई परवाह नहीं थी कि मौत किस पल आती है और किस हालत में आती है? सच्चाई यह है कि आज भी पैग़म्बर *(सल्ल.)* की दावत का साथ वही आदमी दे सकता है, जिसे ज़िन्दगी से अधिक मौत प्यारी हो; जिसे बीवी-बच्चों से अधिक ख़ुदा से और उसके दीन से मुहब्बत हो, जो हक़ के लिए रिश्तों पर छुरी चला सकता हो और अपने चलते हुए कारोबार को नुक़सान पहुँचा सकता हो और जो अपने सुख-चैन को क़ुरबान करने के लिए तैयार हो, वरना जिस इनसान को जान और औलाद प्यारी हो, जो रिश्तों में बँधा हो, जो सही-सलामत

और सुख-शान्ति से रहने का इच्छुक हो और जिसे अपने कारोबार और माल-दौलत से मुहब्बत हो, वह कभी उस दावत की माँगें पूरी कर ही नहीं सकता, जो मुहम्मद *(सल्ल.)* की दावत थी और जिसके लिए आप *(सल्ल.)* ने अपनी पूरी ज़िन्दगी और अपना सब कुछ लुटा दिया था। क़ुरआन मजीद का साफ़- साफ़ एलान है—

قُلْ اِنْ كَانَ اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ وَاِخْوَانُكُمْ وَاَزْوَاجُكُمْ وَعَشِيْرَتُكُمْ
وَاَمْوَالُ ۨاقْتَرَفْتُمُوْهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسٰكِنُ تَرْضَوْنَهَآ اَحَبَّ
اِلَيْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَجِهَادٍ فِيْ سَبِيْلِهٖ فَتَرَبَّصُوْا حَتّٰى يَاْتِيَ اللّٰهُ بِاَمْرِهٖ ؕ
وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ﴿۲۴﴾

"(ऐ मुहम्मद!) लोगों से कह दो कि अगर तुम्हारे बाप और तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी बीवियाँ और तुम्हारे परिवार और क़बीले के लोग और वह माल-दौलत जिसे तुमने हासिल किया है और वह व्यापार जिसके मन्दा पड़ जाने का तुम्हें डर रहा करता है और वे मकान जिनको तुम पसन्द करते हो, अगर अल्लाह और उसके पैग़म्बर और उसकी राह में जिहाद (जान-तोड़ संघर्ष) से अधिक तुम्हें प्रिय हैं, तो इस बात का इन्तिज़ार करो कि ख़ुदा अपना फ़ैसला लागू कर दे और यह सच्चाई है कि अल्लाह नाफ़रमान लोगों को सीधी राह नहीं दिखाता।" (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-24)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अपने माननेवालों को पहले ही क़दम पर बता दिया था कि यह न समझो कि तुम्हारा रास्ता आसान है। तुमने जो रास्ता अपनाया है उसपर वही आदमी चल सकता है, जो उसकी कठिनाइयों को अपनी जान के लिए सुख-चैन समझे और बड़े से बड़े सदमे को भूलकर इस तरह आगे बढ़ जाए जैसे वह उसके लिए सदमा था ही नहीं। यह सच्चाई का रास्ता है और सच्चाई का रास्ता कोई नया रास्ता नहीं है। इसपर तुम्हें पैग़म्बरों और उनकी पैरवी करनेवालों के

क़दमों के निशान मिलेंगे। यही निशान तुम्हारे लिए आदर्श नमूना हैं। उन्होंने अपना सब कुछ लुटा दिया, लेकिन सच्चाई के रास्ते से पीछे न हटे। जब इसी रास्ते पर तुम्हें चलना है और इसके सिवा कोई दूसरा रास्ता तुम्हारे लिए है ही नहीं, तो फिर रास्ते की दूरी के बारे में क्यों पूछते हो? जब यह रास्ता ही पथरीला है तो पाँवों में छाले पड़ जाने की शिकायत क्यों करते हो? जब तुमने काँटों भरी घाटी में क़दम रखा है, तो किसलिए काँटों को गिनते हो? याद रखो, जब तुमने ईमान का दावा किया है तो तुम्हें मुख पर शिकायत के शब्द लाने की अनुमति नहीं है। इस रास्ते में मंज़िल तक पहुँचने के लिए असीम साहस और उत्साह, अनन्त त्याग और बलिदान की ज़रूरत है। जिस आदमी को दुनिया का हर आकर्षण और मन की हर इच्छा अपनी तरफ़ खींच ले, वह ईमान की मंज़िल तक नहीं पहुँच सकता। हक़ तुमसे बलिदान की माँग करता है और तुम ठोकरों से घबराते हो। ईमानवालों के रास्ते में न तो उसके मन की इच्छाएँ रुकावट बन सकती हैं, न बीवी-बच्चे, न माल-दौलत और न शान-शौकत और शासन-सत्ता; क्योंकि यह ईमान के बिलकुल उलट और हर सत्य-मार्ग पर चलनेवालों के तरीक़े के प्रतिकूल है। मौत का एक समय निश्चित है और अपने निश्चित समय पर मौत आकर रहेगी; तो फिर क्यों न इनसान ख़ुदा ही की राह में मरे। ज़िन्दगी एक बहुमूल्य पूँजी है। इससे इनसान 'दुनिया की नेमतें' भी ख़रीद सकता है और 'परलोक का पुण्य (सवाब)' भी। उस इनसान की क़िस्मत का क्या कहना, जो परलोक की चाह में अपनी दुनिया को न्योछावर कर दे कि कल उसी के हिस्से में ख़ुदा की हमेशा रहनेवाली नेमतें आनेवाली हैं–

وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تَمُوْتَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ كِتٰبًا مُّؤَجَّلًا ۗ وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا
نُؤْتِهٖ مِنْهَا ۚ وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِهٖ مِنْهَا ۗ وَسَنَجْزِى الشّٰكِرِيْنَ ۝ وَكَاَيِّنْ
مِّنْ نَّبِيٍّ قٰتَلَ ۙ مَعَهٗ رِبِّيُّوْنَ كَثِيْرٌ ۚ فَمَا وَهَنُوْا لِمَآ اَصَابَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَمَا
ضَعُفُوْا وَمَا اسْتَكَانُوْا ۗ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الصّٰبِرِيْنَ ۝

"कोई प्राणी अल्लाह के हुक्म के बिना मर नहीं सकता। मौत का समय तो लिखा हुआ है। जो कोई दुनिया के सवाब का इच्छुक होगा, उसे हम उसी में से देंगे और जो कोई परलोक का सवाब चाहेगा उसे परलोक का सवाब देंगे और शुक्र करनेवालों को हम निश्चय ही उनके शुक्र का बदला प्रदान करेंगे। कितने ही ऐसे नबी गुज़रे हैं कि बहुत-से अल्लाहवालों ने उनके साथ होकर दुश्मनों से जंग की और ख़ुदा की राह में उन्हें जो कुछ तकलीफ़ पहुँची, उससे वे न हताश हुए और न कमज़ोरी दिखाई और न उन्होंने दुश्मनों के मुक़ाबले में घुटने टेके और अल्लाह सब्र करनेवालों को पसन्द करता है।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयतें-145,146)

जिन लोगों ने मुहम्मद *(सल्ल.)* की दावत क़बूल की थी, उन्होंने इस विश्वास और आस्था के साथ क़बूल किया था कि लोक और परलोक की कामयाबी इसी दावत के साथ जुड़ी हुई है। हक़ वह है जिसे आप *(सल्ल.)* की ज़बान हक़ कहे और जिसे आप *(सल्ल.)* असत्य कह दें वह असत्य है। मुक्ति उस मार्ग में है जिसे आप *(सल्ल.)* प्रस्तुत कर रहे हैं, इसके विपरीत जितने रास्ते हैं, सब मंज़िल से भटकानेवाले हैं। यही विश्वास उनकी अस्ल पूँजी थी, इसी विश्वास के द्वारा वे असत्य का सामना करते रहे। आज़माइशें अपने हद को पहुँच गईं, लेकिन उनके विश्वास और आस्था को बदल न सकीं। असत्य ने अपनी पूरी शक्ति लगा दी, लेकिन वह उन्हें अपने सामने झुका न सका। उनके सामने ख़ुदा के बन्दों के हौसलों से भरे हालात थे, उनकी सिर-धड़ की बाज़ी लगा देने के कारनामे थे और उनकी वफ़ादारी और बहादुरी का इतिहास था। इसी लिए वे अपना सब कुछ उस दावत के लिए लुटा रहे थे, लेकिन इसके बावजूद उन्हें यही एहसास सताया करता था कि अभी वफ़ादारी का हक़ अदा नहीं हुआ है।

हिजरत हुई

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की इस दावत को शुरू हुए तेरह साल की अवधि गुज़र चुकी थी, ख़ुदा का नाम लेनेवाले चोट खाए हुए जिस्मों और ज़ख़्मी दिलों के साथ हक़ की गवाही दे रहे थे, वे पूरी तरह पीड़ित थे, उन्होंने किसी पर ज़ुल्म नहीं किया था, किसी का माल नहीं छीना था, किसी के साथ बुरा बरताव नहीं किया था, किसी की इज़्ज़त और आबरू पर हमला नहीं किया था; उनसे किसी को दुख-तकलीफ़ नहीं पहुँची थी, वे ख़ुदा के बन्दे थे और उनका अपराध केवल यह था कि वे अपने बन्दा होने का एलान कर रहे थे और दूसरों को बन्दगी की दावत दे रहे थे। जब हालात बरदाश्त से बाहर हो गए, तो ख़ुदा ने उन्हें हुक्म दिया कि अब वे अत्याचारियों की बस्ती छोड़ दें। इसलिए उन्होंने अपनी वह बस्ती छोड़ दी, जिसके दरो-दीवार से उन्हें मुहब्बत थी, जिसके पहाड़ों और पानी के सोतों से उन्हें प्यार था, जिसके गली-कूचों से उन्हें गहरा लगाव और रिश्ता था, जिसकी मिट्टी के कण-कण और हवा के झोंकों से उन्हें प्रेम था। उन्होंने एक नई बस्ती को अपना ठिकाना बनाया। वे बिलकुल ख़ाली हाथ मक्का की पवित्र भूमि से निकलकर मदीने की तरफ़ कूच कर गए। यह देश-त्याग न था, यह ख़ुदा की राह में 'हिजरत' थी और सही अर्थों में हिजरत थी। इस नई बस्ती ने दोस्ताना जोश-ख़रोश के साथ उनका स्वागत किया और ख़ुदा का दीन उनके बीच फैलने लगा। दीन के दुश्मन इसको सहन न कर सके और तड़प उठे और हर तरफ़ से इस बस्ती पर तीर बरसने लगे, लेकिन विरोध के इसी तूफ़ान में वे लोग भी तैयार होते रहे, जिनकी ख़ुदा के दीन को फैलाने और प्रभावी बनाने के लिए ज़रूरत थी। वे आज़माइश की भट्ठी से गुज़ारकर कुन्दन बनाए जा रहे थे। उनके सीने ख़ुदा की याद से भरे हुए थे और उनके चेहरों पर बन्दगी के निशान झलक रहे थे। वे अपने विचारों में दूसरों के विचारों से, अपने आचरण में

दूसरों के आचरण से, अपने जीवन-चरित्र में दूसरों के जीवन-चरित्र से और अपने कर्मों में दूसरों के कर्मों से बिलकुल ही अलग थे।

जिहाद किया गया

जब इन पाक और भले लोगों की एक जमाअत तैयार हो गई, तो क़ुरआन ने उनसे कहा कि अब समय आ गया है कि ज़माने की रफ़्तार बदल दी जाए, अत्याचारी के हाथ से तलवार छीन ली जाए और इनसाफ़ और न्याय की सत्ता क़ायम की जाए, अब ख़ुदा का नाम लेना अपराध न होगा, अब उसके बन्दे सताए न जाएँगे, अब वे अपने घर से बेघर न होंगे, अब उनपर डर और निराशा की हालत न रहेगी, अब हक़ के उत्पीड़ित होने की स्थिति बाक़ी न रहेगी और अब ख़ुदा के दीन की मदद और जीत का कारनामा अंजाम पाएगा। उठो, अपने हाथों से यह कारनामा अंजाम दो। दुनिया तुम्हारा इन्तिज़ार कर रही है और ख़ुदा तुम्हारी मदद के लिए तैयार है—

أُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَاتَلُونَ بِأَنَّهُمْ ظُلِمُوا ۚ وَإِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ نَصْرِهِمْ لَقَدِيرٌ ۝ الَّذِينَ أُخْرِجُوا مِن دِيَارِهِم بِغَيْرِ حَقٍّ إِلَّا أَن يَقُولُوا رَبُّنَا اللَّهُ

> “वे सत्यप्रिय लोग जिनसे उनके दुश्मन लड़ रहे हैं उन्हें अनुमति दे दी गई कि वे भी उनसे लड़ें; क्योंकि उनपर ज़ुल्म किया गया है और निश्चय ही अल्लाह उनकी मदद की सामर्थ्य रखता है। ये वे लोग हैं जो अपने घरों से नाहक़ निकाल दिए गए। उनका अपराध इसके सिवा कुछ नहीं है कि वे कहते हैं कि हमारा रब अल्लाह है।” (क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयतें-39,40)

अत्याचारियों के विरुद्ध हथियार उठाने की यह अनुमति उन लोगों को दी गई थी, जो रात इबादत में और दिन घोड़ों की पीठ पर गुज़ारते थे, जो ख़ुदा के दीन का बोलबाला करने के लिए मैदान में आए थे और जो उसके दीन के समर्थन और सहयोग के लिए उठे थे। यह अनुमति

उनको इसलिए दी गई थी, ताकि कमज़ोरों पर सितम के पहाड़ अब और न टूटें, दुनिया से ज़ुल्म-ज़्यादती का ज़ोर ख़त्म हो, इनसान को यह हक़ हासिल हो कि वह आज़ादी के साथ ख़ुदा की बन्दगी करे और ख़ुदा के बन्दे इस कारण न सताए जाएँ कि वे उसकी इबादत कर रहे हैं और उसका दीन फैलाना चाहते हैं। क़ुरआन में कहा गया है—

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَآءِ وَ الْوِلْدَانِ الَّذِيْنَ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اَخْرِجْنَا مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا وَاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ وَلِيًّا ۚ وَّاجْعَلْ لَّنَا مِنْ لَّدُنْكَ نَصِيْرًا ﴿۷۵﴾

"तुम्हें क्या हो गया है कि तुम ख़ुदा की राह में और उन बेबस और कमज़ोर मर्दों, औरतों और बच्चों के लिए नहीं लड़ते हो, जो दुआएँ माँग रहे हैं कि ऐ हमारे रब! हमें इस बस्ती से निकाल ले, जिसके बाशिन्दे हमपर ज़ुल्म कर रहे हैं और अपनी तरफ़ से हमें कोई संरक्षक प्रदान कर और अपनी (ही) तरफ़ से हमारा कोई मददगार पैदा कर दे।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-75)

इस तरह अरब भू-भाग पर वह युद्ध लड़ा गया, जो दुनिया की सबसे बड़ी क्रान्ति की पृष्ठभूमि साबित हुई और जिसने इतिहास का रुख़ बिलकुल मोड़कर रख दिया; इस लड़ाई को अगर आप दुनिया के दूसरे युद्धों की तरह समझेंगे, तो बहुत बड़ी ग़लती करेंगे; क्योंकि इसके पीछे वे स्वार्थपूर्ण और बुरे कारक नहीं थे, जिनके कारण आम तौर पर लड़ाइयाँ होती हैं। यह लड़ाई सही अर्थों में एक पवित्र लड़ाई थी और इतने बड़े और महान उद्देश्य के लिए लड़ी जा रही थी, जिससे और बड़े उद्देश्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती। दुनिया तो केवल यही जानती थी कि लड़ाई केवल माल-दौलत के लिए होती है। लड़ाई-झगड़े अधिकार मनवाने के लिए होते हैं, ख़ून-ख़राबे दुश्मनी और वैर के कारण होते हैं और युद्ध देशों को जीतने के लिए किया जाता है।

दुनिया ईश-भक्ति के लिए जान-तोड़ संघर्ष से अनजान थी। वह नहीं जानती थी कि खुदा का दीन (ईश्वरीय जीवन-विधान) स्थापित करने के लिए भी लड़ाई लड़ी जाती है। कुफ़्र और शिर्क (अधार्मिकता और बहुदेववाद) को मिटाने और फ़ितना-फ़साद को ख़त्म करने के लिए भी जान-माल की क़ुरबानी दी जाती है। अब यही लड़ाई लड़ी जा रही थी। यह पवित्र उद्देश्य के लिए पाक और भले इनसानों की लड़ाई थी। यह खुदा का नाम लेनेवालों और शैतान के चेलों के बीच लड़ाई थी। इस लड़ाई में एक तरफ़ खुदा के दोस्त थे और दूसरी तरफ़ उसके दुश्मन; एक तरफ़ हक़ का बोलबाला चाहनेवाले लोग थे और दूसरी तरफ़ असत्य की सत्ता स्थापित करने के इच्छुक लोग; एक तरफ़ नैतिकता के अलमबरदार थे और दूसरी तरफ़ अनैतिकता और अश्लीलता फैलानेवाले; एक तरफ़ परलोक के चाहनेवाले थे और दूसरी तरफ़ दुनिया के पुजारी। खुदा का वादा था कि इस लड़ाई में उसके दोस्त विजयी होंगे और उसके दुश्मन पराजित। इसलिए खुदा का वादा पूरा हुआ और दुनिया की कोई शक्ति उसके मार्ग में बाधक न बन सकी—

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۚ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ الطَّاغُوْتِ فَقَاتِلُوْٓا اَوْلِيَآءَ الشَّيْطٰنِ ۚ اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطٰنِ كَانَ ضَعِيْفًا ۝

"जो लोग ईमान रखते हैं, वे खुदा की राह में लड़ते हैं और खुदा का इनकार करनेवालों की लड़ाई बढ़े हुए फ़सादी की राह में होती है; तो ऐ ईमानवालो! तुम शैतान के साथियों से लड़ो (निश्चय ही तुम कामयाब रहोगे), क्योंकि शैतान की चाल बहुत ही कमज़ोर होती है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-76)

सत्य प्रभावी हो गया

उस समय के आने पर हक़ की दावत के कमज़ोर पौधे ने पूरी तेज़ी

के साथ एक विशाल वृक्ष का रूप ले लिया, जिसकी छाया में अनगिनत इनसानों को 'पाक ज़िन्दगी मिली' मिली, सुख-शान्ति मिली, ख़ुदा की बन्दगी और परहेज़गारी की दौलत मिली। मक्का की पहाड़ियों से हक़ की जो आवाज़ उठी थी, वह अब धीरे-धीरे पूरे अरब प्रायद्वीप में गूँजने लगी। अत्याचारपूर्ण आज़माइश का दौर ख़त्म हुआ और सत्ता और शासन का दौर आ गया। डर की हालत जाती रही और सुख-शान्ति की ज़िन्दगी नसीब हुई, असत्य का ज़ोर टूट गया और ख़ुदा के दीन पर अमल करना आसान हो गया। हक़ की दावत का यह काम तेईस साल की अवधि में ख़ुदा के पैग़म्बर *(सल्ल.)* और आप *(सल्ल.)* के प्यारे साथियों (रज़ि.) के हाथों अंजाम पाया और जब भी यह काम अंजाम पा सकता है, तो ऐसे ही ख़ुदापरस्त और नेक इनसानों के द्वारा अंजाम पा सकता है। जब यह काम ख़त्म हो चुका, तो ख़ुदा की तरफ़ से दीन और नेमतों के पूरा होने का एलान हो गया और हक़ को नकारनेवालों पर ख़ुदा के दीन के बारे में अन्तिम रूप से निराशा छा गई—

اَلْيَوْمَ يَئِسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ دِيْنِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ ۭ اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ۭ

"आज हक़ के इनकारी तुम्हारे दीन से निराश हो चुके हैं; तो तुम उनसे न डरो, बल्कि मुझी से डरो। आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को पूरा कर दिया है और अपनी नेमत तुमपर पूरी कर दी है और तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन की हैसियत से पसन्द किया है।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-3)

हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अल्लाह की तरफ़ आने की जो दावत दी, क्या इनसान की भलाई और कामयाबी की इससे बेहतर कोई दावत हो सकती है? इस दावत के द्वारा जो मानवता का कल्याण करनेवाली महानतम क्रान्ति आई, क्या मानव-इतिहास ने इतनी पवित्र और बड़ी

दावत की विषय-वस्तुएँ

- इस्लाम की दावत
- दावत और अनुपालन
- दावत और सुधार का क्रम
- दावत के उसूल और आदाब
- दावत देनेवाला कामयाब है
- दीन के इनकार के विभिन्न कारण
- वे लोग जिनको ख़ुदा का दीन मिलता है

इस्लाम की दावत

सच्चे दीन की गवाही

क़ुरआन मजीद में यह बात पूरी स्पष्टता के साथ बयान हुई है कि अल्लाह के पैग़म्बर दुनिया में 'लोगों पर गवाही' का फ़र्ज़ अंजाम देते हैं। इसका अर्थ यह है कि जिस क़ौम में पैग़म्बर भेजे जाते हैं, वे उसके बीच अल्लाह के दीन का हक़ होना प्रमाणों और तर्कों से इस तरह सिद्ध कर देते हैं कि उसके इनकार का कोई सही और उचित आधार शेष ही नहीं रहता और हुज्जत (समझाने की प्रक्रिया) पूरी हो जाती है। इसी अर्थ में अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल.)* को 'शाहिद' (गवाही देनेवाला) या 'शहीद' (गवाह) कहा गया है—

وَنَزَعْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ شَهِيْدًا فَقُلْنَا هَاتُوْا بُرْهَانَكُمْ فَعَلِمُوْٓا اَنَّ الْحَقَّ لِلّٰهِ وَضَلَّ
عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ۝

"और हम हर उम्मत में से एक शहीद (गवाह) निकालेंगे। फिर (हक़ के इनकारियों से) कहेंगे कि अपनी दलील पेश करो। तब वे जान जाएँगे कि सच्ची बात अल्लाह की है और जो कुछ वे झूठ गढ़ रहे थे, वह सब ग़ायब हो जाएगा।"

(क़ुरआन, सूरा-28 क़सस, आयत-75)

इस गवाही पर क़ौमों का फ़ैसला हो जाता है

जब किसी क़ौम में लोगों पर गवाही का फ़र्ज़ पूरी तरह अंजाम पा जाता है और हुज्जत पूरी हो जाती है, तो उसका फ़ैसला हो जाता है। अल्लाह के पैग़म्बरों का साथ देनेवाले उसके इनाम और उपहार के

हक़दार हो जाते हैं और उनके विरोधियों पर उसका अज़ाब टूट पड़ता है—

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ رُسُلًا اِلٰى قَوْمِهِمْ فَجَآءُوْهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَانْتَقَمْنَا مِنَ الَّذِيْنَ اَجْرَمُوْا ؕ وَكَانَ حَقًّا عَلَيْنَا نَصْرُ الْمُؤْمِنِيْنَ

"और हमने तुमसे पहले भी पैग़म्बर उनकी क़ौमों की तरफ़ भेजे। वे उनके पास स्पष्ट निशानियाँ लेकर आए, (उसके बाद) हमने उन लोगों से बदला लिया, जिन्होंने अपराध किया (और ईमानवालों की मदद की)। ईमानवालों की मदद करना हमारे लिए ज़रूरी था।"

(क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-47)

क़ियामत (महाप्रलय) के दिन भी क़ौमों का फ़ैसला इसी गवाही के आधार पर होगा। क़ुरआन मजीद में है—

فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ بِشَهِيْدٍ وَّجِئْنَا بِكَ عَلٰى هٰٓؤُلَآءِ شَهِيْدًا ؕ يَوْمَئِذٍ يَّوَدُّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَعَصَوُا الرَّسُوْلَ لَوْ تُسَوّٰى بِهِمُ الْاَرْضُ ؕ وَلَا يَكْتُمُوْنَ اللّٰهَ حَدِيْثًا

"उस समय क्या हाल होगा, जबकि हम हर उम्मत में से एक गवाह लाएँगे और आपको (ऐ मुहम्मद सल्ल॰) उन लोगों पर गवाह बनाकर खड़ा करेंगे। उस दिन जिन लोगों ने हक़ का इनकार किया और पैग़म्बर का कहना न माना, तमन्ना करेंगे कि काश! ज़मीन फट जाए और उसमें समा जाएँ। और अल्लाह से कोई बात छिपा न सकेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयतें-41,42)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* मिम्बर पर विराजमान थे और उन्होंने मुझसे क़ुरआन सुनाने की फ़रमाइश की। मैंने अर्ज़ किया : क्या मैं क़ुरआन सुनाऊँ, जबकि वह आप *(सल्ल॰)* पर उतरा है। (आपसे बेहतर कौन इसकी

तिलावत कर सकता है?) आप *(सल्ल.)* ने कहा : मैं चाहता हूँ कि दूसरे से (भी) सुनूँ। इसलिए मैंने सूरा-4, निसा की तिलावत शुरू की। जब ऊपर बयान की गई आयतों पर पहुँचा तो आप *(सल्ल.)* ने कहा : अब बस करो। मैंने आप *(सल्ल.)* की तरफ़ ध्यान केन्द्रित किया, तो देखा कि आप *(सल्ल.)* की आँखों से आँसू जारी हैं।[1]

ये आँसू एक तरफ़ तो इस एहसास के कारण थे कि आप *(सल्ल.)* पर एक भारी ज़िम्मेदारी डाली गई है। दूसरी तरफ़ इस ख़याल से भी आपका दिल काँप रहा था कि आप *(सल्ल.)* की क़ौम इस दीन को नकार दे तो कल उसका क्या अंजाम होगा?

पैग़म्बर *(सल्ल.)* ने इस्लाम के प्रचार-प्रसार का हक़ अदा कर दिया

अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* पर अपने दीन (इस्लाम) के प्रचार-प्रसार की ज़िम्मेदारी डाली। आप *(सल्ल.)* ने दुनिया पर यह सच्चाई पूरी तरह स्पष्ट कर दी कि इनसान ख़ुदा का बन्दा और ग़ुलाम है और बन्दगी ही में उसकी मुक्ति और नजात है। जो ख़ुदा का आज्ञाकारी होगा, वह कामयाब होगा और जो ख़ुदा से बग़ावत करेगा वह नाकाम होगा। आप *(सल्ल.)* को अल्लाह का हुक्म हुआ—

يَاَيُّهَا الرَّسُوْلُ بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ۭ وَاِنْ لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ
رِسَالَتَهٗ وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝

"ऐ पैग़म्बर! जो कुछ आपके पालनहार रब की तरफ़ से आप पर उतारा गया है उसे दूसरों तक पहुँचा दीजिए। अगर आपने ऐसा नहीं किया तो अपनी पैग़म्बरी का फ़र्ज़ अदा नहीं

[1] हदीस : सहीह बुख़ारी, किताबुत्तफ़सीर, सूरा निसा व किताबु-फ़ज़ाइलिल-क़ुरआन, बाबुल-बुकाइ इन्-द क़िरातिल-क़ुरआन; सहीह मुस्लिम,किताबुसलातिल मुसाफ़िरीन, बाबुफ़ज़्लि इस्तिमाइल-क़ुरआन.....आख़िर तक।

किया। अल्लाह तआला लोगों से आपकी सुरक्षा करेगा। बेशक अल्लाह हक़ का इनकार करनेवाली क़ौम को रास्ता नहीं दिखाता।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-67)

यह आयत मदीना में जिस समय अवतरित हुई, ख़ुदा के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* का घोर विरोध जारी था। एक तरफ़ अल्लाह का दीन (जीवन-विधान) पूर्णता के मरहले (Stage) से गुज़र रहा था, दूसरी तरफ़ बहुदेववादी, यहूदी और पाखण्डी लोग पूरी कोशिश कर रहे थे कि किसी तरह भी यह दीन फैलने और प्रभावी होने न पाए। इसके लिए हर तरह के प्रयास और उपाय किए जा रहे थे। अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* की हस्ती दुश्मनी का ख़ास निशाना बनी हुई थी और आप *(सल्ल॰)* की हत्या तक की साज़िशें हो रही थीं। इन कठिन परिस्थितियों में हिदायत दी गई कि आप *(सल्ल॰)* अल्लाह के दीन को बिना घटाए-बढ़ाए ज्यों का त्यों पेश करें। इसका कोई एक हुक्म या एक हिदायत भी ख़ुदा के बन्दों तक न पहुँचे तो पैग़म्बरी का सन्देश अधूरा रह जाएगा। इसका मतलब यह होगा कि अल्लाह का पूरा दीन बन्दों तक नहीं पहुँचा है। इसलिए आप हर डर और ख़तरे से निश्चिन्त होकर दीन के प्रचार-प्रसार का काम जारी रखें। चाहे इसकी चोट लोगों के अक़ीदों (आस्थाओं), रस्म-रिवाजों, ज़िन्दगी के क़ानून-क़ायदों और उनके चरित्र और आचरण किसी भी चीज़ पर क्यों न पड़ रही हो और आप *(सल्ल॰)* के ख़िलाफ़ कितने ही मनूसूबे क्यों न बना रहे हों? अल्लाह आप *(सल्ल॰)* की सुरक्षा करेगा, दुश्मन आप *(सल्ल॰)* का कुछ न बिगाड़ सकेंगे।

रिवायतों में आता है कि परिस्थितियाँ इतनी अधिक जटिल और गम्भीर हो गई थीं कि प्यारे नबी *(सल्ल॰)* के साथी (रज़ि॰) रात में आप *(सल्ल॰)* की सुरक्षा और निगरानी किया करते थे। जब यह आयत उतरी तो आप *(सल्ल॰)* ने अपने ख़ेमे से बाहर निकलकर कहा कि अब आप

लोग लौट जाएँ। अल्लाह ने मेरी सुरक्षा की ज़िम्मेदारी ले ली है।[1]

दावत के बारे में मुस्लिम उम्मत की ज़िम्मेदारी

अल्लाह के पैग़म्बर ने उसके दीन (जीवन-विधान) को बिना किसी कमी-बेशी के इनसानों तक पहुँचा दिया। उसके बाद आप *(सल्ल.)* इस दुनिया से चल बसे। लेकिन जो दीन आप *(सल्ल.)* को ख़ुदा की तरफ़ से मिला था, वह आज भी अपने सही रूप में बाक़ी है और क़ियामत तक बाक़ी रहेगा। अब यह इस दीन के माननेवालों की ज़िम्मेदारी है कि इसे दुनियावालों के सामने पेश करें। अगर वे इस फ़र्ज़ को अदा करेंगे, तो ख़ुदा के पसन्दीदा बन्दे ठहरेंगे और अगर इसे उन्होंने भुला दिया, तो ख़ुदा की पकड़ से कोई चीज़ उन्हें बचा नहीं सकती। क़ुरआन मजीद ने स्पष्ट किया है कि 'लोगों पर गवाही देने की ज़िम्मेदारी' मुहम्मद *(सल्ल.)* के बाद आप *(सल्ल.)* की उम्मत पर रहेगी और उसे वह काम अंजाम देना होगा, जो मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अंजाम दिया है। आप *(सल्ल.)* ने जिस तरह उम्मत के सामने अल्लाह के दीन की गवाही दी, उसी तरह इस उम्मत को दूसरों के सामने इसकी गवाही देनी होगी—

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ
عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا ۗ

"और इस तरह हमने तुमको उत्तम समुदाय बनाया है, ताकि तुम लोगों पर (हक़ के) गवाह बनो और पैग़म्बर तुमपर गवाह बने।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-143)

इसका मतलब यह है कि क़ौमों की क़िस्मत इस उम्मत से जुड़ी है। वह दीन की गवाही का फ़र्ज़ अंजाम देकर उनकी हिदायत का सामान मुहैया कर सकती है। इसी से वह अपनी ज़िम्मेदारी से छुटकारा पाएगी और ख़ुदा के यहाँ बेहिसाब बदला और सवाब की हक़दार ठहरेगी।

---

[1] तफ़सीर इब्ने-कसीर, 2/89

लेकिन अगर इससे लापरवाही बरतें तो दुनिया की गुमराही के लिए इससे पूछगछ होगी और डर है कि बड़ी कठोर पूछगछ होगी। लेकिन अफ़सोस! उम्मत अपनी इस सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी को भूल चुकी है। शायद इसको इस बात का एहसास तक नहीं है। एक मौक़े पर अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद *(सल्ल.)* ने इस उम्मत के बारे में कहा—

اَنْتُمْ شُهَدَاءُ اللّٰهِ فِي الْاَرْضِ

"तुम ज़मीन में ख़ुदा के गवाह हो।"[1]

यह इस बात का एलान है कि यह उम्मत ख़ुदा की तरफ़ से हक़ (हक़) की गवाह है। दुनिया में यह अकेले इसी की ज़िम्मेदारी भी है और केवल इसी की यह पोज़ीशन भी है कि लोगों को यह बता सके कि कौन-सी राह ख़ुदा तक पहुँचानेवाली है और कौन-सा रास्ता ख़ुदा से दूर करनेवाला है। सत्य क्या है और असत्य क्या? कौन सीधी राह पर चल रहा है और किसने गुमराही का रास्ता अपना रखा है? यह उम्मत ख़ुदा के दीन की 'अमानतदार' है, क्योंकि ख़ुदा के आख़िरी पैग़म्बर *(सल्ल.)* ने उसके दीन को इसी उम्मत के हवाले किया है। आज सिवाय इसके किसी भी गिरोह के पास ख़ुदा का दीन नहीं है। इसलिए यह इसी की ज़िम्मेदारी है कि इस दीन को दूसरों तक पहुँचाए। अगर इसने यह काम न किया, तो फिर दुनिया में यह किसी तरह अंजाम न पा सकेगा। यही बात है जिसे हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने उस समय कहा था, जब मक्का के मुशरिक लोग इस उम्मत को ख़त्म करने के इरादे से बद्र के मैदान में जमा हुए थे—

اَللّٰهُمَّ اِنْ تَهْلِكْ هٰذِهِ الْعِصَابَةُ مِنْ اَهْلِ الْاِسْلَامِ لَا تُعْبَدُ فِي الْاَرْضِ

"ऐ अल्लाह! अगर इस्लाम पर चलनेवालों का यह गिरोह ख़त्म

---

[1] हदीस : सहीह बुख़ारी, किताबुल-जनाइज़, बाबुसनाइन्नासि अलल मैयति; सहीह मुस्लिम किताबुल-जनाइज़, बाबु फ़ी मा युस्ना अलैहि ख़ैरुन औ शर्रुम मिनल मौता।

हो जाएगा, तो फिर ज़मीन में तेरी इबादत न होगी।"[1]

आख़िरी हज के मौक़े पर दीन के पूरा हो जाने का एलान हो चुका था और मुहम्मद *(सल्ल.)* ने अपनी उम्मत को इन शब्दों में सम्बोधित किया था—

لَعَلِّیْ لَا اَلْقَاکُمْ بَعْدَ عَامِیْ هٰذَا

"शायद इस साल के बाद तुमसे मेरी मुलाक़ात न हो सके।"
यह कहते हुए आप (सल्ल.) ने अपने साथियों से सवाल किया—

اَلَا هَلْ بَلَّغْتُ

"क्या मैंने तुम तक ख़ुदा का दीन पहुँचा दिया?"
लोगों ने एक स्वर में उत्तर दिया, "हाँ, आपने दीन हम तक पहुँचा दिया।"
इसपर आप *(सल्ल.)* ने फिर कहा—

اَنْتُمْ تُسْئَلُوْنَ عَنِّیْ فَمَا اَنْتُمْ قَائِلُوْنَ

"कल क़ियामत के दिन तुमसे मेरे बारे में पूछा जाएगा। उस समय तुम क्या जवाब दोगे?"
लोगों ने कहा—

نَشْهَدُ اَنَّکَ قَدْ بَلَّغْتَ فَاَدَّیْتَ وَ نَصَحْتَ

"हम गवाही देंगे कि आपने दीन के प्रचार-प्रसार का हक़ अदा कर दिया था। दीन पूरी तरह पहुँचा दिया था और हमारे साथ बहुत ही भलाई और कल्याण (का व्यवहार) किया था।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

अब आप *(सल्ल.)* ने शहादत की उँगली आसमान की तरफ़ उठाई और तीन बार कहा—

---

[1] सहीह मुस्लिम, किताबुल-जिहाद वस्सियर, बाबुल-इम्दादि बिल-मलाइकाति फ़ी ग़ज़वति बद्रिन।

اَللّٰهُمَّ اشْهَدْ

"ऐ अल्लाह! तू गवाह रह।"

मतलब यह कि ऐ ख़ुदा! तेरे ये बन्दे क़बूल कर रहे हैं कि जो दीन तूने मुझे दिया था, मैंने उसके प्रचार-प्रसार में कोई कोताही नहीं बरती और बिना किसी कमी-बेशी के उसे उन तक पहुँचा दिया है।

इसके बाद आप *(सल्ल॰)* ने तमाम लोगों से कहा—

اَلَا فَلْيُبَلِّغِ الشَّاهِدُ الْغَائِبَ

"जो यहाँ मौजूद है वह उसे पहुँचा दे, जो यहाँ मौजूद नहीं है।"

इस वाक्य के बारे में अब्दुल्लाह-इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं—

فَوَالَّذِىْ نَفْسِىْ بِيَدِهٖ اِنَّهَا لَوَصِيَّتُهٗ اِلٰى اُمَّتِهٖ

"क़सम है उस ख़ुदा की जिसके हाथ में मेरी जान है, यह आप *(सल्ल॰)* की अपनी उम्मत के लिए वसीयत थी।"[1]

रबीअ-बिन-अनस (रह॰, ताबई[2]) कहते हैं—

حَقٌّ عَلٰى مَنِ اتَّبَعَ رَسُوْلَ اللّٰهِ صلى الله عليه وسلم اَنْ يَّدْعُوَ كَالَّذِىْ دَعَا وَاَنْ يُّنْذِرَ بِالَّذِىْ اَنْذَرَ.

"जो आदमी अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* का अनुपालन करे, उस पर यह हक़ आयद होता है कि जिस तरह अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* ने दीन की दावत दी, उसी तरह वह भी दावत दे और जिस किताब के द्वारा आप *(सल्ल॰)* ने लोगों को ख़ुदा के अज़ाब से डराया था, उस किताब के द्वारा वह भी ख़ुदा के अज़ाब से डराए।"[3]

---

[1] सहीह बुख़ारी, किताबुल-हज्ज, बाबुल-ख़ुतबति अय्यामि मिना।

[2] ताबई उन लोगों को कहा जाता है, जिन्होंने प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के सहाबा (साथियों-संगियों रज़ि॰) से मुलाक़ात की हो।

[3] तफ़सीर इब्ने-कसीर, 2/226।

यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के द्वारा खुदा का जो दीन आपको मिला है, उसे दूसरों तक पहुँचाना आपका फ़र्ज़ है। आप अपनी ज़िम्मेदारी से केवल उसी समय भार-मुक्त हो पाएँगे, जबकि आप दुनिया से इस हाल में जाएँ कि ख़ुदा के बन्दों तक उसका पैग़ाम पहुँचा चुके हो अगर आपने इस दीन के हक़ होने की गवाही न दी, तो दुनिया हमेशा के लिए इससे महरूम हो जाएगी और इस महरूमी का वबाल आपको भी उठाना पड़ेगा। ऐसी स्थिति में क़ियामत के दिन अल्लाह आपके बारे में दुनियावालों से पूछेगा कि ये वे लोग हैं जिनके पास मेरा उतारा हुआ दीन (जीवन-विधान) था और जिनके पास मेरा मार्ग-दर्शन था। उन्होंने इससे तुम्हें सचेत किया था या नहीं? आपकी लापरवाही और ग़फ़लत की वजह से दुनियावाले यही जवाब देंगे कि ऐ ख़ुदा! तेरे दीन का ज्ञान रखनेवाले सोए हुए थे और हमें गुमराही में छोड़ रखा था। उन्होंने हमारा भला नहीं चाहा और तेरा दीन हम तक नहीं पहुँचाया। आपके बारे में उनका यह जवाब बिलकुल सही जवाब होगा और आप पर इनसानियत को तबाह करने का आरोप सिद्ध हो जाएगा।

फिर बताइए वह कौन-सी चीज़ है, जो आपको उस समय ख़ुदा की पकड़ से सुरक्षित रखेगी। आज आपको अपने इस अपराध की गम्भीरता का एहसास नहीं है वरना आपकी रातों की नींद उड़ जाती और आपका सुख-चैन ख़त्म हो जाता।

सच्चाई यह है कि अल्लाह हर उस इनसान से जो उसकी वफ़ादारी का दावा करे, यह काम लेना चाहता है कि वह गुमराह इनसानों को उसकी राह दिखाए। इसलिए इस्लाम को अल्लाह के दीन की हैसियत से स्वीकार कर लेने के बाद यह हमारा और आपका परम कर्तव्य है कि इसे दूसरों तक पहुँचाएँ। इस एहसास से हमें रात-दिन बेचैन रहना चाहिए कि इनसान जिसे अल्लाह की हिदायत और उसके दीन का पालन करनेवाला होना चाहिए, इससे आज़ाद और लापरवाह फिर रहा

है। यह काम ठीक उसी ढंग से अंजाम पा सकता है, जिस ढंग से अल्लाह के पैग़म्बरों ने इसे अंजाम दिया है। इसके लिए मन की वही भरपूर निष्ठा, वही मुहब्बत और वही दर्दमन्दी चाहिए, जो उसके पैग़म्बरों में होती थी। इसे हमारे जीवन का सर्वोत्तम उपयोग, हक़ पर जमे रहने और लगातार कोशिश का मुख्य लक्ष्य बन जाना चाहिए।

इस समय दुनिया अपने सबसे अधिक अन्धेरे दौर से गुज़र रही है। आइए, इसे अल्लाह के नूर (दिव्य प्रकाश) से भर दें, लेकिन यह काम केवल छुट्टी के समय ही में करने का नहीं है, बल्कि यह हमारा पूरा समय और पूरा ध्यान चाहता है। इसके लिए हम अपने दूसरे कामों को छोड़ दें, लेकिन दूसरे किसी भी काम के लिए इसे न छोड़ें। यह एक सच्चाई है कि जिस काम को हम जो अहमियत देते हैं, ज़िन्दगी में उसे स्थान भी उसी के हिसाब से देते हैं। अगर दावत का यह काम हमारे सारे कामों में सर्वोपरि है तो इसका मतलब यह है कि हम इसकी अहमियत से ग़ाफ़िल नहीं हैं; लेकिन अगर दूसरे कामों ने हमारे समय को इस तरह घेर रखा है कि हम इस काम के लिए कोई समय ही नहीं निकाल पाए, तो यह इस बात का प्रमाण है कि हमारे नज़दीक इसकी कोई अहमियत नहीं है, चाहे हम अपनी ज़बान से इसकी अहमियत का हज़ारों बार इक़रार क्यों न किया करें।

यह काम उसी समय अंजाम पा सकता है जबकि हमें इससे मुहब्बत और दिली लगाव हो। इसमें जो समय लगे उसे बरबाद न समझें, बल्कि अपनी ज़िन्दगी का हासिल समझें। इसके बारे में हमारा यह विचार न हो कि यह कोई ग़ैर-ज़रूरी बोझ है, जो हमारे ऊपर लाद दिया गया है, बल्कि इसे पूरा करके सुख-चैन और राहत महसूस करें।

आप जानते हैं कि आपकी नज़र के सामने वह काम है जिसके लिए अल्लाह तआला ने हर दौर में उन भले और पाक इनसानों का चयन किया, जिन्हें हम रसूल और पैग़म्बर कहते हैं। अल्लाह के उन

नेक बन्दों ने, जिनका उससे ख़ास सम्बन्ध था और जो उसके प्यारे थे, जिससे वे मुहब्बत करते थे और जिनसे वह मुहब्बत करता था, दावत के इस काम में अपनी जानें खपा दीं, ताने सहे, गालियाँ सुनीं, आराम और चैन छोड़ा, बड़ी से बड़ी मुसीबतें सहन कीं, घर से बेघर हुए और कभी सूली पर भी चढ़ गए। लेकिन इसके बावुजूद अल्लाह ने उनके द्वारा इस काम को जारी रखा।

दुनिया में कौन अपने चहेतों की तकलीफ़ को गवारा करता है। अल्लाह चाहता तो अपने इन प्यारे बन्दों को दावत ही से रोक देता या इनको इस राह की सारी मुसीबतों और तकलीफ़ों से बचाए रखता। लेकिन उसने यही चाहा कि उसके ये भले और सच्चे बन्दे ज़िन्दगी भर दावत का काम जारी रखें और हर तरह की तकलीफ़ों और आज़माइशों से गुज़रते हुए इसे जारी रखें।

पैग़म्बरों का इतिहास बताता है कि उनके सच्चे साथियों और उत्तराधिकारियों ने भी दावत के लिए ख़तरों से भरी यही राह अपनाई और बेमिसाल क़ुरबानियाँ देते हुए इस पर चलते रहे। जब तक उनके शरीर में जान बाक़ी रही, न तो उनका यह सफ़र ख़त्म हुआ और न कभी वे इससे हटे।

अल्लाह का अपने पैग़म्बरों और उनके उत्तराधिकारियों के बारे में यह फ़ैसला बताता है कि दावत के इस काम के लिए मानव-जाति के बहुत ही चुनिन्दा और पसन्दीदा लोग भी तकलीफ़ें उठा सकते हैं। दुनिया की क़ीमती से क़ीमती जानें इसपर क़ुरबान हो सकती हैं, लेकिन इसे कभी छोड़ा नहीं जा सकता। सोचिए, वह कितना बड़ा और ऊँचे दरजे का काम था, जिसके लिए ये पाक और नेक ज़िन्दगियाँ इस तरह समर्पित हो गईं, जैसे उनके लिए इसके सिवा और कोई काम ही न था।

यह है इस काम की महिमा। इसी सबसे बड़े काम को आज आप अंजाम देना चाहते हैं। इसमें आपका वह सब कुछ लुट जाए जो आपके पास है, तो लुट जाने दीजिए। आपकी ज़िन्दगी की सारी पूँजी इसी में

लग जाए, तो लग जाने दीजिए। यह घाटे का सौदा नहीं है।

यह वह व्यापार है जिसपर कल आप गर्व करेंगे और आपकी कामयाबी और सफलता पर बहुत-से वे लोग भी ललचाएँगे, जो आज आपको नादान समझते हैं और जिनके नज़दीक आज की परिस्थितियों में दीन की दावत देने का कोई उचित कारण और मौक़ा नहीं है।

दावत का मैदान विशाल है

दावत के इस काम को कोई सीमित काम न समझिए, बल्कि यह बहुत ही बड़ा काम है, इतना बड़ा कि जब तक आपमें काम करने की शक्ति मौजूद है और आपकी ज़िन्दगी की मुहलत बाक़ी है, आप काम के न होने की शिकायत नहीं कर सकते। दुनिया की प्रत्येक विचारधारा अपने माननेवालों के लिए काम के बहुत सीमित दायरे मुहैया करती है। वह उनको इस तरह की हिदायतें देता है कि उन्हें मज़दूरों में घुल-मिल जाना चाहिए या पूँजीपतियों में, आम लोगों को अपनी दावत का निशाना बनाना चाहिए या ख़ास लोगों को, नीची जातियों से अपील करनी चाहिए या ऊँची जातिवालों से।

यह इस बात का प्रमाण है उनकी विचारधाराएँ जीवन की उन छोटे-छोटे दायरों से जुड़ी हुई है, जिनमें वे काम करना चाहते हैं। अगर ये दायरे मौजूद न हों, तो इनके अस्तित्व का भी कोई उचित कारक न रह जाएगा। इसलिए आप देखेंगे कि ये विचारधाराएँ जिन विशेष दायरों में रहकर काम करना चाहती हैं, अगर वे दायरे टूट जाएँ तो उनके माननेवालों पर इस तरह जड़ता छा जाती है, जैसे न उनमें कोई जान रह गई, न इतनी बड़ी दुनिया में उनके लिए कोई काम रह गया है। लेकिन इस्लाम के एक-एक प्रचारक- प्रसारक को वह काम अंजाम देना चाहिए, जो कभी ख़त्म होनेवाला नहीं है। उसका काम क्षणिक और हंगामी नहीं है, जो एक ख़ास वक़्त में ही पूरा हो जाए और वह अपने आपको इससे भार-मुक्त समझ लें, बल्कि उसको जो

कुछ करना है, उसके लिए वह सारा का सारा समय भी कम है, जो उसके अपने बस में है और जिसका वह मालिक है। वह इस्लाम का प्रचारक-प्रसारक है। उसे उन सब लोगों तक इस्लाम की यह दावत पहुँचानी है, जिन तक अभी यह नहीं पहुँच सकी है। यह काम कभी उसको चैन से बैठने नहीं देता। अगर एक गिरोह उसकी दावत को क़बलू करता तो तुरन्त ही दूसरा गिरोह उसके लिए काम का मैदान मुहैया करा देता है। जिस शुभ कार्य की उसने शुरुआत की है, वह उसको ज़िन्दगी भर व्यस्त रखनेवाला है। जो आदमी इसे गम्भीरता से अंजाम देना चाहे, उसके लिए हर तरफ़ काम है, हर वर्ग के लोगों में काम है और हर वक़्त काम है। इतने बड़े काम की मौजूदगी में वह कभी इस निरर्थक सवाल से दो-चार नहीं हो सकता कि उसे क्या करना है और किस मैदान में अपनी सारी शक्ति ख़र्च करनी है?

आज के दौर में इस्लाम की ख़िदमत करनेवालों को दावत का जो सबसे बड़ा और चौतरफ़ा काम अंजाम देना है, उसे तीन बड़े-बड़े शीर्षकों में बाँटा जा सकता है– इस्लाम का प्रचार-प्रसार, सुधार और प्रशिक्षण; इस्लाम को प्रभावी बनाना और इस्लामी व्यवस्था लागू करना। यहाँ हम इन तीनों विषयों पर अलग-अलग बात करेंगे–

1. इस्लाम का प्रचार-प्रसार

इस्लाम के माननेवालों का पहला काम यह है कि वे ग़ैर-मुस्लिम दुनिया के सामने इस्लाम को इस तरह पेश करें कि वे इसकी बिलकुल सही-सही तस्वीर देख लें और हर पहलू से इसे इतना स्पष्ट कर दें कि यह समय का एक जाना-पहचाना सच बन जाए, ताकि कोई आदमी केवल इस कारण इस्लाम से दूर न रहने पाए कि वह इससे अनजान है। यह निरन्तर करते रहने का एक बड़ा काम है।

ऐसे सारे इनसान इसके लिए कार्य-क्षेत्र उपलब्ध करते हैं, जो इस्लाम को नहीं जानते। ऐसे इनसानों की तलाश किसी दुर्लभ चीज़ की

तलाश नहीं है। वे आपकी निगाहों के सामने हर तरफ़ फैले हुए हैं। जिस समय आप इस्लाम की दावत लेकर अपने घर से निकलेंगे, आप महसूस करेंगे कि पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण हर तरफ़ आप का इन्तिज़ार हो रहा है और ऐसे इनसान दल के दल आपके सामने आ रहे हैं, जिन तक आप इस्लाम पहुँचाना चाहते हैं। सोचिए, इतना बड़ा काम किसी और विचारधारा के अलमबदारों के पास भी है?

दावत के इस काम में आपको आज की नई-नई विचारधाराओं का भी सामना करना होगा और पुरानी विचारधाराओं का भी। रस्म-रिवाजों के पुजारियों से भी लड़ना होगा और बग़ावत का रुझान रखनेवालों से भी; अंधानुकरण का भी सामना करना होगा और आज़ाद ख़याली और गुमराही का भी। इस दुनिया में हर आदमी किसी न किसी विचारधारा और आस्था (अक़ीदे) के सहारे जी रहा है। आपको यह साबित करना होगा कि ये सारे सहारे कमज़ोर हैं और कामयाबी और मुक्ति केवल ख़ुदा के दीन में है। इस काम के लिए आपको इस्लाम के साथ उसकी विरोधी विचारधाराओं को भी अच्छी तरह समझना होगा और फिर ऐसे उपाय खोजने होंगे, जिनके द्वारा आप इस्लाम की श्रेष्ठता सिद्ध कर सकें। यह इतना बड़ा काम है कि शब्दों में इसकी महिमा का बखान शायद न किया जा सके।

दुनिया के हर काम के बारे में इनसान सोच सकता है कि वह उसको बहुत जल्द पूरा कर लेगा, लेकिन इस मैदान में बड़ी से बड़ी कामयाबी के बाद भी इनसान को ही नज़र आता है कि उसने जो कुछ पाया है वह उसके मुक़ाबले बहुत कम है, जो उसे अभी हासिल नहीं हो सका है। अगर किसी योग्य आदमी को बहुत लम्बी ज़िन्दगी मिले और वह अपनी आख़िरी सांस तक इसे अंजाम देता रहे, तब भी सच्ची बात यही है कि वह इसे पूरा नहीं कर सकता।

जब आप इस्लाम के प्रचार-प्रसार का यह काम करेंगे तो आपके सामने एक और मैदान आएगा। यह मैदान वे भाग्यशाली इनसान मुहैया

करेंगे जो आपकी दावत से प्रभावित होंगे और फिर इस्लाम को हक़ समझकर क़बूल करेंगे। ज़ाहिर बात है कि जिस माहौल पर असत्य छाया हुआ हो, उसमें हक़ को क़बूल करना खेल नहीं है। यह अपने आपको आज़माइश के लिए पेश करना है। इसलिए जो लोग इस कठिन रास्ते में क़दम बढ़ाएँ, इस्लाम की दावत के प्रचारकों-प्रसारकों को चाहिए कि वे उनकी कठिनाइयों को दूर करने की कोशिश करें। जब ख़ुदा के बन्दे उसके दीन की ख़ातिर अपनी प्रिय विचारधाराओं को छोड़ दें, अपने उस सांस्कृतिक और सामाजिक रहन-सहन को छोड़कर अलग हो जाएँ, जिसकी गोद में उनका पालन-पोषण हुआ था, अपने बाप-दादा की विरासत को ठुकरा दें, जिसपर वे गर्व करते थे, अपने उन दोस्तों और रिश्तेदारों से कट जाएँ जिनके बिना ज़िन्दगी की कल्पना करना उनके लिए कठिन था और अपने उस माहौल को छोड़ दें जिसके कण-कण से उन्हें प्रेम था; तो यह इस्लाम की ख़िदमत करनेवालों के लिए भी परीक्षा की घड़ी होगी।

ख़ुदा यह देखेगा कि वे कौन लोग हैं जो उसके उन सच्चे बन्दों को अपने सीनों से लगाते हैं और वे कौन हैं जो इस्लाम से मुहब्बत के दावे के बावजूद उनसे कटे-कटे रहते हैं। इनसान जिस समाज में पलता-बढ़ता है उसमें उसके बहुत-से मसले ख़ुद-ब-ख़ुद हल होते रहते हैं और बहुत-से मसले थोड़ा-सा ध्यान देने से ही हल हो जाते हैं, लेकिन ज्यों ही वह उस समाज को छोड़ता है, यह देखकर सहम जाता है कि अब उसके लिए अपने मसलों को हल करना आसान नहीं रहा है। इस्लाम का क़बूल करना जिस आदमी को इन कठिन परिस्थितियों में डाल दे, वह आपके बेहतरीन सहयोग और मदद का हक़दार है। अल्लाह के दीन से आपके लगाव और मुहब्बत की माँग यह है कि आप उसे अकेला और बेसहारा न छोड़ें और उसमें परायेपन का एहसास न पैदा होने दें। अल्लाह के दीन के लिए अगर उसने अपना सब कुछ लुटा दिया है, तो आप अपना सब कुछ न सही एक हिस्सा तो ख़ुशी-ख़ुशी

उसको पेश कर दें। वह अगर अपनी समस्याओं से घबरा रहा है, तो उससे उसके मसले और परेशानियाँ ले लें और अपनी समस्याओं की सूची में उन्हें शामिल कर लें।

जो आदमी अपने समाज से कट चुका है, उसको किसी दूसरे समाज में फिट करना बड़ा लम्बा और मेहनत का काम है। इतने बड़े काम के होते हुए इस्लाम का आह्वाहक और प्रचारक-प्रसारक यह कैसे सोच सकता है कि उसका काम महदूद या आसान है?

2. सुधार और प्रशिक्षण

दीन की सेवा करनेवालों का दूसरा महत्त्वपूर्ण काम यह है कि जिस उम्मत से उनका धार्मिक सम्बन्ध और रिश्ता है और जिसके वे ख़ुद भी सदस्य हैं, उसके सुधार और प्रशिक्षण का फ़र्ज़ अंजाम दें। उसकी वैचारिक, व्यावहारिक, धार्मिक, नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक खराबियों को दूर करें। इस काम के विभिन्न पहलू हैं। उनमें से एक अहम पहलू यह है कि इस उम्मत पर दीन फैलाने की जो ज़िम्मेदारी आयद होती है, उसकी समझ-बूझ उसके अन्दर पैदा की जाए और यह ज़िम्मेदारी जिन गुणों और ख़ूबियों की माँग करती है, उसके अन्दर वे गुण और ख़ूबियाँ पैदा करने की कोशिशि की जाए और व्यावहारिक रूप से इस काम के लिए उसे तैयार किया जाए।

यहाँ हमारे सामने इसका केवल एक ख़ास पहलू है। वह यह कि ग़ैर-मुसलिमों में इस्लाम का प्रचार-प्रसार अपनी सफलता के लिए पहले मुसलमानों का सुधार चाहता है; क्योंकि इस्लाम को इसके माननेवालों से अलग करके दिखाना आसान नहीं है। मुसलमानों की ज़िन्दगी में अगर इस्लाम की छाप नज़र आने लगे, तो इस्लाम के प्रचार-प्रसार की बहुत-सी वे राहें खुल सकती हैं जिनको आज आप बिलकुल बन्द पा रहे हैं और जो लोग इस्लाम के गुणों और उसकी ख़ूबियों से अनजान हैं, अपनी आँखों से उन गुणों और ख़ूबियों को देखकर उसकी तरफ़

आकर्षित हो सकते हैं। आज अगर वे इससे फिरे हुए हैं तो कल इसके वफ़ादार और सच्चे सेवक बनकर उभर सकते हैं। यह सही है कि इस्लाम ख़ुदा के दीन की हैसियत से उतरा है और इसी हैसियत से यह क़ियामत तक बाक़ी रहेगा। इनसानों का कोई गिरोह इसे अपनाए या न अपनाए, इसपर अमल करे या इसे छोड़ दे, इसकी यह हैसियत कभी बदल नहीं सकती। इसलिए जो आदमी इस्लाम को समझना चाहे उसको इसी हैसियत से इसपर सोच-विचार करना चाहिए। लेकिन आम तौर पर लोग इस्लाम को ख़ुदा के दीन की हैसियत से नहीं देखते, बल्कि इस हैसियत से देखते हैं कि यह मुसलमानों का धर्म है। मुसलमान चूँकि इस्लाम के सच्चे होने का दावा करते हैं, इसलिए वे मुसलमानों की ज़िन्दगी से इसका प्रमाण चाहते हैं।

वे मुसलमानों को इस्लाम का प्रतिनिधि समझते हैं और इनके एक-एक काम को इसी दृष्टिकोण से देखते हैं कि वह उसके आदेशों के पालन करनेवालों का आचरण है। उनकी दृष्टि में इस्लाम का प्रामाणिक रूप वह नहीं है जो क़ुरआन और हदीस में मौजूद है, बल्कि वह रूप प्रामाणिक है जिसे इस्लाम के माननेवाले अपने आचरण से पेश करते हैं। इसमें शक नहीं कि सोचने का यह अन्दाज़ ग़लत है, लेकिन आप इसपर उनको बहुत अधिक दोष नहीं दे सकते; क्योंकि किसी विचारधारा के गुणों और अवगुणों पर अपनी अक़्ल से सोचनेवाले कम होते हैं। अधिकतर लोग उन आदमियों को देखते हैं जिनका उस विचारधारा से सम्बन्ध होता है, चाहे उनके कर्म उस विचारधारा के अनुकूल हों या उससे टकरा रहे हों। किसी भी विचारधारा के माननेवालों से कभी-कभार ऐसी हरकतें हो भी सकती हैं, जिनका उस विचारधारा से बिलकुल कोई सम्बन्ध नहीं होता। इसके बहुत-से कारण हो सकते हैं। लेकिन आपको मानना पड़ेगा कि यह दुनिया सतही इनसानों से भरी हुई है। वह उन कारणों को नहीं तलाश करती, जो उनके कर्मों के पीछे काम कर रहे होते हैं, बल्कि उनके गुणों और दोषों

की इस तरह चर्चा करती है जैसे वे उसी विचारधारा से वुजूद में आए हों, जिसपर वे ईमान का दावा करते हैं।

एक तरफ़ यह सच्चाई है कि मुसलमान जो भी रवैया अपनाते हैं, वह दुनियावालों के नज़दीक इस्लाम का रवैया बन जाता है और दूसरी तरफ़ अधिकांश मुसलमानों का यह हाल है कि वे इस्लाम से बहुत दूर हो चुके हैं। यह कहना अधिक सही होगा कि उनको सही अर्थों में इस्लाम की सही जानकारी भी नहीं है। वे यह नहीं जानते कि ख़ुदा को मानने का क्या मतलब है और उसके क्या तक़ाज़े हैं? शिर्क (बहुदेववाद) किसे कहते हैं और तौहीद (एकेश्वरवाद) क्या है? हक़ का इनकार किस चीज़ का नाम है और ईमान की वास्तविकता क्या है? ख़ुदा के आज्ञापालन की हदें क्या हैं और उसकी बग़ावत कहाँ से शुरू होती है? पैग़म्बर की आज्ञा का पालन क्यों ज़रूरी है और उसकी नाफ़रमानी से बचना क्यों ज़रूरी है?

उनको एक ख़ुदा की इबादत करनी थी, लेकिन उन्होंने इबादत के फ़र्ज़ को बोझ समझकर उतार फेंका है। उनको हर अज्ञानता से बचे रहने की हिदायत की गई थी, लेकिन वे अनगिनत ग़लत रस्मों-रिवाजों और निरर्थक परम्पराओं के ख़ुद से पाबन्द हो गए हैं। उनको सत्य पर चलने की शिक्षा दी गई थी, लेकिन वे असत्य के पीछे चल रहे हैं। उनको हर मामले में हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* की आज्ञा का पालन करना था, लेकिन उन्होंने न केवल यह कि दूसरों के पीछे चलना शुरू कर दिया है, बल्कि उनके पीछे चलने पर गर्व करने लगे हैं। उनके मामलों में हलाल और हराम का अन्तर मिट गया है। उनके सामाजिक रहन-सहन में बिगाड़ आ गया है। उनके रहन-सहन और व्यवहार में ग़ैर-इस्लामी चीज़ें दाख़िल हो गई हैं। यही नहीं, बल्कि आज मुसलमानों में ऐसे-ऐसे लोग भी कम नहीं हैं, जो खुले रूप से बहुदेववादी कर्म करने में लगे हुए हैं और उनको तौहीद (एकेश्वरवाद) के ख़िलाफ़ बिलकुल नहीं समझते। क़दम-क़दम पर उनकी ज़िन्दगी में ख़ुदा से बग़ावत मौजूद

है और उनको इसका एहसास तक नहीं है कि ये उनके दीन और ईमान के बिलकुल उलट है।

उनको जो मुहब्बत ख़ुदा और उसके पैग़म्बर से होनी चाहिए थी, वह उनके दुश्मनों से है और उनकी जो शक्तियाँ और योग्यताएँ दीन (ईश्वरीय जीवन-विधान) के मार्ग में ख़र्च होनी थीं, वे असत्य और अधर्म के प्रचार-प्रसार में ख़र्च हो रही हैं। मुसलमानों को इस हालत में छोड़कर ग़ैर-मुस्लिमों में इस्लाम की दावत से किसी सफल परिणाम की आशा सही न होगी। ग़ैर-मुस्लिमों में उसी समय इस्लाम का सही परिचय होगा और उसकी दावत फूल-फल लाएगी, जबकि मुसलमानों के अन्दर कम से कम एक ऐसा आदर्श समाज अस्तित्व में आ जाए जो अपनी कथनी-करनी से इस्लाम का प्रतिनिधित्व करने लगे, जो हर मामले में ख़ुदा के आदेशों का पालन करनेवाला हो, जिसके आचार-विचार इस्लामी हों, जिसके मामले ख़ुदा के आदेशों के अधीन हों, जिसके सामाजिक रहन-सहन और व्यवहार पर इस्लाम का राज हो और जो अपने हर कर्म से यह सिद्ध कर रहा हो कि वह ख़ुदा की ख़ुशी चाहनेवाला है और सिवाय उसके किसी और को ख़ुश करना नहीं चाहता।

जब इस तरह का कोई समाज मौजूद होगा, तो दुनिया देख सकेगी कि इस्लाम किस तरह के इनसान तैयार करता है और उनको कैसा आचरण और कैसा चरित्र प्रदान करता है। जब तक इस प्रकार का कोई गिरोह और समाज नहीं पाया जाएगा, दुनिया आम मुसलमानों ही को देखेगी और आम मुसलमानों का मौजूदा आचरण, विश्वास कीजिए, इस्लाम की उन्नति के रास्ते में एक रुकावट बना रहेगा। आप पूछेंगे कि मुसलमानों के अन्दर से ऐसे किसी गिरोह और समाज का निकल आना क्या उसको इतना ऊँचा दरजा प्रदान कर देगा कि दुनिया उसको इस्लाम का आदर्श प्रतिनिधि समझने लगे? क्या उस गिरोह और समाज में इतनी शक्ति होगी कि दुनिया इस्लाम को समझने के लिए केवल उसके

व्यवहार और आचरण को देखे और मुसलमानों की बड़ी संख्या से इसलिए नज़र फेर ले कि उसका व्यावहारिक आचरण इस्लाम से हटा हुआ है?

इसका जवाब यह है कि बेशक ऐसा ही होगा और इसमें हैरत की कोई बात नहीं है। जब कोई गिरोह और समाज इस्लाम की शिक्षाओं के अनुसार आचरण करनेवाला दुनिया के सामने मौजूद होगा, तो उसके लिए यह फ़ैसला करना आसान होगा कि कौन इस्लाम का सच्चा अनुयायी और आदर्श प्रतिनिधि है और कौन उससे फिर चुका है। इससे आगे यह बात भी हैरत में डालनेवाली न होगी कि जो गिरोह और समाज इस्लाम की शिक्षाओं के अनुसार कर्म भी करे और उसकी तरफ़ दावत भी दे, दुनिया इस्लाम के मामले में उसके सिवा किसी दूसरे गिरोह को इस्लाम का आदर्श प्रतिनिधि मानने से इनकार कर दे; क्योंकि किसी विचारधारा का प्रचारक-प्रसारक अपने आपको उसका आदर्श नमूना बनाकर पेश करता है, उसको छोड़कर वह ऐसे लोगों और जमाअतों को उस विचारधारा का व्याख्याता या प्रतिनिधि नहीं मान सकती, जो खुद उसका मूल्य न जानते हों।

अगर इस्लाम के सच्चे सेवक उत्पन्न हो जाएँ, तो दुनिया उन सारे लोगों और संगठनों को अपने आप ही इस्लाम के प्रतिनिधित्व के पद और अधिकार से वंचित कर देगी, जिनके पास केवल इस्लाम का नाम होगा और जो इस्लाम के अनुपालन से अपने दामन को बचाते होंगे।

मुसलमानों के किसी समूह को इस्लाम की नुमाइन्दगी के लिए तैयार करने का मतलब यह नहीं है कि आम मुसलमानों का सुधार आपके काम के दायरे से बाहर है, बल्कि यह वह सबसे क़रीबी लक्ष्य है जो फ़िलहाल आप हासिल कर सकते हैं और जिसके बिना इस्लाम का फैलना कठिन है, वरना सही बात यह है कि आपको सारे ही मुसलमानों का सुधार करना है। उनको एक ऐसी उम्मत (समुदाय) के रूप में तैयार करना है, जो इस्लाम की ज़िन्दा तस्वीर बन जाए और जो दुनिया के

सामने ख़ुदा के दीन के हक़ होने की गवाही दे सकें। इस्लाम की दावत इस उम्मत के किसी एक समूह का काम नहीं है, बल्कि यह पूरी उम्मत की ज़िम्मेदारी है और जब तक पूरी उम्मत अपनी इस ज़िम्मेदारी को महसूस न करे, इसका हक़ अदा नहीं हो सकता।

अगर यह उम्मत (समुदाय) इस फ़ैसले के साथ उठ खड़ी हो कि इस्लाम को अल्लाह के बन्दों तक पहुँचाना है, तो क्या अजब कि अल्लाह के बन्दे भी इसके स्वागत के लिए टूट पड़ें। इस्लाम फैलने के लिए आया है। यह इनसान की प्रकृति से इतनी अधिक समानता और निकटता रखता है कि इसके विरोध के लिए इनसान को अपनी प्रकृति से कड़ी लड़ाई लड़नी पड़ती है। इस्लाम से अधिक मानव-प्रकृति के अनुकूल दुनिया की कोई विचारधारा नहीं है। इसलिए हर विचारधारा के मुक़ाबले में इस्लाम के फैलने की सम्भावनाएँ सबसे अधिक हैं। यही कारण है कि जब इसे फैलाया गया, तो यह बाढ़ की तरह फैला और पूरे-पूरे देश और बड़ी-बड़ी आबादियाँ इसकी छाया तले आ गईं, लेकिन यह उस समय हुआ जब इसकी सेवा करनेवालों ने इसके प्रचार-प्रसार को अपने हर काम पर प्राथमिकता प्रदान किया और इसके लिए इस तरह काम किया, जैसे वे इसी के लिए पैदा हुए हैं और उन्हें किसी और काम से कोई मतलब नहीं है।

ख़ुदा का क़ानून है कि यहाँ कोई भी विचारधारा चामत्कारिक रूप से नहीं फैलती, बल्कि इसके लिए उसके कार्यकर्ताओं को कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। अगर यह मेहनत इनसानों को ख़ुदा के अज़ाब (ईश्वरीय प्रकोप) से बचाने और उसके दीन की पैरवी करनेवाला बनाने के लिए की जाए, तो यह मनमोहक दृश्य भी हमारी निगाहें देख सकती हैं कि एक तरफ़ लोगों को ख़ुदा के अज़ाब से बचाने के लिए उम्मत बेचैन है और दूसरी तरफ़ उस अज़ाब से बचने के लिए वे लोग भी बेचैन हैं, जिन्हें इस्लाम की दावत दी जा रही है।

(3) इस्लाम को प्रभावी बनाना और इस्लामी व्यवस्था लागू करना

इस्लाम की दावत का तीसरा पहलू यह है कि इस्लाम को प्रभावी बनाने की कोशिश जाए, क्योंकि जब तक इस्लाम का वर्चस्व क़ायम नहीं होगा, आप उसपर पूरी तरह अमल ही नहीं कर सकते। इस्लाम कोई काल्पनिक जीवन-दर्शन (Philosophy) नहीं है, जिसका खुद हमसे और हमारी समस्याओं से कोई सम्बन्ध न हो, बल्कि वह एक ख़ास तरीक़े से हमारे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। वह कुछ बेजान अक़ीदे मुहैया नहीं करता, बल्कि ऐसी सोच देता है जिससे ख़ास तरह का अमल वुजूद में आता है।

इस्लाम को मानने का मतलब यह नहीं है कि उसे ख़ुदा का दीन मानने के बाद इनसान अपने पूरे जीवन में उससे कोई वास्ता न रखे और अपने लिए जो रवैया चाहे पसन्द करे; बल्कि इसका मतलब यह है कि इनसान के अन्दर केवल ख़ुदा की ग़ुलामी के जज़्बे हों। वह उसी को अपना माबूद (पूज्य-प्रभु) समझे और अपनी बन्दगी के एहसास को उसी के लिए ख़ास कर दे। उसी को अपना सच्चा शासक माने और ज़िन्दगी के हर मामले में उसके हुक्म के सामने इस तरह झुक जाए कि उसके आचरण और उसकी आदतें ही नहीं, बल्कि उसका ज्ञान और उसकी कला, उसकी संस्कृति और सामाजिक रहन-सहन, उसकी सत्ता और राजनीति– मतलब यह कि उसकी हर चीज़ ख़ुदा की मर्ज़ी की पाबन्द हो जाए। इसके लिए अगर कोई आसान हल तलाश किया जाए, तो शायद वह हल यह होगा कि इनसान अपने आपको पूरी तरह ख़ुदा के हवाले कर दे और उसकी मर्ज़ी के मुक़ाबले में अपने सारे अधिकार पूरी तरह छोड़ दे। इस तरह हर पहलू से ख़ुदा के आज्ञापालन के लिए ज़रूरी है कि हर तरफ़ उसी का दीन छाया रहे और ज़िन्दगी के हर क्षेत्र में उसी की सत्ता और उसी का शासन हो। इस्लाम अगर प्रभावी नहीं है तो यक़ीनी बात है कि विचार और व्यवहार के मैदान पर ग़ैर-इस्लामी

ताक़तें शासन करेंगी। ऐसी हालत में आप ख़ुदा से अपना दिली लगाव ज़रूर रख सकते हैं, लेकिन उसके बताए हुए दीन पर ठीक-ठीक अमल हरगिज़ नहीं कर सकते।

अल्लाह का दीन अगर पराधीन हो और उसकी विरोधी शक्तियों का वर्चस्व हो, तो बेशक आप उसका ज़िक्र तो कर सकेंगे, उससे लौ तो लगा सकेंगे, उसके नाम की तसबीह और उसकी याद तो कर सकेंगे, लेकिन दुनिया की ज़िन्दगी में उसके दीन पर अमल करना उसी हद तक आपके लिए सम्भव होगा, जिस हद तक ये विरोधी शक्तियाँ अमल की आपको इजाज़त देंगी। इस इजाज़त पर ख़ुश होने या इसे हासिल करने से पहले इस बात को भूलना नहीं चाहिए कि यह इजाज़त हमेशा बहुत महदूद होती है और उसी हद तक होती है जिस हद तक उन शक्तियों को अपना वर्चस्व बनाए रखने में कोई रुकावट न हो। जहाँ वे अपनी राह में रुकावट महसूस करेंगी; यह सीमित आज़ादी भी आपसे छीन लेंगी। यह थोड़ी-सी आज़ादी वे इसलिए नहीं दिया करतीं कि उन्हें आपसे या आपके दीन (धर्म) से हमदर्दी है, बल्कि इसलिए देती हैं कि ज़िन्दगी के विभिन्न मोर्चों पर इस्लाम को ज़ंजीरों में जकड़ने के बाद एक सीमित क्षेत्र में उसकी आज़ादी को वे अपने लिए हानिकारक नहीं समझतीं। इस क्षेत्र से बाहर वे अपनी संस्कृति, अपनी नैतिकता, अपने राजनैतिक सिद्धान्त और नियम, अपनी व्यापारिक नीति, उद्योग-धंधों के अपने नियम और अपने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून आप पर लाद देंगी और कभी-कभी तो आपको यह कहने का अधिकार भी नहीं होगा कि उनका अमुक क़दम इस्लाम के बिलकुल ही ख़िलाफ़ है। यह एक ऐसा सिद्धान्त है जिसपर हर सत्ताधारी शक्ति अमल करती है और इसी के बल पर उसको ज़िन्दगी नसीब होती है, लेकिन इस सिद्धान्त को कोई ऐसा आदमी गवारा नहीं कर सकता, जिसे ख़ुदा के दीन से मुहब्बत हो। अगर इस्लाम को क़ैद कर दिया गया है, तो वह इस गिरफ़्तारी पर संतुष्ट नहीं होगा, बल्कि हर क़ीमत पर उसे आज़ाद

और ज़रूरत पड़ने पर अपना सिर देकर आज़ाद कराने की कोशिश करेगा। इस्लाम पर अमल के उसे मौक़े हासिल नहीं हैं, तो उन मौक़ों को पाने के लिए उसके अन्दर वैसी ही बेचैनी पाई जाएगी जैसी बेचैनी मछली सूखे पर महसूस करती है। यह बेचैनी बिलकुल फ़ितरी है। इस बेचैनी का न होना इस बात का प्रमाण कि इस्लाम ने अभी दिल में जगह नहीं पाई है।

इस्लाम आपकी पूरी ज़िन्दगी को अपनी गिरफ़्त में लेना चाहता है और ग़ैर-इस्लामी शक्तियाँ केवल कुछ मामलों में ही आपको इसपर चलने की इजाज़त देती हैं। अगर इस इजाज़त को आप पर्याप्त समझते हैं, तो इसका मतलब यह हुआ कि आप अपने ऊपर इस्लाम की पूरी हुक्मरानी नहीं चाहते। हालाँकि जिस आदमी में इस्लाम पर चलने का जज़्बा हो, वह इस दुर्दशा पर तड़प उठेगा। अगर इनसान में यह तड़प न पाई जाए, तो वह एक ऐसी बेहिसी में गिरफ़्तार है, जिससे उसकी धार्मिक मृत्यु हो सकती है।

इस्लाम के किसी चाहनेवाले की बेहतरीन अभिलाषा और सबसे बड़ी कोशिश यह होगी कि उसपर इस्लाम का क़ानून चले, उसकी तहज़ीब इस्लामी तहज़ीब हो, उसके सामाजिक रहन-सहन से ग़ैर-इस्लामी चीज़ें निकल जाएँ, उसका लेन-देन इस्लाम के तहत हो, उसके शासन-सत्ता और राजनीति पर इस्लाम का राज हो, उसकी चाहत के पूरी होने और उस दौड़-भाग के फलदायक होने का उपाय केवल यह है कि इस्लाम की दावत दी जाए और पूरी एकग्रता के साथ इसके लिए जी-जान से पूरी कोशिश की जाए। इसके बिना इस्लाम को वर्चस्व प्राप्त नहीं हो सकता। इस्लाम को राज-सत्ता का स्थान केवल उसी समय प्राप्त होगा, जबकि दुनिया उसकी तरफ़ आकर्षित हो और उसका दायरा बड़े से बड़ा होता चला जाए। अगर दुनिया ने उसकी तरफ़ अभी ध्यान नहीं दिया है, तो उसकी सत्ता और शासन क़ायम होने का कोई सवाल ही नहीं।

कुछ लोग समझते हैं कि अगर कोई ईमानवाला, अगर ख़ुदा की ज़मीन पर उसकी सत्ता का इच्छुक हो, सत्ता पा ले तो उसकी राज्य की सीमा में इस्लाम प्रभावी हो जाएगा, लेकिन यह सोचना सही नहीं है; क्योंकि इस्लाम के प्रभावी होने का मतलब यह नहीं है कि कोई मुसलमान सत्ता की कुर्सी पर पहुँच जाए, बल्कि इसका मतलब यह है कि ज़िन्दगी के हर मैदान में इस्लाम का क़ानून लागू हो और उसको देश के अन्दर सबसे ऊँची हैसियत प्राप्त हो जाए और उसके फ़ैसले के बाद हर फ़ैसला रद्द हो जाए। इस्लाम को यह हैसियत केवल किसी मुसलमान के सत्ता पा लेने या किसी बड़े सत्ताधारी शासक के इस्लाम क़बूल कर लेने से भी हासिल नहीं हो सकती। यह उसी समय हासिल होगी, जबकि कोई समाज पूरी तरह इस्लाम को यह हैसियत देने के लिए तैयार हो जाए या कम से कम समाज में एक ऐसा शक्तिशाली समूह पाया जाए, जिसमें इस्लाम को लागू करने की योग्यता और क्षमता मौजूद हो। यह ऐसा काम नहीं है कि कोई अकेला आदमी, चाहे वह दुनिया का कितना ही बड़ा इनसान क्यों न हो, ख़ुद से कर गुज़रे। इसके लिए तो दावत की और आम हालतों में लगातार दावत की बड़ी ज़रूरत है। दावत के काम से ही इस्लाम को प्रभावी बनाने का इरादा और हौसला उभरेगा और वह ज़ेहनियत पैदा होगी, जो इस्लाम के अलावा हर जीवन-व्यवस्था और हर क़ानून-व्यवस्था को रद्द कर देती है।

यह बात मानी जा सकती है और मानी भी जानी चाहिए कि किसी बड़ी हस्ती का इस्लाम क़बूल कर लेना या उसका इस्लाम का अलमबरदार बनकर खड़ा होना इस्लाम की दावत फैलने में सहायक और मददगार होता है और कभी-कभी उसकी वजह से दीन का प्रभावी होना और फैलना आसान हो जाता है। लेकिन किसी का इस्लाम क़बूल करना या उसकी हिमायत में खड़ा होना अपने आप में इस्लाम के प्रभावी होने और फैलने के लिए काफ़ी नहीं है। इसके लिए तो उसको

और उसके जैसी सोच रखनेवाले लोगों को दावत के लिए जान-तोड़ कोशिश करनी ही पड़ेगी; यहाँ तक कि एक ऐसा गिरोह तैयार हो जाए, जो इस्लाम को क़ायम करने की राह में उसका बाहुबल बन जाए और जिसके द्वारा इनसानों के बीच ख़ुदा के दीन को लागू किया और फैलाया जा सके।

दावत को प्रभावी बनाने के सिलसिले में अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों का भी ज़िक्र किया जाता है। यहाँ दो बातें नज़र के सामने रहनी चाहिएँ। एक यह कि हक़ की दावत के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ अपने आप अनुकूल परिस्थितियों में बदल नहीं जाएँगी, बल्कि इसके लिए निरन्तर कठोर परिश्रम करना पड़ेगा। दूसरे यह कि परिस्थितियों का अनुकूल होना अपने आप ही किसी विचारधारा को वर्चस्व प्रदान नहीं करता, बल्कि वह प्रभावी उस समय होता है, जबकि उन परिस्थितियों से लाभ उठाया जाए और उसे प्रभावी बनाने और फैलाने की कोशिश की जाए। इस्लाम के लिए भी इस तरह की परिस्थितियों का उपलब्ध होना असम्भव नहीं है, लेकिन इन परिस्थितियों के कारण वह अपने आप शासन-सत्ता की कुर्सी पर नहीं पहुँच जाएगा, बल्कि इसके लिए उन लोगों की ज़रूरत है, जो उन परिस्थितियों को नज़र में रखें और उनको इस्लाम के वर्चस्व की तरफ़ मोड़ें। ये लोग दावत से पैदा होते हैं। दावत के बिना इन लोगों के पैदा होने की कोई राह आज तक खोजी नहीं जा सकी है।

इस्लाम को प्रभावी बनाने की जान-तोड़ कोशिश के लिए आपको ख़ास राजनैतिक क्षेत्र में भी काम करना होगा। दुनिया में बहुत-सी राजनैतिक विचारधाराएँ काम कर रही हैं। उनमें से प्रत्येक राजनैतिक विचारधारा इनसान की सफलता की विशेष संकल्पना प्रदान करती है और उसकी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याओं का एक सुनिश्चित समाधान पेश करती है। ये सभी विचारधाराएँ बेजान-सी हैं। उनका कोई मज़बूत आधार नहीं है। वे केवल कुछ

मनगढ़न्त और सतही नारों के सहारे जी रही हैं। उनके मुक़ाबले में इस्लाम कामयाबी की सबसे बेहतरीन विचारधारा पेश करता है। ज़रूरी और बहुत ही ज़रूरी होगा कि एक तरफ़ आप उन सभी विचारधाराओं की भरपूर समीक्षा और विवेचना करें, यहाँ तक कि उनकी ख़राबियों को बिलकुल नंगा करके रख दें। दूसरी तरफ़ इस्लाम ने दुनिया की भलाई और कामयाबी के लिए जो उसूल और सिद्धान्त प्रदान किए हैं, उन्हें इस तरह पेश करें कि हर समझदार इनसान उनकी बड़ाई और महानता को माननेवाला बन जाए। यह इस मैदान में आपका वैचारिक काम होगा। व्यावहारिक काम यह है कि जो लोग आपकी दावत और सोच से जुड़ते जाएँ, उनको सुसंगठित करें और उनको इस तरह प्रशिक्षित करें कि उनके अन्दर मौजूदा समय की उन सारी राजनैतिक विचारधाराओं से घोर नफ़रत और इस्लाम से अथाह प्रेम पैदा हो जाए और इस्लाम को प्रभावी बनाने और फैलाने के लिए अपना सब कुछ लुटाने में बिलकुल न हिचकें। इसके बाद इस गिरोह की मदद से आपको अमली तौर पर वे सारे उपाय और काम करने होंगे, जो इस्लाम के वर्चस्व क़ायम करने और उसको प्रभावी बनाने के लिए ज़रूरी हैं और जिनको अपनाने की इस्लाम इजाज़त देता है।

जब आप इस तरह की कोशिश करेंगे तो उसी समय आपको वह चीज़ हासिल हो सकती है, जिसकी आप चाहत रखते हैं यानी यह कि असत्य मिट जाए और इस्लाम छा जाए। इनसान पर अल्लाह के अलावा जिनकी भी सत्ता है, उन सबकी सत्ता ख़त्म हो और हर तरफ़ ख़ुदा की न्याय-व्यवस्था और सत्ता प्रभावी और लागू हो जाए। इस दुनिया में हमेशा ही ऐसा नहीं हुआ है कि लोगों ने ख़ुदा के दीन को रद्द कर दिया हो, बल्कि बार-बार क़ौमों और देशों ने इसे सीने से लगाया भी है और उनपर इसकी सत्ता भी रही है। इसका बिलकुल स्पष्ट उदाहरण वह महानतम क्रान्ति है, जो हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* की दावत के नतीजे में वुजूद में आई। जिस ख़ुदा ने पैग़म्बर मुहम्मद *(सल्ल॰)* और आप *(सल्ल॰)*

दावत और अनुपालन

दावत और अनुपालन के बीच सम्बन्ध

इस्लाम के अनुपालन और इसकी दावत देखने में तो दो अलग-अलग काम हैं। एक का सम्बन्ध इनसान के स्वयं अपने व्यक्तित्व से है और दूसरे का सम्बन्ध बाहरी दुनिया से। लेकिन इसके बावुजूद इन दोनों में बहुत गहरा सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध के कारण हम इन दोनों को एक-दूसरे से बिलकुल अलग नहीं कर सकते। ऐसा नहीं हो सकता कि इस्लाम के अनुपालन पर सोच-विचार करते समय उसकी दावत को नज़रअन्दाज़ कर दिया जाए या उसकी दावत बहस में आए, तो उसके अनुपालन को भुला दिया जाए; क्योंकि जिस तरह यह एक सच्चाई है कि इस्लाम पर आदमी का चलना उसी समय पूरा होता है, जबकि वह दुनिया को इसकी दावत दे। ठीक इसी तरह यह भी एक सच्चाई है कि जब तक इस्लाम पर उसका अमल न हो वह सही अर्थों में इसकी दावत देनेवाला नहीं बन सकता। जो व्यक्ति इनसानों तक अल्लाह का दीन पहुँचाना चाहे, ज़रूरी है कि पहले यह दीन उसके दिल-दिमाग़ में उतर जाए और उसकी पूरी ज़िन्दगी पर छा जाए। दीन की सच्चाई से अगर वह ख़ुद अनजान है और उसके अमल से उसका इज़हार नहीं हो रहा है, तो दूसरों को दीन से अवगत कराना उसके बस का काम नहीं है। जिस दीन की वह दुनिया को दावत दे रहा है, उसका सबसे पहला सम्बोधित वह ख़ुद है। इसलिए जो काम वह दूसरों के बीच करना चाहता है, उसकी शुरुआत उसको ख़ुद अपने आपसे से करनी होगी और दूसरों को ख़ुदापरस्त (ईश-भक्त) बनाने से पहले ख़ुद को ख़ुदापरस्त बनाना होगा। इस्लाम की दावत उसके अनुपालन के बिना एक मज़ाक़ है और जब कोई दावत मज़ाक़ बन जाए, तो उसका आकर्षण ख़त्म हो जाता है।

वह लोगों को अपनी तरफ़ खींच नहीं सकती। वही दावत दुनिया को अपनी तरफ़ आकर्षिक करती है, जिसके प्रचारक और अलमबरदार अपनी हस्ती को उसमें गुम कर दें और उसकी जीती-जागती तस्वीर बन जाएँ।

दावत की कामयाबी के लिए ख़ुद उस पर चलना ज़रूरी है

इस्लाम की दावत का मतलब केवल यह नहीं है कि इनसानों के बीच उसके हक़ होने का एलान कर दिया जाए, बल्कि यह अपनी प्रकृति की दृष्टि से एक अत्यन्त क्रान्तिकारी कोशिश है। इस्लाम चाहता है कि वह इनसानों के सभी बनावटी धर्मों पर छा जाए और सब उसके मातहत बनकर रहें। जो आदमी बाहर की दुनिया में इस्लाम की यह मनचाही क्रान्ति लाना चाहे, पहले उसको अपने अन्दर की दुनिया में इसी प्रकार की क्रान्ति लानी होगी, नहीं तो बाहर की दुनिया में उसकी कोशिश कामयाब नहीं होगी। दूसरों पर ख़ुदा की सत्ता स्थापित करने के लिए इनसान को अपने आप पर ख़ुदा का राज क़ायम करना होता है। इसके बिना वह क़ियामत तक दूसरों पर उसकी सत्ता क़ायम नहीं कर सकता। इस सिलसिले में सबसे बड़ी बात जो हमेशा इस्लाम के एक प्रचारक-प्रसारक की नज़र के सामने रहनी चाहिए, यह है कि वह इस दावत के द्वारा ख़ुदा को ख़ुश करना चाहता है और ख़ुदा के नज़दीक यह बात बहुत ही नापसन्दीदा है कि आदमी दूसरों के बीच तो उसके दीन का प्रचार-प्रसार करे और ख़ुद उसकी ज़िन्दगी दीन के असर से ख़ाली हो—

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لِمَ تَقُوْلُوْنَ مَا لَا تَفْعَلُوْنَ ۞ كَبُرَ مَقْتًا عِنْدَ اللّٰهِ اَنْ تَقُوْلُوْا مَا لَا تَفْعَلُوْنَ ۞

"ऐ वे लोगो जो ईमान लाए हो! तुम वे बातें क्यों कहते हो, जिनपर (ख़ुद) अमल नहीं करते? अल्लाह के नज़दीक (यह चीज़) बहुत ही नापसन्दीदा है कि तुम ऐसी बातें करो, जिनपर

खुद अमल नहीं करते हो।"

(क़ुरआन, सूरा-61 सफ़्फ़, आयतें-2,3)

क़ुरआन अहले-किताब के प्रवचन करनेवालों और उपदेशकों से कहता है—

اَتَأْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَتَنْسَوْنَ اَنْفُسَكُمْ وَاَنْتُمْ تَتْلُوْنَ الْكِتٰبَ ؕ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ﴿۴۴﴾

"क्या तुम लोगों को नेकी का हुक्म देते हो और अपने-आपको भूल जाते हो, जबकि तुम अल्लाह की किताब पढ़ रहे हो। तो क्या तुम सोचते नहीं हो?" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-44)

इन उपदेशकों के उपदेश और नसीहत के लिए क़ुरआन मजीद ने 'अल-बिर्र' शब्द इस्तेमाल किया है। इसमें बड़ी व्यापकता है। यह ख़ुदा और बन्दों के हर तरह के अधिकारों को अपने दायरे में लाता है। मतलब यह है कि तुम अल्लाह की इबादत का, नाते-रिश्तेदारों के हक़ों की अदायगी का, दुनिया के साथ अच्छे बरताव और आचरण का, मामलों में सच्चाई, ईमानदारी और अमानत का, सम्बन्धों में नसीहत और भलाई का, हमदर्दी और सहानुभूति का सबक़ देते फिरते हो; लेकिन ख़ुद तुम्हारे अमल का दामन इन ख़ूबियों से ख़ाली है। दीन और उसकी महिमा और गुण-गान तुम्हारे मुख पर हरदम जारी रहते हैं, लेकिन तुम्हारी ज़िन्दगी में उसके असर कहीं दिखाई नहीं देते। तुम ख़ुदा की किताब पढ़ते-पढ़ाते हो और उसी से तुम्हारे उपदेशों और भाषणों की रौनक़ है, हालाँकि ख़ुदा की किताब केवल दूसरों को ही सुनाने के लिए नहीं, अपनी ज़िन्दगी में उतारने के लिए भी है।

इसमें नसीहत है कि ईमानवालों को यह तरीक़ा नहीं अपनाना चाहिए कि वे दीन की दावत देनेवाले बनकर तो दुनिया के सामने आएँ और ख़ुद उनकी ज़िन्दगी उससे ख़ाली हो। यह बात ख़ुदा की बन्दगी के बिलकुल प्रतिकूल है कि आदमी दूसरों के लिए हिदायत की मशाल तो रौशन करे और ख़ुद अंधेरों में डूब जाए।

दावत देनेवालों को ख़ुद अपनी दावत पर सबसे ज़्यादा अमल करना चाहिए

यह एक सच्चाई है कि लोक-परलोक में अच्छा अंजाम केवल उस आदमी के लिए है, जो इस्लाम को क़बूल करे और अल्लाह के सामने सिर झुका दे। जो आदमी इस्लाम को रद्द कर दे और अल्लाह की नाफ़रमानी का रवैया अपनाए, उसे बुरे अंजाम से कोई चीज़ बचा नहीं सकती। इस्लाम की दावत देनेवाला इसी सच्चाई से दुनिया को सचेत करना चाहता है। अगर इस सच्चाई पर उसका ईमान है और उसका दिल उसके हक़ होने की गवाही दे रहा है, तो उसे सबसे अधिक इस्लाम पर चलनेवाला होना चाहिए। जब उसकी ज़बान खुलेआम इसका इज़हार करती है कि ज़िन्दगी का बेहतरीन क़ानून वह है, जो ख़ुदा ने अपने पैग़म्बर के द्वारा उतारा है और फिर वह अपने अमल से इस क़ानून का उल्लंघन करता है, तो ख़ुदा और उसके बन्दों के सामने अपने अक़ीदे (आस्था) को शरमिन्दा करता है।

ख़ुद दावत देनेवालों से भी दावत पर अमल के बारे में सवाल होगा

इसमें शक नहीं कि इस्लाम की दावत इतना बड़ा कल्याणकारी काम है कि ख़ुदा के यहाँ उसके अच्छे बदले और सवाब की आसानी से कल्पना नहीं जा सकती। लेकिन इसके बावुजूद कोई भी आदमी केवल इसलिए ख़ुदा की पकड़ से बच नहीं सकेगा कि वह दुनिया में दावत का बहुत बड़ा काम अंजाम दे रहा था। ख़ुदा के यहाँ ज़रूर ही उससे यह सवाल होगा कि जिस दीन की दावत तुम दुनिया को दे रहे थे, उसका कितना हिस्सा तुम्हारी ज़िन्दगी में मौजूद था और कितना हिस्सा ग़ायब था। अगर आज उसकी ज़िन्दगी ख़ुदा के दीन से ख़ाली हो, तो कल ख़ुदा के फ़रिश्ते उसके ख़िलाफ़ अभियोग-पत्र प्रस्तुत करेंगे कि यह है तेरे दीन का फैलानेवाला, जो उसकी महिमा का वर्णन और उसका

गुण-गान तो ख़ूब क़र रहा था, लेकिन खुद उसपर अमल नहीं करता था। यह कोई हलका अपराध नहीं है, बल्कि अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के शब्दों में उस उपदेशक के होंठ आग की कैंचियों से काट दिए जाएँगे, जो दुनियावालों को तो अल्लाह की किताब पढ़कर सुनाता फिरे और खुद उसको पीठ-पीछे डाल दे। सच्चाई यह है कि इनसान की कामयाबी खुदा के दीन के पर चलने में छिपी हुई है। अगर उसने दीन से बग़ावत का रवैया अपनाया, तो न इस दुनिया में कामयाब होगा और न आख़िरत में। ख़ुदा की मेहरबानी और दयालुता उसकी आज्ञा का पालन करनेवाले को मिलती है। अगर उसने अपनी फ़रमाँबरदारी का सुबूत न दिया, तो सोचिए कि उसकी मेहरबानी और दयालुता का कैसे हक़दार ठहरेगा?

इस्लाम के किसी भी सेवक को यह सच्चाई नहीं भूलनी चाहिए कि उसकी सारी कोशिशों के बावजूद इस्लाम को अगर उसके देशवासी रद्द कर दें, उसके मुहल्ले वाले रद्द कर दें, उसके नाते-रिश्तेदार रद्द कर दें, यहाँ तक कि उसके माँ-बाप, भाई-बहन और बीवी-बच्चे सब रद्द कर दें और दुनिया का एक आदमी भी उसे स्वीकार न करे, तो ख़ुदा के यहाँ हरगिज़ उससे कोई पूछगछ नहीं होगी; क्योंकि उसको जो शक्ति मिली थी, उसने उसे लोगों को सीधे-सच्चे रास्ते पर लाने में लगा दी। उससे आगे चूँकि उसके पास दिलों को बदलने की शक्ति नहीं थी, इसलिए अगर वह उनके दिल बदल नहीं सका, तो बेबस था। इसके विपरीत अगर ख़ुद उसकी ज़िन्दगी दीन से ख़ाली हो, तो उसका कोई बहाना और तर्क नहीं सुना जाएगा; क्योंकि इनसान अगर सच्चे मन के साथ अपने आपको ख़ुदा की बन्दगी की तरफ़ मोड़ना चाहे, तो निश्चय ही मोड़ सकता है। इस राह में कोई ऐसी रुकावट नहीं है, जिसको दूर करना उसके लिए सम्भव न हो। ख़ुदा ने उसको अपनी हस्ती पर पूरा-पूरा अधिकार प्रदान किया है। इसके बाद भी अगर वह अपने ऊपर ख़ुदा की सत्ता क़ायम न करे, तो क्षमा-याचना के सारे दरवाज़े उसके लिए

बन्द हो जाएँगे और वह किसी दूसरे आदमी पर इसकी ज़िम्मेदारी डालकर इसके नतीजों से बच नहीं सकता। उसे ख़ुद ही अपना अंजाम भुगतना होगा। यह अंजाम बड़ा ही भयंकर और दिल दहलानेवाला होगा।

दावत पर अमल करने से अल्लाह के प्रति लगाव बढ़ता है

जो आदमी इस्लाम की सेवा करना चाहे और वास्तव में अपने इस इरादे में गम्भीर और सच्चा है, तो उसको अल्लाह तआला से वह लगाव भी पैदा करना होगा, जो इस काम के लिए ज़रूरी है। अल्लाह से यह लगाव इस्लाम की पैरवी से ही पैदा होता है, जिसकी वह सेवा करना चाहता है। इसके अलावा इसका कोई दूसरा साधन और उपाय नहीं है। अल्लाह के पैग़म्बर जिन क़ौमों में भेजे गए हैं, वे उनमें उसके दीन (जीवन-विधान) के सबसे पहले और सबसे बड़े दावत देनेवाले होते हैं। अल्लाह से उनका सम्बन्ध अटूट होता है। उनका दिल हर समय उसकी याद से भरा रहता है। उनकी पूरी ज़िन्दगी अल्लाह की इबादत और पैरवी में इस तरह गुज़रती है कि उसके काम का कोई भी पहलू उससे आज़ाद नहीं होता। वे उपासना और समर्पण के पूर्णतः प्रतीक होते हैं। वे जिस दीन की तरफ़ अपनी क़ौम को बुलाते हैं, इस समर्पण और एकाग्रता के साथ उसका अनुपालन करते हैं कि उनके किसी विरोधी को भी यह कहने का अवसर नहीं मिलता कि उनका आचरण उनकी दावत के प्रतिकूल है। वे अल्लाह के हर हुक्म पर इस प्रकार अमल करते हैं कि जीवन की कठिन से कठिन घड़ियों में भी उसमें उससे कण भर भी विचलन नहीं पाया जाता। क़ुरआन ने उनको इशभय, संयम और उपासना, परहेज़गारी और समर्पण, लगाव और अल्लाह की तरफ़ पलटनेवाला जैसे गुणों से सुसज्जित बताया है। ये गुण केवल उनके व्यक्तिगत चरित्र को ही प्रकट नहीं करते, बल्कि इनसे मालूम होता है कि वे किस प्रकार के लोग हैं, जो दीन की दावत का काम कर सकते हैं।

दावत पर अमल करने से ही योग्यता बढ़ती है

"इस्लाम की दावत किसी भी दूसरी विचारधारा की दावत से अधिक कठिन है; क्योंकि दुनिया में जितने आन्दोलन और विचारधाराएँ पैदा होती हैं, वे इनसान के केवल ऊपरी बदलाव और उसकी कुछ समस्याओं को हल करना चाहते हैं। लेकिन इस्लाम इनसान के अन्दर और बाहर दोनों में क्रान्ति लाता है और उसकी पूरी ज़िन्दगी को प्रत्येक विचारधारा और हर आन्दोलन से बिलकुल अलग एक नई सोच और एक नई दिशा प्रदान करता है। इसकी सेवा के लिए दुनिया की किसी भी विचारधारा के अनुयायी, बल्कि किसी भी विचारधारा के लीडर और मार्गदर्शक की तुलना में बड़े साहस, बड़े धीरज और संयम, बलिदान की असीम भावनाओं और बहुत अधिक सूझ-बूझ की ज़रूरत होती है। इसके बिना इस्लाम की सेवा का हक़ अदा ही नहीं हो सकता। इनसान का अल्लाह तआला से लगाव जितना मज़बूत होगा, ये ख़ूबियाँ भी उसके अन्दर उतनी ही शक्ति के साथ उभरेंगी और वह अल्लाह के दीन का बेहतरीन सेवक साबित होगा। जब अल्लाह से इनासान का सम्बन्ध इतना मज़बूत हो कि उसके दीन की ख़ातिर वह किसी भी सम्बन्ध के टूटने की परवाह न करे; जब अल्लाह की याद उसके लिए इतनी मनमोहक हो कि दुनिया की कोई भी चीज़ उसको अल्लाह से ग़ाफ़िल न होने दे और जब अल्लाह का डर और उसकी मुहब्बत उसके दिल और दिमाग़ पर इस तरह छा जाए कि कोई दूसरा डर और कोई दूसरी मुहब्बत उसपर अपना प्रभाव न डाल सके, तो दुनिया की कोई भी शक्ति उसको दीन की राह से नहीं हटा सकेगी और वह उसकी उससे अधिक और इससे अच्छी सेवा कर सकेगा, जितनी कि उसकी सतह का कोई भी आदमी अपनी विचारधारा और आन्दोलन की सेवा कर सकता है।

दावत पर अमल किए बिना बात प्रामाणिक नहीं होती

अल्लाह के पैग़म्बर इस तरह अपनी दावत पेश करते हैं कि उनके

विरोध के लिए कोई तर्क और प्रमाण शेष नहीं रहता। जो आदमी इस प्रकार के काम के लिए उठे, उसके अन्दर भी दीन के अनुपालन की वही भावना होनी चाहिए, जो अल्लाह के पैग़म्बरों में होती है। आचरण का खोखलापन बात को बेवज़न बना देता है। इसलिए कोई बेअमल आदमी ख़ुदा की तरफ़ से इनसानों पर हुज्जत क़ायम नहीं कर सकता। दुनिया इनसान के शब्दों से अधिक उसके आचरण को देखती है। अगर उसकी करनी उसकी कथनी से टकरा रही हो, तो वह ख़ुद उसके स्वीकार होने की राह में सबसे बड़ी रुकावट होगी। उसकी बात को रद्‌द करने के लिए लोगों के नज़दीक यह दलील काफ़ी होगी कि उसका रवैया उसके ख़िलाफ़ है। जब कोई आदमी इस्लाम की दावत देनेवाले की हैसियत से सामने आए, तो दुनिया उसकी छोटी-से-छोटी ग़लती को भी माफ़ नहीं करेगी। वह उसकी मामूली-सी भूल को भी दावत के बिगाड़ का नतीजा क़रार देगी और उसे बदनाम करेगी। कोई भी दावत उसी समय लोगों के लिए स्वीकार करने लायक़ होती है, जबकि दावत देनेवाले की ज़िन्दगी उसका चलता-फिरता नमूना बन जाए और जो बात वे उसकी ज़बान से सुन रहे हैं, उसे वे उसके आचरण में देख लें।

सच्ची बात यह है कि जो इनसान इस्लाम को दुनिया के सामने पेश करना चाहता है उसके लिए ज़रूरी है कि वह अपने पूरे वुजूद के साथ उसके हक़ (सच) होने की गवाही दे। अगर उसकी ज़िन्दगी से उसके सच होने की आवाज़ बुलन्द न हो, तो केवल उसके प्रचार-प्रसार से किसी दूसरे आदमी की ज़िन्दगी बदल नहीं सकती। ख़ुदा के दीन का मान-सम्मान और मूल्य जिसने घटाया है, वह यही बेअमल दावत है। लेकिन सोचिए, हममें से कितने हैं जिनके लिए इस्लाम केवल बातचीत का ही विषय है और कितने हैं जिनकी ज़िन्दगियों में वह सचमुच उतरा हुआ है। इस्लाम का नाम लेनेवाले इसको बहुत रुसवा कर चुके हैं। कम से कम इसकी दावत देनेवालों को इससे ज़रूर ही बचना चाहिए।

दावत और सुधार का क्रम[1]

दावत एक सुधारपरक अमल है

इस्लाम की दावत एक विशेष पहलू से इनसानों का वैचारिक और व्यावहारिक सुधार है। इसलिए इसे एक सुधार-प्रक्रिया भी कहा जा सकता है। इसमें बीवी और बच्चों का सुधार, परिवार और क़बीले का सुधार, बस्ती और शहर का सुधार और देश-समाज का सुधार ही नहीं, पूरी दुनिया और पूरी मानव-जाति का सुधार शामिल है। हमें उन लोगों का भी सुधार करना है, जो इस्लाम को मानने के बावजूद इसकी शिक्षाओं से अनजान हैं या जानते-बूझते इसपर अमल के लिए तैयार ही नहीं हैं और उन लोगों का भी सुधार करना है, जो इस्लाम से बिलकुल अनजान हैं या अनेक कारणों से उससे बहुत दूर हैं और उसे स्वीकार करना नहीं चाहते। इस व्यापक और चौतरफ़ा कोशिश में हम में से हर आदमी को अपना हिस्सा अदा करना है। लेकिन इसमें एक क्रम होना चाहिए है। इससे इसमें ख़ूबसूरती और मज़बूती पैदा होगी और दावत और सुधार का काम स्वाभाविक गति के साथ आगे बढ़ेगा, नहीं तो जिस मैदान में आदमी को पहले पहुँचना चाहिए, वहाँ वह बाद में पहुँचेगा और जहाँ उसको बाद में कड़ी मेहनत करनी चाहिए, वहाँ वह

---

[1] इस्लाम की दावत के सिलसिले में ग़ैर-मुस्लिमों में प्रचार-प्रसार और मुसलमानों के सुधार और प्रशिक्षण का वर्णन दो अलग-अलग शीर्षकों के अन्तर्गत हुआ है। यहाँ बहस की आसानी के लिए इनपर एक साथ बात की जा रही है। इनमें काम करने के ढंग में जो अन्तर है, वह स्पष्ट है। दोनों ही दावत देनेवाले के काम के मैदान हैं।

पहले ही क़दम पर मेहनत शुरू कर देगा। क्रम का न होना एक दोष है, जो किसी भी काम को बिगाड़ देता है। दावत और सुधार की कोशिश को इस दोष से ख़ाली होना चाहिए। इसलिए हम यहाँ उसके क्रम के बारे में किसी हद तक विस्तार से बातचीत करना चाहते हैं। इससे अन्दाज़ा होगा कि इस काम में क्रम का क्या महत्त्व है और इससे उसको कितना फ़ायदा पहुँचता है।

बीवी-बच्चों का सुधार

इस्लाम की दावत और उसके प्रचार-प्रसार, सुधार और शिक्षण-प्रशिक्षण का आरम्भ आपको अपने घर से करना चाहिए। अल्लाह के दीन को अगर आप आजकल के बहुत-से इनसानों की तरह घिसी-पिटी और बेकार चीज़ नहीं समझते, बल्कि उसको वही अहमियत देते हैं जो कि सचमुच उसे हासिल है, तो आपकी बीवी और आपके बच्चे सबसे अधिक इसके हक़दार हैं कि आप उनको दीन की हक़ीक़त समझाएँ और दीन से हटने और बग़ावत के भयानक अंजाम से आगाह करें। यह एक सच्चाई है कि जो इनसान अपने लिए ख़ुदा के दीन पर चलने को ज़रूरी समझेगा, वह ज़रूर ही अपनी बीवी और बच्चों को भी दीन की राह पर चलाएगा। वह कभी इस बात को पसन्द नहीं कर सकता कि ख़ुद तो परलोक की यातना (अज़ाब) से बच जाए और उसके बीवी-बच्चे उसमें गिरफ़्तार हो जाएँ।

बीवी और बच्चों का सुधार करना और उनको दीन की राह पर ले चलना आपके लिए वैकल्पिक या पूरक काम नहीं, बल्कि ज़रूरी काम है। इसलिए ख़ुदा का हुक्म है—

يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا قُوا أَنفُسَكُمْ وَأَهْلِيكُمْ نَارًا

"ऐ ईमानवालो! अपने-आपको और अपने घरवालों को (जहन्नम की) आग से बचाओ।"

(क़ुरआन, सूरा-66 तहरीम, आयत-6)

अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* कहते हैं—

الرَّجُلُ رَاعٍ عَلَى أَهْلِ بَيْتِهِ وَهُوَ مَسْئُولٌ عَنْ رَعِيَّتِهِ

"मर्द निगराँ है अपने घरवालों पर और उससे उसकी रैयत के बारे में (क़ियामत के दिन) पूछा जाएगा।"[1]

इस्लाम की दावत या किसी भी सुधार की कोशिश के फ़ायदेमन्द होने के लिए पहली शर्त दिली लगन और मुहब्बत है। अगर सच्ची लगन और मुहब्बत है, तो सामनेवाला व्यक्ति उससे असर लेगा वरना उसपर कोई असर नहीं होगा। इस पहलू से आप देखें, तो हर आदमी अपने बीवी-बच्चों के सुधार और प्रशिक्षण के लिए दूसरों से अधिक उपयुक्त है। उसे अपनी बीवी और बच्चों से बेहद मुहब्बत होती है। वह उनका सच्चा हितैषी होता है, उनकी सेवा को अपने लिए फ़र्ज़ समझता है। उनकी देखभाल और परवरिश करता है, उनका दुख-दर्द उठाता है और उनके लिए त्याग करता और कष्ट झेलता है। इसलिए वे उसकी सच्चाई और मुहब्बत के बारे में कभी शक नहीं कर सकते। वे उसको अपना हितैषी और एहसान करनेवाला मानने पर मजबूर हैं। इसी लिए अगर वह उनको दीन की दावत दे या उनका सुधार और प्रशिक्षण करना चाहे, तो उम्मीद यही है कि वे उसे अपनी सफलता और भलाई का माध्यम समझेंगे और किसी भी दूसरे आदमी द्वारा दीन की तरफ़ बुलाने और सुधार की कोशिश के मुक़ाबले में अधिक असर क़बूल करेंगे।

बीवी-बच्चों के सुधार और प्रशिक्षण के लिए एक ख़ास हद में अल्लाह ने आपको अधिकार भी दिया है। इस ख़ास हद के अन्दर उनपर कड़ाई भी कर सकते हैं। इसलिए अगर वे शरीअत की हदों से बाहर निकल रहे हों, तो पहले आप नरमी और समझाने-बुझाने के द्वारा

[1] हदीस : सहीह बुख़ारी, किताबुन्-निकाह और अन्य जगहों पर; सहीह मुस्लिम, किताबुल-इमारह, बाबु फ़ज़ी-लतिल इमामिलआ़दिलि.....आख़िर तक।

उनके सुधार की कोशिश करें। लेकिन अगर इससे उनका सुधार न हो सके तो आपको चाहिए कि उनके साथ सख़्ती का रवैया अपनाएँ और यह साफ़-साफ़ बता दें कि दीन से फिरना या हटना और उसका उल्लंघन आपके लिए बरदाश्त से बाहर है।

अल्लाह ने आपको बीवी और बच्चों पर जो अधिकार दिया है, उसके कारण आप बहुत बड़ी आज़माइश में पड़ गए हैं। इसका मतलब यह है कि अगर आपकी बीवी और बच्चे ख़ुदा के दीन से हटे हुए हैं, तो आप न ख़ामोश रह सकते हैं और न केवल नसीहत करके संतुष्ट हो सकते हैं कि ज़िम्मेदारी अदा हो गई, बल्कि उनकी इस नाफ़रमानी को रोकने के लिए आपको उस हद तक ताक़त भी इस्तेमाल करनी होगी, जिस हद तक ताक़त के इस्तेमाल की आपको इजाज़त दी गई है। अगर आप उनके ग़लत रवैए को सहते रहे और शरीअत की हदों के अन्दर उनके सुधार की कोशिश नहीं की, तो आप ख़ुदा के नज़दीक बहुत बड़े अपराधी ठहरेंगे।

आप इस हौसले और इरादे के साथ उठे हैं कि अगर आपको ख़ुदा की ज़मीन में सत्ता मिले, तो यहाँ उसकी हुकूमत क़ायम करेंगे। आपको अपने घर पर ख़ुदा ने जो अधिकार और सत्ता दी है, उसमें आपके इस हौसले और इरादे का इम्तिहान है। एक छोटे से दायरे में आपको कुछ इनसानों पर जो सीमित सत्ता मिली है, उसके द्वारा आप उनको ख़ुदा का बन्दा और फ़रमाँबरदार बनाने में सफल हों, तो यह उम्मीद की जा सकती है कि इससे बड़ी सत्ता हासिल हो, तो आप ख़ुदा की ज़मीन पर ख़ुदा की हुकूमत क़ायम करेंगे। लेकिन अगर आप अपने घर में भी ख़ुदा का क़ानून लागू नहीं कर सके, तो फिर कैसे उम्मीद की जाए कि आपके द्वारा सारी दुनिया में उसका क़ानून लागू होगा। आप इस दुनिया में जो सबसे बड़ा काम अंजाम देना चाहते हैं, उसकी पहली मंज़िल घर का सुधार है। अगर यह पहली मंज़िल ही आपने पूरी नहीं की, तो कौन कह सकता है कि इसकी सारी मंज़िलें आपके हाथों पूरी होंगी।

सच्चाई यह है कि जब आपको इस बात की कोई चिन्ता नहीं है कि आपकी बीवी और बच्चे ख़ुदा की इताअत कर रहे हैं या उसकी नाफ़रमानी, तो आप फिर दुनिया की हिदायत और गुमराही से भी निश्चिन्त ही होंगे और सही अर्थों में आपको इससे दिलचस्पी नहीं हो सकती।

कभी-कभी दीन का काम अंजाम देनेवाले जब उस महान क्रान्ति के बारे में सोचते हैं, जो वे दुनिया में लाना चाहते हैं तो बीवी और बच्चों के सुधार को कोई विशेष महत्त्व नहीं देते। वे इस विषय से इस तरह नज़र बचाकर निकल जाते हैं, जैसे वह उनके सोच-विचार, ध्यान और मेहनत का कुछ अधिक हक़दार नहीं है; हालाँकि घर से बाहर क्रान्ति के लिए घर के अन्दर क्रान्ति बहुत ज़रूरी है।

अगर आपकी बीवी और बच्चों को दीन से मुहब्बत हो और वे दीन की राह में आनेवाली कठिनाइयों में न केवल अपने क़दम जमाए रहें, बल्कि आपको भी जमे रहने की प्रेरणा दें, तो निश्चय ही आपकी दावत की भावना और उमंग ताक़तवर होगी और आप एकाग्रता और लगन के साथ दीन की सेवा कर सकेंगे। लेकिन अगर, ख़ुदा न करे, आपका घर दीनदार नहीं है तो घर से बाहर दीन की सेवा आपके लिए आसान न होगी। आप जानते हैं कि बहुत-से लोग दीन की सेवा केवल इस कारण नहीं कर पाते कि उनकी बीवी और उनके बच्चे इस राह में रुकावट हैं और उनको आगे बढ़ने नहीं देते।

क्या इस सच्चाई को जानने के बाद भी आप घर के सुधार की अहमियत महसूस नहीं करेंगे और इससे ग़ाफ़िल और बेसुध ही रहेंगे?

परिवार का सुधार

बीवी और बच्चों के सुधार के साथ आपको अपने माँ-बाप, भाई-बहन और निकटतम रिश्तेदारों का भी सुधार करना चाहिए; क्योंकि आम इनसानों के मुक़ाबले में रिश्तेदारों का हक़ अधिक है। ख़ुदा का

हुक्म है–

وَأَنذِرْ عَشِيرَتَكَ الْأَقْرَبِينَ ۝

"और अपने क़रीबी रिश्तेदारों को डराओ।"

(क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयत-214)

परिवार हमारे सामाजिक जीवन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। हम इससे इस तरह बन्धे हुए हैं कि आसानी से अलग नहीं हो सकते। परिवार हमारा मुहताज है और हम उसके मुहताज हैं; उसको हमारी ज़रूरत है और हमें उसकी ज़रूरत है; वह हमारा सहयोग चाहता है और हम उसका सहयोग चाहते हैं; उसपर हमारे हक़ हैं और हमपर उसके हक़ हैं। इसलिए अगर आपका परिवार दीनदार और ख़ुदापरस्त हो, तो आप उससे अपने सारे सम्बन्ध दीन के आधार पर क़ायम कर सकते हैं, वरना दीन की हदों के अन्दर रहते हुए आपको अपने परिवार से सम्बन्ध सुधारने और बनाने में, बल्कि निबाहने में भी कठिनाई होगी। इसकी भी आशंका है कि किसी भी मरहले में आपके सामने यह सवाल पैदा हो कि परिवारवालों को राज़ी किया जाय या ख़ुदा को ख़ुश किया जाय और ख़ुदा की ख़ुशी के लिए परिवारवालों से सम्बन्ध तोड़ने पर मजबूर हो जाएँ।

परिवार का सुधार एक और पहलू से भी आपके लिए लाभदायक है। वह यह कि परिवार के लोगों में सहयोग और हमदर्दी की भावना होती है। कभी-कभी यह भावना पक्षपात की हद तक पहुँच जाती है और आदमी परिवार की हर जाइज़ और नाजाइज़ बात की हिमायत करने लगता है। बेशक यह पक्षपात हमारे नज़दीक ग़लत है, लेकिन फिर भी यह सच्चाई है कि परिवार के लोगों में सहयोग और हमदर्दी की जितनी प्रबल भावना होती है, परिवार से बाहर उतनी प्रबल भावना आप कम ही देखेंगे। इसलिए अगर आपके परिवार को दीन से मुहब्बत हो, तो वह दीन की राह में आपका बेहतरीन सहयोगी हो सकता है। दीन

की दावत की कोशिश में वह आपका साथी हो, तो वह आपका सहयोग केवल इसलिए नहीं क़रेगा कि आप उसके एक सदस्य हैं, बल्कि इस वजह से भी वह आपकी हिमायत करेगा कि वह उसके दीन और ईमान की माँग है। इस तरह परिवार के सुधार से आपके सम्बन्ध ठीक होंगे और आपको दीन के बेहतरीन हिमायती भी मिल सकेंगे।

परिवार के सुधार से अगर आप नज़र फेर लें, तो उस बड़े काम को नुक़सान पहुँचाएँगे, जो आपके सामने है। दुनिया बड़े ध्यान से देख रही है कि जो दावत आप दूसरों को दे रहे हैं, क्या वह अपने घर और परिवारवालों को भी देते हैं या नहीं? क्योंकि दुनिया यह सोच नहीं सकती कि खुदा का दीन कामयाबी और नजात का साधन है, तो आप दूसरों को तो इससे आगाह करें और अपने घर और परिवारवालों को इससे ग़ाफ़िल रहने दें। फिर दुनिया यह भी देख रही है कि आप जिस दीन की दावत दे रहे हैं, उसकी पैरवी आप और खुद आपके घर और परिवारवाले कहाँ तक कर रहे हैं?

अगर आपका घर और परिवार दीन से हटा हुआ है और दीन से उनकी इस दूरी को आप सहन कर रहे हैं, तो दावत की राह में आप खुद सबसे बड़ी रुकावट हैं। जब आपके बीवी-बच्चे और परिवार के लोग दीन का मज़ाक़ उड़ा रहे हों, खुदा का साझीदार ठहराते और दीन में बिगाड़ पैदा करते हों, दीन की वर्जित बातों पर चल रहे हों, अपने कारोबार और मामलों में हराम-हलाल में कोई फ़र्क़ न करते हों, खुशी और ग़म के मौक़ों पर खुदा और उसके पैग़म्बर के बताए हुए तरीक़ों को छोड़कर जाहिलियत (अज्ञानता) के रस्म-रिवाजों पर चल रहे हों और आप उनकी इस हालत को बदलने के बजाय दुनिया को नसीहत करते फिरें, तो दुनिया पर इसका कोई असर नहीं पड़ेगा। हाँ, अगर आप परिवार के इस रवैए से दुखी हों और अपनी हद तक पूरी कोशिश कर लें, तो खुदा के नज़दीक भी ज़िम्मेदारी से बरी होंगे और खुदा के बन्दे भी आपको बेबस समझेंगे।

घर और परिवार का सुधार बहुत कठिन काम है। कभी-कभी पारिवारिक सम्बन्ध, जिसके कारण सुधार का काम आसान होना चाहिए, इस राह में एक रुकावट बन जाता है। आदमी अपने किसी रिश्तेदार को ग़लती पर देखता है, तो केवल इस वजह से कि वह उसका रिश्तेदार है, नहीं टोकता। वह दूसरों को तो आसानी से उनकी ख़ामियाँ बता सकता है, लेकिन अपने रिश्तेदारों की ख़ामियों की निशानदेही करने से बचना चाहता है। ख़ास तौर पर उन रिश्तेदारों के सुधार में बड़ी मुश्किल पेश आती है, जो उम्र में उससे बड़े हों और जिनका आदर-सम्मान शरीअत के मुताबिक़ उसके लिए ज़रूरी हो।

दीन की दावत देनेवाला एक ख़ास पोज़ीशन का मालिक होता है, क्योंकि वह इनसानों का सुधारक और प्रशिक्षक है। वह इस उद्देश्य के लिए उठता है कि बिगड़े हुए लोगों को सीधा रास्ता दिखाए, लेकिन उसकी यही हैसियत कभी-कभी उसको अपने बड़ों के सामने आने से रोकती है। उसे झिझक महसूस होती है कि जिन लोगों के आदर-सम्मान को वह ज़रूरी समझता है, उन्हें उनकी ख़ामियों से आगाह करे। इसका एक कारण और भी है, वह यह कि हमारे समाज में बड़ों की किसी भूल और त्रुटि को भूल और त्रुटि कहना अपराध माना जाता है, हालाँकि उनका हित चाहने और उनके आदर-सम्मान की माँग यह है कि उन्हें ग़लत काम से रोकने में कोई संकोच न किया जाए और सही राह दिखाई जाए।

यह कितनी बड़ी दुर्भावना है कि उनको तबाही के रास्ते पर चलने दिया जाए और उसके अंजाम से वाक़िफ़ होने के बावजूद उन्हें आगाह न किया जाए। ख़ुशी और ग़म का कोई भी मौक़ा हो आप सबसे पहले अपने परिवारवालों को याद करते हैं। अगर परलोक की कामयाबी और नाकामी का आपको विश्वास है, तो फ़ितरी तौर पर आपको अपने परिवारवालों को उससे सचेत करना चाहिए। जब आपका कोई रिश्तेदार जहन्नम की आग की तरफ़ बढ़ रहा हो और आपके अन्दर उसको

बचाने के लिए इतनी बेचैनी भी न हो, जितनी उसको डूबते हुए देखकर आपके अन्दर पैदा हो सकती है, तो इसका मतलब यह है कि या तो आप खुद जहन्नम की भयंकरता से अनजान हैं या आपको अपने दोस्त और रिश्तेदार से मुहब्बत नहीं है। आपके सामने हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) की मिसाल है। उनका बाप किसी मामूली अपराध का काम नहीं कर रहा था, बल्कि ख़ुदा के साथ दूसरों को साझी ठहराने और बहुत-से देवी-देवताओं की पूजा-पाठ में लगा था। हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ने यह नहीं सोचा कि मैं अपने बाप से यह कैसे कहूँ कि आपने ने हक़ के इनकार और बहुदेववाद का जो रवैया अपना रखा है वह सीधे जहन्नम में पहुँचाएगा, बल्कि उन्होंने स्पष्ट शब्दों में उसके अंजाम से बाप को सचेत कर दिया—

إِذْ قَالَ لِأَبِيهِ يَٰٓأَبَتِ لِمَ تَعْبُدُ مَا لَا يَسْمَعُ وَلَا يُبْصِرُ وَلَا يُغْنِى عَنكَ شَيْـًٔا ﴿٤٢﴾
يَٰٓأَبَتِ إِنِّى قَدْ جَآءَنِى مِنَ ٱلْعِلْمِ مَا لَمْ يَأْتِكَ فَٱتَّبِعْنِىٓ أَهْدِكَ صِرَٰطًا سَوِيًّا ﴿٤٣﴾
يَٰٓأَبَتِ لَا تَعْبُدِ ٱلشَّيْطَٰنَ ۖ إِنَّ ٱلشَّيْطَٰنَ كَانَ لِلرَّحْمَٰنِ عَصِيًّا ﴿٤٤﴾ يَٰٓأَبَتِ إِنِّىٓ أَخَافُ
أَن يَمَسَّكَ عَذَابٌ مِّنَ ٱلرَّحْمَٰنِ فَتَكُونَ لِلشَّيْطَٰنِ وَلِيًّا ﴿٤٥﴾

"(याद करो) जबकि उसने अपने बाप से कहा : ऐ अब्बा जान! आप उन चीज़ों की पूजा क्यों करते हैं जो न सुनती हैं और न देखती हैं और न आपके कुछ काम आ सकती हैं? अब्बा जान! मेरे पास वह ज्ञान आया है, जो आपके पास नहीं आया है। इसलिए आप मेरे पीछे चलिए। मैं आपको सीधा रास्ता दिखाऊँगा। अब्बा जान! आप शैतान की इबादत न करें, क्योंकि शैतान अत्यन्त दयालु ख़ुदा का नाफ़रमान है। अब्बा जान! मुझे डर है कि कहीं आप रहमान (अल्लाह) के अज़ाब में न आ जाएँ और शैतान के साथी होकर रहें।"

(क़ुरआन, सूरा-19 मरयम, आयतें—42-45)

ठीक इसी तरह अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* ने भी

अपने परिवारवालों के बीच ख़ुदा से डराने का फ़र्ज़ अंजाम दिया था और आनेवाले भयानक दिन से उन्हें सचेत किया था। जब ख़ुदा का आदेश उतरा कि 'तुम अपने क़रीब के रिश्तेदारों को डराओ' तो आप *(सल्ल.)* ने इसपर जिस तरह अमल किया हदीसों में उसका विस्तार से वर्णन हुआ है। आप *(सल्ल.)* ने अपने क़बीले को जमा किया और उसके हर कुल का नाम लेकर कहा—

"ख़ुदा का अज़ाब आनेवाला है और मैं उसके आने से पहले तुम्हें इसकी ख़बर दे रहा हूँ। मेरा हाल ठीक उस आदमी जैसा है जिसको यह मालूम हो कि दुश्मन उसके परिवार पर हमला करनेवाला है और वह इस उम्मीद में चींख़ रहा हो कि लोग उसकी बात सुनें और उस हमले से बचें।

ऐ अब्दुल-मुत्तलिब की सन्तानो, ऐ फ़ह्र की सन्तानो और ऐ लूई की सन्तानो! अपने आपको ख़ुदा के अज़ाब से बचाओ। तुम्हारा लाभ या हानि बिलकुल मेरे हाथ में नहीं है। हाँ, रिश्तेदारी के कारण तुम्हारे जो हक़ हैं वे मैं ज़रूर अदा करूँगा। ऐ मेरी बेटी फ़ातिमा! और ऐ मेरी फूफी सफ़ीया! तुम भी अपने आपको ख़ुदा के अज़ाब बचाओ। मेरे पास जो कुछ माल और सामान है, वह हाज़िर है। इसमें से जो चाहो ले लो, लेकिन याद रखो, कल क़ियामत के दिन मैं कुछ भी तुम्हारे काम नहीं आ सकता।"[1]

अगर आपका घर-परिवार दीन की राह में आपके साथ है, तो उसे इस पर अटल रखने की कोशिश कीजिए और ख़ुदा का शुक्र अदा कीजिए कि उसने आपका एक बोझ हल्का कर दिया, लेकिन ख़ुदा न करे आपके रिश्तेदार दुनिया में खोए हुए, ख़ुदा के दीन से हटे हुए और

---

[1] हदीस : सहीह बुख़ारी, किताबुत्तफ़सीर, तफ़सीर सूरा-26 शुअरा, सहीह मुस्लिम, किताबुल-ईमान।

बाग़ी हैं तो आपका फ़र्ज़ है कि उन्हें साफ़-साफ़ शब्दों में और ज़रूरत पड़ने पर प्रमाणों के साथ बता दें कि तुम्हारा रवैया ख़ुदा के ग़ुस्से को भड़कानेवाला और तुम्हें ख़ुदा की रहमत से दूर करनेवाला है। क़ियामत आएगी और यक़ीनन आएगी, लेकिन अफ़सोस कि तुम्हें इसका एहसास नहीं है और तुमने ख़ुदा के अज़ाब से बचने का कोई उपाय नहीं किया है। इसी का आपको हुक्म है और यही ख़ुदा के पैग़म्बरों का आदर्श नमूना है।

महल्ला और शहर का सुधार

घर और परिवार के सुधार के बाद उस महल्ला और शहर का सुधार आपका फ़र्ज़ है, जिसमें आप रहते हैं; क्योंकि जिस माहौल में आप पैदा हुए, पले-बढ़े और जवान हुए, आप पर उसका बड़ा एहसान है। इस एहसान का तक़ाज़ा यह है कि आप उसमें ख़ुदा का दीन फैलाएँ और वहाँ के रहने-बसनेवालों को आनेवाले भयानक दिन के अज़ाब से डराएँ। ज़ाहिर है इस काम के लिए आप जितना अधिक उपयुक्त और कारगर हो सकते हैं, उस माहौल से बाहर का कोई आदमी उतना कारगर नहीं हो सकता। आपको फ़ितरी तौर पर इस बात के मौक़े हासिल हैं कि अपने माहौल की ज़ेहनियत, उसकी दशाएँ और उसके विचार और व्यवहार-सम्बन्धी गुणों-दोषों से परिचित हों। इसलिए आप उनके बीच ख़ुदा के दीन के बेहतरीन प्रचारक-प्रसारक बन सकते हैं।

फिर यह भी एक सच्चाई है कि आप अपने गाँव और शहर के लिए जाने-पहचाने होंगे और आपसे वहाँ के लोगों को वह अनजानापन न होगा, जो बाहर के किसी आदमी से होता है। इसका फ़ायदा यह होगा कि वे आपकी बात को अपने ही में से एक आदमी की बात समझेंगे और अगर आप मन की निर्मलता और सहानुभूति से और उनकी दशाओं और समस्याओं का ध्यान रखते हुए उन तक ख़ुदा का दीन पहुँचाएँ, तो यह उम्मीद ग़लत न होगी कि वे अपेक्षाकृत आसानी से उसकी तरफ़ ध्यान देंगे।

शहर के पास-पड़ोस का सुधार

अपने शहर में ख़ुदा का दीन पहुँचाने के बाद यह न समझिए कि आपका काम ख़त्म हो गया; क्योंकि आपको उसके आसपास की बस्तियों में भी यही काम करना है। इसलिए आप क़ुरआन में देखेंगे कि अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल.)* को मक्का और मक्का के आसपास दोनों जगह लोगों को सचेत करने और डराने का हुक्म दिया गया है—

وَكَذٰلِكَ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا لِّتُنْذِرَ اُمَّ الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا

"इसी तरह हमने तुमपर अरबी क़ुरआन की वह्य (प्रकाशना) की है; ताकि तुम मक्कावालों को और उन लोगों को जो मक्का शहर के आसपास रहते हैं, ख़ुदा के अज़ाब से डराओ।"

(क़ुरआन, सूरा-42 शूरा, आयत-7)

पूरी दुनिया का सुधार

अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* ने मक्का और उसके आसपास के गाँवों में दीन का पैग़ाम पहुँचाने के बाद अपना दावती काम ख़त्म नहीं किया, बल्कि पूरी दुनिया में इसे फैलाने की कोशिश की; क्योंकि जिस दीन की तरफ़ आप *(सल्ल.)* बुलानेवाले थे, वह किसी ख़ास क़ौम या ज़मीन के किसी ख़ास हिस्से के लिए नहीं है, बल्कि पूरी दुनिया के लिए है। इसी कारण आप *(सल्ल.)* के बारे में क़ुरआन ने एलान किया है—

وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا كَآفَّةً لِّلنَّاسِ بَشِيْرًا وَّنَذِيْرًا

"हमने तुमको सारे इनसानों के लिए (जन्नत की) ख़ुशख़बरी देनेवाला और (जहन्नम से) डरानेवाला बनाकर भेजा है।"

(क़ुरआन, सूरा-34 सबा, आयत-28)

याद रखिए कि जो दीन पूरी दुनिया के लिए है, आप लोग उसकी तरफ़ लोगों को बुलानेवाले हैं और जिस पैग़म्बर को सारे इनसानों के

लिए भेजा गया था, आप लोग उसके उत्तराधिकारी हैं। इसलिए आपका फ़र्ज़ है कि इस दीन को पूरी दुनिया में फैलाने और इसके इनकार के अंजाम से पूरी दुनिया को सचेत करने की कोशिश करें, वरना ख़ुदा ने आपपर जो फ़र्ज़ आयद किया है, आप उसकी ज़िम्मेदारी से छुटकारा नहीं पा सकते और मुहम्मद *(सल्ल.)* का नामलेवा होने के बावजूद आप *(सल्ल.)* के सही उत्तराधिकारी नहीं कहलाएँगे।

एक ग़लतफ़हमी का निवारण

दीन की दावत का जो क्रम ऊपर बयान हुआ है, शरीअत के नज़दीक भी उसकी अहमियत है और बुद्धि भी उसकी अहमियत को मानती है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि किसी भी हाल में इसको आगे-पीछे करना नाजाइज़ है और इससे हटकर कभी दावत का काम किया ही नहीं जा सकता; बल्कि यह ऐसा क्रम है, जो ज़रूरत पड़ने पर बदल सकता है और दावत की ज़रूरतों के मुताबिक़ इसमें बदलाव किया जा सकता है। यह क्रम दावत के अलग-अलग मरहलों के रूप में हमारे सामने नहीं आता कि एक मरहला ख़त्म हो, तो दूसरा मरहला पेश आए, बल्कि यह हमें दावत के विभिन्न मोर्चों की निशानदेही करता है और यह एक सच्चाई है कि कभी-कभी दीन की दावत देनेवाले को एक ही समय में कई-कई मोर्चों पर काम करना पड़ता है; क्योंकि यह पूरी तरह मुमकिन है कि आपको अपने घर और परिवार में दीन की दावत के जो मौक़े और सहूलतें मिली हुई हैं, ठीक यही मौक़े और यही सहूलतें आपको बड़ी-बड़ी क़ौमों को सम्बोधित करने के लिए भी हासिल हों, बल्कि इसकी भी सम्भावना है कि किसी समय दीन की दावत के लिए आपके अपने घर का माहौल अनुकूल न हो और बाहर का माहौल अनुकूल और उपयुक्त हो। उस समय इन प्राप्त अवसरों और सहूलतों को यह सोचकर खो देना कि अभी परिवार और क़बीले में हमारा दावती काम नहीं हुआ है, बहुत बड़ी नासमझी

होगी, बल्कि इससे आगे मैं यह कहूँगा कि आप अपने घर में सुधार की कोशिश कर रहे हों या परिवार या क़बीले में दावत और सुधार का यह बड़ा और व्यापक काम बहरहाल आपको अपने सामने रखना होगा और अपनी हद तक इसे अंजाम देना होगा। दीन की दावत का जो क्रम ऊपर बयान हुआ है, वह इसलिए नहीं है कि जब दावत का काम एक ख़ास दायरे में ख़त्म हो, तो आप दूसरे दायरे में इसकी शुरुआत करें या जब तक अपने घर का पूरी तरह सुधार न हो कुटुम्ब-परिवार के सुधार की कोशिश न करें या फिर आपके शहर में दावत का काम पूरा न हो, तो अपने देशवासियों को दीन की दावत न दें, बल्कि इसका उद्देश्य यह है कि इनसान इस चिन्ता में कि उसे पूरी दुनिया में ख़ुदा का दीन पहुँचाना है, अपने घर, परिवार और क़रीबी माहौल को न भूल जाए। यह अत्यन्त नाकारापन और बहुत बड़ी ग़लती है कि कोई आदमी दूसरों के सुधार की तो कोशिश करे और बीवी-बच्चों के सुधार से ग़ाफ़िल हो जाए, इसपर उसकी पूछगछ होगी। लेकिन इसके बावुजूद यह भी एक सच्चाई है कि इस ग़लती के कारण सुधार की उसकी कोशिश, जो वह दूसरों के बीच कर रहा है, ख़ुदा के नज़दीक वह निन्दित नहीं ठहरेगा। वह अपने आपमें प्रशंसा के योग्य है और उसे वास्तव में प्रशंसा-योग्य होना ही चाहिए।

दावत के नियम और तरीक़े

क़ुरआन और हदीस में जहाँ इस्लाम की दावत का हुक्म दिया गया है, वहीं उसके नियम और तरीक़े भी बताए गए हैं। लेकिन बहुत-से लोग जो दावत का काम करते हैं, उन नियमों और तरीक़ों से अनजान हैं या अगर जानते हैं तो उनकी अहमियत महसूस नहीं करते। हालाँकि इस्लाम की दावत का हक़ उन्हीं तरीक़ों से अदा हो सकता है, जो क़ुरआन और हदीस में इस काम के लिए बयान हुए हैं। उनसे हटकर रात-दिन लोगों को ख़ुदा के दीन की तरफ़ बुलाने और उस राह में अपनी जान खपाने के बावुजूद इनसान कामयाब दावत देनेवाला कभी नहीं बन सकता, बल्कि इस काम के ख़ास नियमों और तरीक़ों से हटने के बाद इस बात का भी बड़ा ख़तरा है कि दीन की कोई ख़िदमत तो न हो। हाँ, इसको इतनी भारी हानि पहुँचे कि मुद्दतों उसकी क्षतिपूर्ति न हो सके।

इस्लाम की दावत के सिलसिले में जो नियम और तरीक़े दावत देनेवाले के सामने होने चाहिएँ, उनमें से कुछ का सम्बन्ध इस बात से है कि इस्लाम को किस तरह पेश किया जाए कि लोगों के सामने वह अपने सही रूप में आए और उसके विशिष्ट गुण पूरी तरह बाक़ी रहें। कुछ का सम्बन्ध इस्लाम की तरफ़ बुलाए जानेवाले व्यक्ति के नज़रिए से है। दीन की तरफ़ बुलानेवाले का सम्बोधन उसके उसी नज़रिए को ध्यान में रखकर होगा। वह इसी आधार पर उसके साथ दावत देने का अपना तरीक़ा निर्धारित करेगा और दीन के लिए उसका जितना महत्त्व होगा, उसे उतना ही महत्त्व देगा। उन तरीक़ों में से कुछ का सम्बन्ध ख़ुद दावत देनेवाले ही से है कि उसने दावत को किस हद तक समझा है और कितनी नरमी और तहज़ीब के साथ वह उसे पेश करता है। इस मामले में उसका ज्ञान, सूझ-बूझ, आचरण और चरित्र जितना ऊँचा

होगा, उतनी ही अधिक इस्लाम के क़बूल किए जाने की सम्भावनाएँ भी होंगी। यहाँ हम एक क्रम से उन नियमों और तरीक़ों का ज़िक्र करेंगे—

1. इस्लाम किस तरह पेश किया जाए?

सबसे पहले इस सवाल को लीजिए कि दुनिया के सामने इस्लाम को किस तरह पेश किया जाए? इस सिलसिले में कुछ बुनियादी बातों को सामने रखना होगा—

दावत सबके लिए हो

अल्लाह ने अपना दीन इसलिए उतारा है कि जो इनसान भी इसे अपनाना चाहे, ख़ुशी-ख़ुशी अपनाए। यह किसी परिवार या गिरोह की धरोहर नहीं है, बल्कि हर उस आदमी की सम्पत्ति है जो इसे क़बूल कर ले। इसलिए इसकी दावत बिलकुल आम होनी चाहिए और सारे इनसानों के लिए होनी चाहिए। आपको इसकी इजाज़त है कि आप इसे किसी इनसान या वर्ग के सामने पहले और किसी दूसरे आदमी या वर्ग के सामने बाद में पेश करें, बल्कि ऐसा करने पर आप मजबूर भी हैं। लेकिन यह बात हरगिज़ सही न होगी कि आप इस दावत को किसी जातीय और राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप दे दें या ऐसा अन्दाज़ अपनाएँ कि दुनिया इसको सारे इनसानों की हिदायत का साधन समझने के बजाय एक जाति विशेष की कामयाबी या सुधार की कोशिश समझने पर मजबूर हो जाए। इस दावत के पक्ष में ऐसा माहौल पैदा करना जिसके कारण अनगिनत इनसान इससे वंचित होकर रह जाएँ, न केवल इस दावत का भटकाव है, बल्कि पूरी मानव-जाति पर बहुत बड़ा ज़ुल्म है। किसी व्यक्ति या संगठन को ख़ुदा के दीन से दूर कर देना उसके ख़िलाफ़ इससे अधिक कठोर कार्रवाई है कि उसे खुली हवा में सांस लेने न दिया जाए; क्योंकि इससे उसका केवल मिट जानेवाली ज़िन्दगी ख़त्म हो सकती है, लेकिन ख़ुदा के दीन से महरूम होने के बाद तो वह हमेशा के लिए तबाह हो जाएगा। लेकिन अफ़सोस है कि इस दीन के

माननेवालों ने लम्बे समय से ऐसा रवैया अपना रखा है कि दुनिया इसको ख़ास उनका दीन समझने लगी है। वे अगर सोचते हैं तो अपने नफ़ा और नुक़सान के बारे में सोचते हैं और काम करते हैं तो इस तरह जैसे उनको अपने सिवा किसी से कोई दिलचस्पी नहीं है। यहाँ तक कि उन्होंने दीन के प्रचार-प्रसार का काम भी किया तो अपने ही दायरे में किया, मानो ख़ुदा का दीन केवल उनके लिए है और दूसरों का उसमें कोई हिस्सा नहीं है। जो लोग इस्लाम की दावत लेकर उठें उनका पहला काम यह है कि वे उसको दुनिया के सामने इस तरह पेश करें कि वे किसी ख़ास गिरोह की धरोहर न मालूम हो, बल्कि पूरी मानव-जाति उसको अपनी पूँजी समझे। इसका प्रमाण उनको अपनी कथनी ही से नहीं, बल्कि करनी से भी देना होगा। उनको अपने सारे मामलों में वह रवैया अपनाना होगा, जो इस विश्वव्यापी धर्म (इस्लाम) के अलमबरदारों के लिए सही हो सकता है, वरना केवल उनके दावे के कारण दुनिया यह नहीं मान सकती कि वे जिस दीन की दावत दे रहे हैं वह सारे इनसानों का दीन है। इसके लिए ज़रूरी है कि वे हर तरह के जातीय पक्षपात को अपने अन्दर से निकाल फेंकें और हर एक के साथ हक़ और सच्चाई की बुनियाद पर मामला करें, बल्कि हर उस आदमी का साथ दें जो हक़ पर है, चाहे वह उनके लिए कितना ही अजनबी क्यों न हो और जो इनसान सरासर गुमराह है, उससे अलग हो जाएँ, चाहे वह उनका सगा-सम्बन्धी ही क्यों न हो। उनकी दोस्ती और दुश्मनी सब कुछ ख़ुदा के दीन के अधीन हो और दुनिया की कोई शक्ति उनको इससे हटा न सके।

दावत पूरी ज़िन्दगी के सुधार के लिए हो

अल्लाह चाहता है कि इनसान अपनी पूरी ज़िन्दगी में वह रास्ता अपनाए जो उसके नज़दीक पसन्दीदा है। इसी के लिए उसने अपने पैग़म्बर भेजे और अपना दीन उतारा। दावत देनेवाला ख़ुदा के बन्दों के

बीच उसके दीन के इसी उद्देश्य और लक्ष्य को बयान करने के लिए खड़ा होता है। उसको चाहिए कि पूरी ताक़त के साथ ज़िन्दगी के हर मामले में उसके अनुपालन की दावत दे। लेकिन यह एक दुखद सच्चाई है कि एक लम्बे समय से इस दीन के माननेवाले इसका परिचय इस तरह करा रहे हैं कि मानो वह केवल कुछ ऐसे अजनबी नज़रियों का नाम है, जिनका मानव-जीवन से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। इसी लिए इस्लाम धर्म के अनेक विद्वानों और पढ़े-लिखे लोगों के लेखों और भाषणों में ये बहसें (विषय) कम ही मिलेंगी कि अल्लाह क्या चाहता है और उसकी मर्ज़ी कैसे पूरी की जा सकती है? हाँ, वे इसपर पूरा ज़ोर लगा देंगे कि आत्मा नित्य (अनश्वर) है या अनित्य (नश्वर) और आसमान में दरार पड़ना और फिर उसका भरना सम्भव है या नहीं? ज़ाहिर है इस तरह की बहसों से कम ही लोगों को दिलचस्पी हो सकती है और जिन लोगों को दिलचस्पी हो सकती है, उनके लिए भी ये शोध और रिसर्च का विषय तो बन सकते हैं, लेकिन इस शोध का उनकी अमली ज़िन्दगी से कोई सम्बन्ध न होगा। वह इससे अप्रभावित ही रहेगा। बाक़ी रहे आम लोग तो उनके लिए ये बहसें ही सिरे से बेकार हैं।

यह तो उनके विशिष्ट और पढ़े-लिखे लोगों का हाल है। उनके अधिकांश लोगों का हाल यह है कि उन्होंने खुदा के दीन के बारे में अपनी कथनी से न सही, कम से कम अपनी करनी से यह दिखाने की कोशिश की है कि अगर कुछ पर्व-त्योहार और ख़ास-ख़ास मौक़ों पर कुछ बेजान रस्में अंजाम दे दी जाएँ, तो उसका हक़ अदा हो गया। इस परिचय ने दीन से उसका अनुपम सौन्दर्य छीन लिया और उसका स्वाभाविक आकर्षण नष्ट कर दिया। ज़ाहिर है कि हर क़ौम के पास अपने रस्म-रिवाज हैं, वे उसको उसी तरह प्यारी हैं जिस तरह आपको अपनी रस्म-रिवाज प्रिय हैं। आख़िर वह उनको छोड़कर आपके रस्म-रिवाजों की क्यों पाबन्द हो जाए, जबकि उसका कोई औचित्य भी

उसके सामने न आया हो।

इसमें शक नहीं कि ख़ुदा की किताब अपने सही रूप में हमारे पास मौजूद है। इसके द्वारा इनसान आसानी से ख़ुदा के दीन की जानकारी हासिल कर सकता है। लेकिन इस किताब के साथ इसके माननेवालों का रवैया इस राह में भी रुकावट रहा है। उन्होंने इसे इस तरह पेश किया जैसे यह बेसोचे-समझे पढ़ने, शादी-ब्याह के समय तिलावत (पाठ) करने, जान निकलते समय की तकलीफ़ दूर करने, मैयत के गुनाह माफ़ करवाने या भूत-प्रेत और जिन्न भगाने के लिए आई है। इन 'महान उद्देश्यों' के लिए दुनियावालों के पास बहुत-से 'ईश्वरीय ग्रंथ' (सहीफ़े) मौजूद हैं। इसलिए उनको क्या ज़रूरत पड़ी है कि इस ख़ास किताब की तरफ़ पलटें। जिसे इसके माननेवाले इसे ख़ुदा की किताब कहते हैं।

अब जो लोग दावत का काम करना चाहें, उन्हें अपनों और ग़ैरों के सोचने के इस तरीक़े को बदलना होगा और बताना होगा कि लोक-परलोक में इनसान की कामयाबी इसी किताब से जुड़ी हुई है। वे अगर इसको क़बूल कर लें, तो उनकी सारी समस्याएँ इस तरह हल हो जाती हैं जैसे वे अपने समाधान के लिए पहले से प्रतीक्षा में हों; लेकिन अगर वे इसको नकार दें, तो न केवल यह कि वे अपनी समस्याओं के समाधान में नाकाम होंगे, बल्कि उनका परलोक भी तबाह हो जाएगा।

सिद्धान्त को प्राथमिकता दी जाए

इस्लाम के कुछ सिद्धान्त हैं और फिर उन सिद्धान्तों से बहुत-से उपसिद्धान्त और उनकी व्याख्याएँ और टीकाएँ निकली हैं। जो आदमी सिद्धान्त को मान ले, वह आसानी से उसकी व्याख्याओं को नकार नहीं सकता। लेकिन जिस आदमी के लिए ये सिद्धान्त ही अस्वीकार्य हों, तो वह व्याख्याओं की उस पूरी व्यवस्था ही को नकार देगा, जो इनकी बुनियाद पर क़ायम है।

इसी कारण ख़ुद इस्लाम के नज़दीक भी सिद्धान्तों और

विचारधाराओं का बड़ा महत्त्व है और उसने इनपर छोटी-छोटी बातों की अपेक्षा अधिक बल दिया है। लेकिन इधर पिछले कुछ समय में इस्लाम की जो सेवा होती रही है, उसकी दिशा मूल सिद्धान्त के बजाय उसकी छोटी-छोटी बातों की तरफ़ रही है। जिन विचारधाराओं पर ख़ुदा के दीन की बुनियाद क़ायम है, उनको सिद्ध करने की तो कोशिश नहीं की गई। हाँ, दीन की छोटी-छोटी बातों में से हर एक छोटी बात पर बहुत मेहनत और चिन्तन-मनन से जो खोज हुई उसे बहुत सराहा गया और बड़ी मोटी-मोटी किताबें तैयार हो गईं। दुनिया ने ख़ुदा की हस्ती और पैग़म्बर की पैग़म्बरी का इनकार किया और बहुदेववाद और नास्तिकता ने आस्थाओं और विचारधाराओं, सभ्यता और संस्कृति, ज्ञान-कला, सत्ता और राजनीति हर मैदान पर अपना क़ब्ज़ा जमा लिया, यहाँ तक कि बहुत-से वे लोग जो इस्लाम को ख़ुदा का दीन मानते थे, उसकी सच्चाई के बारे में शक और भ्रम में पड़ गए और बहुत-से उससे फिर भी गए; लेकिन हमारे दीन के सेवकों ने इस हमले से इस तरह मुँह फेर लिया, जैसे दीन की मौलिक अवधारणाएँ दुनिया के किसी कोने में भी बातचीत का मुद्दा ही नहीं है और उनके बीच रफ़ए-यदैन (नमाज़ में हाथ उठाने) और ज़ोर से 'आमीन' कहने के प्रमाणित होने और न होने और इन्हीं जैसी समस्याओं पर मोर्चे क़ायम होते रहे। बेशक कभी-कभी इस तरह की बहसें भी फ़ायदेमन्द होती हैं, लेकिन ये उन लोगों के लिए फ़ायदेमन्द होती हैं, जो ख़ुदा और पैग़म्बर को मानते हैं; मगर जहाँ दीन और ईमान ही लड़खड़ा रहा हो, वहाँ वुज़ू और ग़ुस्ल के मसले बयान करना बेकार है।

इसमें शक नहीं कि यह बात भी सच्चाई के ख़िलाफ़ है कि इस्लाम के सभी ख़िदमत करनेवाले इस तरह के छोटे-छोटे मसलों में उलझे रहे और उसकी बुनियादों को मज़बूत करने की कोशिश नहीं हुई, बल्कि यह एक सच्चाई है इस मैदान में बहुत-सी कोशिशें हुई हैं और उनमें से कुछ कोशिशें आदर के लायक़ भी हैं, लेकिन इसके बावजूद

इस सच्चाई से इनकार नहीं किया जा सकता कि ज़्यादातर ये कोशिशें मौजूदा दौर के ज्ञान और विचार के स्तर से गिरी हुई हैं और इनमें वह भरपूर सामान नहीं है, जो आज के मन-मस्तिष्क और सोच-विचार को संतुष्ट कर सके। इसलिए अब इस्लाम की सेवा करनेवालों को चाहिए कि वे इस कमी को दूर करने की पूरी-पूरी कोशिश करें, वरना आज इस्लाम जिस ऊँचे दरजे की सेवा चाहता है, वह अंजाम नहीं पा सकेगी।

दीन की दावत का सही तरीक़ा यह है कि पहले उन विचारों को मज़बूत किया जाए, जिनपर दीन की बुनियाद क़ायम है और फिर दीन की शाख़ों में से जिस शाख़ को ख़ुद दीन ने जितना महत्त्व दिया है, उसे उतना ही महत्त्व दिया जाए। उसकी वास्तव में जो हैसियत है, उसे न तो कम किया जाए और न उसमें अपनी तरफ़ से कोई बढ़ोत्तरी की जाए। अगर आप किसी आदमी के मन में दीन की बुनियादों को अच्छी तरह बिठाए बिना दीन की अनगिनत व्याख्याओं और टीकाओं पर उसको संतुष्ट करना चाहें, तो उसमें न केवल यह कि आपका समय बरबाद होगा, बल्कि आप एक ऐसी इमारत बनाएँगे, जिसकी कोई बुनियाद नहीं होगी और जिसे प्रतिकूल हवा का एक ही झोंका धराशायी कर देगा।

दीन की रूह पैदा करने की कोशिश की जाए

इस्लाम की एक तो रूह (आत्मा) है और एक इसका बाहरी ढाँचा। इसकी रूह यह है कि इनसान में ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी और बन्दगी का जज़्बा पैदा हो और वह उसके हर हुक्म के सामने सिर झुकाने के लिए तैयार हो जाए। इसका बाहरी ढाँचा शरीअत की वह रूप-रेखा है जो इनसान के सारे कामों के लिए ख़ास नियम-तरीक़े निर्धारित करती है। इस्लाम की दावत का काम सही तरीक़े से उसी समय अंजाम पा सकता है, जबकि आप उसके उस ज़ाहिरी ढाँचे पर ज़ोर देने से अधिक उसका बुनियादी जज़्बा (Spirit) पैदा करने की कोशिश करें; क्योंकि अगर यह

भावना पैदा हो गई, तो इनसान को ख़ुद ही इस बात की चिन्ता होगी कि ज़िन्दगी के हर मामले में ख़ुदा की मर्ज़ी पूरी करे। लेकिन अगर यह मूल भावना किसी के अन्दर पैदा नहीं हुई है तो उसके इस्लाम से हट जाने का क़दम-क़दम पर ख़तरा है। फिर इसका एक नुक़सान यह भी है कि इस्लाम की मूल भावना पैदा किए बिना अगर आप किसी को शरीअत के एक हिस्से का पाबन्द बनाएँगे, तो वह आदत के रूप में उसका पाबन्द हो जाएगा, लेकिन दूसरे हिस्से की पाबन्दी उसपर नागवार गुज़रेगी। शरीअत के जिन हुक्मों की आप उसे हिदायत करेंगे, उनपर तो वह मज़बूती से जमा रहेगा; लेकिन दूसरे मामलों में उसे इस्लाम की माँग को मालूम करने की चिन्ता न होगी। इसलिए देखा गया है कि ख़ुदा का दीन इनसान में जिस तरह की मूल भावना पैदा करना चाहता है, वह पैदा किए बिना जिन लोगों को शरीअत की कुछ बातों का अभ्यास करा दिया जाता है, वह उनको कभी छोड़ना गवारा नहीं करते, लेकिन वे अनगिनत और अधिक महत्त्वपूर्ण मामलों में शरीअत के हुक्मों से इस तरह लापरवाही का शिकार रहते हैं, जैसे उनकी पैरवी का उनको हुक्म ही नहीं मिला है।

2. सम्बोधित लोग और उनकी प्रवृत्तियाँ

इस्लाम की दावत के लिए सबसे पहले उस व्यक्ति और उसकी प्रवृत्ति और मनोदशा को समझना ज़रूरी है, जिसे दावत दी जा रही है। जब तक आप यह न मालूम कर लें कि वह इस्लाम का इनकार कर रहा है या इसे क़बूल कर रहा है और फिर उसका इनकार और क़बूल किस दरजे और किस तरह का है, उस समय तक आप उसे इस्लाम का सदेश पहुँचाने में कामयाब ही नहीं हो सकते। अगर आप बिना निशाना साधे तीर चलाएँगे, तो अपनी शक्ति बरबाद करेंगे।

सम्बोधित लोगों के अनेक प्रकार

ख़ुदा के दीन के साथ सब इनसानों का मामला एक समान नहीं

होता। कुछ लोगों को ख़ुद से उसकी तलाश होती है। जब उन तक उसकी दावत पहुँचती है, तो वे उसकी तरफ़ इस तरह लपकते हैं, जैसे प्यासा पानी की तरफ़ लपकता है। उनके बीच दीन की दावत का उठना ही उनके लिए उसके स्वीकारने का कारण बन जाता है। वे लोग अपने अच्छे स्वभाव के कारण ख़ुदा के दीन के सिवा किसी दूसरे दीन को कभी नहीं अपनाते और अगर किसी समय उसके प्रभाव में आ भी जाते हैं, तो बहुत जल्द उनपर उसकी ख़ामी और ख़राबी स्पष्ट हो जाती है और वे किसी झिझक के बिना उसे नकार देते हैं। उनको दीन से क़रीब करने के लिए दावत देनेवाले को बहुत अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती, बल्कि दीन की आवाज़ उसकी कान में पड़ते ही वे अपने आप ही उसकी तरफ़ दौड़े चले आते हैं। किसी निराधार विचार पर जमे रहना उनके मन और स्वभाव के प्रतिकूल होता है।

कुछ लोग दीन से मतभेद तो करते हैं, लेकिन उनका यह मतभेद सैद्धान्तिक और वैचारिक होता है। वे मतभेद इस कारण नहीं करते कि उन्होंने दीन को क़बूल न करने का फ़ैसला कर लिया है, बल्कि इस कारण करते हैं कि दीन की सच्चाई और हक़ीक़त उनपर वाज़ेह नहीं हुई है।

अगर उनपर दीन की वास्तविकता ख़ुल जाए तो वे हर बन्धन को तोड़ फेंकेंगे और उसे इस तरह सीने से लगा लेंगे जिस तरह माँ अपने खोए हुए बच्चे को उस समय सीने से लगा लेती है, जबकि वह बहुत दिनों के बाद उसकी निगाहों के सामने आ जाए। उन लोगों के मामले में दावत देनेवालों का काम यह है कि उनके सामने दीन की सच्चाई का प्रमाण उप्लब्ध कराए। लेकिन इसके लिए उसको वह तरीक़ा नहीं अपनाना चाहिए, जो हमारे तर्क-वितर्क और शास्त्रार्थ करनेवाले लोग दूसरों के तर्कों के खंडन और अपने दावों की पुष्टि के लिए अपनाया करते हैं। इसमें सुननेवाले की ज़बान तो बन्द हो जाती है और वह उसकी बहस से जान बचाता हुआ भाग खड़ा होता है। लेकिन हक़ को

क़बूल करने के लिए उसके दिल के दरवाज़े नहीं खुलते। जो आदमी दीन की दावत देनेवाला हैं, उसके लिए यह तरीक़ा न तो सही है और न खुदा का दीन अपनी पुष्टि और प्रमाण के लिए इसका मुहताज ही है। उसको तर्कों के पेश करने का ऐसा अन्दाज़ अपनाना चाहिए, जो सुननेवाले के दिल और दिमाग़ को पूरी तरह संतुष्ट कर दे और वह सहसा खुदा के दीन की तरफ़ खिंच पड़े। खुदा का दीन इस सृष्टि के स्वभाव और इनसान की फ़ितरत के बिलकुल अनुकूल है। इतिहास गवाह है कि इनसान ने जब भी उसे दिल से मान लिया सफल रहा और जब उसका इनकार किया खुदा के अज़ाब में गिरफ़्तार हुआ। इस सच्चाई को अगर आप तर्कों और प्रमाणों का रूप दे दें, तो कोई भी गम्भीर और समझदार आदमी उसको रद्द नहीं कर सकता।

दीन का इनकार करनेवालों में कुछ लोगों का इनकार किसी उचित कारण के आधार पर नहीं होता, बल्कि इसके पीछे बहुत मामूली कारण होते हैं। ये लोग इसका इनकार इसलिए नहीं करते कि वह अभी उनकी समझ में नहीं आ रहा है, बल्कि इसलिए करते हैं कि वे किसी क़ीमत पर उसको मानना ही नहीं चाहते। उन लोगों के बीच दावत देनेवालों को केवल उसी समय तक अपनी कोशिश जारी रखनी चाहिए, जब तक कि उनके विरोध के कारण खुलकर सामने न आ जाएँ और जब ये सामने आ जाएँ तो दावत देनेवाले को अपनी शक्ति उनपर नष्ट करने के बजाय उन लोगों की तरफ़ ध्यान देना चाहिए जिनसे हक़ को स्वीकार करने की उम्मीद हो।

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनको कुल मिलाकर इस्लाम के सिद्धान्तों और दृष्टिकोणों से मतभेद नहीं होता, लेकिन उसकी स्वाभाविक और आवश्यक माँगों को वे मानने के लिए तैयार नहीं होते। उनके सामने इस्लाम के सिद्धान्तों और नियमों पर लम्बी-चौड़ी बहस करना बेकार है। उनके सामने इस तरह उसका परिचय कराना होगा कि वे उसको मानने के बाद उसकी अपेक्षाओं का इनकार न कर सकें। कुछ

लोग ऐसे भी होंगे, जो उन माँगों से बिलकुल अनजान होंगे। उनके लिए इतनी बात काफ़ी है कि ये माँगें बता दी जाएँ। कुछ लोग इस्लाम से पूरी तरह सहमत होने के बावजूद अमली तौर पर उसका साथ देने के लिए तैयार नहीं होते। उनके बीच दावत देनेवाले को प्रेरणा और चेतावनी से काम लेना होगा और उनको उसके अनुपालन के सर्वोत्तम परिणामों और उससे हटने के भयानक नतीजों से सचेत करना होगा। कुछ लोग ऐसे भी होंगे, जिनसे दावत का काम अंजाम देनेवाले को तरह-तरह की समस्याओं पर बहस करनी पड़ेगी, लेकिन उस बहस को शास्त्रार्थ मुनाज़रें नहीं, बल्कि समझने-समझाने का माध्यम होना चाहिए। शास्त्रार्थ (मुनाज़रे) में सामनेवाले को प्रतिद्वन्द्वी समझकर उसकी हर बात का खंडन करने की कोशिश की जाती है, चाहे वह अपने मुँह से सच बात ही क्यों न कह रहा हो। लेकिन दीन की दावत देनेवाला यह रवैया न तो अपना सकता है और न वास्तव में उसे अपनाना ही चाहिए। उसको हर क़दम पर एक सत्यप्रिय व्यक्ति की भूमिका निभानी होगी। इस्लाम की तरफ़ बुलानेवाले व्यक्ति (मुख़ातब) के पास जो हक़ होगा, उसे वह पूरी विशाल हृदयता से हक़ कहेगा और जो ग़लत होगा, उसे शिष्टता और शालीनता के साथ रद्द कर देगा और अत्यन्त सूझ-बूझ और हिकमत से उसके मन-मस्तिष्क और सोच-विचार के सुधार की कोशिश करेगा। अगर किसी के अन्दर यह शालीनता, विवेक और सूझ-बूझ नहीं पैदा हुई है, तो उसका स्थान इस्लाम की दावत देनेवाले का नहीं है। अभी उसे उस स्थान तक पहुँचने के लिए बहुत कड़ा अभ्यास करना होगा।

क़ौम के सरदारों से सम्बोधन

आप जिन लोगों को दावत देते हैं, उनमें से कुछ लोगों को रहनुमाई और मार्गदर्शन का पद प्राप्त होता है और अधिकांश लोग उनके पीछे चलनेवाले होते हैं। दावत देनेवाला अगर यह चाहे कि उन रहनुमाओं

और उनके पीछे चलनेवालों में से जो आदमी भी दीन से ग़ाफ़िल है, उन सब तक ख़ुदा का दीन पहुँचाए तो मानो यह शुभ इच्छा होगी, लेकिन अमली तौर से यह उसके लिए असम्भव होगा, क्योंकि उसकी शक्तियाँ बहुत सीमित हैं और वह एक विशेष दायरे में ही काम कर सकता है। अब उसके सामने दो स्थितियाँ हैं– एक यह कि वह उन लोगों को नज़रअन्दाज़ कर जाए, जो अपने समाज की रहनुमाई कर रहे हैं और आम लोगों में दावत का काम अंजाम देता रहे। दूसरी स्थिति यह कि पहले वह वास्तव में वह अपने समय के लीडरों को सम्बोधित करे और फिर उसके साथ जिस हद तक आम लोगों में अपना पैग़ाम पहुँचा सकता है, पहुँचाने की कोशिश करे। यही दूसरा तरीक़ा पैग़म्बरों का तरीक़ा है। उनका पहला सम्बोधन अपनी क़ौम के सरदारों और लीडरों से होता है और वे एक बार अपनी पूरी शक्ति उनको सीधे रास्ते पर लाने में ख़र्च कर देते हैं, क्योंकि इस स्तर का एक आदमी भी ख़ुदा के दीन को क़बूल कर ले, तो बहुत-से लोगों के लिए दीन को क़बूल करने का रास्ता खुल जाता है। वह रहनुमाई करने की अपनी सलाहियत और समाज में अपने प्रभाव और पहुँच के कारण दीन के प्रचार-प्रसार का वह काम कर सकता है, जो निचले स्तर का पूरा एक संगठन भी नहीं कर सकता। इस तरह दावत देनेवाले का वर्षों का काम महीनों और दिनों में अंजाम पा जाता है। सच्चाई यह है कि जब तक कोई दावत अपने समाज के सबसे उच्च वर्ग के लोगों में दाख़िल नहीं होती, उस समाज में फैल नहीं सकती।

पैग़म्बरों में दावत और दीन फैलाने की असीम योग्यता होती है। इस कारण वे अपनी क़ौम के सरदारों और लीडरों को आसानी के साथ सम्बोधित करते हैं और सफल रहते हैं। लेकिन अब यह काम जिस उम्मत को अंजाम देना है, उसमें कम और ज़्यादा सलाहियतवाले दोनों तरह के लोग हैं। उनमें वे लोग भी हैं जिनको अपने समय के लीडरों से दीन की चर्चा के मौक़े हासिल हैं और वे लोग भी हैं, जिनको ये मौक़े

बिलकुल ही हासिल नहीं हैं। इसलिए जिस आदमी में जितनी योग्यता है और उसे जो मौक़े हासिल हैं, उन्हीं की दृष्टि से वह अपना कार्य-क्षेत्र चुनने को मजबूर है। लेकिन यहाँ यह बात भी मन में ताज़ा रहे कि अपनी योग्यता की जाँच-परख करते समय दावत देनेवाले को किसी तरह की हीन-भावना में ग्रस्त नहीं होना चाहिए। उसे इस सच्चाई को नहीं भूलना चाहिए कि उसके पास हक़ है और जो आदमी भी हक़ का विरोध करे, वह देखने में कितना ही बड़ा इनसान क्यों न हो, उसकी बुनियाद कमज़ोर है। इसलिए दीन की दावत देनेवाले को हमेशा अपनी सलाहियत से ऊँचे दायरे में काम के मौक़े तलाश करने चाहिएँ और जब भी उसको मौक़ा मिले, उसे अपनी बात पेश करने में कोई झिझक और संकोच नहीं होना चाहिए। इस राह में शुरू में उसको कठिनाइयों से भी दो-चार होना पड़ेगा, लेकिन कठिनाइयाँ आदमी की सलाहियतों को निखारती हैं। फिर यह कि जिस ख़ुदा का पैग़ाम लेकर वह उठा है, वह कठिन घड़ियों में उसको बिलकुल असहाय न छोड़ेगा, बल्कि हर तरह से उसकी मदद ज़रूर करेगा। इसके विपरीत अगर वह कम सलाहियतवाले लोगों ही को दीन की दावत दे, तो मानो उसका काम बहुत आसान हो जाएगा। लेकिन इससे उसकी योग्यताएँ उभर नहीं सकेंगी और शायद वह उस तरह ख़ुदा की तरफ़ न पलटे, जिस तरह कठिनाइयों में पलट सकता है।

3. दावत देनेवाले का चरित्र और सूझ-बूझ

दावत की सफलता और असफलता की निर्भरता बहुत कुछ दो पहलुओं से दावत देनेवाले के व्यक्तित्व पर भी है। एक यह कि ख़ुद उसे दावत की कितनी समझ है। उसने किस हद तक उसे अपने अन्दर समोया है और इसके लिए वह अभिव्यक्ति की क्या शक्ति और कौन-से उपाय अपनाता है? दूसरे यह कि सम्बोधित व्यक्ति (मुख़ातब) के साथ उसका रवैया क्या है; क्योंकि उसके साथ वह जितना अच्छा और उचित

रवैया अपनाएगा, उतनी ही अधिक इस बात की सम्भावना है कि वह उससे क़रीब हो और उसकी बात सुने, लेकिन अगर लक्षित व्यक्ति के साथ उसका रवैया ग़लत होगा, वह भी उससे और उसकी दावत से दूर ही रहेगा। इन दोनों पहलुओं पर थोड़ी-सी रौशनी डालने की कोशिश की जाएगी।

दावत की स्पष्ट संकल्पना रखे

इस्लाम की दावत के लिए ज़रूरी है कि उसके बारे में सबसे पहले खुद दावत देनेवाले का ज़ेहन साफ़ हो। उसे मालूम हो कि इस्लाम क्या है और उसकी दावत क्यों दी जाती है? उसका उद्‌देश्य और लक्ष्य हर समय उसके सामने रहे। उसकी माँगों से वह ख़ूब अच्छी तरह वाक़िफ़ हो और अच्छी तरह जानता हो कि उसके लिए काम करने का सही तरीक़ा क्या है और कौन-सा तरीक़ा उसके लिए उचित है? अगर दावत देनेवाले का ज़ेहन इन तभी मामलों में साफ़ नहीं है तो इसके दो नुक़सान होंगे। एक यह कि वह दूसरों के सामने इस्लाम को पूरी स्पष्टता के साथ पेश नहीं कर सकेगा। स्पष्ट है इसके बिना इस्लाम के फलने-फूलने और आगे बढ़ने की उम्मीद नहीं की जा सकती है। वह दावत निश्चय ही असफल होगी, जिसका देनेवाला यह न बता सके कि वह क्या चाहता है? इसका दूसरा नुक़सान यह होगा कि वह इस्लाम और उसकी विरोधी विचारधाराओं में फ़र्क़ नहीं कर सकेगा। इस कारण इस बात का गम्भीर ख़तरा रहेगा कि वह उन विचारधाराओं को इस्लाम की विचारधारा समझकर क़बूल कर ले और पूरे जोश के साथ उनकी तरफ़ दावत देने लगे।

स्पष्ट और प्रभावकारी अन्दाज़ में दावत दे

इनसान बड़ी ग़फ़लत और बेसुधी में पड़ा है। उसको जब तक झिंझोड़ा नहीं जाएगा, वह नहीं जागेगा। इसलिए दावत देनेवाले को चाहिए कि अपनी बात पूरे जोश और शक्ति के साथ पेश करे और ऐसा

अन्दाज़ अपनाए जिससे इनसान की सोई हुई आत्मा जाग जाए और उसकी भावनाओं में हरकत पैदा हो। दार्शनिकों की तरह बेजान और नीरस वर्णन-शैली से दावत का हक़ अदा नहीं हो सकता। इसी तरह दावत देनेवाले को चाहिए कि अपनी दावत के लिए बहुत स्पष्ट और सरस वर्णन-शैली अपनाए। अगर उसकी लम्बी-लम्बी बहसों के बाद भी लोग यह सवाल करने पर मजबूर हों कि उसका उद्देश्य क्या है और वह क्या चाहता है, तो यह पहेली की भाषा होगी, दावत की भाषा नहीं होगी। उलझी हुई वर्णन-शैली, निरर्थक उपमाएँ और अत्यन्त गूढ़ शब्दावली, अनावश्यक विस्तार या ऐसा सार-संक्षेप कि जिससे अर्थ के समझने में बड़ी कठिनाई हो, दावत देनेवाले की शान से गिरी हुई बात है और उसके रास्ते में बड़ी रुकावट है। आप दो टूक और स्पष्ट शब्दों में अपनी बात कहिए और इस तरह कहिए कि आसानी से लक्षित व्यक्ति के मन-मस्तिष्क की पकड़ में आ जाए। अगर आपकी वर्णन-शैली उलझी हुई और अस्पष्ट है, तो अपना प्रभाव खो देगी और लोगों के लिए उसे क़बूल करना आसान न होगा।

उचित और वैध साधन अपनाए

इस्लाम की दावत के लिए दावत देनेवाले को वही तरीक़े अपनाने चाहिएँ जिनकी ख़ुद दीन ने इजाज़त दी है। दीन (धर्म) ने वैध-अवैध की जो सीमाएँ बताई हैं, उनकी पाबन्दी के बिना इस काम का इरादा करना भी गुनाह है। ख़ुदा का दीन बिलकुल इसका मुहताज नहीं है कि कोई आदमी अवैध और वर्जित संसाधनों से उसको सींचे। वह आदमी जो एक तरफ़ दीन के बताए हुए हलाल (वैध) को हराम (अवैध) और अवैध को वैध करे और दूसरी तरफ़ दीन की पैरवी और दीन को क़ायम करने की ख़ूबियों का बखान करे, वह या तो बहुत बड़ा नादान है या बहुत बड़ा पाखंडी; क्योंकि ग़लत तरीक़ों से लाभ पहुँचने की कोई उम्मीद तो नहीं; हाँ, इसकी हानि बिलकुल निश्चित है। इसलिए यह रास्ता वही आदमी अपना सकता है, जो अपनी बुद्धि खो चुका हो, या

जो ख़ुदा के दीन का जाने या अनजाने रूप में दुश्मन और बुरा चाहनेवाला हो। अगर आप सूद-ब्याज की आमदनी से दीन को फैलाने की संस्था बनाते हैं, तो इससे दीन की दावत कभी नहीं फैलेगी। हाँ, दीन अपमानित ज़रूर होगा। वे लोग कितने अभागे हैं, जो ख़ुदा के दीन की सेवा और अल्लाह को ख़ुश करने के इरादे से उठें और रास्ता वह अपनाएँ जिससे दीन को नुक़सान पहुँचे और शैतान ख़ुश हो।

दीन की फ़ितरत का ध्यान रखे

इस्लाम की दावत के सिलसिले में इनसान को न केवल यह कि उसकी बताई हुई सीमाओं का पाबन्द रहना चाहिए, बल्कि उसकी प्रकृति का भी पूरा ध्यान रखना चाहिए। इस्लाम का एक विशेष स्वभाव है। बहुत-सी चीज़ें इस स्वभाव के अनुकूल होती हैं और बहुत-सी चीज़ें अनुकूल नहीं होतीं। इस्लाम की दावत देनेवाले को उन्हीं चीज़ों को अपनाना चाहिए, जो उसकी फ़ितरत से मेल खाती हों और जो चीज़ें उससे मेल न खाती हों, उनसे उसको बचना चाहिए।

इस्लाम जिन तरीक़ों को नापसन्द करता है, अगर उन तरीक़ों से उसकी दावत दी जाए, उसका प्रचार-प्रसार करने की कोशिश की जाए, तो कभी उसकी महानता और श्रेष्ठता महसूस नहीं होगी और वह लोगों की नज़र में इतना हल्का और भारहीन हो जाएगा कि कोई आदमी उसकी तरफ़ ध्यान भी नहीं देगा। अगर कोई आदमी इन तरीक़ों से इस्लाम के क़रीब हो भी जाए, तो वह अपने व्यवहार में केवल यही नहीं कि उसकी फ़ितरत की परवाह नहीं करेगा, बल्कि उसकी सीमाओं को भी कुचल डालेगा। जब तक दीन की दावत देनेवाला उन सभी रास्तों को छोड़ न दे, जो दीन की फ़ितरत पर बोझ है, इनसानों पर इसकी अहमियत वाज़ेह नहीं हो सकती। उसकी अहमियत उसी समय वाज़ेह होगी, जबकि उसे इस तरह फैलाया जाए कि कहीं उसकी फ़ितरत और स्वभाव को ठेस न पहुँचे।

लोगों की आमादगी का ध्यान रखे

दावत देनेवाले को चाहिए कि दावत को पेश करने में लोगों के मन की आमादगी का ध्यान रखे। उनके सामने उस समय दावत पेश करे, जबकि वे खुले दिल और दिमाग़ के साथ उसको सुन सकते हों और सोच-विचार करने के लिए तैयार हों। ऐसे समय में उनके पास अपनी दावत लेकर न पहुँच जाए, जबकि वे उसको सुनने तक के लिए तैयार न हों। खुदा के दीन के सिवा कोई चीज़ इस दुनिया में ऐसी नहीं है जिससे इनसान को शान्ति नसीब हो।

जो आदमी खुदा के दीन से महरूम है, उसकी ज़िन्दगी में ऐसे बहुत-से मौक़े आते हैं जबकि उसको इस बात का बहुत अधिक एहसास होता है कि वह जिन साधनों से सुख-शान्ति प्राप्त करना चाहता है, वे सब के सब बहुत ही कमज़ोर हैं और उनपर विश्वास भी नहीं किया जा सकता। इन अवसरों पर दीन की दावत देनेवाले को चाहिए कि पूरी ताक़त और अत्यधिक बुद्धिमत्ता के साथ अपना सन्देश पहुँचाए ये मौक़े दावत देनेवाले के ख़ास मेहनत के हैं और इसमें लक्षित व्यक्ति के दीन की तरफ़ आकर्षित होने और उसे क़बूल करने की अधिक सम्भावना है। जिस तरह लोगों के जीवन में ऐसे मौक़े और हालात सामने आते हैं, जबकि वे दीन की दावत को कान लगाकर सुन सकते हैं। ठीक उसी तरह खुदा से ग़ाफ़िल और विमुख जातियाँ और संगठन भी ऐसी परिस्थितियों से दो-चार होते हैं, जबकि वे भी दीन की दावत सुन सकते हैं। इन परिस्थितियों से लाभ न उठाना बहुत बड़ी ग़लती है। दावत देनेवाले को कभी उन अवसरों को नष्ट नहीं करना चाहिए, बल्कि हमेशा उनकी खोज में रहना चाहिए।

किसी को काफ़िर और गुमराह कहने से बचे

दावत देनेवाले को ऐसे अनगिनत लोगों के बीच दीन का काम करना है, जो सीधे रास्ते से भटके हुए हैं। वह अगर उनको काफ़िर,

झूठा और गुमराह कहे तो वास्तविकता की दृष्टि से ग़लत न होगा। लेकिन इसके बावुजूद केवल दीन की किसी निहायत ज़रूरत के बिना उन्हें काफ़िर, गुमराह, झूठा और बदकार कहने से बचना चाहिए; क्योंकि यह इनसान की फ़ितरत है कि अगर उसको काफ़िर या अधर्मी और गुमराह कहा जाए, तो वह इसे अपने ऊपर बहुत बड़ा लांछन समझता है। इसलिए डर है कि उसे गुमराह ठहरा देने से उसका अज्ञानता भरा स्वाभिमान भड़क उठे और वह उसकी बात सुनने से बिलकुल ही इनकार कर दे।

घमंड करने और हुक्म चलाने से बचे

दावत देनेवाले के अन्दर अपने को सन्मार्ग प्राप्त और सुधारक होने का घमंड नहीं होना चाहिए। यह चीज़ उसको अपने उद्देश्य में नाकाम बना देगी। घमंड करना और अपने को बड़ा समझना ऐसी नैतिक बुराई है कि दूर-दूर तक का वातावरण इसके कारण गन्दा हो जाता है और कोई भी अच्छे स्वभाव का इनसान घमंडी आदमी से क़रीब होना पसन्द नहीं करता। दावत देनेवाले को यह नहीं सोचना चाहिए कि वह लोगों का सुधार करके उनपर कोई एहसान कर रहा है, बल्कि यह समझना चाहिए कि वह अपना एक कर्तव्य पूरा कर रहा है। इस दुनिया में बहुत-से इनसान सीधे रास्ते से भटके हुए और ख़ुदा के दीन से ग़ाफ़िल और लापरवाह हैं। इस स्थिति में जिस आदमी को ख़ुदा ने यह सम्मान प्रदान किया है कि वह उनको उसके दीन की तरफ़ बुलाए, इसपर उसका बहुत बड़ा एहसान है। अगर वह सही अर्थ में इस महान उपकार का एहसास कर सके, तो उसका सिर घमंड से ऊँचा नहीं होगा, बल्कि एहसान के जज़्बे से झुक जाएगा। दावत देनेवाले के अन्दर अपनी बात कहने में हुक्म चलाने का अन्दाज़ नहीं होना चाहिए; क्योंकि यह अन्दाज़ उन लोगों का है जो दूसरों को अपना मातहत समझते हैं। दावत देनेवाला इसलिए नहीं उठता कि दूसरों को

अपना ग़ुलाम बनाए और उनपर हुकूमत करे, बल्कि वह यह बताने के लिए मैदान में आता है कि सारे इनसान एक ख़ुदा के बन्दे हैं और सभी को उसी की बन्दगी करनी चाहिए, वह किसी को कमतर समझकर उसके साथ मामला नहीं करता; बल्कि उसको अपना बिगड़ा हुआ भाई समझ कर उसके सुधार की कोशिश करता है।

किसी आदमी का ख़ुदा के दीन को क़बूल करना दावत देनेवाले के लिए दुनिया और उसके सारे साज़ो-सामान से बड़ी दौलत है। यह दौलत हर उस आदमी को नहीं मिलती, जो दीन की दावत के लिए खड़ा हो जाए, बल्कि उस भाग्यशाली इनसान को मिलती है, जिसकी बातचीत में अपनापन और हमदर्दी हो, जिसकी भाषा, प्रेम की भाषा हो और जिसकी बातचीत यह बता रही हो कि वह लोगों के ग़लत रवैए से बहुत दुखी है और उनका सुधार चाहता है।

चरित्रवान रहे

दावत देनेवाले को सम्बोधित व्यक्ति के साथ ऐसा रवैया नहीं अपनाना चाहिए कि वह उसे देखते ही भाग खड़ा हो या उसका विरोध शुरू कर दे, बल्कि दावत देनेवाले का चरित्र इतना सुन्दर हो कि लोग उसकी तरफ़ खिंचें और उसकी बात सुनने को तत्पर हो जाएँ। जो लोग आम तौर पर इस्लाम की ख़िदमत करनेवाले समझे जाते हैं, उनका बुरा आचरण और चिड़चिड़ापन एक आम बात बन गई है, हालाँकि सबसे अधिक उन्हीं को चरित्रवान और सदाचारी होना चाहिए; क्योंकि शिष्टाचार और नैतिक आचरण के बिना इस्लाम की कल्पना तक नहीं की जा सकती। दावत देनेवाला समाज के अन्दर जिन बुराइयों को देखे उनको मिटाने के लिए वह बेचैन रहे। लेकिन बुरे इनसानों को घृणा और हेय दृष्टि से न देखे। वह उन बुरे कामों से तो दामन बचाए रहे, जो उसके चारों तरफ़ फैले हुए हैं, लेकिन उन बुरे कामों में लिप्त लोगों को तुच्छ और घृणित न समझे और उनसे सम्बन्ध कभी न तोड़े; क्योंकि

जो लोग बिगड़े हुए इनसानों के सुधार के लिए उठें, वे अगर उनसे दूर रहने में ही अपनी भलाई समझें, तो उनके सुधार की कोई सूरत न होगी और वे गुनाहों में और अधिक लथपथ होते चले जाएँगे।

दीन की दावत देनेवाले को यह सच्चाई नहीं भूलनी चाहिए कि जब बिगाड़ समाज की नस-नस में दाख़िल हो चुका हो और नेकी और भलाई की तरफ़ रुझान न हो तो बुराई की राह अपनाने में इनसान ख़ुद को एक तरह से लाचार समझने लगता है। वह दावत देनेवाले के ताने देने, मज़ाक़ उड़ाने, नफ़रत और ग़ुस्सा करने और तुच्छ समझने का नहीं, बल्कि हमदर्दी का हक़दार है। अगर आप किसी के ग़लत रवैए पर ताने कसें और उसका मज़ाक़ उड़ाएँ, तो डर है कि उसकी भावनाएँ भड़क उठें और वह अपने रवैए पर अड़ जाए। दावत देनेवाले को हमेशा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बात करने के अन्दाज़ में कड़वापन सम्बोधित व्यक्ति को कहीं दीन से दूर न कर दे और वह एक अच्छे उद्देश्य में केवल अपने बेढंगेपन की वजह से नाकाम न हो जाए।

जल्दबाज़ी न करे

इस सिलसिले की अन्तिम लेकिन महत्त्वपूर्ण बात यह है कि दावत देनेवाले को जल्दबाज़ नहीं होना चाहिए; क्योंकि जल्दबाज़ इनसान दावत का हक़ अदा नहीं कर सकता। ऐसी पाक रूहें कम होती हैं, जो तुरन्त सुधार स्वीकार कर लेती हैं वरना कभी-कभी इस काम में दावत देनेवाले की उम्र ख़त्म हो जाती है और लोगों में कोई बड़ा बदलाव नहीं आता। दावत देनेवाला अगर यह चाहे कि उसके काम के फल तुरन्त दिखाई दें, तो उसे निराशा होगी और वह दावत का काम छोड़ बैठेगा। दावत देनेवाले को पूरे सब्र के साथ और लगातार लोगों को ख़ुदा के दीन की तरफ़ बुलाते रहना होगा, यहाँ तक कि हर तरफ़ ख़ुदा का दीन छा जाए या लगातार इसी कोशिश में उसकी जान चली जाए।

दावत देनेवाला कामयाब है

कामयाबी के दो पैमाने

किसी दावत देनेवाले की कामयाबी और नाकामी को जाँचने के दो पैमाने हो सकते हैं। एक यह कि उसकी दावत क्या है और वह किस विचारधारा की तरफ़ लोगों को बुला रहा है? यह विचारधारा जितनी पवित्र और जितनी उच्च होगी, इसके पेश करनेवाले को उतना ही कामयाब कहा जाएगा। इस दुनिया में कुछ लोग विकृत विचारधाराओं के अलमबरदार होते हैं। ये सबसे अधिक नाकाम इनसान हैं; क्योंकि ये अपने आपको भी और दूसरों को भी तबाह करते हैं। कुछ लोग इनसान का आंशिक सुधार चाहते हैं और उनकी भाग-दौड़ उसके छोटे-छोटे हितों के लिए होती है। इनकी तुलना में कुछ दूसरे लोग हर पहलू से इनसान की भलाई के इच्छुक होते हैं और उसको ऊपर उठाना चाहते हैं। ये दोनों तरह के लोग मानो मावन-जाति के हितैषी हैं। लेकिन दोनों की हैसियतों में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। पहला गिरोह ज़ाहिर है कि उस बड़प्पन और कामयाब का हक़दार न होगा, जिसका हक़दार दूसरा गिरोह हो सकता है।

दूसरा पैमाना जिससे दावत देनेवाले की कामयाबी और नाकामी का मूल्यांकन किया जा सकता है, यह है कि उसकी विचारधारा और दावत से दुनिया को कितना फ़ायदा पहुँचा। उसने जो सरिता प्रवाहित की, उससे प्यास बुझानेवालों की संख्या क्या थी और उसके लगाए हुए पेड़ों की शीतल छाया में कितने यात्रियों ने आराम किया? लेकिन यह उसकी कामयाबी और नाकामी को जाँचने का असली पैमाना नहीं है,

बल्कि एक दूसरा ही पैमाना है। वह इनसान निश्चय ही कामयाब है जो खुदा की ज़मीन पर हक़ और सच्चाई की गवाही दे रहा है। अगर उसकी कोशिश से किसी को हक़ को स्वीकार करने का सौभाग्य प्राप्त हो तो यह उसकी सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण होगा। लेकिन अगर कोई एक आदमी भी उसका साथ न दे और सारी दुनिया उसके अथक प्रयास के बावजूद हक़ और सच्चाई का इनकार कर दे, तो इससे उसकी महानता कम न होगी और उसकी सफलता में कोई अन्तर न आएगा।

इस्लाम के पास पूरी मानव-जाति के लिए सबसे अच्छी और कल्याणकारी विचारधाराएँ मौजूद हैं और वह पूरे मानव-जीवन के लिए इतना संतुलित और सर्वांगपूर्ण जीवन-विधान प्रस्तुत करता है कि उसकी सारी त्रुटियाँ और असंतुलन दूर हो जाते हैं। इसलिए जो आदमी इस्लाम की दावत लेकर उठे, उसे हम कभी असफल नहीं कह सकते। उसकी सफलता के लिए इतनी बात काफ़ी है कि वह इस्लाम की तरफ़ बुला रहा है। अगर कोई आदमी या गिरोह इस्लाम के रास्ते से मुँह फेरता है, तो वह खुद असफल है; उसकी दावत देनेवाला असफल नहीं है।

दावत देनेवाले का कर्तव्य

दावत देनेवाले की सफलता का सम्बन्ध हरगिज़ इस बात से नहीं है, कि उसकी कोशिश के क्या नतीजे निकले, बल्कि इस बात से है कि उसने अपनी ज़िम्मेदारी पूरी की या नहीं? इस्लाम को स्वीकार करने के बाद इनसान पर उसकी दावत फ़र्ज़ हो जाती है। इस फ़र्ज़ को अंजाम देना अपनी शक्ति की हद तक उसके लिए ज़रूरी है। चाहे दुनिया उसे स्वीकार करे या नकार दे। चाहे इसके नतीजे में वह प्रभावी हो जाए या उसके प्रभावी होने की सम्भावनाएँ स्पष्ट रूप से नज़र न आ रही हों। जिस समय किसी आदमी को खुदा का दीन मिले, उसी समय उसपर यह ज़िम्मेदारी आ पड़ती है कि उसे वह दूसरों तक पहुँचाए। यह ज़िम्मेदारी केवल इस कारण ख़त्म नहीं हो जाती कि लोग खुदा के दीन

के विरोधी हैं और उसकी बात सुनना नहीं चाहते। हक़ के पहुँचाने के लिए यह शर्त नहीं है कि सुननेवाला तुरन्त उसपर ईमान ले आए, बल्कि इतनी बात काफ़ी है कि इनसान के पास हक़ है और दुनिया उससे लापरवाह और मुँह फेरे हुए है। इस दुनिया में जो लोग खुदा को भूले हुए और उसके दीन से अनजान और लापरवाह हैं, वे इस बात के मुहताज हैं कि उन तक खुदा का दीन पहुँचाया जाए। इसके बाद यह उनकी मर्ज़ी है कि चाहे उसपर चलें या उससे बग़ावत ही पर जमे रहें। पवित्र क़ुरआन में कहा गया है–

وَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ ۗ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِالْعِبَادِ ۝

"और अगर वे मुँह फेरते हैं, तो फेरने दो। तुम्हारा काम बस इतना है कि हक़ उन तक पहुँचा दो और अल्लाह खुद ही अपने बन्दों को देख रहा है।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-20)

इस्लाम की दावत का हक़ सही अर्थों में उसी समय अदा हो सकता है, जबकि दावत देनेवाला उसे अपना ज़रूरी काम समझकर अंजाम दे और नतीजे से बिलकुल विरक्त और निस्पृह हो। वह इस काम में लगा रहे और लगातार लगा रहे; यह देखे बिना कि परिस्थितियाँ अनुकूल हैं या प्रतिकूल। दुनिया की तरफ़ से उसका स्वागत किया जाता है या उसका विरोध किया जाता है। अगर वह इस शर्त के साथ यह काम अंजाम देना चाहता है कि दुनिया की तरफ़ से उसका स्वागत हो, तो कभी उसका हक़ अदा न हो सकेगा। इस दुनिया में वही लोग सफल होते हैं, जो अपने आपको देखते हैं। जो लोग दूसरों को देखकर अपने बारे में फ़ैसला करें, वे कभी सफल नहीं होते। यहाँ उस आदमी की क़िस्मत में महरूमी लिख दी गई है, जो दूसरों की लापरवाही को अपने निकम्मेपन का बहाना बनाए और अपने कर्तव्यों को भूल जाए। दुनिया अगर इस्लाम का साथ न दे, तो इसका मतलब यह नहीं है कि उसके

माननेवाले उसकी दावत ही छोड़ बैठें। जिनको इस्लाम के कल्याणकारी सन्देश की तरफ़ बुलाया जा रहा है, वे लोग अगर अपना फ़र्ज़ नहीं पहचान रहे हैं तो दावत देनेवाले को यह अधिकार कहाँ से प्राप्त हो गया कि वे अपना फ़र्ज़ पूरा करने में कोताही बरतें। परिस्थितियाँ कितनी ही कठिन और गम्भीर क्यों न हों, इस्लाम के अलमबरदार एक पल के लिए भी इस फ़र्ज़ से लापरवाही नहीं बरत सकते और जब तक उसको स्वीकार करने की सम्भावनाएँ समाप्त न हो जाएँ, उसे छोड़ देने की उन्हें इजाज़त नहीं है। चाहे उनके विरोध में हक़ का इनकार करनेवाली सारी शक्तियाँ टूट पड़ें और उनके उत्पीड़न पर सहानुभूति का एक बोल कहनेवाला भी कोई न हो।

इसमें शक नहीं कि आज हर तरफ़ अधर्मियों और विधर्मियों का राज है। जिधर देखिए, लोग ख़ुदा को भूले बैठे हैं और दुनिया ख़ुदा की नाफ़रमान हो चुकी है। रस्मी दीनदारी (औपचारिक धार्मिकता) तो कहीं-कहीं नज़र आती है, लेकिन सच्ची दीनदारी (धार्मिकता) कहीं नज़र ही नहीं आती। ख़ुदा का नाम लेने से अच्छे-अच्छे घबराते हैं। जब कोई आदमी उसके दीन की चर्चा करता है, तो अपने माहौल में अजनबी बन जाता है। उसकी बातें दुनियावालों को निराली मालूम होती हैं। वे उसको अपने दौर का आदमी नहीं समझते। अपने मज़हब पर चलने के कारण वह उनको समय की रफ़्तार से बहुत पीछे मालूम होता है। निस्सन्देह यह सब कुछ सही है, लेकिन इसके कारण ईश्वरीय जीवन-विधान की तरफ़ बुलानेवाले किसी आह्वाहक की ज़िम्मेदारी ख़त्म नहीं हो जाती। उसको इन्हीं अंधकारपूर्ण परिस्थितियों में अपना काम अंजाम देना है। वह नहीं जानता है कि इस प्रतिकूल परिस्थिति में उसकी बातें सुनने के लिए किसका दिल खुला हुआ है, कौन उसकी पुकार पर 'मैं हाज़िर हूँ' कहने को तैयार है और किसके अन्दर हक़ को क़बूल करने की सलाहियत मौजूद है? अगर ये अच्छे लोग उसकी लापरवाही के कारण हक़ से वंचित रहे तो कल क़ियामत के दीन उसपर यह आरोप

लगेगा कि उसने अपना फ़र्ज़ अदा करने में कोताही की और वह अपनी कोताही की जवाबदेही न कर सकेगा। दुनिया दोस्त और दुश्मन को चेहरा देखकर पहचान लेती है। लेकिन खुदा के दीन की दावत देनेवाला ऐसे दोस्तों की तलाश में निकलता है, जिनके चेहरों पर दोस्ती का कोई निशान नहीं है। अगर वह रात-दिन अपने काम में लगा रहे तो उसको वे लोग मिलेंगे, जिनको वह पाना चाहता है। इस तरह के कुछ लोगों का भी मिलना दुनिया की सारी नेमतों से अधिक क़ीमती है। वे मानवता के हीरे-मोती हैं, जो उसके हाथ लग गए हैं। अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल०)* ने हज़रत अली (रज़ि०) को नसीहत फ़रमाई और यही नसीहत हक़ की तरफ़ बुलानेवाले हर आदमी के लिए भी है—

فَوَاللّٰهِ لَأَنْ يَهْدِيَ اللّٰهُ بِكَ رَجُلًا وَاحِدًا خَيْرٌ لَكَ مِنْ أَنْ يَكُونَ لَكَ حُمْرُ النَّعَمِ

> "क़सम खुदा की! अगर तुम्हारे द्वारा खुदा किसी एक इनसान को भी राह दिखा दे तो यह तुम्हारे हक़ में लाल-लाल ऊँटों से भी बेहतर है।"[1]

दावत देनेवाला कामयाब है

अल्लाह चाहता है कि इनसानों पर उसका दीन (जीवन-विधान) स्पष्ट हो जाए, ताकि तर्क की दुनिया में उससे बग़ावत का कोई उचित कारण न बचे। इसी की ज़िम्मेदारी उसने इस दीन के माननेवालों पर डाली है। अगर उन्होंने दीन की दावत देने में कोताही नहीं बरती और अपनी हद तक उसको वाज़ेह कर दिया तो अपने फ़र्ज़ से बिलकुल मुक्त हो गए। अब वे खुदा के नज़दीक अपनी ज़िम्मेदारी से बरी हैं, चाहे दुनिया का एक भी इनसान उनका साथ न दे और सबके सब उसकी दावत का इनकार कर दें।

दीन की दावत देनेवाले किसी आदमी से खुदा के यहाँ यह सवाल

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुल-जिहाद वस्सियर।

हरगिज़ न होगा कि उसने कितने इनसानों के मन बदले और किस-किस को ईमानवाला और अल्लाह का आज्ञाकारी बनाया। दावत देनेवाले की कामयाबी बिलकुल ही इसकी मुहताज नहीं है कि कोई उसपर ईमान भी ले आए, बल्कि उसके लिए इतनी बात काफ़ी है कि उसने दावत को पेश करने में अपनी पूरी ऊर्जा और शक्ति लगा दी। अल्लाह की माँग उसके दीन के माननेवालों से केवल उन्हीं चीज़ों के बारे में है, जो उनके अधिकार में है। जो चीज़ उनके बस में नहीं है, उसकी उनसे हरगिज़ माँग नहीं है। उनको अपने आप पर अधिकार है। वे अपने आपको खुदा के हुक्म के अनुसार बदल सकते हैं। इसलिए ख़ुद को बदल दें। ख़ुदा की प्रसन्नता प्राप्त करने की चाहत में अपने आपको खपा सकते हैं, इसलिए खपा दें। उनके पास जो दिल-दिमाग़ है, जो माल-दौलत है और सोचने-विचारने और काम की जो ऊर्जा और शक्ति है, उसे ख़ुदा की राह में लगा सकते हैं। इसलिए उसे लगा दें। अगर इसमें उन्होंने कोताही की, तो निश्चय ही उनसे पूछगछ होगी; क्योंकि ख़ुदा ने जो चीज़ें उनको दी थीं, उनको उन्होंने उसकी राह में ख़र्च करने से इनकार किया। लेकिन जिस चीज़ के वे मालिक ही नहीं हैं, उसे वे न दे सकते हैं और न उसके बारे में उनसे कोई सवाल होगा। सिर्फ़ ख़ुद के सिवा उनके बस में नहीं है कि किसी को बदल दें। इसलिए उसकी ज़िम्मेदारी भी उनपर नहीं डाली गई है—

لَيْسَ عَلَيْكَ هُدٰىهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَهْدِيْ مَنْ يَّشَآءُ ۔

> "तुम पर उनकी हिदायत की ज़िम्मेदारी नहीं है। हाँ, अल्लाह जिसे चाहता है हिदायत देता है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-272)

इस्लाम के माननेवालों पर उसकी दावत लोगों में फैलाना फ़र्ज़ है; लोगों को सच्चा ईमानवाला और मुस्लिम बनाना फ़र्ज़ नहीं है। उनका काम दीन की दावत देना और उसे फैलाना है। अगर उन्होंने दीन की

दावत देने और उसे फैलाने का हक़ अदा कर दिया, तो अपने मक़सद में कामयाब हो गए; क्योंकि उन्होंने अपना फ़र्ज़ पूरा कर दिया। उनकी दावत को सुनने के बाद सुननेवाला आदमी उसे नकार देता है, तो यह उसका अपना दोष है। वे उसके बारे में ख़ुदा के यहाँ हरगिज़ जवाबदेह न होंगे। हमारे सामने पैग़म्बरों का उदाहरण है। अगर सच (हक़) की तरफ़ बुलानेवाले की कामयाबी का पैमाना यह है कि जिसे दावत दी जाए वह उसकी दावत को क़बूल कर ले, तो बहुत-से पैग़म्बर आपको नाकाम नज़र आएँगे। वे हार्दिक सहानुभूति और हित की प्रबल भावना के साथ जीवन भर दीन की तरफ़ बुलाते रहे; लेकिन इसके बावुजूद ऐसा बहुत हुआ है कि वे अपने निकटतम लोगों को भी नहीं बदल सके। हज़रत नूह (अलैहि॰) के द्वारा दीन की दावत देने और फैलाने का कठोर परिश्रम साढ़े नौ सौ साल तक जारी रहा; लेकिन उनका अपना बेटा ही 'बिगड़ैल' रहा। हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) का निष्ठापूर्ण बुलावा अपने बाप को भी 'हक़ पर चलने के लिए' तैयार न कर सका। आख़िरकार उनको 'आप पर सलाम हो' कहकर बाप से अलग हो जाना पड़ा। हज़रत लूत (अलैहि॰) ने अपनी बीवी को दीन की दावत दी, लेकिन यह दावत उसके हक़ में बेकार साबित हुई और ख़ुदा का अज़ाब आया, तो इस फ़ैसले के साथ आया—

إِنَّا مُنَجُّوكَ وَأَهْلَكَ إِلَّا امْرَأَتَكَ كَانَتْ مِنَ الْغٰبِرِيْنَ ﴿٣٣﴾

"हम तुमको और तुम्हारे घरवालों को बचा लेंगे सिवाय तुम्हारी बीवी के; जो पीछे रह जानेवालों में से है।"

(क़ुरआन, सूरा-29 अनकबूत, आयत-33)

आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद *(सल्ल॰)* की दावत के साथ आपके चचा अबू-तालिब के रवैए को देखिए कि एक तरफ़ वह आपको अपनी औलाद से अधिक प्यारा समझते हैं, आपकी ख़ातिर हर तरह के कष्ट सहते हैं और दुनिया से लड़ जाते हैं, पहाड़ की घाटी में क़ैद होना

पसन्द करते हैं; लेकिन अपने बेटे समान भतीजे मुहम्मद (सल्ल०) को दुश्मन के हवाले नहीं करते। दूसरी तरफ़ आप *(सल्ल०)* के द्वारा लोगों को दीन की तरफ़ बुलाने में अत्यन्त कठोर परिश्रम करते-करते दस साल गुज़रत जाते हैं और वे आप *(सल्ल०)* का साथ नहीं देते; यहाँ तक जिस समय अबू-तालिब बिस्तर पर आख़िरी सांसें ले रहे थे, आप *(सल्ल०)* उनके पास गए और कहा—

أَيْ عَمِّ قُلْ لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ كَلِمَةً أُحَاجُّ لَكَ بِهَا عِنْدَ اللّٰهِ

"चचा जान! कह दीजिए कि 'ख़ुदा के सिवा कोई माबूद (पूज्य-प्रभु) नहीं है।' इस कलाम (वाणी) के बुनियाद पर मैं ख़ुदा के यहाँ आपकी नजात (मोक्ष) की कोशिश करूँगा।"[1]

यह वह बोल था जिससे दिल को पिघल जाना चाहिए था। लेकिन अबू-तालिब ने इसे क़बूल नहीं किया और बाप-दादा के दीन पर जान देना पसन्द किया। यही नहीं, पैग़म्बरों के इतिहास में अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल०)* कहते हैं कि 'एक ऐसे पैग़म्बर भी गुज़रे हैं, जिनका केवल एक आदमी ने साथ दिया और उनकी पैरवी की।'[2]

इसके बावजूद क्या हम कह सकते हैं कि वे असफल थे? हरगिज़ नहीं। उन्होंने दीन की राह में अपनी पूरी शक्ति लगा दी और दीन पहुँचाने और फैलाने का पूरा हक़ अदा कर दिया। इसलिए वह ख़ुदा के यहाँ पूरे बदले के हक़दार हो गए।

कुछ लोगों में दावत का बड़ा जोश होता है। लेकिन वे अपनी सही हैसियत नहीं समझते। वे ख़ुदा के दीन की तरफ़ केवल बुलानेवाले हैं, लेकिन अपने आपको दूसरों की हिदायत का ज़िम्मेदार समझते

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबु-मनाक़िबिल-अनूसार व किताबुत्-तफ़सीर, तफ़सीर सूरह् तौबा।

[2] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाबु फ़ी क़ौलिन-नबी (सल्ल०), अना अव्वलुन-नासि यशफ़अु फ़िल् जन्नति.........आख़िर तक।

हैं। यह एक भयंकर भूल है। ऐसे लोग अधिक देर तक अपनी दावती भाग-दौड़ जारी नहीं रख सकते और बहुत जल्द उनपर निराशा छा जाती है। होता यह है कि एक आदमी पूरे निष्ठाभाव के साथ दावत का काम करता है, लेकिन जब वह देखता है कि एक लम्बे समय तक कोशिश करते रहने के बावजूद उस आदमी का, जिसको दावत दी जा रही है, सीना उसकी दावत के लिए खुल नहीं रहा है, सत्य के स्पष्ट हो जाने के बावजूद वह अपने इनकार पर जमा हुआ है, भलाई और सद्भाव के उत्तर में विरोध करने पर कमर कस रखी है, तो वह सोचने लगता है कि क्या मेरी पूरी उम्र की कोशिश बेकार चली जाएगी? क्या यह दावत कामयाब नहीं होगी? क्या मैं उस आदमी को उसके अपने इरादे से न हटा सकूँगा? यह एहसास उसकी कमर तोड़ देता है और वह हिम्मत हार कर बैठ जाता है। एक बेहतरीन शुरुआत का यह निराशाजनक परिणाम केवल इसलिए सामने आता है कि ख़ुदा ने उसे केवल इस बात का हुक्म दिया था कि वह जिस दीन को सच्चा दीन मान रहा है, उसे दूसरों तक पहुँचाए। लेकिन उसने अपने-आपको इस बात पर मुक़र्रर समझ लिया कि लोगों को ख़ुदा का आज्ञाकारी बना ही दे। हालाँकि इस मामले में ख़ुदा का क़ानून उसकी किताब में साफ़-साफ़ बयान हुआ है—

إِنَّكَ لَا تَهْدِي مَنْ أَحْبَبْتَ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَهْدِي مَن يَشَاءُ ۚ

"(ऐ पैग़म्बर!) तुम जिसे चाहो हिदायत की राह पर नहीं लगा सकते। हाँ, अल्लाह जिसे चाहता है, हिदायत देता है।"

(क़ुरआन, सूरा-28 क़सस, आयत-56)

जो आदमी इस कारण बिलकुल निराश हो जाए और दावत को पहुँचाने और फैलाने का काम बन्द कर दे कि हक़ सुना नहीं जाता और दुनिया उसकी तरफ़ ध्यान नहीं देती है, उसे यही कहा जाएगा कि तुमने एक ऐसा बोझ उठा रखा है, जिसके उठाने का ख़ुदा ने तुम्हें हुक्म नहीं दिया है। तुम एक ऐसी चिन्ता में पड़े हुए हो, जिसका इलाज

तुम्हारे पास नहीं है। यह काम तुम्हारा नहीं है कि लोगों को सत्य-मार्ग पर लगा दो, बल्कि यह उस ख़ुदा का काम है जिसके हाथ में हिदायत और गुमराही है। यह कितनी बड़ी नादानी है कि जो काम अपना है उसे तो इनसान भूल जाए और जो काम ख़ुदा का है उसे अपना समझ बैठे–

وَإِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكَ إِعْرَاضُهُمْ فَإِنِ اسْتَطَعْتَ أَنْ تَبْتَغِيَ نَفَقًا فِي الْأَرْضِ أَوْ سُلَّمًا فِي السَّمَاءِ فَتَأْتِيَهُمْ بِآيَةٍ ۚ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَجَمَعَهُمْ عَلَى الْهُدَىٰ ۚ فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْجَاهِلِينَ ﴿٣٥﴾

"और अगर उनका हक़ से मुँह फेरना तुम पर नागवार गुज़र रहा है तो तुमसे हो सके तो ज़मीन में कोई सुरंग ढूंढ निकालो या सीढ़ी लगाकर आसमान पर पहुँच जाओ और उनके पास कोई ऐसी निशानी ले आओ कि वे हक़ का इनकार न कर सकें। (याद रखो) अगर अल्लाह चाहता तो उनको हिदायत पर जमा कर देता। इसलिए तुम जाहिल न बनो।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-35)

सच यह है कि इस दुनिया में हर आदमी ने अपना एक मार्ग निश्चित कर रखा है, जिस पर वह आँखें बन्द करके दौड़ा चला जा रहा है। वह उसके प्रेम में इतना अधिक गिरफ़्तार है कि किसी क़ीमत पर उसे छोड़ना नहीं चाहता, लेकिन ख़ुदा का दीन उन साहसी लोगों को मिलता है जो ग़लती स्पष्ट होते ही अपना रवैया बदल सकते हों, जो असत्य के साथ चिमटे रहने का फ़ैसला न कर चुके हों, बल्कि हक़ को क़बूल करने के लिए हर पल तैयार हों। हक़ उसी आदमी को मिलता है, जो हक़ की चाहत रखता है। जिसके अन्दर हक़ की भूख-प्यास ही नहीं है, उसके लिए हक़ का आमंत्रण बेकार है। हक़ की आवाज़ उसके कान के परदों से टकराएगी, लेकिन उसके दिल में नहीं उतरेगी; यहाँ तक कि हक़ का उजाला चारों तरफ़ फैल जाएगा, लेकिन उसकी आँखें बन्द होंगी

और वह उसको देख न सकेगा। दुनिया हक़ पर चल रही होगी, लेकिन उसके क़दम बोझिल होंगे और उसपर चलना उसके लिए कठिन होगा। हक़ को पूरी तरह समझने के बाद जो आदमी उसे नकार दे, उसके लिए हक़ को क़बूल करने की राहें बन्द हो जाती हैं। ऐसी दशा में क़ुरआन की हिदायत है कि दावत देनेवाला इस तरह के लोगों को उनके हाल पर छोड़ दे और अपने काम में लगा रहे। उनका इनकार इस बात का प्रमाण नहीं है कि ख़ुदा न करे, वह ग़लती पर है और उसको अपनी राह बदल देनी चाहिए, बल्कि जब वह देख रहा है कि हक़ उसके साथ है और लोग केवल ज़िद और हठधर्मी के कारण उसका विरोध कर रहे हैं, तो उसके इस विश्वास में इज़ाफ़ा होना चाहिए कि उसका दृष्टिकोण सही है और उसके विरोधी कमज़ोर धरातल पर खड़े हैं; उसके पास प्रमाणों और तर्कों की शक्ति है और वे प्रमाणों और तर्कों की दृष्टि से ख़ाली हाथ और कंगाल हैं। यह कितनी बड़ी दौलत है, जो एक दावत देनेवाले को हासिल है और जिससे उसके विरोधी वंचित हैं—

وَمَا يَسْتَوِي الْأَعْمَىٰ وَالْبَصِيرُ ﴿١٩﴾ وَلَا الظُّلُمَاتُ وَلَا النُّورُ ﴿٢٠﴾ وَلَا الظِّلُّ وَلَا الْحَرُورُ ﴿٢١﴾ وَمَا يَسْتَوِي الْأَحْيَاءُ وَلَا الْأَمْوَاتُ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُسْمِعُ مَن يَشَاءُ ۖ وَمَا أَنتَ بِمُسْمِعٍ مَّن فِي الْقُبُورِ ﴿٢٢﴾

"अंधा और आँखोंवाला बराबर नहीं हो सकते, न अंधेरा और उजाला; न छाया और धूप और न ज़िन्दे और मुर्दे बराबर हो सकते हैं। बेशक अल्लाह जिसे चाहता है (अपनी बात) सुनाता है। और तुम उनको नहीं सुना सकते, जो क़ब्रों में पड़े हुए हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-35 फ़ातिर, आयतें-19-22)

दावत की कामयाबी और दावत देनेवाले की कामयाबी में अन्तर

बहुत-से लोग दावत की कामयाबी और दावत देनेवाले की

कामयाबी में अन्तर नहीं करते, जबकि ये दो अलग-अलग चीज़ें हैं। दावत देनेवाले की कामयाबी के लिए दावत की कामयाबी ज़रूरी नहीं है। हो सकता है कि दावत देनेवाला ख़ुदा के दीन की तरफ़ दावत देते-देते ख़त्म हो जाए और समाज का कोई एक आदमी भी उसका साथ न दे और यह भी सम्भव है कि असत्य और झूठ पर आधारित व्यवस्था को समाप्त करके ख़ुदा की ज़मीन पर ख़ुदा की सत्ता क़ायम कर दे। वह हर हाल में कामयाब है। उसकी कामयाबी बिलकुल ही इस बात की मुहताज नहीं है कि हक़ अमली तौर पर हावी हो जाए और असत्य अधीन हो जाए; क्योंकि इसका सम्बन्ध दावत देनेवाले से नहीं है, बल्कि इस बात से है कि जिन लोगों को दावत दी जा रही है, वे उसके साथ क्या मामला करते हैं? अगर वे हक़ को क़बूल करते हैं तो हक़ छा जाएगा और नकारते हैं तो उसे वर्चस्व प्राप्त न होगा। ज़ाहिर है कि एक ऐसी घटना जिसका सम्बन्ध ख़ुद दावत देनेवाले से नहीं है, वह अपनी कामयाबी के लिए उसका मुहताज नहीं हो सकता। दावत देनेवाले के पैग़ाम को अगर सारी दुनिया मिलकर एकमत होकर नकार दे, तो भी उसपर यह आरोप बिलकुल ही न लगेगा कि तुम्हारी बात क्यों नकार दी गई? क्योंकि यह दावत देनेवाले की कोताही नहीं, बल्कि उन लोगों की कोताही है, जिन्हें दावत दी जा रही है और ख़ुदा के दरबार में कोई भी आदमी किसी दूसरे के अपराध में पकड़ा नहीं जाता।

हक़ की दावत जब कभी उठे तो ज़रूरी नहीं कि दुनिया से ज़रूर ही असत्य और झूठ का अन्त हो जाए और हक़ की सत्ता क़ायम हो जाए। यहाँ हक़ को अत्याचार से पीड़ित भी देखा गया है और इसे कामयाबी और जीत भी हासिल हुई है। लेकिन हक़ की तरफ़ बुलानेवाला हमेशा कामयाब रहता है। वह कभी नाकाम नहीं होता। दावत की कामयाबी यह है कि विरोधी शक्तियाँ उसके रास्ते से हट जाएँ और वह दुनिया पर छा जाए। लेकिन हक़ की तरफ़ बुलानेवाले की कामयाबी यह है कि वह हक़ की तरफ़ बुलाने के लिए अपना सब कुछ

लगा दे। दावत देनेवाले की सबसे बड़ी अभिलाषा यह होगी कि हक़ प्रभावी और असत्य पराधीन हो जाए। ख़ुदा के क़ानून के अनुसार सारे मामलों के फ़ैसले हों और दुनिया की झूठी अदालतें ख़त्म हों। वह उस समय तक चैन से नहीं बैठेगा, जब तक ख़ुदा का दीन (जीवन-विधान) सारे दीन-धर्मों पर न छा जाए और हर तरफ़ उसी का शासन-प्रशासन न चलने लगे। दावत देनेवाला अगर इस कोशिश में अपने आपको मिटा दे, तो उसकी कामयाबी में कोई शक नहीं है। चाहे उसकी कोशिश के नतीजे में दावत फैल जाए या न फैले। दावत देनेवाले को अपनी दावत की राह में बहुत-से मरहलों से गुज़रना पड़ता है। वह कभी दूसरों तक दावत पहुँचाता है, कभी विरोधियों के अत्याचार सहता है, कभी हक़ पर चलनेवालों को संगठित करता है और कभी जीत और कामयाबी का राजसिंहसन सजाता है। दावत के इस आख़िरी मरहले के आने से पहले दावत देनेवाला अगर ख़त्म हो जाए, तो निश्चय ही दावत का काम अभी बाक़ी है। लेकिन दावत देनेवाले का काम ख़त्म हो गया। दावत के जिस मरहले में उसने जान दी, वही उसकी मंज़िल है। उसका हर मरहला कामयबी का मरहला है। वह जहाँ भी मारा जाए, कामयाब है—

مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ رِجَالٌ صَدَقُوْا مَا عَاهَدُوا اللّٰهَ عَلَيْهِ ۚ فَمِنْهُمْ مَّنْ قَضٰى نَحْبَهٗ
وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّنْتَظِرُ ۖ وَمَا بَدَّلُوْا تَبْدِيْلًا ﴿٢٣﴾

"ईमानवालों में कितने आदमी ऐसे हैं, जिन्होंने अल्लाह से की हुई प्रतिज्ञा को सच कर दिखाया। उनमें से कुछ लोग अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर चुके और कुछ इन्तिज़ार कर रहे हैं। और वे अपनी उस प्रतिज्ञा से बिलकुल नहीं बदले।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-23)

क़ुरआन कहता है कि हक़ को जीत दिलाना और असत्य को हरा देना तुम्हारे अधिकार में नहीं है, बल्कि अल्लाह के हाथ में है। इसलिए उसे अल्लाह ही के हवाले कर दो। वह जब चाहेगा अपने दीन का

बोलबाला करेगा, लेकिन परिणामों से निराश होकर तुम अपनी जी-तोड़ कोशिश न छोड़ो कि यह तुम्हारी सबसे बड़ी नाकामी होगी—

وَإِنْ مَّا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ الَّذِي نَعِدُهُمْ أَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ فَإِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ وَعَلَيْنَا الْحِسَابُ ۝

"जिस (अज़ाब) का हम उनसे वादा कर रहे हैं उसका कुछ हिस्सा या तो हम तुमको (इसी ज़िन्दगी में) दिखा देंगे या (उसके आने से पहले) तुमको इस दुनिया से उठा लेंगे। (तुम इसकी चिन्ता न करो) तुम्हारा काम तो बस ख़ुदा के दीन को पहुँचाना है और हमारा काम हिसाब लेना है।"

(क़ुरआन, सूरा-13 रअ़द, आयत-40)

दावत का प्रभाव

इनसान फ़ितरी तौर पर इस दुनिया में अपने कर्म के फल देखना चाहता है। परिणामों से विरक्त होकर कोई काम अंजाम देना उसके लिए आसान नहीं है। लेकिन अगर हम परिणामों को राजनैतिक प्रभुत्व और वर्चस्व से अलग करके देखें, तो मालूम होगा कि जो आदमी निष्ठा के साथ ख़ुदा के दीन की दावत लेकर उठे, वह उसको प्रभावी न भी बना सके, तो भी उसकी आवाज़ जहाँ तक पहुँचती है, किसी न किसी रूप में अपने प्रभाव ज़रूर ही छोड़ जाती है।

इतिहास में ऐसे कितने ही लोग गुज़र चुके हैं जिन्होंने सच्चाई, निष्ठा-भाव, अमानत, ख़ुदा की बन्दगी, ख़ुदा का डर, परहेज़गारी और पवित्रता की ओर बुलाया। उनकी इस दावत से कोई राजनैतिक क्रान्ति तो नहीं आई, लेकिन यह सच्चाई है कि उनकी शिक्षाएँ उनके विरोधियों तक के जीवन में दबे पाँव दाख़िल हो गईं और वे अपने बहुत-से मामलों में उन्हीं के बताए हुए मूल्यों के तहत सोचने पर मजबूर हो गए। हक़ीक़त यह है कि जब कोई जानदार दावत उठती है, तो उसके प्रभावों से वातावरण का बचे रहना असम्भव है। कभी-कभी ये प्रभाव ठोस और

भौतिक रूप में हमारे सामने नहीं होते, लेकिन वे इनसान की रगों में ख़ून बनकर इस तरह दौड़ने लगते हैं कि उसे ख़बर तक नहीं होती। वे उसकी भावनाओं और एहसासों में शामिल हो जाते हैं और वह महसूस भी नहीं कर पाता।

दीन के इनकार के विभिन्न कारण[1]

अल्लाह ने अपने दीन को वाज़ेह कर दिया है। जो आदमी भी गम्भीरतापूर्वक इस पर सोच-विचार करेगा, इसको हक़ पाएगा। लेकिन इसके बावजूद यह सच्चाई है कि कभी सारे के सारे इनसानों ने इसे क़बूल नहीं किया है। हर दौर में अनगिनत इनसान इसका इनकार करनेवाले पाए गए और आज भी इसके इनकार करनेवाले बहुत अधिक हैं। क़ुरआन में इसके कारणों पर विस्तार से वर्णन हुआ है। जो आदमी दीन की दावत का काम करना चाहे, उसके लिए इन कारणों का जानना कई पहलुओं से फ़ायदेमन्द है--

(1) इससे मालूम होगा कि खुदा के दीन का इनकार क्यों किया जाता है और उसका इलाज क्या है? हमने कारणों का केवल उसूली विश्लेषण किया है। लेकिन इनका इन्तेबाक मुश्किल नहीं है। उनकी रौशनी में आसानी से यह बात मालूम हो सकती कि कौन आदमी किन कारणों के तहत दीन का इनकार कर रहा है और उन कारणों को कैसे दूर किया जा सकता है?

(2) कभी-कभी किसी नज़रिए का इतना घोर विरोध होता कि उसके माननेवाले भी अपनी दृढ़ता और जमाव खो बैठते हैं। दीन की दावत देनेवाला जब यह देखेगा कि खुदा का दीन मज़बूत दलीलों

---

[1] इनसान जिन कारणों के आधार पर दीन का इनकार करता है उनमें से कुछ तो ख़ुद उसकी अपनी हस्ती में ही मौजूद होते हैं और कुछ उसके माहौल और बाहर की दुनिया में। यहाँ केवल पहले तरह के कारणों का उल्लेख है। दूसरे तरह के कारणों पर हमने अपनी किताब '*इनसान और उसके मसाइल*' में बहस की है।

पर क़ायम है और उसका विरोध केवल भावनाओं और सतही मानसिकता के द्वारा किया जा रहा है, तो उसके ईमान में बढ़ोत्तरी होगी और वह पूरे विश्वास के साथ उसको लोगों के सामने पेश कर सकेगा।

(3) दीन के इनकार के कारण ये बताते हैं कि दीन के सामने आने के बाद इनसान उसको रद्द क्यों करता है? लेकिन इसके माध्यम से, जिस आदमी का दीन पर ईमान है, वह भी अपनी ख़ामियाँ देख सकता है। इसको ध्यान से पढ़ने पर वह समझ सकता है कि दीन को स्वीकार करने के बावजूद वह इससे दूर क्यों है, उसके अन्दर वह क्रान्तिकारी परिवर्तन क्यों नहीं पैदा होता, जो ख़ुदा का दीन पैदा करना चाहता है। वह कौन-सी चीज़ है जो दीन की सच्चाई को मानने के बावजूद उसकी पैरवी से उसको रोक रही है? क्योंकि इसके कारण भी, किसी-न-किसी दरजे में, वही हैं जो दीन के इनकार करने के कारण हैं। इस प्रकार इस विश्लेषण के अन्दर दीन पर ईमान रखनेवालों की शिक्षा का सामान भी है। जो लोग दीन की सेवा के इरादे से उठें, दीन के साथ उनका रवैया उन लोगों के रवैए से बिलकुल अलग होना चाहिए जो दीन के दुश्मन हैं और इसे मिटाना चाहते हैं वरना वे दीन के प्रतिनिधि और दावत देनेवाले तो क्या बनेंगे, दीनदार भी नहीं कहला सकते।

ये इन कारणों के अतिरिक्त लाभ हैं। इनका असली लाभ यह है कि ये सीधे-सीधे ख़ुदा के दीन का इनकार करनेवालों को बताते हैं कि उनका रवैया बिलकुल अनुचित है। इस बात के वैध होने का कोई औचित्य नहीं पेश कराया जा सकता। इस रवैए को अपनाकर वे बहुत ही भयानक परिणाम से दो-चार होनेवाले हैं।

अब हम दीन के इनकार के कुछ महत्त्वपूर्ण कारणों की यहाँ चर्चा करेंगे—

ग़लत विचारों का वर्चस्व

सही सोच इनसान को ख़ुदा के दीन से मिलती है। इसके अलावा जितने भी दृष्टिकोण और विचारधाराएँ हैं, वे सब ग़लत और असत्य हैं। जो आदमी ख़ुदा के दीन को छोड़ दे वह किसी न किसी ग़लत सोच को अपनाने पर मजबूर है। अगर जल्द ही उसे अपनी ग़लती का एहसास न हो, तो वह उसको ग़लत मानने से इनकार कर देता है और उसके पक्ष में तर्क देने लगता है। इसका कारण पूरी तरह मनोवैज्ञानिक है, वह यह कि किसी विचार पर लम्बे समय तक क़ायम रहने से इनसान को उससे प्रेम हो जाता है और उसके बारे में उसके अन्दर एक तरह का विशेष लगाव पैदा हो जाता है। यह विशेष लगाव किसी सही सोच से हो तो निश्चय ही प्रशंसनीय है, क्योंकि इससे ख़ुद उसको और दूसरों को फ़ायदा पहुँचता है। लेकिन अगर यही विशेष लगाव किसी ग़लत सोच से पैदा हो जाए, तो उसकी बिलकुल भी प्रशंसा नहीं की जा सकती। यह उसके लिए भी और उस समाज के लिए भी, जिससे वह सम्बन्ध रखता है, घोर विनाशकारी है। किसी ग़लत सोच को अपना लेने के बाद सही सोच की तरफ़ वही आदमी पलट सकता है, जो मज़बूत इच्छा-शक्ति का मालिक हो और जिसमें इतनी हिम्मत हो कि वह हर समय अपने रवैए का मूल्यांकन कर सके। लेकिन ऐसे लोग कम होते हैं। आम तौर पर जब किसी आदमी पर कोई ग़लत सोच छा जाती है, तो ख़ुदा के दीन के बारे में उसकी मानसिकता बदल जाती है। वह दीन को समझने की कोशिश नहीं करता, बल्कि उसकी पूरी शक्ति दीन की आलोचना और आक्षेप में ख़र्च होती है। ख़ुदा के दीन को रद्द करने के लिए उसे किसी तर्क की ज़रूरत नहीं होती है, बल्कि कमज़ोर-सा बहाना भी काफ़ी होता है। क़ुरआन के शब्दों में, उसपर शैतान की पकड़ मज़बूत हो जाती है। शैतान उसको बड़ी तेज़ी से ग़लत रास्ते पर ले चलता है और साथ ही इस धोखे में रखता है कि वह सीधे रास्ते पर है और समुचित प्रमाणों और तर्कों के आधार पर उसने ख़ुदा

के दीन को रद्द किया है—

وَمَنْ يَّعْشُ عَنْ ذِكْرِ الرَّحْمٰنِ نُقَيِّضْ لَهٗ شَيْطٰنًا فَهُوَ لَهٗ قَرِيْنٌ ۝ وَاِنَّهُمْ لَيَصُدُّوْنَهُمْ عَنِ السَّبِيْلِ وَيَحْسَبُوْنَ اَنَّهُمْ مُّهْتَدُوْنَ ۝

"जो आदमी रहमान की याद से फिरे, हम उसपर एक शैतान मुक़र्रर कर देते हैं और वह उसका साथी बन जाता है। ये शैतान उनको सीधे रास्ते से रोकते हैं। लेकिन वे ये समझते हैं कि वे सीधे रास्ते पर क़ायम हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयतें-36,37)

अल्लाह ने अपना दीन उतारने से पहले सारी इस्लाम-विरोधी विचारधाराओं को मिटा नहीं दिया, बल्कि उनको बाक़ी रखा और इस बात के अवसर दिए कि उसके दीन के साथ वे भी अपना काम करते रहें; क्योंकि इसी में इनसान की परीक्षा है और इसी से मालूम होता है कि किस आदमी को ख़ुदा का दीन प्यारा है और कौन उन विचारधाराओं को अपनाता है, जो उससे टकरा रही हैं। इसलिए जब भी ख़ुदा का दीन इनसानों के सामने पेश हुआ, ग़लत विचारधाराओं ने पूरी शक्ति से उसका विरोध किया और उसको मिटाने और उस पर छा जाने का हर सम्भव प्रयास किया। यही बात क़ुरआन की इस आयत में कही गई है—

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيٰطِيْنَ الْاِنْسِ وَالْجِنِّ يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُوْرًا ۚ وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ مَا فَعَلُوْهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُوْنَ ۝ وَلِتَصْغٰٓى اِلَيْهِ اَفْـِٕدَةُ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ وَلِيَرْضَوْهُ وَلِيَقْتَرِفُوْا مَا هُمْ مُّقْتَرِفُوْنَ ۝

"और इस तरह हमने इनसानों और जिन्नों में के शैतानों को हर नबी का दुश्मन बना दिया है। वे धोखा देने के

लिए एक-दूसरे के दिल में चिकनी-चुपड़ी बातें डालते रहते हैं। अगर अल्लाह चाहता तो वे ऐसा न कर पाते। तो तुम उनको और उनकी झूठी बकवासों को (अल्लाह पर) छोड़ दो। (ये सब कुछ हम उन्हें इसलिए करने दे रहे हैं) ताकि जो लोग परलोक पर ईमान नहीं रखते उनके दिल उसकी तरफ़ झुकें और वे उससे राज़ी हो जाएँ और जिन बुराइयों को वे करना चाहते हैं, उनको कर लें।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयतें-112,113)

ख़ुदा का दीन हमेशा एक रहा है। लेकिन उसका मुक़ाबला हर ज़माने में तरह-तरह की विचारधाराएँ करती रही हैं। जो आदमी भी संजीदगी से उन विचारधाराओं की तुलना ख़ुदा के दीन से करेगा, उसे मालूम होगा कि इनमें से प्रत्येक विचारधारा इनसानी सोच की ख़ामियों की स्वीकृति है और नजात (मोक्ष) केवल ख़ुदा के दीन में है। ख़ुदा ने इनसान को सोचने-समझने की सलाहियत दी है। वह सही-ग़लत में अन्तर कर सकता है। लेकिन ग़लत विचारधाराएँ उसके दिल-दिमाग़ पर इस तरह छा जाती हैं कि वह उनसे हटकर सोचने के लिए तैयार ही नहीं होता। क़ुरआन में है—

لَهُمْ قُلُوْبٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ بِهَا وَلَهُمْ اَعْيُنٌ لَّا يُبْصِرُوْنَ بِهَا وَلَهُمْ اٰذَانٌ لَّا
يَسْمَعُوْنَ بِهَا اُولٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْغٰفِلُوْنَ

"उनके पास दिल हैं मगर वे उनसे नहीं सोचते और उनके पास आँखें हैं मगर वे उनसे नहीं देखते और उनके पास कान हैं मगर वे उनसे नहीं सुनते। वे जानवरों की तरह हैं, बल्कि उनसे भी गए गुज़रे हैं। यही लोग हैं जो ग़फ़लत में पड़े हुए हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-179)

जो आदमी झूठी और ग़लत विचारधाराओं पर मुग्ध हो जाए, उसके

सामने ख़ुदा के दीन को अगर उसका पैग़म्बर भी पेश करे तो वह उसको आसानी से नकार सकता है। सम्भव है कि उन मज़बूत तर्कों और प्रमाणों के कारण उसकी ज़बान बन्द हो जाए, जो ख़ुदा का पैग़म्बर ख़ुदा के दीन के पक्ष में प्रस्तुत करता है। लेकिन उसके दिल के दरवाज़े उसके स्वागत के लिए खुल नहीं सकते—

وَقَالُوا قُلُوبُنَا فِي أَكِنَّةٍ مِّمَّا تَدْعُونَا إِلَيْهِ وَفِي آذَانِنَا وَقْرٌ وَمِن بَيْنِنَا وَبَيْنِكَ
حِجَابٌ فَاعْمَلْ إِنَّنَا عَامِلُونَ ۝

"वे कहते हैं कि जिस बात की तरफ़ तुम हमें बुला रहे हो, हमारे दिल उससे परदे में हैं और हमारे कानों में बहरापन है और हमारे और तुम्हारे बीच एक परदा आ पड़ा है। तो तुम अपनी जगह काम करो, हम भी अपनी जगह काम कर रहे हैं।"
(क़ुरआन, सूरा-41 हा-मीम अस-सजदा, आयत-5)

बुरे कर्म से प्रेम

दीन को क़बूल करने की राह में एक रुकावट इनसान का बुरा कर्म भी है। इनसान अगर अपने जीवन में किसी ग़लत विचारधारा को अपना ले, तो वह सही दिशा से फिर जाता है और ग़लत दिशा पर चल पड़ता है और जब सही सोच को अपनाता है तो उसके जीवन का सारा निज़ाम ठीक हो जाता है। किसी सोच के गुण या अवगुण को पूरी तरह ज्ञान और बुद्धि के आधार पर मालूम करना निश्चय ही कठिन है; लेकिन उसके नतीजों को देखकर उसके सही या ग़लत होने का फ़ैसला करना उसके मुक़ाबले में आसान है। जिस आदमी को किसी ग़लत सोच के नतीजे बेचैन कर दें, उसपर दीन की हक़ीक़त आसानी से खुल जाती है। लेकिन जो आदमी उन नतीजों से संतुष्ट हो दीन की तरफ़ उसका ध्यान देना बहुत कठिन है। दुनिया के अधिकतर लोग इसी कारण ख़ुदा के दीन को छोड़े हुए हैं। उन्हें इसका एहसास ही नहीं है

कि ग़लत सोच और विचारधाराओं ने उनकी ज़िन्दगी को कितना अधिक फ़ितना-फ़साद से भर दिया है। सही सोच के न होने से उनके आचरण तबाह हो गए हैं। उनके समाज में बिगाड़ आ गया है। उनकी अर्थनीति और राजनीति बाधित हो गई है। लेकिन इसके बावुजूद उनमें अपने सुधार के लिए कोई बेचैनी और तड़प नहीं है। क़ुरआन के शब्दों में, वे बुद्धि-विवेक तो रखते हैं और सही-ग़लत में भेद कर सकते हैं। लेकिन शैतान ने उनके ग़लत आचरण को उनकी नज़र में बहुत ही लुभावना बना दिया है और वे इस धोखे पड़े हुए हैं कि बहुत अच्छे काम कर रहे हैं—

وَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطٰنُ اَعْمَالَهُمْ فَصَدَّهُمْ عَنِ السَّبِيْلِ وَكَانُوْا مُسْتَبْصِرِيْنَ ۝

"और शैतान ने उनके कर्मों को उनके लिए ख़ुशनुमा बना दिया और उन्हें सीधे रास्ते से रोक दिया; हालाँकि वे सूझ-बूझवाले थे।" (क़ुरआन, सूरा-29 अनकबूत, आयत-38)

इनसान के लिए नजात (मोक्ष) का रास्ता यह है कि ख़ुदा का दीन जिस आस्था की तरफ़ बुलाता है, नैतिक आचरण का जो नियम पेश करता है, संस्कृति और सामाजिक रहन-सहन के जो तरीक़े सिखाता है, अर्थनीति और राजनीति के जो सिद्धान्त देता है, न्याय और इनसाफ़ के जो क़ानून मुहैया करता है, उनको निष्ठा और ईमानदारी के साथ क़बूल कर ले और अपनी ज़िन्दगी को उनका मातहत बना दे, लेकिन जो आदमी अपनी नाकाम ज़िन्दगी ही को कामयाब ज़िन्दगी समझ बैठे वह ख़ुद ही तबाह होना चाहता है। उसे तबाही से कौन बचा सकता है—

اَفَمَنْ زُيِّنَ لَهٗ سُوْٓءُ عَمَلِهٖ فَرَاٰهُ حَسَنًا ؕ فَاِنَّ اللّٰهَ يُضِلُّ مَنْ يَّشَآءُ وَيَهْدِيْ مَنْ يَّشَآءُ ۖ فَلَا تَذْهَبْ نَفْسُكَ عَلَيْهِمْ حَسَرٰتٍ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِمَا يَصْنَعُوْنَ ۝

"क्या वह आदमी जिसके लिए उसका बुरा कर्म सुहाना बना

दिया गया है और वह उसको अच्छा समझता है (उस आदमी की तरह हो सकता है जो अच्छे कर्म कर रहा है?) हक़ीक़त यह है कि अल्लाह जिसे चाहता है गुमराह करता है और जिसे चाहता है सीधा रास्ता दिखाता है। इसलिए उनपर ग़म और अफ़सोस करने में ही तुम्हारी जान न जाती रहे। वे जो कुछ कर रहे हैं, निश्चय ही अल्लाह उसे जानता है।"

(क़ुरआन, सूरा-35 फ़ातिर, आयत-8)

अधिकतर लोगों का अनुकरण

ख़ुदा के दीन को क़बूल करना उन लोगों के लिए भी आसान नहीं है जो सत्य और असत्य को अपनी आँखों से नहीं देखते, बल्कि दुनिया की आँखों से देखते हैं; जिनके हर क़दम को दुनिया का रवैया तय करता है और दुनिया का चलन अगर बदल जाए तो उनका रवैया भी बदल जाता है। ये लोग उनकी किसी विचारधारा को उसके प्रमाणों के कारण न स्वीकार करते हैं, न अस्वीकार करते हैं; बल्कि इनका समर्थन और विरोध दुनिया के रुझान के आधार पर होता है। उनके नज़दीक दुनिया जिस चीज़ को स्वीकार कर ले वह हक़ है और जिसे अस्वीकार करे वह असत्य है। जब ख़ुदा का दीन समकालीन विचारधाराओं को हर मोर्चे पर चैलेंज करता है और अपनी सत्यता इस प्रकार सिद्ध कर देता है कि ज्ञान और बुद्धि के मैदान में उसका विरोध असम्भव हो जाता है, तो वे हैरत के साथ अपने चारों तरफ़ देखते हैं कि दुनिया उसको स्वीकार क्यों नहीं करती? मगर खुद उनमें इतना साहस नहीं होता कि दुनिया के रवैए के विपरीत अपनें बिगड़े हुए अक़ीदे को छोड़कर ख़ुदा के दीन को अपना लें और उसके आज्ञाकारी और अनुसरण करनेवाले बन जाएँ। वे यह सोचकर अपने मन को संतुष्ट करने की कोशिश करते हैं कि यूं तो ख़ुदा का दीन देखने में सच्चा है, लेकिन दुनिया जब उसको स्वीकार नहीं कर रही है, तो निश्चय ही उसमें कोई ख़राबी होगी। यह कैसे सम्भव है कि सारी इनसानी आबादी ग़लत रास्ते पर चल रही हो

और सत्य-मार्ग केवल कुछ लोगों पर खुल जाए? आप ख़ुद सोच सकते हैं कि जब इनसान का मन पतन की इस हद को पहुँच जाए कि वह पवित्र वस्तु की तुलना में गन्दगी को इसलिए प्राथमिकता दे कि वह बड़े पैमाने में है; तो उससे किसी ऊँची सोच की उम्मीद कैसे की जा सकती है? ख़ुदा का दीन उन लोगों को मिलता है जो अच्छी रुचि और सही सोच रखते हों और जो दुनिया के रवैए के आधार पर नहीं, बल्कि उसकी ख़ूबियों के कारण उसे स्वीकार करने के लिए तैयार हों। क़ुरआन कहता है कि दुनिया के अधिकतर लोग अपने विचारों के लिए कोई ज्ञानपरक आधार नहीं रखते, बल्कि केवल अंधविश्वास और अटकल का अनुसरण करते हैं। इसलिए यह बात सही न होगी कि दुनिया के अधिकतर लोगों को देखकर असत्य और झूठ को अपना लिया जाए, बल्कि उचित रास्ता यह है कि ज़्यादातर लोगों के तरीक़े को छोड़कर हक़ की पैरवी की जाए, नहीं तो जिस तरह इनसानों की ज़्यादातर आबादी राह से भटकी हुई है, उसी तरह तुम भी भटकते रहोगे और गन्तव्य (मंज़िल) तुमसे दूर होता चला जाएगा—

وَاِنْ تُطِعْ اَكْثَرَ مَنْ فِي الْاَرْضِ يُضِلُّوْكَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ اِنْ يَّتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُوْنَ ۝

"और अगर तुम उन लोगों की अधिकतर संख्या का अनुकरण करोगे, जो ज़मीन पर पाए जाते हैं, तो वे तुमको ख़ुदा के रास्ते से भटका देंगे। वे अटकल पर चलते हैं और केवल अटकलपच्चू से काम लेते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-116)

गुमराह लीडरों की ग़ुलामी

सत्य और असत्य के बीच फ़ैसला करना हर आदमी का अपना काम है। लेकिन दुनिया के अधिकतर लोग यह काम ख़ुद नहीं करते, बल्कि इसे अपने रहनुमाओं और लीडरों के हवाले कर देते हैं। वे अपने रहनुमाओं को चाहे ख़ुदा न कहें, लेकिन उनका कोई भी हुक्म उनके

लिए ख़ुदा के हुक्म से कम नहीं है। उनके नज़दीक हक़ वह है जिसे उनके लीडर की ज़बान हक़ कह दे और जिस विचार के असत्य होने का फ़ैसला उनका रहनुमा और लीडर कर दे, वह निश्चय ही असत्य है। जिस रास्ते पर उनके लीडर चलें, वही उनका रास्ता होता है। किसी विपरीत दिशा में क़दम उठाना उनके लिए असम्भव होता है। वे हर मामले में अपने लीडरों की अक़्ल से सोचते हैं और उनके लीडर उनको जानवरों की तरह जिधर चाहते हैं, हाँकते फिरते हैं।

अल्लाह ने मुक्ति का रास्ता अपने पैग़म्बरों के ज़रिए बता दिया है। अब इनसान के सामने दो ही रास्ते हैं। एक यह कि सीधे-सीधे पैग़म्बरों की शिक्षाओं से जानकारी हासिल करे और उनकी रौशनी में ख़ुद भी ज़िन्दगी गुज़ारे और दूसरों का भी मार्गदर्शन करे। दूसरा रास्ता यह कि उन लोगों के पीछे चले, जो उसे पैग़म्बरों का रास्ता दिखा सकते हैं। निस्सन्देह ऐसे लोग कम होते हैं, जो जीवन की विभिन्न समस्याओं में नबी की शिक्षा से सीधे-सीधे लाभ उठाएँ और दुनिया को सही रास्ता दिखाएँ। लेकिन ख़ुदा ने हर इनसान को इतनी सलाहियत ज़रूर दी है कि वह पैग़म्बरों के रास्ते पर ले चलनेवालों और उन लोगों के बीच अन्तर कर सके, जो उस रास्ते से उसको फेरना चाहते हैं। लेकिन इसके बावुजूद इनसान अगर अपनी बागडोर उन्हीं लोगों के हाथ में दे दे, जो पैग़म्बरों के रास्ते से ख़ुद भी भटके हुए हैं और दूसरों को भी भटका रहे हैं, तो इसका मतलब यह है कि उसने ख़ुद ही अपने लिए मोक्ष का दरवाज़ा बन्द कर लिया है। उसके सामने वे भयानक परिणाम आकर रहेंगे, जिनको पैग़म्बरों के विरोध के बाद इतिहास के हर दौर में लोग देखते रहे हैं। अगर किसी के दिल पर अपने लीडर का इस तरह क़ब्ज़ा हो गया है कि वह उसके पीछे जहन्नम में भी जाने को तैयार है, तो दुनिया की कोई ताक़त उसे जहन्नम से निकाल कर जन्नत में नहीं पहुँचा सकती। इनसान केवल ख़ुदा के क़ानून का पाबन्द है। लेकिन उसका कितना बड़ा दुर्भाग्य है कि वह अपने ही जैसे इनसानों के

आदेशों का इस तरह पालन करता है, जैसे ख़ुदा के क़ानून का उसे अनुकरण करना चाहिए। जैसा कि क़ुरआन में कहा गया है—

اِتَّخَذُوْٓا اَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَالْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ ۚ وَمَآ اُمِرُوْٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوْٓا اِلٰهًا وَّاحِدًا ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ سُبْحٰنَهٗ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝

"उन्होंने ख़ुदा को छोड़कर अपने आलिमों को, अपने दरवेशों (संन्यासियों) को और मरयम के बेटे ईसा को रब बना लिया है। हालाँकि उनको यही आदेश दिया गया था कि वे केवल एक ख़ुदा की इबादत करें। उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है। पाक है वह उस शिर्क से जो वे करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-31)

अतीत पर अक़ीदा

बहुत-से लोग अतीत के पुजारी होते हैं। वे किसी ऐसी विचारधारा को स्वीकार नहीं करते, जो उनके अतीत को ग़लत ठहराए और उनके पूर्वजों की आलोचना करे। ख़ुदा की तरफ़ से आनेवाले हक़ को छोड़ना उनके लिए आसान होता है। लेकिन अतीत की ग़लत रस्म-रिवाजों को अपने जीवन से निकाल फेंकना आसान नहीं होता। उनको अतीत के गुणों ही से नहीं, दोषों और कमियों से भी प्यार होता है। वे अतीत से शिक्षा ग्रहण नहीं करते, बल्कि उसकी अच्छाइयों और बुरायों दोनों ही को गर्व के साथ दोहराते हैं। उनको अपने पुरखों में बुद्धि-विवेक, ईमानदारी, सतर्कता यानी प्रत्येक गुण नज़र आता है और उनसे किसी भी ग़लती को वे सम्भावना से परे समझते हैं। उनके नज़दीक अतीत में जो कुछ हुआ वह हक़ है और जिस चीज़ को 'अतीत का प्रमाण' प्राप्त नहीं है, वह असत्य है। ग़लत से ग़लत दर्शन भी उनके लिए स्वीकार्य होता है। अगर अतीत ने उसको स्वीकृति प्रदान की और जीवन की अच्छी से अच्छी विचाधारा को भी वे स्वीकार नहीं कर सकते, अगर

पथभ्रष्ट पूर्वजों ने उसको नकार दिया है। क़ुरआन अतीत की इस आस्था की कड़ी आलोचना करता है। उसके नज़दीक अतीत निश्चय सीने से लगाए रखने के योग्य है, जबकि हक़ की रौशनी उसमें मौजूद हो, लेकिन अतीत अगर सत्य-रहित है तो गर्व का कारण नहीं, शर्म का कारण है। अगर कोई आदमी इस कारण हक़ को नकारता है कि उसके बाप-दादों ने उसे नकार दिया था, तो इसका मतलब यह है कि वह उनके परिणाम से शिक्षा ग्रहण नहीं करना चाहता, बल्कि उन्हीं की तरह तबाह होना चाहता है। ख़ुदा का दीन बड़े त्यागों और बलिदानों के बाद मिलता है। जो आदमी इसके लिए अतीत की घिसी-पिटी परम्पराओं को भी न छोड़ सके वह इससे पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा सकता। इनसान को अपने अतीत से प्रेम होने के बजाय ख़ुदा के दीन से प्रेम होना चाहिए। लेकिन यह बड़े दुख की बात है कि वह अतीत के प्रेम में ख़ुदा के दीन को भूल जाता है—

وَكَذٰلِكَ مَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ فِيْ قَرْيَةٍ مِّنْ نَّذِيْرٍ اِلَّا قَالَ مُتْرَفُوْهَآ ۙ اِنَّا وَجَدْنَآ
اٰبَآءَنَا عَلٰٓى اُمَّةٍ وَّاِنَّا عَلٰٓى اٰثٰرِهِمْ مُّقْتَدُوْنَ ۝٢٣ قٰلَ اَوَلَوْ جِئْتُكُمْ بِاَهْدٰى مِمَّا
وَجَدْتُّمْ عَلَيْهِ اٰبَآءَكُمْ ۗ قَالُوْٓا اِنَّا بِمَآ اُرْسِلْتُمْ بِهٖ كٰفِرُوْنَ ۝٢٤ فَانْتَقَمْنَا مِنْهُمْ
فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ۝٢٥

"और इसी तरह (ऐ पैग़म्बर!) हमने तुमसे पहले जिस बस्ती में भी किसी डरानेवाले को भेजा, तो उसके ख़ुशहाल लोगों ने यही कहा कि हमने अपने बाप-दादा को एक तरीक़े पर पाया है और हम उन्हीं के नक़्शे-क़दम का अनुकरण कर रहे हैं। पैग़म्बर ने उनसे कहा कि अगर मैं उससे अधिक सीधा तरीक़ा तुम्हें बताऊँ, जिसपर तुमने अपने बाप-दादा को पाया है (तो क्या उस समय भी तुम अपने तरीक़े ही पर जमे रहोगे)? उन्होंने जवाब दिया कि जिस दीन के साथ तुम्हें भेजा गया है, हम उसके इनकारी हैं। फिर हमने उनसे बदला लिया। तो देखो कि

झुठलानेवालों का परिणाम क्या हुआ?"

(क़ुरआन, सूरा-43, ज़ुख़रुफ़, आयतें-23-25)

दुनिया का मोह

इनसान दुनिया की ज़िन्दगी में खोया हुआ है। लेकिन ख़ुदा का दीन चाहता है कि परलोक की सोच उसपर छा जाए और वह दुनिया की कामयाबी और नाकामी से निश्चिन्त होकर केवल परलोक के लिए काम करे; क्योंकि दुनिया इस लायक़ नहीं है कि इनसान की ज़िन्दगी का मक़सद बन सके—

إِنَّمَا هَٰذِهِ الْحَيَاةُ الدُّنْيَا مَتَاعٌ وَإِنَّ الْآخِرَةَ هِيَ دَارُ الْقَرَارِ ۝

"यह दुनिया की ज़िन्दगी तो केवल (कुछ दिनों का) साज़ो-सामान है और निश्चय ही हमेशा रहने का घर तो परलोक है।"

(क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयत-39)

दुनिया की ज़िन्दगी एक धोखा है, लेकिन इनसान यह समझता है कि यही सबसे बड़ा और आख़िरी हक़ है। इससे ऊँचे किसी हक़ का वुजूद नहीं है कि उसे वह तलाश करे। दुनिया उसकी ज़िन्दगी पर छा गई है और उसकी सारी भाग-दौड़ इसी के लिए है। क़ुरआन में कहा गया है—

يَعْلَمُونَ ظَاهِرًا مِّنَ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْآخِرَةِ هُمْ غَافِلُونَ ۝

"ये लोग दुनिया की ज़िन्दगी के ज़ाहिरी पहलू को जानते हैं और परलोक से बिलकुल बेख़बर हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-7)

दुनिया की बहुत-सी सच्चाइयों का सम्बन्ध परलोक की दुनिया से है। उन सच्चाइयों को इनसान उसी समय समझ सकता है, जबकि वह इस भौतिक संसार से हटकर सोचने के लिए तैयार हो। लेकिन कम ही

इनसान इसके लिए तैयार होते हैं।

बहुत-से लोग परलोक की सम्भावना ही को नहीं मानते और बहुत-से उसके बारे में सन्देह में पड़े हुए हैं। उनको यक़ीन नहीं है कि हक़ीक़त में क़ियामत आएगी। हालाँकि परलोक यूँ तो आज हमारी निगाहों से ओझल है; लेकिन वह समय जल्द आनेवाला है, जबकि वह बिलकुल बेपरदा होकर हमारे सामने आ जाएगा और इनसान परलोक के इनकार के परिणामों को देखकर काँप उठेगा। लेकिन उस समय की निराशा और शर्मिन्दगी उसके कुछ काम न आएगी; क्योंकि काम करने की मुहलत ख़त्म हो चुकी होगी और अपने कर्मों का फल सामने होगा—

فَيَوْمَئِذٍ لَّا يَنفَعُ الَّذِينَ ظَلَمُوا مَعْذِرَتُهُمْ وَلَا هُمْ يُسْتَعْتَبُونَ ۝٥٧

"और उस दिन जुर्म करनेवालों को न तो उनका बहाना बनाना कुछ काम देगा और न उनको ख़ुदा को ख़ुश करने का मौक़ा ही दिया जाएगा।" (क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-57)

सांसारिक संसाधनों की भरमार

सांसारिक संसाधनों की अधिकता और सुख-चैन से भरपूर ज़िन्दगी भी कभी-कभी हक़ को क़बूल करने के रास्ते में रुकावट बन जाती है। सुख-सम्पन्नता आदमी के मन से अल्लाह के हुक्म को मानने का जज़्बा को हर लेती और उसे ख़ुदा का बाग़ी बना देती है। सुख और सम्पन्नता में इनसान ख़ुदा की हिदायत को इस तरह नकार देता है जैसे ख़ुदा उसका हुक्मराँ और वह उसकी प्रजा नहीं है। इस बग़ावत पर अल्लाह बार-बार उसको सचेत करता है, लेकिन वह अपनी नाफ़रमानी से बाज़ नहीं आता; यहाँ तक कि अल्लाह का क़ानून गुनाह की सज़ा में उसको पीसकर रख देता है—

وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا ۝ وَاِذَآ اَرَدْنَآ اَنْ نُّهْلِكَ قَرْيَةً اَمَرْنَا مُتْرَفِيْهَا فَفَسَقُوْا فِيْهَا فَحَقَّ عَلَيْهَا الْقَوْلُ فَدَمَّرْنٰهَا تَدْمِيْرًا ۝

"हम उस समय तक लोगों को अज़ाब नहीं दिया करते, जब तक कि उनके बीच एक पैग़म्बर न भेज दें। जब हम किसी बस्ती को हलाक करना चाहते हैं, तो उसके ख़ुशहाल लोगों को (अपनी फ़रमाँबरदारी का) हुक्म देते हैं। लेकिन इसके बावजूद वे इसमें नाफ़रमानी करते हैं। तब उस बस्ती पर अज़ाब का फ़ैसला हो जाता है और हम उसे तबाह करके रख देते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-15,16)

ख़ुशहाल इनसान कभी इस धोखे में होता है कि सच्चाई उसके साथ है। इससे आगे बढ़कर कभी-कभार वह इस धोखे में पड़ जाता है कि वह हक़ का प्रतिनिधि भी है। उसका हुक्म ख़ुदा का हुक्म और उसका विरोध ख़ुदा का विरोध है। वह किसी निर्धन और निर्बल आदमी को इस लायक़ नहीं समझता कि उसकी ग़लतियों पर टीका-टिप्पणी करे और उसे सीधा रास्ता दिखाए। वह जब किसी कम हैसियत इनसान के मुँह से हक़ का पैग़ाम सुनता है, तो उसे नीच समझकर ठुकरा देता है। वह इस तर्क से अपने आपको और दूसरों को संतुष्ट करने की कोशिश करता है कि जब मुझे दुनिया का सुख-चैन प्राप्त है, तो यह मेरे हक़ पर होने का प्रमाण है। मेरा रास्ता अगर ग़लत होता, तो मुझपर ख़ुदा की इस तरह मेहरबानी न होती और मैं उसके इनामों और उपहारों से नवाज़ा न जाता। इसके विपरीत जो आदमी मेरे रवैए को ग़लत ठहरा रहा है, उसको सुख और चैन की ज़िन्दगी तक नसीब नहीं है। अगर उसका रास्ता ख़ुदा का रास्ता होता और उसकी कार्य-शैली ख़ुदा के नज़दीक पसन्दीदा होती, तो वह सांसारिक सुख-साधनों से वंचित न होता। यह इस बात का प्रमाण है कि वह अपने इस दावे में झूठा है और ख़ुदा उसके साथ नहीं है। इसी लिए ऐसे आदमी के पीछे चलना

अपने आपको तबाह और बरबाद करना है। हज़रत नूह (अलैहि॰) की क़ौम के खुशहाल और खाते-पीते लोगों की यही मानसिकता थी। क़ुरआन मजीद ने उसका उल्लेख इन शब्दों में किया है—

وَقَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِلِقَآءِ الْاٰخِرَةِ وَاَتْرَفْنٰهُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۙ مَا هٰذَآ اِلَّا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ ۙ يَاْكُلُ مِمَّا تَاْكُلُوْنَ مِنْهُ وَيَشْرَبُ مِمَّا تَشْرَبُوْنَ ۝ وَلَئِنْ اَطَعْتُمْ بَشَرًا مِّثْلَكُمْ ۙ اِنَّكُمْ اِذًا لَّخٰسِرُوْنَ ۝

"और उसकी क़ौम के सरदार, जिन्होंने हक़ का इनकार किया और परलोक की पेशी को झुठलाया और जिनको हमने दुनिया की ज़िन्दगी में खुशहाल कर रखा था, कहने लगे : यह तो तुम्हीं जैसा आदमी है। तुम जो कुछ खाते हो, वही वह भी खाता है और तुम जो कुछ पीते हो, वही वह भी पीता है। अगर तुमने अपने ही जैसे किसी इनसान का अनुसरण किया, तो तुम निश्चय ही घाटे में रहोगे।"

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयतें-33,34)

हर क़ौम के और हर दौर के लीडरों में यह मानसिकता काम करती रही है। मुहम्मद *(सल्ल॰)* के बारे में आपके विरोधियों के सोचने का अन्दाज़ यही था—

وَقَالُوْا لَوْلَا نُزِّلَ هٰذَا الْقُرْاٰنُ عَلٰى رَجُلٍ مِّنَ الْقَرْيَتَيْنِ عَظِيْمٍ ۝

"वे कहते हैं कि यह क़ुरआन दोनों शहरों (मक्का और ताइफ़) के किसी बड़े आदमी पर क्यों नहीं उतारा गया?"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयत-31)

दुनिया में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो इस तरह की कुतर्क से भरी बातों पर आसानी से ईमान ले आते हैं। वह हक़ का, हक़ के रूप में अध्ययन नहीं करते, बल्कि यह देखते हैं कि उसे आर्थिक दृष्टि से किस स्तर के इनसान ने पेश किया है और फिर इसी आधार पर उसके

साथ उनका रवैया निर्धारित होता है। वे हक़ को आसानी से रद्द कर सकते हैं, अगर कोई ग़रीब और बेसहारा उसे पेश करे; लेकिन खुले हुए असत्य को नकार नहीं सकते, बल्कि उसकी तरफ़ लपक पड़ेंगे, अगर क़ौम के सरदार उसकी तरफ़ बुलाएँ। उनकी बुद्धि में यह बात नहीं आती कि जो आदमी सुख-साधनों से वंचित और दुनिया के साज़ो-सामान से ख़ाली है, वह तो हक़ का अमीन हो और राजे-महाराजे, बड़े-बड़े शासक-प्रशासक और धनी लोग उससे अनजान हों, लेकिन स्पष्ट है कि इस नादानी और सोचने के ग़लत ढंग के आधार पर वे हक़ के इनकार के परिणाम से बच नहीं सकते। इसी लिए इतिहास गवाह है कि वे कभी सुरक्षित नहीं रहे। जैसा कि क़ुरआन में कहा गया है—

وَنَادٰى فِرْعَوْنُ فِىْ قَوْمِهٖ قَالَ يٰقَوْمِ اَلَيْسَ لِىْ مُلْكُ مِصْرَ وَهٰذِهِ الْاَنْهٰرُ تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِىْ ۚ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ ﴿٥١﴾ اَمْ اَنَا خَيْرٌ مِّنْ هٰذَا الَّذِىْ هُوَ مَهِيْنٌ ۙ وَّلَا يَكَادُ يُبِيْنُ ﴿٥٢﴾ فَلَوْلَاۤ اُلْقِىَ عَلَيْهِ اَسْوِرَةٌ مِّنْ ذَهَبٍ اَوْ جَآءَ مَعَهُ الْمَلٰٓئِكَةُ مُقْتَرِنِيْنَ ﴿٥٣﴾ فَاسْتَخَفَّ قَوْمَهٗ فَاَطَاعُوْهُ ۚ اِنَّهُمْ كَانُوْا قَوْمًا فٰسِقِيْنَ ﴿٥٤﴾ فَلَمَّاۤ اٰسَفُوْنَا انْتَقَمْنَا مِنْهُمْ فَاَغْرَقْنٰهُمْ اَجْمَعِيْنَ ﴿٥٥﴾ فَجَعَلْنٰهُمْ سَلَفًا وَّمَثَلًا لِّلْاٰخِرِيْنَ ﴿٥٦﴾

"और फ़िरऔन ने अपनी क़ौम में पुकारकर कहा : ऐ मेरी क़ौम! क्या मिस्र देश मेरा नहीं है और ये नहरें (जो) मेरे नीचे बह रही हैं, क्या तुम (इन सब चीज़ों को) नहीं देखते हो, बल्कि मैं (तो निश्चय ही) बेहतर हूँ उस आदमी से जो कि कंगाल और गिरा-पड़ा है और साफ़-साफ़ बात तक नहीं कर सकता; तो क्यों नहीं उतारे गए उसके लिए सोने के कंगन या आए उसके साथ फ़रिश्ते परे बाँधकर? इस तरह उसने अपनी क़ौम को नीच समझा और उन्हें बेवक़ूफ़ बनाया और वे उसकी

बात मान गए। निश्चय ही वे नाफ़रमान (अवज्ञाकारी) लोग थे ही। जब उन्होंने हमें ग़ुस्सा दिलाया तो हमने उनसे बदला लिया और उन सबको डुबो दिया और हमने उन्हे अग्रणामी और बादवालों के लिए शिक्षाप्रद नमूना बनाकर रख दिया।"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयतें-51-56)

सत्ता और शासन

इतिहास गवाह है कि ख़ुदा के दीन को सत्ताधारी लोगों ने आम तौर पर नकारा है। जब कभी ख़ुदा का दीन उनके सामने आया, उसे उन्होंने अपनी सत्ता के लिए ख़तरा समझा और उसका विरोध शुरू कर दिया। वह आदमी उनका सबसे बड़ा राजनैतिक विरोधी बन जाता है, जो उनको ख़ुदा के अज़ाब से बचाने की कोशिश करे। ख़ुदा के दीन के हक़ होने पर वह मज़बूत प्रमाण प्रस्तुत करता है। लेकिन वे यह कहकर उनको नकार देते हैं कि यह हुकूमत पर क़ब्ज़ा करने की चाल है। अगर दुनिया का सबसे बड़ा निष्ठावान और निस्स्वार्थ आदमी उन्हें दीन की दावत दे, तो उसकी निष्ठा और सच्चाई में भी उन्हें सत्ता की भूख नज़र आती है और वे चींख़ने लगते हैं—

إِنَّ هَٰذَا لَشَيْءٌ يُرَادُ ۝

"निश्चय ही यह बात किसी और ही उद्देश्य से की जा रही है।"

(क़ुरआन, सूरा-38 सॉद, आयत-6)

फ़िरऔन की दृष्टि में हज़रत मूसा और हज़रत हारून (अलैहि०) जैसी हस्तियों के अन्दर भी सत्ता की भूख थी और उनकी दावत का उद्देश्य सत्ता और शासन पर क़ब्ज़े के सिवा और कुछ नहीं था—

قَالُوٓا إِنْ هَٰذَٰنِ لَسَٰحِرَٰنِ يُرِيدَانِ أَن يُخْرِجَاكُم مِّنْ أَرْضِكُم بِسِحْرِهِمَا وَيَذْهَبَا
بِطَرِيقَتِكُمُ ٱلْمُثْلَىٰ ۝

"उन्होंने कहा : ये दो जादूगर हैं, जो चाहते हैं कि जादू के ज़ोर से तुमको तुम्हारी ज़मीन से निकाल दें और तुम्हारे मिसाली तरीक़े को ख़त्म कर दें।" (क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयत-63)

यही बात एक दूसरी जगह इन शब्दों में कही गई है—

قَالُوْٓا اَجِئْتَنَا لِتَلْفِتَنَا عَمَّا وَجَدْنَا عَلَيْهِ اٰبَآءَنَا وَتَكُوْنَ لَكُمَا الْكِبْرِيَآءُ فِي الْاَرْضِ وَمَا نَحْنُ لَكُمَا بِمُؤْمِنِيْنَ ۝

"उन्होंने कहा कि क्या तुम इसलिए आए हो कि जिस तरीक़े पर हमने अपने बाप-दादा को पाया है, उससे फेर दो और ज़मीन में बड़ाई तुम दोनों के लिए हो जाए। हम तुम्हारी बात माननेवाले नहीं हैं।" (क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-78)

मन की पूजा

ख़ुदा के दीन को अपनाने के रास्ते में एक रुकावट मन की पूजा भी है। मन का पुजारी किसी भी चीज़ पर सोच-विचार करने से पहले अपने ही सुख-चैन का ध्यान रखता है। ख़ुदा की पैदा की हुई इस दुनिया में उसको केवल अपनी इच्छाओं की पूर्ति की तलाश होती है। वह इस निश्चय के साथ ज़िन्दगी गुज़ारता है कि उसे कोई ऐसा क़दम नहीं उठाना चाहिए, जिससे उसके मन को कष्ट पहुँचे। वह किसी ऐसे झाड़-झंखाड़ में उलझना नहीं चाहता, जो उससे मन की सुख-शान्ति छीन ले और उसे बेचैन कर दे। इसी कारण ख़ुदा के दीन को हक़ समझने के बावजूद वह उसे नहीं अपनाता, क्योंकि इससे उसके ख़ुद के आराम में अड़चन पड़ती है। लेकिन ख़ुदा का दीन बहुत स्वाभिमानी है। जो आदमी इसको जानने-समझने के बाद लापरवाही से ठुकरा दे, वह उससे कोसों दूर हो जाता है। जब इनसान अपने मन की इच्छा के आगे माथा टेक दे, तो ख़ुदा उसको अपने दरवाज़े से उठा देता है। वह मन की इच्छा की गुलामी करते हुए मर जाएगा, लेकिन उसको ख़ुदा के सामने

सिर झुकाने का सौभाग्य प्राप्त न होगा।

أَفَرَءَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ إِلَٰهَهُ هَوَاهُ وَأَضَلَّهُ اللَّهُ عَلَىٰ عِلْمٍ وَخَتَمَ عَلَىٰ سَمْعِهِ وَقَلْبِهِ وَجَعَلَ عَلَىٰ بَصَرِهِ غِشَاوَةً فَمَن يَهْدِيهِ مِن بَعْدِ اللَّهِ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿٢٣﴾

"क्या तुमने उस आदमी को देखा जिसने अपने मन की इच्छाओं को अपना ख़ुदा बना लिया है। और इसके बावजूद कि वह ज्ञान रखता है ख़ुदा ने उसे गुमराह कर दिया और उसके कानों और उसके दिल पर मुहर लगा दी और उसकी आँखों पर परदा डाल दिया; तो जब ख़ुदा (ही) ने उसको गुमराह कर दिया, तो कौन उसे सीधी राह दिखा सकता है? तो क्या तुम नसीहत नहीं हासिल करते?"

(क़ुरआन, सूरा-45 जासिया, आयत-23)

ख़ुद को बड़ा समझना

ख़ुदा से बग़ावत की एक वजह ख़ुद को बड़ा समझना है। ख़ुदा ने शैतान को हुक्म दिया कि आदम को सजदा करे, लेकिन उसने ख़ुदा का हुक्म मानने से इनकार कर दिया। क़ुरआन ने इसकी वजह यह बताई है कि उसके अन्दर 'अहंकार' था। अहंकार का अर्थ है 'अपने आपको बड़ा समझना'। यह भावना दो रूपों में प्रकट होती है। इसका एक रूप है हक़ का इनकार और दूसरा रूप है लोगों को नीच और गिरा-पड़ा समझना। ये दोनों बातें शैतान के अहंकार में मौजूद थीं। एक तरफ़ तो उसने हज़रत आदम (अलैहि॰) को अपने से कमतर समझा और दूसरी तरफ़ ख़ुदा का हुक्म मानने से इनकार कर दिया।

ख़ुद को बड़ा समझने के कारण इनसान में ख़ुदा से बग़ावत और सरकशी की भावनाएँ पैदा होती हैं। ये भावनाएँ जिस दरजे और जिस प्रकार की होंगी ख़ुदा से बग़ावत भी उसी दरजे और उसी प्रकार की होगी। जब अहंकार अपनी जवानी पर हो, तो ख़ुदा से बग़ावत भी

अपनी आख़िरी हद को पहुँच जाती है। यह एक सच्चाई है कि अपने बड़प्पन का एहसास इनसान को ख़ुदा के सामने सिर झुकाने से रोकता है और वह अपने लिए ऐसी हैसियत की माँग करता है, जो वास्तव में ख़ुदा ने उसे नहीं दी है। जिस आदमी में अहंकार हो उसकी मानसिकता ख़ुदा की आज्ञा का पालन करनेवाले बन्दे की मानसिकता से बिलकुल भिन्न होती है। ख़ुदा की आज्ञा का पालन वह आदमी करता है, जो उसको अपना पूज्य-प्रभु और शासक समझे। लेकिन घमंडी आदमी किसी को अपने से बड़ा मानने के लिए तैयार नहीं होता। ख़ुदा की आज्ञा का पालन उसे भारी बोझ लगता है और वह अपने आपको हर तरह की क़ैद और पाबन्दी से आज़ाद समझता है।

इसी तरह घमंडी आदमी चाहता है कि समाज में उसको सबसे ऊँची हैसियत हासिल हो और कोई आदमी उसकी बराबरी का दावा न करे। गुमराह होने के बावुजूद उसको अपनी समझदारी पर गर्व होता है। वह अन्धों की तरह ठोकरें खाता फिरता है। लेकिन उसका अहंकार उसको अपने ग़लत रवैए पर सोचने का मौक़ा नहीं देता। वह समझता है कि यह असम्भव है कि हक़ और सच्चाई हमारी निगाहों से छिपी रहे और कोई दूसरा आदमी उसको जान ले। अगर कहीं भलाई और अच्छाई होगी, तो सबसे पहले हमारी जानकारी में आएगी और किसी के उस तक पहुँचने से पहले हम पहुँचेंगे। यहाँ तक कि वह दूसरे इनसान में किसी नैतिक गुण को मानने के लिए भी तैयार नहीं होता।

वह अपने आपको सज्जन और सभ्य समझता है या उन लोगों को जो उसके अपने पंथ के हों। जो लोग उसे ख़ुदा के दीन की तरफ़ बुलाएँ और उसके बुरे कामों और बुरे चलन पर टिप्पणी करें, वे उसके नज़दीक कमीने और बुरे लोग होते हैं। वह इस बात को नहीं सह सकता कि कोई आदमी बड़ा बनकर उसको नसीहत करे और उसकी ग़लती को उजागर करे। वह अपनी ग़लती पर मर जाना पसन्द करता

है, लेकिन किसी की नसीहत स्वीकार करके अपना सुधार करना नहीं चाहता। जिस आदमी के अहंकार का यह आलम हो कि वह अपने सिवा किसी चीज़ को देखने ही के लिए तैयार न हो, वह ख़ुदा के दीन को तो कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकता; हाँ, दीन उसके लिए एक मुहरबन्द हक़ होगा, जिस तक उसके पहुँचने की तमाम राहें बन्द होंगी—

إِنَّ الَّذِينَ يُجَادِلُونَ فِي آيَاتِ اللَّهِ بِغَيْرِ سُلْطَانٍ أَتَاهُمْ إِن فِي صُدُورِهِمْ إِلَّا كِبْرٌ
مَّا هُم بِبَالِغِيهِ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ إِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْبَصِيرُ ﴿٥٦﴾

"जो लोग बिना किसी प्रमाण और तर्क के जो उनके पास आया हो ख़ुदा की आयतों में झगड़ा करते हैं, उनके दिलों में तो बस घमंड और अहंकार भरा हुआ है (कि हम उसको ख़त्म करके रहेंगे, मगर) वे उस तक पहुँच नहीं सकते। तो तुम अल्लाह से पनाह माँगो; क्योंकि वही सुनने और देखनेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयत-56)

दीन में परिवर्तन की माँग

जब कोई विचारधारा प्रमाण से साबित हो जाए, तो इनसान के लिए उचित रवैया यह है कि आगे बढ़कर उसे सीने से लगा ले और उन सारी विचारधाराओं को नकार दे, जो उससे टकराती हैं। लेकिन बहुत-से लोग ख़ुदा के दीन के बारे में यह उचित रवैया नहीं अपनाते। वे ग़लत से ग़लत और ओछे से ओछे तरीक़ों से उसका विरोध करते रहते हैं और जब विरोध अप्रभावी और असफल होता चला जाता है, तो साफ़-साफ़ न तो उसे नकारते हैं और न उसे अपने सही रूप में स्वीकार करते हैं, बल्कि उसमें ऐसा बदलाव चाहते हैं जो उसे उनके ग़लत विचारों और दृष्टिकोणों से क़रीब कर दे। उनकी पूरी कोशिश होती है कि ख़ुदा के दीन में उनकी इच्छाओं की भी गुंजाइश निकल आए, ताकि ख़ुदा के

आज्ञापालन के साथ-साथ मन की भावनाएँ भी तृप्त होती रहें। हालाँकि खुदा का दीन पूर्णतः अपना ही अनुपालन चाहता है। किसी बड़े से बड़े आदमी को, यहाँ तक कि खुदा के पैग़म्बर को भी, इसकी इजाज़त नहीं है कि इसमें एक शब्द भी घटा-बढ़ा दे और अपनी इच्छा के अनुसार उसका अनुपालन करने लगे—

وَإِذَا تُتْلَىٰ عَلَيْهِمْ آيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ ۙ قَالَ الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَاءَنَا ائْتِ بِقُرْآنٍ غَيْرِ هَٰذَا أَوْ بَدِّلْهُ ۚ قُلْ مَا يَكُونُ لِي أَنْ أُبَدِّلَهُ مِنْ تِلْقَاءِ نَفْسِي ۖ إِنْ أَتَّبِعُ إِلَّا مَا يُوحَىٰ إِلَيَّ ۖ إِنِّي أَخَافُ إِنْ عَصَيْتُ رَبِّي عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿١٥﴾

"और जब उनको हमारी साफ़-साफ़ आयतें सुनाई जाती हैं, तो जो लोग हमसे मिलने की उम्मीद नहीं रखते, यह कहते हैं कि इसकी जगह कोई दूसरा क़ुरआन लाओ या इसमें बदलाव कर दो। ऐ पैग़म्बर! उनसे कह दो कि मुझे यह अधिकार नहीं है कि इसमें अपनी तरफ़ से कुछ बदल दूँ। मैं तो बस उस वह्य (प्रकाशना) का अनुपालन करता हूँ, जो मेरे पास आती है। अगर मैं अपने रब की नाफ़रमानी करूँ, तो मुझे एक बड़े दिन के अज़ाब का डर है।" (क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-15)

जो लोग असत्य को छोड़े बिना खुदा के दीन की तरफ़ आएँ, हक़ीक़त में खुदा के दीन से उन्हें प्रेम नहीं होता, बल्कि खुद अपने आपसे प्रेम होता है, अपनी मन की इच्छाओं से प्रेम होता है और उन ग़लत सोचों और विचारधाराओं से प्रेम होता है, जिन्हें खुदा का दीन मिटाना चाहता है। खुदा का दीन इसलिए नहीं आता कि असत्य के साथ सुलह-सफ़ाई करे, बल्कि इसलिए आता है कि असत्य झुके और वह उसपर छा जाए। जब तक इनसान असत्य से बिलकुल छुटकारा न पा ले, हक़ का साथी नहीं बन सकता।

वे लोग जिनको ख़ुदा का दीन मिलता है

इस दुनिया में कुछ लोगों को ख़ुदा का दीन मिलता है और कुछ लोग इससे वंचित होते हैं। आज के दौर में यह कोई बड़ी बात नहीं है। हालाँकि किसी को ख़ुदा के दीन के मिलने का मतलब यह है कि वह सफल है और किसी के इस दीन से वंचित होने का अर्थ यह है कि वह असफल है। इतनी बड़ी घटना इनसान की ज़िन्दगी में भाग्य और संयोग से पेश नहीं आती, बल्कि यह उसका अपना इरादा और फ़ैसला है जो उसको ख़ुदा के दीन से क़रीब या दूर करता है। जिन लोगों पर ख़ुदा के दीन की हक़ीक़त खुलती और जो आगे बढ़कर उसको स्वीकार करते हैं उनमें कुछ गुण होते हैं, जो उनको दीन से अलग रहने नहीं देते और दीन उनके लिए इतना ज़रूरी हो जाता है कि उसके बिना वे ज़िन्दगी की कल्पना ही नहीं कर सकते। यहाँ उन्हीं गुणों का क़ुरआन की रौशनी में वर्णन करने का प्रयास किया जाएगा।

अच्छी प्रकृतिवाला इनसान

ख़ुदा का दीन इनसान की प्रकृति के बिलकुल अनुकूल है। वह प्राकृतिक रूप से जिन चीज़ों को पसन्द करता है, वे ख़ुदा के दीन में पसन्दीदा हैं और जिन चीज़ों को उसकी प्रकृति नापसन्द करती है, वे ख़ुदा के दीन में भी नापसन्दीदा हैं। ख़ुदा का दीन उससे कोई ऐसी चीज़ नहीं चाहता जो उसके लिए अजनबी हो और जिसके स्वीकार करने से उसकी प्रकृति इनकार करे। ख़ुदा के दीन को मानना वास्तव में इनसान का अपनी प्रकृति की माँगों को मानना है। इसी कारण क़ुरआन में कहा गया है—

فَأَقِمْ وَجْهَكَ لِلدِّينِ حَنِيفًا ۚ فِطْرَتَ اللَّهِ الَّتِي فَطَرَ النَّاسَ عَلَيْهَا ۚ لَا تَبْدِيلَ
لِخَلْقِ اللَّهِ ۚ ذَٰلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ

"तो तुम एकाग्रचित्त होकर अपना रुख़ (ख़ुदा के) दीन की तरफ़ किए रहो। उस प्रकृति पर जम जाओ, जिसपर अल्लाह ने इनसानों को पैदा किया है। अल्लाह की संरचना में कोई बदलाव किया ही नहीं जा सकता। यही बिलकुल सीधा और सच्चा दीन है, लेकिन अधिकतर लोग नहीं जानते।"

(क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-30)

दीन की हक़ीक़त को अगर हम दो शब्दों में बयान करना चाहें तो उसे एकेश्वरवाद (तौहीद) और इनसाफ़ (अद्ल) कह सकते हैं।

एकेश्वरवाद का मतलब है ख़ुदा को मानना और उसकी हस्ती और गुणों में किसी को साझी न ठहराना और केवल उसी की इबादत करना। इनसाफ़ का मतलब है लोगों के साथ मामलों में कमी-बेशी से बचना और इनसाफ़ पर क़ायम रहना। ये दोनों बातें इनसान के फ़ितरत में दाख़िल हैं। लेकिन उसके स्वभाव का बिगाड़ उसको इनको स्वीकार करने से रोकता है।

इनसान के अपने अन्दर और बाहर इस दुनिया में बहुत-से ऐसे कारण हैं, जो उसके स्वभाव को बिगाड़कर रख देते हैं। अगर ये कारण न हों तो ख़ुदा का इनकार या उसके साथ साझी ठहराना उसके लिए सम्भव नहीं है। इसी तरह ज़ुल्म और ज़्यादती उसको स्वाभाविक रूप से नापसन्द है। लेकिन ग़लत चीज़ें उसको न्याय और इनसाफ़ की राह से फेर देती हैं। इसलिए यह कहना ग़लत न होगा कि जब तक इनसान अपनी प्रकृति को दबा न दे ख़ुदा के दीन और उसकी शिक्षाओं को नकार नहीं सकता। वह उसी तरह उसकी तरफ़ बढ़ेगा, जिस तरह बच्चा माँ की तरफ़ लपकता और प्यासा पानी की तरफ़ बढ़ता है।

अगर इनसान की प्रकृति सही हालत में है तो यही नहीं कि दीन को स्वीकार करने में उसे कोई हिचकिचाहट नहीं होती, बल्कि वह दीन का प्रचारक और प्रतिनिधि बनकर उभरता है; क्योंकि अच्छी प्रकृतिवाले इनसान के लिए ख़ुदा के दीन के अलावा किसी विचारधारा पर ख़ुश रहना और अपने माहौल के अन्दर उससे हटना और बग़ावत को सहन करना सम्भव नहीं है। मानव-स्वभाव की इस सर्वोत्तम दशा को क़ुरआन 'भला-चंगा दिल' का भी नाम देता है। हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के बारे में क़ुरआन कहता है—

إِذْ جَآءَ رَبَّهُۥ بِقَلْبٍ سَلِيمٍ ﴿٨٤﴾ إِذْ قَالَ لِأَبِيهِ وَقَوْمِهِۦ مَاذَا تَعْبُدُونَ ﴿٨٥﴾ أَئِفْكًا ءَالِهَةً
دُونَ ٱللَّهِ تُرِيدُونَ ﴿٨٦﴾ فَمَا ظَنُّكُم بِرَبِّ ٱلْعَٰلَمِينَ ﴿٨٧﴾

"याद करो जब वह अपने रब के पास 'भला-चंगा दिल' लेकर आया और उसने अपने बाप और अपनी क़ौम से कहा कि यह क्या चीज़ है, जिसकी तुम इबादत करते हो? क्या केवल झूठ गढ़ लिया है, जो ख़ुदा के सिवा दूसरे माबूदों (बनावटी पूज्यों) को चाहते हो? तो तुम्हारा सारे जहानों के पालनहार अल्लाह के बारे में क्या विचार है?"(क़ुरआन, सूरा-37 साफ़्फ़ात, आयतें—84-87)

इसके बाद क़ुरआन ने झूठे ख़ुदाओं पर उनकी आलोचना और इस राह में उनके जमे रहने और क़ुरबानी का उल्लेख किया है। यह उस हक़ीक़त का इज़हार है कि जिस आदमी को भला-चंगा दिल मिला हो, वह झूठे ख़ुदाओं के साथ वही रवैया अपनाएगा, जो हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ने अपनाया। यह रवैया हालाँकि ख़तरों से भरा हुआ है, लेकिन परलोक की कामयाबी इसी में छिपी हुई है—

يَوْمَ لَا يَنفَعُ مَالٌ وَلَا بَنُونَ ﴿٨٨﴾ إِلَّا مَنْ أَتَى ٱللَّهَ بِقَلْبٍ سَلِيمٍ ﴿٨٩﴾

"उस दिन न माल काम आएगा और न औलाद। हाँ, केवल उस आदमी को मुक्ति मिलेगी, जो भले-चंगे दिल के साथ ख़ुदा के सामने हाज़िर होगा।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअ़रा, आयतें-88, 89)

जो सोच-विचार करते हैं

जो आदमी दीन को जानने और समझने की कोशिश करे, उसका दीन तक पहुँचना आसान है और जिसको यह कोशिश ही नागवार गुज़रे, उसे दीन अपने आप नहीं मिल सकता। इसी लिए क़ुरआन की माँग है–

وَإِذَا قُرِئَ الْقُرْآنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَأَنصِتُوا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ۝

"जब क़ुरआन पढ़ा जाए तो ध्यान से सुनो और ख़ामोश रहो, (इससे) उम्मीद है कि तुमपर रहम किया जाए।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-204)

ख़ुदा का दीन कोई क़िस्सा-कहानी या बेकार चीज़ नहीं है, जिसे नज़रअन्दाज़ कर दिया जाए, बल्कि इसमें सोच-विचार का बड़ा सामान है। वह अपनी सच्चाई का केवल दावा नहीं करता, बल्कि उसपर स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करता है और उनपर सोच-विचार करने की दावत देता है–

كِتَابٌ أَنزَلْنَاهُ إِلَيْكَ مُبَارَكٌ لِّيَدَّبَّرُوا آيَاتِهِ وَلِيَتَذَكَّرَ أُولُو الْأَلْبَابِ ۝

"यह किताब जो हमने तुमपर उतारी है, बड़ी बरकतवाली है, ताकि ये लोग इसकी आयतों में सोच-विचार करें और बुद्धिमान लोग इससे नसीहत हासिल करें।"

(क़ुरआन, सूरा-38 सॉद, आयत-29)

ख़ुदा के दीन पर सोच-विचार करने से इनसान पर उसकी बड़ाई स्पष्ट होती है और वह उससे क़रीब होता है। जो लोग दीन का विरोध कर रहे हैं, उनकी सबसे बड़ी बीमारी यह है कि वे उसपर सोच-विचार नहीं करते। उनको अन्दाज़ा नहीं है कि वे कितनी बड़ी हक़ीक़त को झुठला रहे हैं वरना हक़ीक़त यह है कि किसी सूझ-बूझवाले इनसान के

लिए इसका इनकार सम्भव नहीं है। इसका इनकार तो इनसान उसी समय कर सकता है, जबकि वह सोच-विचार ही के लिए तैयार न हो या पहले से न मानने का फ़ैसला कर चुका हो। क़ुरआन हैरत के साथ पूछता है कि बुद्धि ख़ुदा के दीन को मानने की दावत देती है और लोग उसको झुठला रहे हैं। आख़िर इसका कारण क्या है?

اَفَلَا يَتَدَبَّرُوْنَ الْقُرْاٰنَ اَمْ عَلٰى قُلُوْبٍ اَقْفَالُهَا ۞

"क्या वे क़ुरआन पर ग़ौर नहीं करते या दिलों पर उनके ताले चढ़े हुए हैं?" (क़ुरआन, सूरा-47 मुहम्मद, आयत-24)

इनसान के ज्ञान की जहाँ तक पहुँच है, ख़ुदा का दीन उसके बिलकुल अनुरूप है। इनसान ने आज तक किसी ऐसी चीज़ की खोज नहीं की, जो दीन और उसकी शिक्षाओं को नकारती हो। इसी कारण क़ुरआन कहता है सोचने-समझने और ज्ञानवालों को दीन के मानने में कोई वैचारिक उलझन नहीं पेश आती। वे ख़ुशी-ख़ुशी उसे स्वीकार करते हैं और उसके सच होने की गवाही देते हैं।

وَيَرَى الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْعِلْمَ الَّذِيْٓ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ هُوَ الْحَقَّ

"जिन लोगों को ज्ञान दिया गया है, वे जानते हैं कि जो दीन तुमपर तुम्हारे रब की तरफ़ से उतारा गया है वह हक़ है।"

(क़ुरआन, सूरा-34 सबा, आयत-6)

ख़ुदा का दीन कोई पेचीदा दर्शन (Philosophy) नहीं है, जिसे समझने के लिए बहुत अधिक बुद्धि-विवेक की ज़रूरत हो, बल्कि वह 'स्पष्ट किताब' की शक्ल में उतरा है। उसे देखकर हर इनसान समझ सकता है कि वह क्या चाहता है और क्या नहीं चाहता है। उसके नज़दीक इनसान की सही हैसियत और उसकी मुक्ति का रास्ता क्या है? इन सच्चाइयों को प्रकट करने में उसने कोई भ्रम नहीं रखा है, बल्कि खोल-खोलकर साफ़ और सरल भाषा में बयान कर दिया है। इसलिए हर आदमी अपनी बुद्धिक्षमता के हिसाब से इसे समझ भी

सकता है और इससे लाभ भी उठा सकता है—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ عَلٰى عَبْدِهِ الْكِتٰبَ وَلَمْ يَجْعَلْ لَّهٗ عِوَجًا ۜ

"सारी तारीफ़ ख़ुदा के लिए है, जिसने अपने बन्दे पर यह किताब उतारी और इसमें कोई टेढ़ नहीं रखी।"

(क़ुरआन, सूरा-18 कह्फ़, आयत-1)

ख़ुदा के दीन ने अपने आपको इनसान के सामने इस तरह पेश कर दिया है कि जो आदमी सचमुच इसे समझना चाहे उसकी राह में कोई रुकावट नहीं है। अब यह उसका अपना काम है कि दीन को समझने की कोशिश करे या अपनी बुद्धि को इससे हटाकर किसी और काम में लगा दे—

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُّدَّكِرٍ

"हमने क़ुरआन को आसान कर दिया है, ताकि लोग इससे शिक्षा ग्रहण करें; तो है कोई जो इससे शिक्षा ग्रहण करे?"

(क़ुरआन, सूरा-54 क़मर, आयत-17)

यहाँ यह बात याद रखने की है कि ख़ुदा के दीन पर सोच-विचार करनेवाला हर आदमी उसको पा नहीं लेता, बल्कि इसके लिए ज़रूरी है कि इनसान हर तरह के पक्षपातों से अलग हो और निर्मल मन से उसपर सोचे। इनसान को जिस चीज़ से पक्षपातपूर्ण लगाव हो, उसके अलावा कोई और चीज़ उसे नज़र नहीं आती। उसे दीन की सच्चाई पर अगर यक़ीन आ भी जाए, तो उसके क़बूल करने के लिए उसके दिल के दरवाज़े नहीं खुलते। छठी सदी ईस्वी में ख़ुदा के दीन के साथ बनी-इसराईल का रवैया इसकी गवाही देता है। वे ख़ुदा के दीन को इस तरह पहचानते थे, जिस तरह बाप अपने बच्चे को पहचानता है। लेकिन इसके बावुजूद उसके अधिकतर लोगों ने केवल इस कारण क़बूल नहीं किया कि उसका पेश करनेवाला उनकी क़ौम का आदमी नहीं है। इसके

साथ उनमें वे लोग भी जिनके नज़दीक ख़ुदा का दीन क़ौम और वतन, जाति और वंश से ऊँचा था। जब उनके सामने ख़ुदा का दीन आया, तो पुकार उठे कि यही हक़ है। हम इसपर ईमान लाते हैं और बहते हुए आँसुओं के साथ दुआ करने लगे कि ऐ हमारे रब! हम इसके हक़ होने की गवाही देते हैं। हमारी इस गवाही को क़बूल फ़रमा और हमें उन लोगों में जगह दे, जिन्होंने तेरे दीन की गवाही दी। जैसा कि क़ुरआन कहता है—

وَإِذَا سَمِعُوا مَآ أُنزِلَ إِلَى الرَّسُولِ تَرَىٰٓ أَعْيُنَهُمْ تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوا
مِنَ الْحَقِّ يَقُولُونَ رَبَّنَآ ءَامَنَّا فَاكْتُبْنَا مَعَ الشَّٰهِدِينَ ۝

"जब वे इस वाणी को सुनते हैं, जो पैग़म्बर पर उतारी गई है तो तुम देखोगे कि हक़ को पहचानने के कारण उनकी आँखों से आँसू जारी हैं और वे कहते हैं कि ऐ हमारे रब! हम ईमान लाए; तो हमें भी गवाही देनेवालों में लिख ले।"

(क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-83)

कुछ चीज़ें ख़ुदा के दीन पर सोच-विचार करने के रास्ते में रुकावट भी बनती हैं। इसलिए दुनिया का प्रेम, यहाँ के सुख-चैन की चिन्ता, इनसान के समय और उसकी योग्यताओं को उससे छीन लेता है और उसे इस बात का मौक़ा नहीं देता कि वह दीन को अपने सोच-विचार करने का विषय बनाए और एकाग्रता के साथ उसपर विचार करे। इसी तरह शासन-सत्ता का नशा दीन पर सोच-विचार करने की राह में एक रूकावट है। जब तक यह नशा दूर न हो दीन की तरफ़ इनसान का ध्यान नहीं जाता। इनके अलावा और भी अनेक कारण हैं, जो इनसान को दीन के बारे में सोच-विचार करने से रोकते हैं।[1] लेकिन अगर इनसान में हक़ को देखने, पहचानने और समझने की योग्यता है,

[1] विस्तार के लिए देखें—पिछला अध्याय 'दीन के इनकार के विभिन्न कारण।'

तो वह उन सभी कारणों को हटाकर इस तरह दीन की तरफ़ बढ़ता है ,जैसे इनमें से कोई भी कारण उसकी राह की रुकावट न हो। इसी योग्यता ने सबा की रानी को दीन के क़बूल करने पर आमादा किया और वह ईमान ले आई। इसके विपरीत इस योग्यता के न होने के कारण फ़िरऔन इस घमंड में पड़ा रहा कि मैं ही सबसे बड़ा ख़ुदा हूँ। इसलिए किसी के सामने सिर झुकाना मेरा अपमान है। इसी सच्चाई को क़ुरआन ने इन शब्दों में बयान किया है–

إِنَّكَ لَا تُسْمِعُ الْمَوْتَىٰ وَلَا تُسْمِعُ الصُّمَّ الدُّعَاءَ إِذَا وَلَّوْا مُدْبِرِينَ ﴿٨٠﴾ وَمَا أَنتَ بِهَادِي الْعُمْيِ عَن ضَلَالَتِهِمْ ۖ إِن تُسْمِعُ إِلَّا مَن يُؤْمِنُ بِآيَاتِنَا فَهُم مُّسْلِمُونَ ﴿٨١﴾

"तुम मुरदों को सुना नहीं सकते और न बहरों को सुना सकते हो (और वह भी), जबकि वे पीठ फेरकर भाग रहे हों और न तुम अन्धों को रास्ता बताकर भटकने से बचा सकते हो। तुम तो केवल उन लोगों को सुना सकते हो, जो हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं और फिर आज्ञाकारी बन जाते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-27 नम्ल, आयतें-80,81)

क़ुरआन के इस वाक्य का अर्थ 'तुम तो केवल उन लोगों को सुना सकते हो, जो हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं' उस समय स्पष्ट होगा, जबकि आप उसे ऊपर के वाक्यों की रौशनी में देखें, जिनमें कहा गया है कि तुम उन लोगों को, जो मर चुके हैं, जो अन्धे और बहरे हैं और जो पीठ फेरकर भाग रहे हैं, सुना नहीं सकते। मतलब यह है कि वही लोग तुम्हारी बात सुनेंगे और ख़ुदा के दीन पर ईमान लाएँगे, जिनमें हक़ को सुनने और क़बूल करने की सलाहियत है, जिनके दिल ज़िन्दा और आत्मा जागरूक है, जो ख़ुदा की वाणी (कलाम) सुनकर अपने कानों में उंगलियाँ नहीं ठूँस लेते, बल्कि उसे ध्यान से सुनते हैं और समझने की कोशिश करते हैं। इस सलाहियत को क़ुरआन ने 'ज़िन्दगी' और 'हयात' कहा है। अगर यह योग्यता है तो ख़ुदा का दीन मिलता है वरना

इनसान चलती-फिरती लाश है और मुरदों को सुनाना ख़ुदा के पैग़म्बरों के बस में भी नहीं है। पैग़म्बर इसलिए आता है और उसपर वह्य (प्रकाशना) इसलिए उतरती है—

لِّيُنۡذِرَ مَنۡ كَانَ حَيًّا وَّيَحِقَّ الۡقَوۡلُ عَلَى الۡكٰفِرِيۡنَ ۝

"ताकि डराए उस इनसान को जो ज़िन्दा है और (हक़ के) इनकारियों पर हुज्जत पूरी हो जाए।"

(क़ुरआन, सूरा-36 या-सीन, आयत-70)

नसीहत हासिल करनेवाले

ख़ुदा के दीन को नकारना उसके अज़ाब को बुलावा देना है। जिन क़ौमों ने इसे ठुकराया वे बिलकुल तबाह हो गईं और दुनिया की कोई ताक़त उन्हें बचा न सकी। जिस आदमी के अन्दर इतिहास की इस घटना से नसीहत हासिल करने की सलाहियत होगी, वह कभी यह साहस नहीं कर सकता कि ख़ुदा के दीन को नकार दे। जब भी दीन की आवाज़ उसके कान में पहुँचेगी, वह तेज़ी से उसकी तरफ़ लपकेगा और ख़ुशी-ख़ुशी इसे क़बूल करेगा। क़ुरआन में इसी हक़ीक़त की तरफ़ इशारा किया गया है—

وَكَمۡ اَهۡلَكۡنَا قَبۡلَهُمۡ مِّنۡ قَرۡنٍ هُمۡ اَشَدُّ مِنۡهُمۡ بَطۡشًا فَنَقَّبُوۡا فِى الۡبِلَادِ ؕ هَلۡ مِنۡ مَّحِيۡصٍ ۝ اِنَّ فِىۡ ذٰلِكَ لَذِكۡرٰى لِمَنۡ كَانَ لَهٗ قَلۡبٌ اَوۡ اَلۡقَى السَّمۡعَ وَهُوَ شَهِيۡدٌ ۝

"और हमने उनसे पहले कितनी ही क़ौमों को तबाह कर दिया, जो (अपनी) पकड़ में उनसे अधिक सख़्त थीं। (जब उनपर ख़ुदा का अज़ाब आया तो) उन्होंने शहरों को छान मारा कि कहीं कोई पनाह की जगह है? (लेकिन उनको कोई पनाह न मिली।) निश्चय ही इसमें नसीहत है उस आदमी के लिए

जिसके (सीने में ज़िन्दा) दिल हो या जो कान लगाकर हाज़िर दिल के साथ बात सुने।"

(क़ुरआन, सूरा-50 क़ाफ़, आयतें-36,37)

हर आदमी फ़ितरी तौर पर नजात (मोक्ष) का इच्छुक है। कोई भी आदमी तबाह होना नहीं चाहता। इसलिए उसे इतिहास की चेतावनियों से नसीहत हासिल करनी चाहिए। लेकिन कभी-कभी इनसान पर लापरवाही और बेहिसी छा जाती है। वह सचेत करनेवाली उन घटनाओं को समझने की कोशिश नहीं करता और तबाही से बचने की इच्छा के बावुजूद तबाही के रास्ते ही पर बढ़ता चला जाता है। आख़िर एक दिन दीन (ईश्वरीय जीवन-विधान) का विरोध करनेवाले अनगिनत इनसानों की तरह खुद भी अपने बादवालों के लिए शिक्षाप्रद नमूना बन जाता है—

فَكَاَيِّنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنٰهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ فَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوْشِهَا وَبِئْرٍ مُّعَطَّلَةٍ وَّقَصْرٍ مَّشِيْدٍ ۝٤٥ اَفَلَمْ يَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ فَتَكُوْنَ لَهُمْ قُلُوْبٌ يَّعْقِلُوْنَ بِهَآ اَوْ اٰذَانٌ يَّسْمَعُوْنَ بِهَا ۚ فَاِنَّهَا لَا تَعْمَى الْاَبْصَارُ وَلٰكِنْ تَعْمَى الْقُلُوْبُ الَّتِيْ فِي الصُّدُوْرِ ۝٤٦

"कितनी ही बस्तियाँ हैं कि जब उन्होंने अन्याय और अत्याचार का रवैया अपनाया, तो हमने उनको हलाक कर दिया और अब वे अपनी छतों पर उलटी पड़ी हैं और कितने कुएँ बेकार पड़े हैं और कितने ही मज़बूत महल (वीरान हो चुके हैं); तो क्या ये लोग ज़मीन में चले-फिरे नहीं कि इनके ऐसे दिल होते, जो समझते हैं और ऐसे कान होते जो सुनते हैं। हक़ीक़त यह है कि आँखें अन्धी नहीं होतीं, बल्कि वे दिल अन्धे होते हैं जो सीनों में हैं।" (क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयतें-45,46)

दीन के चाहनेवाले

खुदा का दीन उस आदमी को मिलता है, जो उसे चाहे। जिस आदमी के अन्दर दीन की चाहत ही न हो, वह उससे वंचित रहता है। अल्लाह तआला ने इस मामले में अपना क़ानून स्पष्ट शब्दों में बयान कर दिया है—

يَهْدِيٓ اِلَيْهِ مَنْ اَنَابَ ﴿٢٧﴾

"वह अपने दीन तक पहुँचने का रास्ता उस आदमी को दिखाता है, जो उसकी तरफ़ पलटे।" (क़ुरआन, सूरा-13 रअ़द, आयत-27)

खुदा के दीन के बिना ज़िन्दगी में इतना बड़ा ख़ालीपन पैदा हो जाता है कि अगर इनसान बेहिसी की ज़िन्दगी गुज़ारने का आदी नहीं है तो उसको दीन की चाहत में उससे अधिक बेचैन होना चाहिए, जितना कि वह भूख के समय खाने के लिए बेचैन होता है; क्योंकि जिन पहलुओं से यह ख़ालीपन पैदा होता है, उसको खुदा का दीन ही भर सकता है। किसी और ज़रिए से इसका भर पाना सम्भव नहीं है। इनमें से कुछ पहलुओं की तरफ़ यहाँ इशारा किया जा रहा है—

- हर आदमी यह जानना चाहता है कि उसका कोई पैदा करनेवाला, मालिक, हाकिम और माबूद (पूज्य-प्रभु) है या नहीं और अगर है तो उससे उसके सम्बन्ध का रूप क्या है? खुदा का दीन इस प्रश्न का इतना सही और संतोषजनक उत्तर देता है कि अगर आदमी में किसी विचारधारा पर निष्पक्ष रूप से सोचने-विचारने की योग्यता है, तो वह सहसा पुकार उठेगा कि यही हक़ है और इसी की मुझे तलाश है।
- इनसान को क़ानून की ज़रूरत है। इस ज़रूरत को उसने जब भी खुद से पूरा करना चाहा, बुरी तरह असफल रहा; क्योंकि यह हक़ीक़त है कि उसका बनाया हुआ हर क़ानून असन्तुलित और

अधूरा होता है। इसमें एक चीज़ की छूट पाई जाती, तो दूसरी चीज़ का वुजूद ही ग़ायब होता है। इसके विपरीत ख़ुदा का दीन हमें एक ऐसा क़ानून देता है जो हर कमी-बेशी से बिलकुल पाक और बहुत सन्तुलित है। अगर इनसान अपने बनाए हुए असन्तुलित क़ानूनों की उससे तुलना करे, तो उसका दिल ख़ुद ही गवाही देगा कि यह किसी इनसान का बनाया हुआ नहीं है, बल्कि ख़ुदा की तरफ़ से उतारा गया है। इसके बावुजूद अगर दीन की चाहत उसके अन्दर पैदा नहीं हो रही है, तो इस दुनिया में कोई ऐसा साधन नहीं है जो दीन को उसके सीने में उतार दे।

- मौत एक नंगी तलवार है, जो हर आदमी के सिर पर लटक रही है। कोई नहीं कह सकता कि मौत कब आएगी और कब ज़िन्दगी की मुद्दत ख़त्म हो जाएगी? मौत के बाद क्या होगा? यह एक अहम सवाल है, जो हर सोचने-समझनेवाले आदमी को परेशान किए हुए है। वह जानना चाहता है कि मौत के बाद कोई ख़तरा तो नहीं है, ताकि वह सुख-शान्ति के साथ ज़िन्दगी की यह थोड़ी-सी मुहलत जो उसे मिली हुई है, गुज़ार सके और अगर कोई ख़तरा है, तो उससे सुरक्षित रहने का उपाय क्या है? ख़ुदा का दीन उसे बताता है कि मौत के बाद या तो वह हमेशा के लिए कामयाब क़रार पाएगा या उसकी हमेशा की नाकामी का फ़ैसला होगा। कामयाब वे होंगे जो इसको क़बूल करेंगे और जो इसको नकार देंगे वे नाकामी से किसी तरह भी अपने आपको बचा नहीं सकते। इस हक़ीक़त को ख़ुदा ने बार-बार इतने ज़ोरदार तरीक़े से और इतनी शक्ति के साथ बयान किया है कि इनसान के लिए मुमकिन नहीं है कि उससे नज़र फेर सके।

ये हैं वे इशारे जिनके कारण इनसान के अन्दर ज़रूर ही दीन की चाहत पैदा होनी चाहिए। जिस आदमी में यह चाहत पाई जाए ख़ुदा का दीन उसे ज़रूर ही मिलेगा; क्योंकि जो आदमी ख़ुदा से उसका दीन माँगे यह उसकी मेहरबानी से परे है कि वह उसे बेदीनी में पड़ा रहने दे

और उसी हाल में उसको दुनिया से उठा ले।

जिनमें साहस होता है

खुदा का दीन उस आदमी को मिलता है, जिसके अन्दर हक़ के लिए असत्य से लड़ने का साहस हो, जो इस बात के लिए तैयार हो कि खुदा के दीन के सामने आने के बाद हर क़ीमत पर उसे क़बूल करेगा। जो दीन की ख़ातिर बड़े से बड़े लाभ, सम्मान, पद और बड़ी से बड़ी दौलत को क़ुरबान कर सके और जिसमें यह संकल्प और साहस हो कि खुदा का दीन उससे उसकी जान भी माँगे, तो ख़ुशी-ख़ुशी उसे निछावर कर दे। संकल्प और साहस हो तो खुदा एक मामूली इनसान को भी अपने दीन का अपनानेवाला बना देता है और अगर साहस ही नहीं है तो बड़े-बड़े विचारक और समय के सम्राट भी उसके हक़दार नहीं हो सकते। इसकी मिसाल हमें उन जादूगरों में मिलती है, जो हज़रत मूसा (अलैहि॰) के मुक़ाबले में आए थे। फ़िरऔन ने उनसे वादा किया था कि अगर वे अपने करतब के ज़रिए हज़रत मूसा (अलैहि॰) को हरा दें, तो उसके दरबार के क़रीबी लोग होंगे। लेकिन जब उन्होंने देखा कि हज़रत मूसा (अलैहि॰) जादूगर नहीं, बल्कि हक़ की तरफ़ बुलानेवाले और ख़ुदा के पैग़म्बर हैं, तो फ़ौरन उनको अपनी ग़लती का एहसास हुआ और वे ईमान ले आए। हालाँकि वे इस बात से अनजान नहीं थे कि उनका यह क़दम उठाना उनको फ़िरऔन के ग़ुस्से का निशाना बना देगा। लेकिन उन्होंने इसकी परवाह नहीं की और हर मुसीबत को सहने के लिए तैयार हो गए। इसलिए फ़िरऔन ने जब उनको धमकी दी कि मैं पहले तुम्हारे हाथ-पैर काटूँगा और फिर फाँसी पर लटकाऊँगा, तो उन्होंने वही जवाब दिया, जो हर एक ईमानवाले को देना चाहिए—

قَالُوْا لَنْ نُّؤْثِرَكَ عَلٰى مَا جَآءَنَا مِنَ الْبَيِّنٰتِ وَالَّذِىْ فَطَرَنَا فَاقْضِ مَآ اَنْتَ
قَاضٍ ۭ اِنَّمَا تَقْضِىْ هٰذِهِ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا ﴿٧٢﴾ اِنَّآ اٰمَنَّا بِرَبِّنَا لِيَغْفِرَ لَنَا خَطٰيٰنَا
وَمَآ اَكْرَهْتَنَا عَلَيْهِ مِنَ السِّحْرِ ۭ وَاللّٰهُ خَيْرٌ وَّاَبْقٰى ﴿٧٣﴾

"यह हरगिज़ नहीं हो सकता कि जो स्पष्ट प्रमाण हमारे सामने आए हैं और जिस ख़ुदा ने हमें पैदा किया है, उसके मुक़ाबले में तुझे हम प्राथमिकता दें; तो तुझे जो कुछ करना है, कर ले। तू दुनिया की इसी ज़िन्दगी पर अपना हुक्म चला सकता है। हम तो अपने रब पर ईमान ले आए, ताकि वह माफ़ करे हमारे गुनाहों को और उस जादूगरी को जिसपर तूने हमें मजबूर किया था और अल्लाह बेहतर है और हमेशा रहनेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयतें-72,73)

ख़ुदा का दीन इस तरह सामने आता है कि कमहिम्मत इनसान उसे देखकर काँप उठता है। क़ुरआन के शब्दों में जो लोग यह कहते हों—

إِنْ نَّتَّبِعِ الْهُدٰى مَعَكَ نُتَخَطَّفْ مِنْ أَرْضِنَا

"अगर हम तुम्हारे साथ इस मार्गदर्शन का अनुसरण करें, तो अपनी इस ज़मीन से निकाल दिए जाएँगे।"

(क़ुरआन, सूरा-28 क़सस, आयत-57)

उनका ख़ुदा के दीन को क़बूल करना आसान नहीं है। वे सुख-शान्ति चाहते हैं और ख़ुदा का दीन उन लोगों को मिलता है, जो ख़तरों का सामना कर सकते हों।

यह एक हक़ीक़त है कि ख़ुदा के दीन को ख़ुशी-ख़ुशी हमेशा उन हिम्मतवाले लोगों ने गले लगाया है और अब भी वही गले लगा सकते हैं, जिनको उसके सिवा किसी चीज़ के पाने या खोने की चिन्ता नहीं होती। बिना हिम्मतवाले इनसान को अपनी हर थोड़ी-सी पूँजी बहुत बड़ी दौलत मालूम होती है। वह इस दौलत को न खोएगा और न ख़ुदा का दीन उसे नसीब होगा।

दावत के लिए आवश्यक गुण

☞ अल्लाह पर ईमान

☞ परलोक पर ईमान

☞ क़ुरआन मजीद : अल्लाह की आख़िरी किताब

☞ नमाज़ और दीन की दावत

☞ अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना

☞ क़ुरबानी

☞ मन की निर्मलता : दीन की रूह

☞ दीन पर मज़बूती से जमे रहना

दावत के लिए आवश्यक गुण

इस्लाम एक दावत (बुलावा) है। जो लोग इस दावत को क़बूल करें उनपर यह ज़िम्मेदारी डाली गई है कि वे इसे सारी दुनिया में फैलाएँ और जब तक इस धरती पर इसका न माननेवाला एक आदमी भी बाक़ी है, अपना कड़ी मेहनत जारी रखें। इतने बड़े काम के लिए इनसान में वे उच्च गुण भी होने चाहिएँ, जो इस्लाम उसके अन्दर देखना चाहता है। इन गुणों का पाया जाना एक तरफ़ तो इस बात का सुबूत होगा कि उसकी ज़िन्दगी इस्लाम के साँचे में ढल चुकी है और दूसरी तरफ़ इन्हीं से इस्लाम की दावत का बोझ उठाने की उसमें योग्यता पैदा होगी; क्योंकि ये उस राह का बेहतरीन साज़ो-सामान और बहुत बड़ी पूँजी है। इन गुणों और ख़ूबियों के साथ जब वह दावत के मैदान में आएगा, तो मज़बूत चरित्र और आचरण, असीम कर्म-शक्ति और ग़ैर-मामूली जोश और भावना के साथ आएगा और इनके बिना उसकी मिसाल उस कमज़ोर, अप्रशिक्षित और निहत्थे इनसान की होगी, जिसे लड़ाई के मोर्चे पर भेजा जाए। ज़ाहिर है उससे किसी बड़े कारनामे की आशा नहीं की जा सकती। वह दुश्मन पर विजय क्या पाएगा, उसके मुक़ाबले में देर तक जम भी नहीं सकता।

इस्लाम अपने माननेवालों के अन्दर जो गुण और ख़ूबियाँ देखना चाहता है, यहाँ उन सबके बारे में बात नहीं की गई है, बल्कि दावत के काम के लिए उनमें से कुछ गुणों और ख़ूबियों का महत्त्व बताया गया है, लेकिन इससे बहरहाल यह अन्दाज़ा किया जा सकता है कि इस्लाम मन और सोच को किस तरह प्रशिक्षित करता है और इस्लाम की सेवा के लिए किन गुणों और ख़ूबियों की ज़रूरत है।

अल्लाह-पर ईमान

अल्लाह पर ईमान दीन की बुनियाद है

अल्लाह पर ईमान उसके दीन की बुनियाद है। इसी से ईमानवालों और ग़ैर-ईमानवालों के बीच अन्तर किया जाता है। इनसान इस ज़िन्दगी में दो ही तरीक़े अपना सकता है– या तो वह अल्लाह तआला की बन्दगी करनेवाला होगा या शैतान के पीछे चलेगा। हर वह रास्ता जो अल्लाह के बताए हुए रास्ते से टकराता है, शैतान का रास्ता है और यह सच्चाई है कि शैतान की डगर पर चलनेवाला अल्लाह तक कभी नहीं पहुँच सकता। इस्लाम इनसान के अन्दर ख़ुदापरस्ती (ईश-भक्ति) पैदा करना चाहता है और ख़ुदापरस्ती की शुरुआत ईमान से होती है। इनसान अगर अपने ईमान में सच्चा और पक्का है, तो उसकी आत्मा बन्दगी की भावनाओं से परिपूर्ण होगी और उसकी पूरी ज़िन्दगी पर ख़ुदा की बन्दगी छा जाएगी। बड़े सरकशों से उसका रिश्ता कट जाएगा और ख़ुदा से उसका सम्बन्ध मज़बूत हो जाएगा–

فَمَنْ يَّكْفُرْ بِالطَّاغُوْتِ وَيُؤْمِنْ بِاللّٰهِ فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقٰى لَا
انْفِصَامَ لَهَا وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٥٦﴾

“जो आदमी बढ़े हुए सरकश का इनकार कर दे और अल्लाह पर ईमान ले आए; तो उसने एक मज़बूत रस्सी थाम ली, जो कभी टूटनेवाली नहीं है।” (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-256)

अल्लाह पर ईमान की ज़रूरी शर्तें

अल्लाह पर ईमान का मतलब यह है कि आपने ख़ुद को पूरी तरह

उसके हवाले कर दिया है। आपने उसकी बन्दगी में अपने आपको इस तरह दे दिया है कि अब आप पर किसी दूसरे की सत्ता नहीं क़ायम हो सकती। आप दुनिया में केवल अल्लाह की बन्दगी के लिए जी रहे हैं। इसके अलावा आपकी ज़िन्दगी का और कोई उद्देश्य नहीं है। ईमान के द्वारा आप इस बात का पक्का वादा करते हैं कि आप अल्लाह के बन्दे और उसके आदेश के अधीन हैं। आप ठीक उसी तरह ज़िन्दगी बसर करेंगे, जिस तरह एक वफ़ादार बन्दा ज़िन्दगी बसर करता है। आप उसी तरफ़ क़दम बढ़ाएँगे, जिस तरफ़ अल्लाह आपको क़दम बढ़ाने का आदेश दे और आपके क़दम उस तरफ़ बढ़ने से रुक जाएँगे, जिस तरफ़ बढ़ते हुए अल्लाह आपको देखना नहीं चाहता। आप जो भी काम अंजाम देंगे, अल्लाह की हिदायत के अनुसार ठीक-ठीक अंजाम देंगे। केवल अल्लाह का फ़ैसला ही आपके लिए फ़ैसला होगा। किसी दूसरे का फ़ैसला आपके सिर को न झुकाएगा।

ईमान वफ़ादारी का नाम है

बन्दगी के वचन में आपका बंध जाना, आपसे आपका सब कुछ छीन लेता है। अगर आप इस वचन में सच्चे और निष्ठावान हैं तो कोई चीज़ आपकी अपनी नहीं रहती, बल्कि अल्लाह तआला की हो जाती है। वचन में बन्ध जाने के बाद आपका मन और आपकी सोच आपकी नहीं, बल्कि अल्लाह की होगी। आप उसी की खुशी के लिए सोचेंगे और हर पल उस को खुश करने की चिन्ता और कोशिश में लगे रहेंगे। आपको अल्लाह की याद के सिवा और कोई याद न सताएगी। आपकी भावनाएँ अल्लाह के प्रति समर्पित होंगी, आपकी खुशी और ग़म का कारण केवल उसकी हस्ती होगी। आप उसकी मुहब्बत में जिएँगे और उसकी मुहब्बत ही में अपनी जान देंगे। अल्लाह तआला का हुक्म होगा, तो आप अपने जानी दुश्मन को सीने से लगाने के लिए तैयार हो जाएँगे और अगर उसकी मर्ज़ी न हो, तो अपनी औलाद को भी अपने से जुदा

करने में आपको झिझक न होगी। आपके पूरे समय पर अल्लाह का अधिकार होगा। आप हर उस काम से बचेंगे, जो आपको उससे दूर कर दे। यही सुबह और शाम जिनकी रंगीनियों में दूसरे खोए हुए हैं, आपके लिए अल्लाह की ख़ुशी पाने का साधन होंगे। उसकी ख़ुशी आपका लक्ष्य और आपकी चाहत होगी और आपकी हर जी-तोड़ कोशिश के पीछे केवल यह भावना काम कर रही होगी कि आप उससे क़रीब हो जाएँ। आप जिस हाल में भी होंगे, सिर से पाँव तक बन्दगी की तस्वीर होंगे। आपकी आत्मा इस चाहत में बेचैन होगी कि अल्लाह आपसे ख़ुश हो जाए। आपकी सबसे बड़ी अभिलाषा यह होगी कि कल अल्लाह के सामने जब पेशी हो, तो उसके सच्चे ग़ुलाम की हैसियत से हो। आप अपना सब कुछ लुटा चुकने के बाद काँपते हुए होंठों से बेचैनी के साथ प्रार्थना करेंगे, "ऐ अल्लाह! जो कुछ था, ग़ुलाम ने हाज़िर कर दिया। अब तू क़बूल फ़रमा।" इसी बात को क़ुरआन में इस तरह कहा गया है—

إِنَّ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝

"बेशक मेरी नमाज़ और मेरी क़ुरबानी और मेरी ज़िन्दगी और मेरी मौत अल्लाह ही के लिए है, जो सारे जहानों का रब है।"
(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-162)

ईमान अल्लाह की ग़ुलामी का नाम है और अल्लाह की ग़ुलामी एक बहुत बड़ा पद है, जो हर किसी को आसानी से हासिल नहीं होता। अल्लाह अपनी ग़ुलामी के लिए केवल उस आदमी को क़बूल करता है, जो जी-जान से उसके प्रति समर्पित हो जाना चाहता हो। आप अपना बेहतरीन समय, अपनी क़ीमती पूँजी और अपनी बेहतरीन सलाहियतें अल्लाह के हवाले करने के लिए हरदम तत्पर हैं, तो अल्लाह भी आपको अपनी ग़ुलामी में लेने के लिए तैयार है। आप अपना सब कुछ उसकी राह में लगा दीजिए, तो आपको बन्दगी और

ग़ुलामी का महान पद प्राप्त होगा। अगर आप इस पूर्ण समर्पण के लिए तैयार नहीं हैं और अल्लाह की ग़ुलामी को अपनी ज़िन्दगी में केवल एक गौण स्थान देना चाहते हैं, तो ऐसी अपूर्ण ग़ुलामी उसे मंज़ूर नहीं। बहुत-से कारोबारी अपना एक वास्तविक कारोबार रखते हैं, जिसपर वे अपनी मूल शक्ति ख़र्च करते हैं और एक उनका गौण कारोबार होता है, जिसको वे अपने बचे हुए समय में अंजाम देते हैं। लेकिन आप अल्लाह की बन्दगी को गौण रूप से अपना नहीं सकते। अल्लाह की ग़ुलामी आपका लक्ष्य और आपकी चाहत है, तो इसके लिए आपको अपनी पूरी ज़िन्दगी का सौदा करना पड़ेगा। आप अल्लाह के बन्दे और ग़ुलाम बनकर रहना चाहते हैं और अपने इस इरादे में पक्के हैं, तो अपने आपको पूरी तरह उसकी ग़ुलामी में दे दीजिए। जो आदमी किसी एक मालिक का ग़ुलाम बन चुका हो, उसके लिए यह बात हरगिज़ शोभा नहीं देती कि वह एक पल के लिए भी दूसरे की ग़ुलामी पसन्द करे। ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता कि आप दूसरे की ग़ुलामी में लगे हुए हैं और बेकार समय में अल्लाह का नाम लेकर उसकी ग़ुलामी की सनद हासिल कर लें। अल्लाह अत्यन्त स्वाभिमानी है। वह शिर्क को पसन्द नहीं करता। जो आदमी उसकी ग़ुलामी के साथ दूसरे की ग़ुलामी का पैवन्द लगाए, वह ऐसी ग़ुलामी को क़बूल नहीं करता। वह अपनी ग़ुलामी में केवल उस आदमी को लेता है, जो ग़ुलामी के हर बन्धन को तोड़कर एकमात्र उसी की ग़ुलामी का पट्टा अपनी गर्दन में डाल ले।

अगर कोई आदमी अल्लाह की बन्दगी में इस तरह आता है कि किसी मामले में फ़ैसले का अधिकार उसको नहीं देना चाहता, तो सही अर्थों में वह अभी उसकी बन्दगी में दाख़िल ही नहीं हुआ है। जब तक इनसान अपनी मर्ज़ी को छोड़ न दे और अपनी हर चीज़ को अल्लाह के हवाले न कर दे, उसका बन्दा नहीं बन सकता। अल्लाह की माँग हमसे आंशिक ग़ुलामी की नहीं, बल्कि पूर्ण ग़ुलामी की है–

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ ٱدْخُلُوا۟ فِى ٱلسِّلْمِ كَآفَّةً وَلَا تَتَّبِعُوا۟ خُطُوَٰتِ ٱلشَّيْطَٰنِ ۚ إِنَّهُۥ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ ۝

"ऐ ईमानवालो! तुम पूरे-के-पूरे इस्लाम में दाख़िल हो जाओ और शैतान के पीछे न चलो। वह तुम्हारा खुला हुआ दुश्मन है।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-208)

वफ़ादारी और बेवफ़ाई एक साथ नहीं हो सकती

कभी-कभी इनसान सोचता कि उसको ईमान की दौलत मिली है। लेकिन इसके बावुजूद उसकी ज़िन्दगी बन्दगी की रूह से ख़ाली होती है। वह मानता है कि अल्लाह ही उसका मालिक और स्वामी है। लेकिन अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी बन्दगी के लिए उसके अन्दर पूरी तड़प और बेचैनी नहीं पाई जाती। वह अल्लाह पर ईमान का दावा करता है। लेकिन उसके लिए क़ुरबानी उसको नागवार गुज़रती है। वह अल्लाह से प्रेम का प्रदर्शन करता है, लेकिन दुनिया का प्रेम उसके दिल-दिमाग़ पर छाया रहता है। वह बार-बार अल्लाह का नाम लेता है, लेकिन उसके कर्म और आचरण पर अल्लाह की सत्ता क़ायम नहीं होती। यह एक स्पष्ट विरोधाभास है। दुनिया की मुहब्बत और अल्लाह का मुहब्बत कभी एक जगह जमा नहीं हो सकते। ऐसा नहीं हो सकता कि इनसान अल्लाह के डर से भी काँप रहा हो और दूसरों का डर भी उसे खाए जा रहा हो। अल्लाह पर इनसान का ईमान भी हो और उसका दिल क़ुरबानी के जज़्बे से ख़ाली भी हो। ईमान तो वह चीज़ है, जो बाप के हाथ से बेटे के गले पर छुरी चला देता है और बेटे को बाप के ख़िलाफ़ खड़ा कर देता है; जो शरीर और प्राण के रिश्ते से ज़्यादा अल्लाह से आदमी के सम्बन्ध को मज़बूत करता है; जो माल और दौलत की मुहब्बत को निकाल कर अल्लाह की मुहब्बत को दिल की गहराइयों में उतारता है; जो इनसान को इस योग्य बनाता है कि वह अल्लाह को ख़ुश करने के लिए घर-बार, जाति और देश के बन्धनों को

तोड़ दे–

قَدْ كَانَتْ لَكُمْ أُسْوَةٌ حَسَنَةٌ فِيٓ إِبْرٰهِيْمَ وَالَّذِيْنَ مَعَهٗ ۚ إِذْ قَالُوْا لِقَوْمِهِمْ إِنَّا بُرَءٰٓؤُا مِنْكُمْ وَمِمَّا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ۫ كَفَرْنَا بِكُمْ وَبَدَا بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةُ وَالْبَغْضَآءُ أَبَدًا حَتّٰى تُؤْمِنُوْا بِاللّٰهِ وَحْدَهٗٓ

"तुम्हारे लिए अच्छा नमूना है इबराहीम और उसके साथियों में, जबकि उन्होंने अपनी क़ौम से कहा कि हम बरी हैं तुमसे और तुम्हारे माबूदों (मनगढ़न्त पूज्यों) से, जिनकी तुम अल्लाह के सिवा इबादत करते हो। हम तुम्हारी नीति को नकारते हैं। हमारे और तुम्हारे बीच हमेशा के लिए दुश्मनी और वैर ज़ाहिर हो चुका है; यहाँ तक कि तुम एकमात्र अल्लाह पर ईमान ले आओ।" (क़ुरआन, सूरा-60 मुम्तहिना, आयत-4)

ईमान आदमी को अल्लाह का निष्ठावान और वफ़ादार बन्दा बनाता है। वह उसके सिवा किसी को ख़ुदाई का मक़ाम देने या ख़ुदाई में साझी बनाने के लिए कभी तैयार नहीं होता। ईमान की हक़ीक़त जब किसी पर खुल जाती है, तो उसके दिल पर असत्य का क़ब्ज़ा नहीं रहता और वह पूरी तरह अल्लाह की ग़ुलामी में चला आता है। झूठ से इनसान उसी समय धोखा खाता है, जबकि वह हक़ से अनजान होता है। अगर हक़ीक़त उजागर हो चुकी है तो झूठ का असर ख़त्म हो जाना चाहिए झूठ का अगर शासन है, तो इसका अर्थ यह कि सच्चाई अभी निगाहों से ओझल है। जिस आदमी को यह यक़ीन हासिल हो कि वह अल्लाह का बन्दा है और उसकी बन्दगी के सिवा कोई दूसरा रवैया उसके लिए सही नहीं है, वह कैसे उससे बग़ावत का रवैया अपना सकता है। ईमान वह चीज़ है, जिससे मुर्दा दिल ज़िन्दगी पाते हैं। इसलिए मुमकिन नहीं है कि इनसान के दिल में ईमान भी हो और उसपर मौत की-सी बेसुधी भी छा जाए। ईमान केवल एक विचारधारा नहीं है, जो मन में पैदा होती और मन ही में दफ़्न हो जाती है, बल्कि यह एक

क्रान्तिकारी सोच है, जो इनसान को पूरी तरह बदल देती है; जो इनसान को दुनिया की हर सत्ता की ग़ुलामी से निकालकर एकमात्र अल्लाह ही के प्रभुत्व में पहुँचा देता है।

पारम्परिक ईमान और वास्तविक ईमान

इसमें शक नहीं कि अल्लाह की नेमतों में से यह एक बड़ी नेमत है कि उसने हमको ऐसे परिवार और माहौल में पैदा किया है, जो अल्लाह और उसके पैग़म्बर *(सल्ल.)* पर ईमान रखता है। अगर इस माहौल के बजाय किसी दूसरे माहौल में हम पैदा होते, तो नहीं मालूम आज हम ख़ुदा का नाम भी लेते या न लेते। लेकिन इसे मानने के साथ यह भी एक सच्चाई है कि ईमान ऐसी चीज़ नहीं है, जो केवल माहौल के प्रभाव में आकर अपनाया जाए; बल्कि ईमान मन-मस्तिष्क के फ़ैसले का नाम है। ईमान को विरासत में मिलनेवाला साज़ो-सामान नहीं, बल्कि अपनी कमाई हुई दौलत होनी चाहिए। बेशक पारिभाषिक शब्दों में हम किसी ऐसे आदमी को काफ़िर या हक़ का इनकारी नहीं कह सकते, जो ख़ुदा और उसके पैग़म्बर *(सल्ल.)* को मानता हो; चाहे यह मानना अपने घर और माहौल के प्रभाव से ही क्यों न हो। जो इनसान दीन की बुनियादी बातों को मानता है, वह ईमानवाला है। किसी को बिलकुल ही यह हक़ हासिल नहीं है कि उसको ईमान के दायरे से बाहर निकाल दे। लेकिन इसमें भी शक नहीं कि यह ईमान वह ईमान नहीं जो इनसान को बिलकुल ही बदलकर रख देता है। यह वह यक़ीन नहीं जिससे कुफ़्र और शिर्क के परदे तार-तार हो जाते हैं। यह ईमान उस रूह से ख़ाली है, जो किसी इनसान में दाख़िल होता है; तो उसको एक नया वुजूद दे देता है। हक़ की आवाज़ पर इनसान अगर दौड़ पड़े, तो उसको ईमानवाली ज़िन्दगी नसीब होती है। इस ज़िन्दगी से वंचित होने का अर्थ यह है कि हक़ की आवाज़ उसके कानों तक नहीं पहुँची और अगर पहुँची है, तो अभी उसने उसे आगे बढ़कर क़बूल नहीं किया—

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اسْتَجِيبُوا لِلَّهِ وَلِلرَّسُولِ إِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْيِيكُمْ ۖ

"ऐ ईमानवालो! अल्लाह और उसके पैग़म्बर की पुकार पर 'लब्बैक' (हाज़िर हूँ) कहो, जबकि पैग़म्बर तुम्हें उस चीज़ की तरफ़ बुलाए, जो तुम्हें ज़िन्दगी देनेवाली है।"

(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-24)

यहाँ इस हक़ीक़त को नहीं भूलना चाहिए कि ईमान के असली फल उसी समय मिलते हैं, जबकि वह सोचा-समझा ईमान हो। पारम्परिक ईमान से कभी उसके मनचाहे नतीजे ज़ाहिर नहीं होते। अगर आप अपना थोड़ा-सा समय भी इस सवाल के हल करने में लगाना नहीं चाहते कि क्या सचमुच ख़ुदा है या नहीं? और अगर है, तो वह क्या चाहता है? तो इसका मतलब यह है कि आप पारम्परिक ईमान पर संतुष्ट हैं और इसको सोचे-समझे और सच्चे-पक्के ईमान में बदलने के लिए चिन्तित नहीं हैं। इसलिए आपको उन उत्तम फलों की भी आशा नहीं रखनी चाहिए, जो केवल सोचे-समझे ईमान से ही मिलते हैं। पारम्परिक ईमान विरासत के रूप में मिलता और बहुत अच्छी तरह सोच-समझकर लाया गया ईमान ज़िन्दगी में क्रान्ति बनकर प्रवेश करता है। अगर आप केवल पारम्परिक ईमान पर संतुष्ट हैं, तो आपके अन्दर ईमानी क्रान्ति कभी नहीं आ सकती। इसके लिए ज़रूरी है कि ईमान और यक़ीन की जड़ें आपके दिल में उतर चुकी हों और आपकी सोच और कामों पर उसकी सत्ता क़ायम हो चुकी है।

हर क्रान्ति तर्कों और प्रमाणों की रौशनी में आती है। अतार्किक दावा कभी किसी इनसान को बदल नहीं सकता। इससे थोड़े समय के लिए जोशो-ख़रोश तो पैदा हो सकता है, लेकिन वह शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती, जो इनसान को निरन्तर सक्रिय रखती है। अतार्किक दावा इनसान के अन्दर कायरता पैदा करता है, लेकिन जिस दावे के पीछे तर्क और प्रमाण हो वह इनसान को बहादुर और साहसी बना देता है। आप

किसी ऐसे उद्देश्य के लिए क़ुरबानी नहीं दे सकते, जिसका हक़ होना आपके नज़दीक साबित न हो, लेकिन अगर आपने किसी उद्देश्य को सच समझकर क़बूल किया है, तो क़ुरबानी की राह आपके लिए आसान हो जाएगी। उसके लिए आप अपना सब कुछ लुटा सकेंगे, उसकी ख़ातिर आपकी दुनिया आपसे छिन जाए तो भी आपको ग़म न होगा। आपको यह इच्छा और अभिलाषा परेशान न करेगी कि किसी भी क़ीमत पर आपका और आपके बच्चों का भविष्य उज्ज्वल हो। आप इस चिन्ता से मुक्त होंगे कि आपकी क़ुरबानियों का कोई बदला आपको मिल रहा है या नहीं। जिस उद्देश्य को आपने हक़ समझकर बुद्धि-विवेक के साथ क़बूल किया है, वह हमेशा आपकी निगाहों के सामने होगा। इससे आपके सीने में ऊर्जा पैदा होगी और आपके इरादों और हौसलों को लगातार गति और प्रेरणा मिलती रहेगी। इसके होते हुए आप आलस और बेहिसी की शिकायत न करेंगे। आप किसी भी चीज़ के मोह में इस उद्देश्य को भूलनेवाले न होंगे।

यही हाल ख़ुदा पर ईमान का है। अगर आपने ख़ुदा की अवधारणा को पूरी सोच-समझ के साथ अपने मन में जगह दी, तो मुमकिन नहीं कि आपकी सोच और कर्म की दुनिया में जड़ता पाई जाए और आपके अन्दर कोई हलचल और बेचैनी न हो। अगर यह असम्भव है कि आग हो और उसकी गर्मी न महसूस की जाए, तो यक़ीन मानिए कि इससे अधिक यह बात असम्भव है कि ईमान की गर्मी मौजूद हो और इनसान का दिल मुर्दा बना रहे। क़ुरआन ने पैग़म्बरों के इतिहास का वर्णन किया है। यह इतिहास बताता है कि ख़ुदा के पैग़म्बर अन्धानुकरण नहीं करते थे, बल्कि अपने सोचे-समझे संकल्प पर दिल-जान से जमे हुए थे। वे जो कुछ कहते तर्क और प्रमाण की रौशनी में कहते। उनके हर दावे के पीछे तर्कों और प्रमाणों की शक्ति होती थी। हर पैग़म्बर इस एलान के साथ अपनी क़ौम के सामने आता कि उसके पास ख़ुदा का दिया हुआ प्रमाण मौजूद है। यही तर्क और प्रमाण की शक्ति थी, जिसके

कारण पैग़म्बरों का इतिहास निरन्तर संघर्ष का इतिहास, त्याग और बलिदान का इतिहास, संकल्प और साहस का इतिहास बन गया।

ईमान और निफ़ाक़ (कपटाचार) की पहचान

अल्लाह तआला पर ईमान जितना पक्का और मज़बूत होगा, उससे उतना ही ऊँचा आचरण वुजूद में आएगा। अगर उसपर कमज़ोरी और सुस्ती छा जाए, तो चरित्र और आचरण पर भी ज़रूर ही इसका असर पड़ेगा। ईमान की कमज़ोरी के साथ उच्च आचरण की उम्मीद नहीं की जा सकती है। इसलिए ईमान की कमज़ोरी से चौकस रहने की ज़रूरत है। इसका इलाज जल्द होना चाहिए वरना यह कभी निफ़ाक़ की तरफ़ भी ले जा सकता है। निफ़ाक दीन और ईमान के लिए बहुत विनाशकारी है। जिस आदमी को निफ़ाक़ का रोग लग जाए और जड़ पकड़ ले, वह दीन के मामले में कभी पूर्ण निष्ठावान और एकाग्र न होगा। वह हक़ के इनकार और ईमान के बीच हमेशा दुविधा और अविश्वास का शिकार रहेगा। एक क़दम आगे बढ़ेगा, तो दस क़दम पीछे हटेगा। हक़ को अच्छी तरह पहचानने के बावुजूद उसकी ख़ातिर किसी कष्ट को सहन करने के लिए हरगिज़ तैयार न होगा। कायरता और पस्तहिम्मती उसका साथ न छोड़ेगी। इसके विपरीत ईमान विश्वास और आस्था की दौलत प्रदान करता है; संकल्प और साहस, हक़ पर मज़बूत जमाव और बहादुरी प्रदान करता है। हक़ के लिए जीना और मरना सिखाता है। ईमान तो वह है जिससे विरोध के तूफ़ानों का सामना करने की शक्ति मिलती है। दीन के वर्चस्व के लिए जान और माल की क़ुरबानी देने में दुविधा और झिझक नहीं होती। सिर कटाना और माल लुटाना आसान होता है।

इन पहलुओं की तरफ़ सूरा-33, अहज़ाब में, आयत 9-27 में विस्तार से रौशनी डाली गई है।

अहज़ाब की लड़ाई में मदीना के ऊपर (पूरब की तरफ़) से और

नीचे (पश्चिम की तरफ़) से दुश्मनों की फ़ौज की फ़ौज उमड़ आई। उनकी संख्या, जोशो-ख़रोश, शान-बान, साज़ो-सामान और तैयारी को देखकर कलेजे मुँह को आ रहे थे। कमज़ोर ईमानवालों के दिल काँप रहे थे। अल्लाह तआला की मदद और वादों के बारे में तरह-तरह के विचार और भ्रम जगह पाने लगे थे। उस समय मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) लोग ख़ुद अपने मुँह से जिन भावनाओं को व्यक्त कर रहे थे, उससे उनके मन का कपटाचार खुलकर सामने आ रहा था। कहने लगे : अल्लाह और उसके पैग़म्बर ने तो हमसे कहा था कि अरब और ग़ैर-अरब सब तुम्हारे अधीन होंगे और हर तरफ़ उसके दीन का परचम लहराएगा। लेकिन अब तो साफ़ नज़र आ रहा है कि यह सब बच्चों को बहलाने की बातें थीं। यहाँ तो जान बचानी मुश्किल हो रही है—

مَا وَعَدَنَا اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗٓ اِلَّا غُرُوْرًا ۝

"हमसे अल्लाह और उसके पैग़म्बर ने जो वादा किया था, वह केवल एक धोखा था।" (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-12)

उनमें का एक गरोह अपने संगी-साथियों से कह रहा था कि अब तो यहाँ रहने का भी कोई उपाय नहीं है। जिन जगहों और बस्तियों को छोड़कर तुम यहाँ आए हो, वहीं लौट चलो; नहीं तो पीस दिए जाओगे।

कुछ लोग अपने कपटाचार पर परदा डालने के लिए बहाना बनाने लगे कि हमारे घर असुरक्षित और खुले पड़े हैं। इसलिए हमें मोर्चे से वापस जाने की इजाज़त दी जाए। क़ुरआन ने कहा—

—وَمَا هِيَ بِعَوْرَةٍ—

"वास्तव में उनके घर असुरक्षित नहीं थे।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-13)

औरतों और बच्चों की सुरक्षा का पहले से इन्तिज़ाम कर लिया गया था। बहाना बेकार था—

اِنْ يُّرِيْدُوْنَ اِلَّا فِرَارًا ۝

"वे तो बस मोर्चे से भाग जाना चाहते थे।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-13)

क़ुरआन ने कहा कि अगर मदीने पर चारों तरफ़ से दुश्मन हमला कर दे, तो वे अपना दीन और ईमान भी छोड़ बैठेंगे और दीन से फिर जाने का फ़ितना फूट पड़ेगा। इसके बाद एक अहम बात फ़रमाई—

وَلَقَدْ كَانُوْا عَاهَدُوا اللّٰهَ مِنْ قَبْلُ لَا يُوَلُّوْنَ الْاَدْبَارَ ۭ وَكَانَ عَهْدُ اللّٰهِ مَسْـُٔوْلًا ۝

"उन्होंने इससे पहले अल्लाह से वादा किया था कि वे पीठ नहीं फेरेंगे। अल्लाह से जो वादा किया गया है, उसके बारे में ज़रूर पूछा जाएगा।" (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-15)

इस्लाम इस बात का वचन है कि आदमी हर हाल में अल्लाह के दीन पर क़ायम रहेगा और उसकी मदद और हिमायत में जान-माल की क़ुरबानी से पीछे न हटेगा। उन्होंने इस्लाम का एलान करके यही प्रतिज्ञा की थी। उनमें से कितने ही थे, जिन्होंने कहा था कि बद्र और उहुद की लड़ाई में हम अपनी जान निछावर करने का प्रमाण नहीं प्रस्तुत कर सके थे। अब कोई मौक़ा आया, तो उसकी भरपाई कर देंगे और जान निछावर करने में किसी से पीछे नहीं रहेंगे। इन सब बातों के बावजूद उस नाज़ुक घड़ी में जिस तरह उन्होंने फ़रार की राह अपनाई वह उस संकल्प और प्रतिज्ञा का खुला उल्लंघन था। अल्लाह के यहाँ इसकी ज़रूर पूछ-गछ होगी।

उन कपटाचारियों के बारे में कहा गया कि 'वे तुम्हारे मामले में बहुत ही कंजूस हैं।' इसका मतलब यह है कि उन्हें तुम्हारे ग़रीबों, ज़रूरतमन्दों और मुहताजों से कोई हमदर्दी नहीं है। वे इनपर अपना माल ख़र्च करना नहीं चाहते। दीन की दावत और उसके वर्चस्व के जो भरसक प्रयास हो रहे हैं, उसमें उनकी दौलत का कोई हिस्सा नहीं है।

अल्लाह की राह में जान-तोड़ कोशिश या उसकी तैयारी में शामिल होने या अपना माल ख़र्च करने पर उनके अन्दर कोई आमादगी नहीं है। किसी भले काम में तुम्हें उनकी कोई हमदर्दी हासिल न होगी।

इसके साथ कहा गया, 'वे धन के लोभी हैं।' लड़ाई की चर्चा हो, तो वे तुम्हें इस तरह देखते हैं कि जैसे मौत की बेहोशी छाई हुई हो। जब युद्ध का ख़तरा टल जाए और माले-ग़नीमत (युद्ध में प्राप्त शत्रु-धन) बांटा जा रहा हो, तो उनकी चिकनी-चुपड़ी बातें देखने की होती हैं कि माले-ग़नीमत में उनका भी हिस्सा होना चाहिए। वे भी इसके हक़दार हैं।

उस नाज़ुक घड़ी में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) ने जिस तरह से हक़ पर पूर्ण जमाव, संयम, साहस और वीरता, अल्लाह ही पर भरोसा, क़ुरबानी और त्याग का प्रमाण दिया, वह एक अनुपम आदर्श है। अल्लाह और आख़िरत पर ईमान हो, तो आदमी उस महान आदर्श को नज़र के सामने रखेगा और उसपर चलने की कोशिश करेगा—

لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِيْ رَسُوْلِ اللّٰهِ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ لِّمَنْ كَانَ يَرْجُوا اللّٰهَ وَالْيَوْمَ الْاٰخِرَ
وَذَكَرَ اللّٰهَ كَثِيْرًا ۝

"तुम्हारे लिए अल्लाह के पैग़म्बर की हस्ती में बेहतरीन नमूना है हर उस आदमी के लिए जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखे और अल्लाह को ख़ूब याद करे।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-21)

सच्चे और पक्के ईमानवालों ने जब देखा कि इस्लाम-दुश्मनों की फ़ौज की फ़ौज मदीना पर चढ़ आई है, तो वे न तो डरे और न हिम्मत हारी, बल्कि इससे उनके ईमान और यक़ीन में बढ़ोत्तरी हो गई कि जिन मरहलों से गुज़रकर हक़ कामयाब और प्रभावी हो जाता है, वे मरहले आ गए। अल्लाह और उसके पैग़म्बर ने जो वादे किए थे या

क़ैसरो-किसरा का दौर ख़त्म होने और रोम और ईरान पर विजय और सफलता की जो ख़ुशख़बरी दी जा रही थी, उसके सामने आने का समय आ पहुँचा है—

وَلَمَّا رَاَ الْمُؤْمِنُوْنَ الْاَحْزَابَ قَالُوْا هٰذَا مَا وَعَدَنَا اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَصَدَقَ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَمَا زَادَهُمْ اِلَّاۤ اِيْمَانًا وَّتَسْلِيْمًا ۝

"जब ईमानवालों ने फ़ौजें देखीं, तो कहा कि यह तो वह चीज़ है जिसका अल्लाह और उसके पैग़म्बर ने वादा किया था और अल्लाह और उसके पैग़म्बर ने सच कहा था। इसने उनके ईमान और समर्पण को और ज़्यादा बढ़ा दिया।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-22)

ईमान, आस्था और पूर्ण समर्पण के इस जज़्बे के तहत उनमें से बहुतों ने अपनी जान के नज़राने पेश कर दिए और बहुत-से सिर हथेली पर लिए शहीद होने की तमन्ना में जी रहे हैं। अल्लाह से जो वफ़ादारी और वचनबद्धता का वादा किया था, उसे कुछ ने पूरा कर दिखाया और कुछ बेताब हैं कि कब मौक़ा मिले और कब इसका प्रमाण दिया जाए—

مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ رِجَالٌ صَدَقُوْا مَا عَاهَدُوا اللّٰهَ عَلَيْهِ ۚ فَمِنْهُمْ مَّنْ قَضٰى نَحْبَهٗ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّنْتَظِرُ ۖ وَمَا بَدَّلُوْا تَبْدِيْلًا ۝

"ईमानवालों में से कितने ही हैं, जिन्होंने उस वादा को सच कर दिखाया; जो उन्होंने अल्लाह और उसके पैग़म्बर से किया था। उनमें से कुछ ने अपना ज़िम्मा पूरा कर दिया (जान दे दी) और कुछ इसका इन्तिज़ार कर रहे हैं। अल्लाह से जो वादा उन्होंने किया था, उसमें कण-भर भी उन्होंने तबदीली नहीं की।"

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-23)

ईमान से चरित्र और आचरण में क्रान्ति पैदा होती है और अच्छी और ऊँचे दरजे की ख़ूबियाँ वुजूद में आती हैं। इसके विपरीत निफ़ाक़

(कपटचार) से दूसरी ही तरह का चरित्र उत्पन्न। यह स्वार्थ, केवल अपने ही हित की कामना और अविश्वसनीय आचरण को जन्म देता है। क़ुरआन मजीद ने बहुत-सी जगहों पर विस्तार से इसका वर्णन किया है। यहाँ लड़ाई और विशेष रूप से अहज़ाब की लड़ाई के अवसर पर ईमानवालों ने जिस दृढ़ता और चरित्र की प्रमाण दिया तथा कपटाचारियों से आचरण और चरित्र की जो गिरावट नज़र आई उसका चित्रण किया गया है।[1] दीन की दावत भी एक तरह की मोर्चाबन्दी है। यह असत्य की जगह सत्य को क़ायम करने की कोशिश है। इसमें कामयाबी के लिए बहुत ही शक्तिशाली और पक्का ईमान चाहिए। इस रास्ते में ऐसे कठिन मरहले आ सकते हैं और आते रहे हैं कि कपटाचार और कमज़ोर ईमान के साथ आदमी के क़दम जम ही नहीं सकते।

अल्लाह से लगाव और मुहब्बत ईमान की रूह है

अल्लाह से मुहब्बत और दिली लगाव दीन की रूह है। ख़ुदा का इनकार करनेवालों को ग़लत आस्था और सोच से, बुतपरस्तों को बुतों से, आम लोगों को अपने नेताओं और लीडरों से प्रेम होता है। कभी-कभी यह प्रेम इस तरह होता है जैसे वे उनके ख़ुदा हैं और वे अपने ख़ुदा से प्रेम करते हैं। लेकिन ये सारे लगाव और मुहब्बत वक़्ती हैं। अगर आदमी को विश्वास हो जाए कि उसका प्रिय उसका साथ नहीं देगा और कठिन घड़ी में उसे बेसहारा और असहाय छोड़ देगा या वह इस प्रेम के नतीजे में नुक़सान में रहेगा, तो यह प्रेम ख़त्म हो जाता है। इसलिए अल्लाह का साझी ठहरानेवालों की नाव जब भंवर में फँसती है, तो वे अपने बनावटी पूज्यों को भूल जाते हैं और एक अल्लाह को पुकारने लगते हैं।[2] यह इस दुनिया का हाल है।

---

[1] अहज़ाब की लड़ाई जिन हालात में हुई, उसे जानने के लिए इस्लामी इतिहास का अध्ययन करना चाहिए।

[2] देखें— क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-22

जहाँ तक परलोक का सम्बन्ध है, वहाँ झूठे ख़ुदाओं का राज ख़त्म हो जाएगा। वे और उनके चाहनेवाले एक-दूसरे को बुरा-भला कहेंगे।

अल्लाह के चाहनेवाले उससे जिस तरह प्रेम करते हैं, उसकी शान ही कुछ और होती है। अल्लाह से उनका प्रेम झूठे ख़ुदाओं के पुजारियों के प्रेम से हज़ारों गुना ज़्यादा होता है। दुख-सुख, आराम-तकलीफ़, ख़ुशहाली-बदहाली, बीमारी और सेहत किसी भी हाल में उनका प्रेम-सम्बन्ध नहीं टूटता। वे समझते हैं सब कुछ ख़ुदा की तरफ़ से है।

वे धैर्य और कृतज्ञता का प्रतीक होते हैं और उसी की मेहरबानी के दामन में सुख-शान्ति पाते हैं। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी उसका दामन पकड़े रहते हैं। किसी और की तरफ़ नज़र उठाकर नहीं देखते और उसी से भलाई की आशा रखते हैं। ख़ुदा की हस्ती पर यह आशा और भरोसा केवल उसके सच्चे और पक्के बन्दों ही को हासिल होता है–

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَتَّخِذُ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ اَنْدَادًا يُّحِبُّوْنَهُمْ كَحُبِّ اللّٰهِ ۭ وَالَّذِيْنَ
اٰمَنُوْٓا اَشَدُّ حُبًّا لِّلّٰهِ ۭ

"लोगों में से कुछ वे हैं, जो दूसरों को अल्लाह का साझीदार और समकक्ष बनाते हैं। उनसे ऐसा ही प्रेम करते जैसे अल्लाह से प्रेम (होना चाहिए) और वे लोग जो ईमान लाए उनको अल्लाह से उससे अधिक प्रेम होता है।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-165)

ईमानवाले प्र अल्लाह की बहुत बड़ी मेहरबानी और कृपा होती है कि वह उनके दिलों में अपनी मुहब्बत डाल देता है और हक़ के इनकार और बुरे चाल-चलन के प्रति उनके अन्दर नफ़रत पैदा कर देता है। इस दौलत का मिलना इस बात का प्रमाण है कि उनको सत्य-ज्ञान और मार्गदर्शन से नवाज़ा गया और अज्ञान और गुमराही से बचा लिया

गया—

—وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيۡكُمُ الۡاِيۡمَانَ وَزَيَّنَهٗ فِىۡ قُلُوۡبِكُمۡ وَكَرَّهَ اِلَيۡكُمُ الۡكُفۡرَ وَالۡفُسُوۡقَ وَالۡعِصۡيَانَ ‌ؕ اُولٰٓـئِكَ هُمُ الرّٰشِدُوۡنَ ۙ

"लेकिन अल्लाह ने तुम्हें ईमान की मुहब्बत से नवाज़ा और तुम्हारे दिलों को उससे सजा-सँवार दिया। तुम्हारे लिए कुफ़्र, गुनाह और नाफ़रमानी को नापसन्द कर दिया। यही लोग हिदायत पानेवाले हैं।" (क़ुरआन, सूरा-49 हुजुरात, आयत-7)

अल्लाह के प्रेम से जब दिल की दुनिया आबाद हो जाती है, तो खुद ब खुद कुफ़्र, बुरे चाल-चलन और गुनाह से नफ़रत और दूरी होने लगती है। अल्लाह से प्रेम और कुफ़्र और गुनाह से प्रेम एक दिल में जमा नहीं हो सकता।

अल्लाह से मुहब्बत करनेवाले ईमानवालों से मुहब्बत करते हैं

अल्लाह से प्रेम होगा, तो उसपर ईमान और आस्था रखनेवालों और उसकी आज्ञा का पालन करनेवालों से भी प्रेम होगा। उनसे हार्दिक निकटता और सम्बन्ध महसूस होगा। उनकी सेवा सुख-चैन का कारण होगी और उनके साथ प्यार-मुहब्बत के बरताव से एक तरह का सुख-चैन महसूस होगा और उनके दुख-दर्द में सहानुभूति की भावनाएँ अपने आप उभरेंगी। आदमी उनका आदर-सम्मान करेगा, उन्हें बुरी नज़र से नहीं देखेगा। उनके मुक़ाबले में अपनी बड़ाई या घमंड और अहंकार का दिखावा न करेगा, बल्कि आदर-सत्कार और विनम्रता अपनाएगा। यही चीज़ ईमानवालों को शक्तिशाली उम्मत बनाए रखती है और उनकी एकता को बिखरने नहीं देती।

अल्लाह से मुहब्बत करनेवाले उसके बाग़ियों के सामने नहीं झुकते

अल्लाह से प्रेम करनेवाले इनसान के चरित्र का दूसरा पहलू यह है

कि वह उन लोगों के मुक़ाबले में जो अल्लाह के इनकारी और बाग़ी हैं और उसके दीन को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं, अटल पहाड़ बनकर खड़ा होगा। वे उसे झुका न सकेंगे। उसके अन्दर लोहे की-सी कठोरता होगी और वे उसे नर्म चारा न पाएँगे। अल्लाह के दीन को अपनाने और उसपर अमल करने और चलने पर उसे निन्दा और अपमान का कितना ही निशाना बनाया जाए और उसपर लान-तान के कितने ही तीर बरसाए जाएँ, वह हार नहीं मानेगा और हर वार को अपने सीने पर लेते हुए आगे बढ़ता जाएगा और बिना किसी डर और ख़तरे के हक़ की आवाज़ बुलन्द करता रहेगा। यही सच्चाई इस आयत में बयान हुई है—

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِه فَسَوْفَ يَاْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُّحِبُّهُمْ
وَيُحِبُّوْنَهٗٓ ۙ اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ ۡ يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ
وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَاۗىِٕمٍ ۭ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٥٤﴾

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुममें से जो कोई दीन से फिर जाए, तो (उसे मालूम होना चाहिए कि) अल्लाह बहुत जल्द ऐसे लोगों को ले आएगा जिनसे वह प्रेम करेगा, जो उससे प्रेम करेंगे। मुसलमानों के लिए वे नर्म स्वभाव होंगे और (हक़ के) इनकारियों के मुक़ाबले में कठोर होंगे। अल्लाह की राह में जी-जान से कोशिश करेंगे। किसी भर्त्सना करनेवाले की निन्दा से नहीं डरेंगे। यह अल्लाह की मेहरबानी है, जिसको चाहता नवाज़ता है और अल्लाह बड़ी समाईवाला और सब कुछ जाननेवाला है।"[1] (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-54)

[1] '(सत्य के) इनकारियों के मुक़ाबले में कठोर' के शब्दों से यह ग़लतफ़हमी नहीं होनी चाहिए कि अल्लाह से प्रेम करनेवाला इनसान सत्य के इनकारियों और बाग़ियों से हर पल मोर्चे पर रहता है और उनके साथ क़दम-क़दम पर कठोर और आक्रामक रवैया अपनाता है। जो बात यहाँ कही गई है उसके दो पहलू

जो मुहब्बत अल्लाह के मुहब्बत के तहत हो वह जाइज़ है

इस दुनिया में इनसान न जाने किन-किन चीज़ों से मुहब्बत करता है और उनसे बहुत लगाव रखता है। उसे स्वभावतः माँ-बाप से, बीवी-बच्चों से, साथी-संगियों से, नाते-रिश्तेदारों से और ऐसे ही अनेक लोगों से प्रेम होता है। वे ज़िन्दगी गुज़ारने की चीज़ों और साज़ो-सामान से भी प्रेम रखता है। यह प्रेम ग़लत नहीं, बल्कि अपनी हदों में जाइज़ और पसन्दीदा है। लेकिन ईमान की पहचान यह है कि इनमें से हर प्रेम अल्लाह और उसके पैग़म्बर के प्रेम के अधीन हो जाए। जब कभी इन दोनों प्रकार के प्रेमों में टकराव हो, तो अल्लाह और उसके पैग़म्बर का प्रेम सब पर छा जाए।

अल्लाह वफ़ादार बन्दों से प्रेम करता है

बन्दा जब अल्लाह से प्रेम करता है, उसके गुण-गान में मगन होता है, जब इबादत और फ़रमाँबरदारी में उसके दिन-रात बसर होने लगते हैं, जब इबादत के जज़्बे से उसकी आत्मा ओत-प्रोत होती है और जब

हैं। एक यह कि अल्लाह से प्रेम करनेवाले अपने दीन और ईमान पर सख़्ती से जमे रहते हैं। हक़ के इनकारी उन्हें उससे फेर नहीं सकते। इस तरह के हर मौक़े पर साबित होगा कि वे अटल पहाड़ हैं, जिन्हें अपनी जगह से हटाना मुमकिन नहीं। इसका दूसरा पहलू यह है कि जंग की हालत हो और ईमानवालों को सत्य-विरोधी शक्तियों से मुक़ाबला करना पड़े, तो वे जमाव और बहादुरी का प्रमाण देते हैं। कायरता और नामर्दी का प्रदर्शन नहीं करते। इस दृष्टि से यह बात एक विशेष पृष्टभूमि में कही गई है। इसके तुरन्त बाद 'वे अल्लाह की राह में जी-जान से कोशिश (जिहाद) करते हैं' का वाक्य उसकी तरफ़ इशारा करता है। आम हालतों में इस्लाम ने अपने विरोधियों के साथ हमदर्दी और अच्छे बरताव का आदेश दिया है और उनके नापसन्दीदा, बल्कि ग़लत रवैए पर भी धैर्य और क्षमा की शिक्षा दी है। इसका विस्तृत विवरण लेखक की किताब 'ग़ैर-मुस्लिमों से ताल्लुक़ात और उनके हुक़ूक़' (उर्दू) में देखा जा सकता है।

उसके रास्ते में वह मुसीबतें सहन करता है, तो अल्लाह की कृपा-दृष्टि उसपर होने लगती है और वह उसे अपने प्रेम-पाश में ले लेता है। यह कितना बड़ा बदला है कि एक कमज़ोर बन्दा अपनी छोटी-सी कोशिश से अल्लाह का प्रेमपात्र बन जाता है और उसके अनुग्रह की वर्षा उसपर होने लगती है। यह बात क़ुरआन मजीद में जगह-जगह बयान हुई है। यहाँ कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं–

1. अल्लाह तआला को वे लोग प्रिय हैं, जो उससे किए गए वादे को पूरा करते हैं और उससे डर कर ज़िन्दगी गुज़ारते हैं। यह वादा वास्तव में बन्दगी का वादा है। उसके हुक्मों को मानते रहने का प्रण है। दीन (इस्लाम) पर क़ायम रहने, इसे दूसरों तक पहुँचाने और इसका वर्चस्व स्थापित करने का वादा है। इस वादे पर क़ायम रहना ही वास्तविक ईश-भय और ईश-भक्ति है। इसी से आदमी कामयाबी हासिल कर सकता है। पिछली क़ौमें इस वचन को भंग करने के कारण नाकाम और महरूम हो गईं। अब इससे बचने की हिदायत है–

بَلٰى مَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ۝

"हाँ, जिसने अपना वादा पूरा किया और परहेज़गारी की ज़िन्दगी अपनाई (तो वह कामयाब रहेगा); क्योंकि अल्लाह परहेज़गार लोगों से प्रेम करता है।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-76)

2. अल्लाह उन लोगों को पसन्द करता है, जो उसे रोते-गिड़गिड़ाते, भय और आशा के साथ सार्वजनिक रूप से ही नहीं, अकेले में भी याद करते हैं और जिनका दामन हर तरह के अन्याय, अत्याचार और धरती पर बिगाड़ फैलाने से पाक होता है–

اُدْعُوْا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً ۭاِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝ وَلَا تُفْسِدُوْا فِي

الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا وَادْعُوْهُ خَوْفًا وَّطَمَعًا ۚ اِنَّ رَحْمَتَ اللّٰهِ قَرِيْبٌ مِّنَ الْمُحْسِنِيْنَ ۝

"अपने रब को पुकारो गिड़गिड़ाकर और चुपके-चुपके। बेशक अल्लाह उन लोगों को नापसन्द करता है, जो उसकी क़ायम की हुई हदों से आगे निकल जाते हैं और धरती में उसके सुधार के (फ़ैसले के) बाद बिगाड़ न फैलाओ और उसे भय और आशा के साथ पुकारो। बेशक अल्लाह की दयालुता क़रीब है, उपकार करनेवाले से।" (क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयतें-55,56)

3. बन्दा जब अल्लाह के दीन (धर्म) का वर्चस्व क़ायम करने के लिए भरसक कोशिश करता है और अपने जान-माल की बाज़ी लगा देता है, तो अल्लाह का प्रेम-पाश उसके लिए खुल जाता है—

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الَّذِيْنَ يُقَاتِلُوْنَ فِيْ سَبِيْلِهٖ صَفًّا كَاَنَّهُمْ بُنْيَانٌ مَّرْصُوْصٌ ۝

"बेशक अल्लाह प्रेम करता है उन लोगों से जो उसके रास्ते में पंक्तिबद्ध होकर लड़ते हैं, मानो वे सीसा पिलाई हुई दीवार हैं।"
(क़ुरआन, सूरा-61 सफ़्फ़, आयत-4)

इन आयतों में दीन-धर्म के विभिन्न पहलुओं का उल्लेख है। इससे अन्दाज़ा किया जा सकता है कि अल्लाह से प्रेम की क्या माँगें हैं और इनसान उसके प्रेम का कब हक़दार होता है, वह किस प्रकार के आचरण को पसन्द करता है और इनसान किन बुरे आचरणों और बुरे कर्मों के कारण उसकी दयालुता और प्रेम से दूर होता चला जाता है।

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) से प्रेम

अल्लाह तआला से प्रेम की माँग यह है कि आदमी के दिल में अल्लाह के पैग़म्बर के आज्ञापालन की भावना हिलोरें मारती रहे। आप (सल्ल॰) की हिदायतों पर वह दिलो-जान से अमल करे और आप

(सल्ल॰) के किसी भी हुक्म की नाफ़रमानी से बचता रहे। अल्लाह के पैग़म्बर के आज्ञापालन का यह महत्त्व इसलिए है कि आप (सल्ल॰) का आज्ञापालन ठीक अल्लाह का आज्ञापालन और आप (सल्ल॰) का हुक्म अल्लाह का हुक्म है। पैग़म्बर (सल्ल॰) के आदेश का पालन अल्लाह के आदेश का पालन है। क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है—

مَنْ يُّطِعِ الرَّسُوْلَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ ۚ وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ﴿٨٠﴾

"जिसने पैग़म्बर की आज्ञा मानी उसने वास्तव में अल्लाह की आज्ञा का पालन किया और जो मुँह मोड़े (तो उसकी सज़ा वह भुगतेगा)। हमने आपको उनपर रखवाला बनाकर नहीं भेजा है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-80)

अल्लाह तआला से प्रेम का प्रमाण ही यह है कि अल्लाह के पैग़म्बर के हुक्मों की पाबन्दी हो और उनकी ज़रा भी नाफ़रमानी न की जाए। इसके बिना अमली दुनिया में इसके कोई अर्थ ही नहीं होंगे। इसलिए पवित्र क़ुरआन में कहा गया है—

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِيْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ ۗ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٣١﴾ قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ ۚ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٣٢﴾

"(ऐ पैग़म्बर इनसे कहो कि) अगर तुम अल्लाह से प्रेम करते हो, तो मेरा अनुसरण करो। अल्लाह तुमसे प्रेम करेगा और तुम्हारे गुनाहों को माफ़ कर देगा। और अल्लाह बड़ा माफ़ करनेवाला और दयावान है। उनसे कहो कि अल्लाह और उसके पैग़म्बर का आज्ञापालन करो। अगर वे मुँह मोड़ें तो (उन्हें मालूम होना चाहिए कि) अल्लाह उन लोगों से प्रेम नहीं करता, जो उसके साथ इनकार का रवैया अपनाते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयतें-31, 32)

इन दो आयतों में से पहली आयत में अल्लाह से प्रेम का प्रमाण पैग़म्बर की पैरवी के रूप में माँगा गया है। दूसरी आयत में अल्लाह और उसके पैग़म्बर के आज्ञापालन का एक साथ आदेश दिया गया है। यह इस सच्चाई की अभिव्यक्ति है कि अल्लाह के पैग़म्बर का अनुसरण ही अल्लाह की आज्ञा का पालन है। यह दो अलग-अलग आज्ञाओं का पालन नहीं है, बल्कि एक ही आज्ञा का पालन है।

इनसान जिससे प्रेम करता है, उसकी बात अपने-आप मानने लगता है। अगर प्रेम प्रभावी हो जाए और दिल-दिमाग़ पर छा जाए, तो वह साक्षात् समर्पण और आनन्द बन जाता है। यह अस्वाभाविक बात है कि किसी से प्रेम भी हो और उसकी आज्ञा का पालन न हो, प्रेम का जोश भी हो और उसकी हिदायत पर अमल भी न हो। यह प्रेम का दावा तो होगा, सच्चा प्रेम न होगा। अल्लाह के पैग़म्बर से प्रेम के बिना ईमान की कल्पना नहीं की जा सकती। इस प्रेम की माँग है कि वह ज़बानी और दिखावे का न हो, बल्कि दिल-जान से हो और आख़िरी हद तक हो। यह किसी रिश्ते और सम्बन्ध के अधीन न हो, बल्कि हर सम्बन्ध पर प्रभावी हो जाए। इसी सच्चाई के बारे में हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

لَا يُؤْمِنُ أَحَدُكُمْ حَتَّىٰ أَكُونَ أَحَبَّ إِلَيْهِ مِنْ وَالِدِهِ وَوَلَدِهِ وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ

"तुममें से कोई आदमी ईमानवाला नहीं होगा, जब तक कि मैं उसके नज़दीक उसके बाप (और माँ) से, उसकी औलाद से और सारे ही इनसानों से अधिक प्रिय न हो जाऊँ।"[1]

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर प्यारे नबी *(सल्ल॰)* की हदीस बयान करते हैं—

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुल-ईमान, बाबु हुब्बिर्रसूलि मिनल-ईमान, मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाबु वुजूबि महब्बतिर्रसूलिल्लाह (सल्ल॰).....आख़िर तक।

لَا يُؤْمِنُ أَحَدُكُمْ حَتّٰى يَكُونَ هَوَاهُ تَبَعًا لِّمَا جِئْتُ بِهٖ

"तुममें से कोई ईमानवाला नहीं होगा, यहाँ तक कि उसकी इच्छाएँ उस दीन (धर्म) के अधीन न हो जाएँ, जो मैं लाया हूँ।"[1]

ईमान का आनन्द

इस दुनिया में बहुत-सी भौतिक चीज़ों में स्वाद और आनन्द पाया जाता है। इसी कारण आदमी उनकी तरफ़ लपकता और दौड़ता है। इसी प्रकार आध्यात्मिक और हार्दिक स्थितियों में भी आनन्द होता है। यह आनन्द उस समय मिलता है, जबकि दिल-दिमाग़ पर अल्लाह और उसके पैग़म्बर का प्रेम छा जाए; उनकी पसन्द आदमी की अपनी पसन्द बन जाए और जो चीज़ उनको नापसन्द हो, वह उसको अरुचिकर लगे।

हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि आदमी ईमान का नशा और आनन्द उस समय महसूस करता है, जबकि उसके निकट अल्लाह और उसके पैग़म्बर का प्रेम हर प्रेम पर प्रभावी हो जाए। उसी के आधार पर इनसानों से उसके सम्बन्ध बनें और ख़ुदा की नाफ़रमानी और गुनाह उसे अप्रिय लगने लगें, जैसे आग से जलकर राख हो जाना अप्रिय लगता है। इस बारे में अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने कहा है–

ثَلَاثٌ مَنْ كُنَّ فِيهِ وَجَدَ بِهِنَّ حَلَاوَةَ الْإِيمَانِ، مَنْ كَانَ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ أَحَبَّ إِلَيْهِ مِمَّا سِوَاهُمَا. مَنْ أَحَبَّ عَبْدًا لَا يُحِبُّهُ إِلَّا لِلّٰهِ، وَمَنْ يَكْرَهُ أَنْ يَعُودَ فِي الْكُفْرِ بَعْدَ أَنْ أَنْقَذَهُ اللّٰهُ مِنْهُ كَمَا يَكْرَهُ أَنْ يُلْقٰى فِي النَّارِ

"जिस व्यक्ति में तीन बातें होंगी, वह उनके कारण ईमान की

[1] हदीस : मिश्कातुल-मसाबीह, बहवालह् शरहुस्सुन्नति लिल्-बग़वी।

मिठास पाएगा—जिसे अल्लाह और उसका पैग़म्बर उन सारी बातों से अधिक प्रिय हो, जो इनके अलावा हैं। जो किसी व्यक्ति से प्रेम करे, तो केवल अल्लाह के लिए करे, जिसके लिए हक़ के इनकार में पलटकर जाना, जबकि अल्लाह ने उसे उससे निकाल दिया है, उसी तरह अप्रिय लगे जैसे आग में डाल दिया जाना उसे अप्रिय होता है।"[1]

एक और हदीस में कहा गया है कि आदमी का ईमान उस समय पूर्ण होता है, जबकि उसकी दोस्ती और दुश्मनी और लेन-देन सब कुछ अल्लाह के लिए हो जाए। हज़रत अबू-उमामा (रज़ि॰) एक हदीस बयान करते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* ने कहा—

مَنْ أَحَبَّ لِلّٰهِ وَأَبْغَضَ لِلّٰهِ وَأَعْطَى لِلّٰهِ وَمَنَعَ لِلّٰهِ فَقَدِ اسْتَكْمَلَ الْإِيمَانَ

"जो अल्लाह के लिए प्रेम करे, अल्लाह के लिए नफ़रत करे, जिसका देना और मना करना अल्लाह के लिए हो, तो उसने अपना ईमान पूरा कर लिया।"[2]

यह हदीस बताती है कि ईमान का सबसे ऊँचा दरजा यह है कि आदमी के सभी सम्बन्ध अल्लाह तआला के प्रेम के अधीन हों। कोई सांसारिक और भौतिक हित उनसे जुड़ा न हो। किसी से प्रेम और सम्बन्ध हो, तो केवल अल्लाह की ख़ुशी और प्रसन्नता के लिए हो। इसी प्रकार किसी से नफ़रत या दूरी इस आधार पर हो कि उसे निजी दुश्मनी या पारिवारिक अनबन, जातीय और सामुदायिक पक्षपात या इसी प्रकार की कोई और भावना काम कर रही है; बल्कि इसका कारण यह हो कि वह अल्लाह की नाफ़रमानी करने में लगा हुआ है या उसका

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुल-ईमान, बाबु हलावतिल-ईमान; मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाबु बयानिख़िसालि मन इत्त-स-फ़ बिहिन्-न व-ज-द हलावतल-ईमान।

[2] हदीस : सुनन अबी-दाऊद, किताबुस्सुन्नह।

बाग़ी और दुश्मन है। इनसान की हैसियत से उससे सम्बन्ध रखे जाएँगे और उसकी कठिनाइयों में सहयोग और सहानुभूति का रवैया अपनाया जाएगा। इसके साथ ही स्थिति में सुधार की कोशिश भी की जाएगी। अगर वह सुधार अपना ले और आज्ञापालन और अनुपालन के दायरे में आ जाए, तो उससे ईमानी रिश्ता क़ायम हो जाएगा। यह रिश्ता हर रिश्ते से अधिक शक्तिशाली होगा।

ईमान की पूर्णता की एक पहचान यह भी है कि इनसान का माल अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ ख़र्च होने लगे। वह वहीं ख़र्च हो, जहाँ ख़र्च करने का हुक्म दिया गया है। जहाँ ख़र्च करने से मना कर दिया गया है, वहाँ हरगिज़ ख़र्च न हो। वह अल्लाह के बन्दों की जाइज़ ज़रूरतों की पूर्ति में और उसके दीन की सेवा और प्रचार-प्रसार के लिए ख़र्च हो। अनावश्यक और बेकार के ख़र्च से आदमी का दामन पाक हो। गुनाह और नाफ़रमानी के कामों में न खुद अपना माल बरबाद करे और न दूसरों की इस मामले में मदद करे।

अल्लाह के लिए देने का एक मतलब यह भी बयान किया गया है कि आदमी का किसी मामले में वचन देना या वादा करना या अपने अमीर (नायक) के अनुसरण की प्रतिबद्धता स्वीकार करना सब कुछ अल्लाह की प्रसन्नता के लिए हो। किसी अत्याचारी या दुराचारी के अनुसरण का न वचन दे और न उसका साथ दे। ईमानी आनन्द की अनुभूति की प्राप्ति के लिए ज़रूरी है कि इनसान खुदा को मानकर पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाए। उसकी आत्मा उस अनुभूति से अनुपम आनन्द महसूस करे कि उसका पालनहार रब खुदा है। उसकी नज़र केवल खुदा पर जमी रहे। खुदा के अलावा किसी और चीज़ में उसके लिए कोई आकर्षण न हो। खुदा का धर्म (इस्लाम) उसका प्रिय धर्म बन जाए और खुदा के पैग़म्बर को वह अपना सच्चा और वास्तविक नायक माने। हज़रत अब्बास-बिन-अब्दुल मुत्तलिब *(रज़ि.)* एक हदीस बयान करते हैं कि प्यारे नबी (सल्ल.) ने कहा—

ذَاقَ طَعْمَ الإِيمَانِ، مَنْ رَضِيَ بِاللهِ رَبًّا، وَبِالإِسْلَامِ دِينًا، وَبِمُحَمَّدٍ رَسُولًا

"उस आदमी ने ईमान का मज़ा चख लिया, जो राज़ी हो गया इस बात से कि अल्लाह उसका रब—पालनहार है। इस्लाम उसका दीन (धर्म) है और मुहम्मद *(सल्ल.)* उसके मार्गदर्शक और ख़ुदा के पैग़म्बर हैं।"[1]

अल्लाह की प्रसन्नता का यह उच्च सम्मान उस समय मिलता है जबकि अल्लाह पर, उसके पैग़म्बर और उसके दीन पर ईमान बुद्धि-विवेक की रौशनी में हासिल हो और पूरी चेतना के साथ दिल-दिमाग़ में उसे जगह दी गई हो।

दीन की दावत के लिए अल्लाह से सम्बन्ध का महत्त्व

क़ुरआन और हदीस से मालूम होता है कि अल्लाह तआला के दीन की सेवा सही अर्थों में वही आदमी करता और कर सकता है, जिसका उससे गहरा सम्बन्ध हो। जो उसके लिए जीना और मरना, जुड़ना और कटना, देना और लेना जानता हो। जो उससे प्रगाढ़ प्रेम करे और उससे सबसे अधिक डरे। जो उसकी राह में कष्ट उठाकर भी आनन्द महसूस करे और जिसकी ज़बान कठिन से कठिन आज़माइश में भी शिकवा-शिकायत में लथपथ न हो; जिसके दिल में उसकी महानता और उसका प्रताप का रोब इस प्रकार बैठा हो कि उसके सिवा किसी दूसरे का भय उसमें जगह न पा सके। जो अपनी शक्तियों और योग्यताओं को, अपने सुख-चैन और आराम को, अपनी धन-सम्पत्ति को, अपने भोग-विलास, अपने हितों और अपनी अभिरुचियों को उसके लिए क़ुरबान करने के बावुजूद यह समझे कि अभी हक़ अदा नहीं हुआ है। जिसे वह सब कुछ कर गुज़रने के बाद भी, जो उसके बस में है, अपनी

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाबु बयानिद्दलीलि अला अन्ना मन रज़ियबिल्लाहि रब्बन.....आख़िर तक।

लापरवाही और कोताही का एहसास सताए, जिसके लिए अल्लाह तआला की हस्ती दुनिया की सब चीज़ों से अधिक प्यारी और अपनी बन जाए और जिसका प्रेम हर दूसरे प्रेम पर छा जाए। जिसे अल्लाह के दीन का नुक़सान अपना निजी नुक़सान मालूम हो और जो दीन की उन्नति पर अपनी निजी प्रगति से अधिक आनन्द महसूस करे। जो दीन पर होनेवाले हमले को ख़ुद पर होनेवाले हमले से अधिक कठोर समझे और दुनिया का हर नुक़सान सहन करके उसकी प्रतिरक्षा में लग जाए। जिस व्यक्ति का अल्लाह से इस तरह सम्बन्ध मज़बूत न हो, उसके बस में नहीं है कि वह दीन का काम करे। किसी क्षणिक भावना के तहत वह उसे शुरू कर भी दे, तो उसे जारी रखना उस रास्ते की कठिनाइयों को सहन करना और उसके लिए क़ुरबानियाँ देना उस आदमी के लिए सम्भव नहीं है।

ईमान आपसे सच्ची वफ़ादारी चाहता है, ईमान आपसे निरन्तर क़ुरबानी चाहता है, ईमान आपसे साहसपूर्ण अथक प्रयास चाहता है, ईमान आपसे विशुद्ध प्रेम चाहता है, ईमान चाहता है कि आप पूरी तरह ख़ुदा के लिए समर्पित हो जाएँ और ख़ुदा की प्रसन्नता के लिए अपने आपको बेच दें। जो आदमी इस तरह बिक जाने के लिए तैयार नहीं है, तो उसका ईमान वह ईमान नहीं, जिसके नतीजे में ख़ुदा की मेहरबानियाँ मिलती हैं और उसके इनामों की वर्षा होती है।

परलोक पर ईमान

परलोक की धारणा का महत्त्व

परलोक की धारणा इस्लाम की मौलिक धारणा है। इस्लाम की परिधि में कोई आदमी उस समय दाख़िल हो सकता है, जब कि परलोक पर उसका ईमान हो। इसके बिना उसके इस्लाम का कोई विश्वास नहीं है। क़ुरआन मजीद की सूरा-2, अल-बक़रा के शुरू में ही कहा गया है कि यह किताब ख़ुदा का डर रखनेवाले और परहेज़गार इनसानों के लिए सरासर हिदायत है। उनकी एक ख़ास पहचान यह बताई गई है—

وَبِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ ۝

"वे परलोक पर पूरा यक़ीन रखते हैं।"

(सूरा-2 बक़रा, आयत-4)

एक और जगह पर कहा गया कि इस किताब में सदाचारी और उत्तमकार इनसानों के लिए मार्गदर्शन है, जिनके प्रमुख गुणों में से एक यह है—

وَهُمْ بِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ ۝

"वे परलोक पर पूरा यक़ीन रखते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-31 लुक़मान, आयत-4)

क़ियामत आकर रहेगी

क़ुरआन कहता है और हमारा ईमान है कि इसकी हर बात शंका

और सन्देह से परे है कि क़ियामत आएगी और ज़रूर आएगी। यह धरती और आकाश के मालिक और शासक का अटल फ़ैसला है। दुनिया की कोई शक्ति उसके किसी फ़ैसले को बदल नहीं सकती। देखिए कितने ज़ोरदार और प्रभावकारी शब्दों में कहा गया है–

وَيَسْتَنْبِـُٔونَكَ أَحَقٌّ هُوَ قُلْ إِى وَرَبِّىٓ إِنَّهُۥ لَحَقٌّ وَمَآ أَنتُم بِمُعْجِزِينَ

"वे आपसे पूछते हैं : क्या परलोक का अज़ाब आना यक़ीनी है? उनसे कहो : हाँ! मेरे पालनहार रब की क़सम! उसका आना हक़ है। तुम ख़ुदा को विवश नहीं कर सकते।"

(क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-53)

यही बात क़ुरआन मजीद में बहुत-सी जगहों पर इसी ज़ोरदार ढंग से बयान हुई है। सूरा-34, सबा में है–

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لَا تَأْتِينَا السَّاعَةُ قُلْ بَلَىٰ وَرَبِّي لَتَأْتِيَنَّكُمْ عَالِمِ الْغَيْبِ لَا يَعْزُبُ عَنْهُ مِثْقَالُ ذَرَّةٍ فِي السَّمَاوَاتِ وَلَا فِي الْأَرْضِ وَلَا أَصْغَرُ مِنْ ذَٰلِكَ وَلَا أَكْبَرُ إِلَّا فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ۝ لِيَجْزِيَ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ أُولَٰئِكَ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ۝ وَالَّذِينَ سَعَوْا فِي آيَاتِنَا مُعَاجِزِينَ أُولَٰئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ مِنْ رِجْزٍ أَلِيمٌ ۝

"जिन लोगों ने (हक़ का) इनकार किया, वे कहते हैं कि क़ियामत (प्रलय) हम पर नहीं आएगी। ऐ पैग़म्बर! कहो कि हाँ, मेरे रब की क़सम, जो परोक्षज्ञाता है, वह तुम पर ज़रूर आकर रहेगी। मेरे रब के ज्ञान से आसमानों में और ज़मीन में कोई कण छिपा हुआ नहीं है। कण से भी छोटी चीज़ हो या बड़ी चीज़, हर एक खुली किताब में लिखी हुई मौजूद है; (क़ियामत इसलिए आएगी) ताकि अल्लाह (अच्छा) बदला दे उन लोगों को जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए। उनके लिए माफ़ी और इज़्ज़तवाली रोज़ी है। इसके

विपरीत जो लोग हमारी आयतों को झूठी साबित करने के लिए दौड़-धूप करने में लगे रहे हैं, उनके लिए अत्यन्त कठोर यातना है।"
(क़ुरआन, सूरा-34 सबा, आयतें—3-5)

यही बात इन शब्दों में भी बयान हुई है—

زَعَمَ الَّذِينَ كَفَرُوا أَنْ لَنْ يُبْعَثُوا ۚ قُلْ بَلَىٰ وَرَبِّي لَتُبْعَثُنَّ ثُمَّ لَتُنَبَّؤُنَّ بِمَا
عَمِلْتُمْ ۚ وَذَٰلِكَ عَلَى اللَّهِ يَسِيرٌ ﴿٧﴾

"जिन लोगों ने (हक़ का) इनकार किया, वे दावा करते हैं कि वे हरगिज़ उठाए नहीं जाएँगे। उनसे कहो : हाँ, मेरे रब की क़सम! तुम ज़रूर उठाए जाओगे और जो कर्म तुमने किए हैं, वे तुम्हें ज़रूर बताए जाएँगे। यह अल्लाह के लिए आसान है।"
(क़ुरआन, सूरा-64 तग़ाबुन, आयत-7)

जो लोग परलोक का घोर इनकार करते हैं, उनका खण्डन भी उतने ही ज़ोर और ताक़त से किया गया है—

وَأَقْسَمُوا بِاللَّهِ جَهْدَ أَيْمَانِهِمْ ۙ لَا يَبْعَثُ اللَّهُ مَنْ يَمُوتُ ۚ بَلَىٰ وَعْدًا عَلَيْهِ حَقًّا
وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٨﴾ لِيُبَيِّنَ لَهُمُ الَّذِي يَخْتَلِفُونَ فِيهِ وَلِيَعْلَمَ
الَّذِينَ كَفَرُوا أَنَّهُمْ كَانُوا كَاذِبِينَ ﴿٣٩﴾ إِنَّمَا قَوْلُنَا لِشَيْءٍ إِذَا أَرَدْنَاهُ أَنْ نَقُولَ لَهُ
كُنْ فَيَكُونُ ﴿٤٠﴾

"वे क़सम खाते हैं अल्लाह की कड़ी क़सम कि अल्लाह उन लोगों को नहीं उठाएगा, जो मर चुके हैं। हाँ (वह ज़रूर उठाएगा)। यह अल्लाह का वादा है, पक्का वादा! लेकिन अक्सर लोग नहीं जानते। (वह इसलिए उठाएगा) ताकि ज़ाहिर कर दे उनपर वे बातें जिनमें वे मतभेद करते हैं। और जिन लोगों ने इनकार किया, उन्हें मालूम हो जाए कि वे झूठे थे। रही हमारी बात, तो जब हम किसी चीज़ का इरादा करते हैं,

तो बस यह होता है कि हम उससे कहते हैं कि 'हो जा' और वह हो जाती है।" (क़ुरआन, सूरा-16 नह्ल, आयतें—38-40)

परलोक के समर्थन में प्रमाण के रूप में इनसान की रचना, उसके अस्तित्व और वर्षा के साथ ज़मीन पर होनेवाली पैदावार को पेश किया गया है। इसके बाद कहा गया है—

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ وَاَنَّهٗ يُحْيِ الْمَوْتٰى وَاَنَّهٗ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ وَّاَنَّ السَّاعَةَ اٰتِيَةٌ لَّا رَيْبَ فِيْهَا ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ يَبْعَثُ مَنْ فِي الْقُبُوْرِ ۝

"ये (प्राकृतिक दृश्य) इस कारण हैं कि अल्लाह ही हक़ है और वह मुर्दों को ज़िन्दा करता है और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। बेशक क़ियामत आएगी, इसमें कोई शक नहीं है। और जो लोग क़ब्रों में हैं, अल्लाह उन्हें उठाएगा।"

(क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयत—6,7)

इन आयतों में वह ईमान और यक़ीन बोल रहा है, जो आसमानी किताबों की विशेषता है और जो क़ुरआन मजीद में पूरी तरह स्पष्ट है। इससे यह नहीं समझा जाना चाहिए कि इनमें इस बात का केवल दावा किया गया है कि क़ियामत ज़रूर आएगी। इसका कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। सच्चाई यह है कि क़ियामत आएगी। क्यों आएगी? क्या इसकी कोई सम्भावना भी है? और वह आएगी तो किस रूप में आएगी? इस प्रकार के सारे सवालों के जवाब ख़ुद इन आयतों में मौजूद हैं। क़ुरआन मजीद की दूसरी जगहों पर इसका विस्तृत वर्णन मौजूद है। आगे क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों की मदद से यहाँ उनको स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा।

जब क़ियामत आएगी

जब क़ियामत आएगी तो यह दुनिया अपने सारे साज़ो-सामान के साथ

ख़त्म हो जाएगी, धरती और आकाश नष्ट-विनष्ट हो जाएँगे और एक नई विश्व-व्यवस्था वुजूद में आएगी। इसी को 'क़ियमात का दिन' (महाप्रलय-दिवस) भी कहा गया है अर्थात् वह दिन जब मुर्दे ज़िन्दा होकर खड़े होंगे और ख़ुदा के सामने हाज़िर होंगे—

فَإِذَا نُفِخَ فِي الصُّورِ نَفْخَةٌ وَاحِدَةٌ ﴿١٣﴾ وَحُمِلَتِ الْأَرْضُ وَالْجِبَالُ فَدُكَّتَا دَكَّةً وَاحِدَةً ﴿١٤﴾ فَيَوْمَئِذٍ وَقَعَتِ الْوَاقِعَةُ ﴿١٥﴾

"फिर जब सूर में एक बार फूँक मार दी जाएगी और ज़मीन और पहाड़ उठा लिए जाएँगे और वे एक ही बार में चूरा-चूरा कर दिए जाएँगे। उस दिन घटित होनेवाली (क़ियामत) घटित हो जाएगी।" (क़ुरआन, सूरा-69 हाक़्क़ा, आयतें—13-15)

एक और दृश्य देखें—

إِذَا وَقَعَتِ الْوَاقِعَةُ ﴿١﴾ لَيْسَ لِوَقْعَتِهَا كَاذِبَةٌ ﴿٢﴾ خَافِضَةٌ رَّافِعَةٌ ﴿٣﴾ إِذَا رُجَّتِ الْأَرْضُ رَجًّا ﴿٤﴾ وَبُسَّتِ الْجِبَالُ بَسًّا ﴿٥﴾ فَكَانَتْ هَبَاءً مُّنْبَثًّا ﴿٦﴾

"जब घटित होनेवाली (क़ियामत) घटित हो जाएगी। इसके घटित होने पर कोई झुठलानेवाला न होगा। वह (किसी को) तलपट कर देनेवाली और (किसी को) बुलन्द कर देनेवाली होगी। जब ज़मीन बुरी तरह हिला दी जाएगी और पहाड़ चूरा-चूरा कर दिए जाएँगे और वे उड़ता हुआ ग़ुबार हो जाएँगे।"

(क़ुरआन, सूरा-56 वाक़िआ, आयतें—1-6)

उस समय ये धरती-आकाश बदल दिए जाएँगे। ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र और हमारा यह सौर-मण्डल बिखर जाएगा। इनसान दोबारा ज़िन्दा किए जाएँगे। हर एक का कर्मपत्र उसके हाथ में होगा। फिर नेमत भरी जन्नत और दहकती हुई जहन्नम सामने होगी। इनसान ने इस ज़िन्दगी

में जो कुछ किया है, उसे आँखों से देख रहा होगा—

إِذَا الشَّمْسُ كُوِّرَتْ ۝١ وَإِذَا النُّجُومُ انْكَدَرَتْ ۝٢ وَإِذَا الْجِبَالُ سُيِّرَتْ ۝٣
وَإِذَا الْعِشَارُ عُطِّلَتْ ۝٤ وَإِذَا الْوُحُوشُ حُشِرَتْ ۝٥ وَإِذَا الْبِحَارُ سُجِّرَتْ ۝٦
وَإِذَا النُّفُوسُ زُوِّجَتْ ۝٧ وَإِذَا الْمَوْءُودَةُ سُئِلَتْ ۝٨ بِأَيِّ ذَنْبٍ قُتِلَتْ ۝٩ وَإِذَا
الصُّحُفُ نُشِرَتْ ۝١٠ وَإِذَا السَّمَاءُ كُشِطَتْ ۝١١ وَإِذَا الْجَحِيمُ سُعِّرَتْ ۝١٢ وَإِذَا
الْجَنَّةُ أُزْلِفَتْ ۝١٣ عَلِمَتْ نَفْسٌ مَا أَحْضَرَتْ ۝١٤

"जब सूरज प्रकाशहीन हो जाएगा; जब तारे टूटकर गिर पड़ेंगे; जब पहाड़ चला दिए जाएँगे; जब दस माह की गाभिन ऊँटनियाँ छोड़ दी जाएँगी; जब जंगल के जानवर समेटकर इकट्ठा कर दिए जाएँगे; जब समन्दर भड़का दिए जाएँगे; जब प्राण (शरीर से) जोड़ दिए जाएँगे; जब उस लड़की से, जिसे ज़िन्दा गाड़ दिया गया था, पूछा जाएगा कि किस गुनाह में उसे मारा गया? जब कर्मपत्र फैला दिए जाएँगे; जब आसमान खोल दिया जाएगा; जब जहन्नम भड़का दी जाएगी और जब जन्नत क़रीब कर दी जाएगी; हर आदमी जान लेगा कि वह क्या लेकर हाज़िर हुआ है।"

(क़ुरआन, सूरा-81 तकवीर, आयतें—1-14)

एक और दृश्य देखिए। कितना भयानक और दिल हिला देनेवाला दृश्य है—

إِذَا زُلْزِلَتِ الْأَرْضُ زِلْزَالَهَا ۝١ وَأَخْرَجَتِ الْأَرْضُ أَثْقَالَهَا ۝٢ وَقَالَ
الْإِنْسَانُ مَا لَهَا ۝٣ يَوْمَئِذٍ تُحَدِّثُ أَخْبَارَهَا ۝٤ بِأَنَّ رَبَّكَ أَوْحَىٰ لَهَا ۝٥ يَوْمَئِذٍ
يَصْدُرُ النَّاسُ أَشْتَاتًا لِيُرَوْا أَعْمَالَهُمْ ۝٦ فَمَنْ يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَرَهُ ۝٧
وَمَنْ يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَرَهُ ۝٨

"जब ज़मीन भूकम्प से हिला दी जाएगी, और वह अपने बोझ

बाहर निकाल फेंकेगी और इनसान कहेगा कि इसे क्या हो गया है! उस दिन वह अपनी सारी ख़बरें बयान कर देगी; क्योंकि उसके पालनहार रब का उसे यही आदेश होगा। उस दिन लोग अस्त-व्यस्त और मलिन होकर लौटेंगे; ताकि उनको उनके कर्म दिखा दिए जाएँ। तो जो आदमी कण भर नेकी करेगा, उसे वह देख लेगा और जो आदमी कण भर बुराई करेगा उसे (भी) देख लेगा।" (क़ुरआन, सूरा-99 ज़िलज़ाल, आयतें—1-8)

क़ियामत किसलिए आएगी?

अब इस सवाल पर विचार कीजिए कि क़ियामत किसलिए आएगी? इसका जवाब यह है कि क़ियामत इसलिए आएगी, ताकि भले और बुरे का सच्चा फ़ैसला हो और हर एक अपने परिणाम को पहुँचे। अल्लाह तआला के भले और सच्चे बन्दे, वे बन्दे जिनकी ज़िन्दगियाँ उसके आज्ञापालन और अनुसरण में गुज़रीं और जिनके दामन गुनाहों के दाग़ से पाक रहे, इनाम और मान-सम्मान से नवाज़े जाएँ और अल्लाह तआला के नाफ़रमान और बाग़ी, जिन्होंने सरकशी और बग़ावत का रास्ता अपनाया और गुनाहों में लथपथ रहे, वे अपनी आँखों से उसका प्रकोप देख लें और उसके दर्दनाक अज़ाब से दो-चार हों—

إِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا ۖ وَعْدَ اللَّهِ حَقًّا ۚ إِنَّهُ يَبْدَأُ الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ لِيَجْزِيَ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ بِالْقِسْطِ ۚ وَالَّذِينَ كَفَرُوا لَهُمْ شَرَابٌ مِنْ حَمِيمٍ وَعَذَابٌ أَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ۝٤

"उसी की तरफ़ तुम सबको पलटकर जाना है। यह अल्लाह का सच्चा वादा है। बेशक वह पहली बार रचना करता है, फिर वह उसे लौटाएगा; ताकि उन लोगों को, जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, इनसाफ़ के साथ (अच्छा) बदला दे और जिन्होंने (हक़ का) इनकार किया, उनके पीने के लिए गर्म

पानी और दर्दनाक अज़ाब होगा; क्योंकि वे (हक़ के) इनकारी थे।"

(क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-4)

क्या क़ियामत आ सकती है?

क्या इस बात की कोई सम्भावना है कि यह दुनिया ख़त्म हो जाए और इसकी जगह एक दूसरी दुनिया वुजूद में आए, जहाँ इनसान को ख़ुदा के सामने अपने जीवन भर के कर्मों का जवाब देना पड़े और वह जन्नत या जहन्नम का हक़दार ठहरे?

इसका सीधा-सा जवाब यह है कि अल्लाह तआला जगत्-निर्माता और स्वामी है। उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। उसकी सामर्थ्य से कुछ भी दूर नहीं है कि एक नई दुनिया वुजूद में लाए और उत्तमकारों को अच्छा बदला और दुराचारियों को सज़ा दे। कोई चीज़ उसके लिए असम्भव नहीं है। यही बात इस आयत में इन शब्दों में कही गई है–

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ لِيَجْزِيَ الَّذِيْنَ اَسَآءُوْا بِمَا عَمِلُوْا وَيَجْزِيَ الَّذِيْنَ اَحْسَنُوْا بِالْحُسْنٰى ﴿٣١﴾

"और अल्लाह ही की सब चीज़ें हैं, जो आसमानों में हैं और जो ज़मीन में हैं; ताकि जिन लोगों ने बुरे कर्म किए उनके कर्म का बदला दे और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, उन्हें उसका उत्तम बदला दे।" (क़ुरआन, सूरा-53 नज्म, आयत-31)

जो आदमी क़ियामत को असम्भव समझता है वह ख़ुदा को ख़ुदा नहीं समझता है। वह उसे ज़मीन और आसमान के मालिक के रूप में नहीं देखता, बल्कि एक तुच्छ और सीमित शक्तिवाली हस्ती समझता है। उसकी असीम शक्ति और सामर्थ्य की कल्पना से उसका मन ख़ाली है। उसे पहले अपने मन-मस्तिष्क का सुधार करना चाहिए–

وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖ ۖ وَالْاَرْضُ جَمِيْعًا قَبْضَتُهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَالسَّمٰوٰتُ
مَطْوِيّٰتٌۢ بِيَمِيْنِهٖ ؕ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ﴿٦٧﴾

"उन्होंने अल्लाह को नहीं समझा, जैसा कि उसे समझना चाहिए। (उसकी महानता का हाल यह है कि) ज़मीन सारी की सारी क़ियामत के दिन उसकी मुट्ठी में होगी और आसमान उसके दाहिने हाथ में लिपटे होंगे। वह पाक और बरतर है उस शिर्क से जो वे कर रहे हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-67)

ज़मीन और आसमान को बनाना या किसी भी चीज़ का निर्माण करना उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। वह जो चाहे और जब चाहे, अस्तित्व में आ जाएगा। उसकी सामर्थ्य अनन्त और असीमित है। उसके अधिकार-क्षेत्र से कोई चीज़ बाहर नहीं है—

اَوَلَيْسَ الَّذِيْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِقٰدِرٍ عَلٰٓى اَنْ يَّخْلُقَ مِثْلَهُمْ ؕ بَلٰى ۗ وَهُوَ
الْخَلّٰقُ الْعَلِيْمُ ﴿٨١﴾ اِنَّمَآ اَمْرُهٗٓ اِذَآ اَرَادَ شَيْـًٔا اَنْ يَّقُوْلَ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ﴿٨٢﴾ فَسُبْحٰنَ
الَّذِيْ بِيَدِهٖ مَلَكُوْتُ كُلِّ شَيْءٍ وَّاِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ ﴿٨٣﴾

"क्या वह हस्ती जिसने आसमान और ज़मीन को पैदा किया, इस बात की सामर्थ्य नहीं रखती है कि इन जैसों को भी पैदा कर दे? हाँ! वह तो बड़ा पैदा करनेवाला और ख़ूब जाननेवाला है। उसका मामला तो यह है कि वह जब किसी चीज़ का इरादा करता है, तो उसे कहता है कि 'हो जा' और 'वह हो जाती है'; तो पाक है वह हस्ती जिसके हाथ में हर चीज़ की बादशाहत है और उसी की तरफ़ तुम लौटाए जाओगे।"

(क़ुरआन, सूरा-36 या-सीन, आयतें—81-83)

क़ियामत का आना बुद्धिसंगत है

बुद्धि कहती है कि जो ख़ुदा इस दुनिया का मालिक है, वह अपने नाफ़रमानों और फ़रमाँबरदारों के साथ एक समान मामला नहीं करेगा। यह उसके न्याय और इनसाफ़ और उसकी हिकमत (तत्त्वदर्शिता) के ख़िलाफ़ है कि उसके फ़रमाँबरदार और बाग़ी मर-मिटकर बराबर हो जाएँ और किसी अंजाम से दो-चार न हों। अच्छे और बुरे, चरित्रवान और चरित्रहीन किसी को उसके किए का पुरस्कार या दण्ड न मिले। क़ियामत बता देगी कि वास्तव में इन दोनों तरह के इनसानों का अंजाम एक नहीं है। अन्तिम दिवस (क़ियामत) का आना पूर्णतः बुद्धिसंगत बात है और उसका इनकार बुद्धि की खुली-खुली माँग का इनकार है—

> وَمَا يَسْتَوِى الْاَعْمٰى وَالْبَصِيْرُ ۙ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ وَلَا الْمُسِيْٓءُ ۭ قَلِيْلًا مَّا تَتَذَكَّرُوْنَ ﴿٥٨﴾ اِنَّ السَّاعَةَ لَاٰتِيَةٌ لَّا رَيْبَ فِيْهَا وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿٥٩﴾

> "और यह नहीं हो सकता कि अन्धा और आँखोंवाला समान हो जाए और ईमानदार व सदाचारी और दुराचारी बराबर ठहरें। मगर तुम लोग कम ही नसीहत हासिल करते हो। बेशक क़ियामत आएगी। इसमें कोई शक नहीं है। लेकिन अक्सर लोग इसपर ईमान नहीं रखते।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयतें-58, 59)

बुद्धि की स्पष्ट माँगों को जब भुला दिया जाता है, तो क़ुरआन आश्चर्य के साथ सवाल करता है—

> مَثَلُ الْفَرِيْقَيْنِ كَالْاَعْمٰى وَالْاَصَمِّ وَالْبَصِيْرِ وَالسَّمِيْعِ ۭ هَلْ يَسْتَوِيٰنِ مَثَلًا ۭ اَفَلَا تَذَكَّرُوْنَ ﴿٢٤﴾

> "इन दोनों गिरोहों की मिसाल ऐसी है, जैसे एक आदमी तो हो

अन्धा-बहरा और दूसरा हो देखनेवाला और सुननेवाला। क्या ये दोनों एक जैसे हो सकते हैं? फिर तुम क्यों नसीहत हासिल नहीं करते?" (क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयत-24)

इस स्पष्ट सच्चाई को क़ुरआन में कई जगहों पर उजागर किया गया है। एक जगह ये शब्द मिलते हैं—

أَفَمَنْ كَانَ مُؤْمِنًا كَمَنْ كَانَ فَاسِقًا ۚ لَا يَسْتَوُونَ ﴿١٨﴾ أَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَلَهُمْ جَنَّاتُ الْمَأْوَىٰ نُزُلًا بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٩﴾ وَأَمَّا الَّذِينَ فَسَقُوا فَمَأْوَاهُمُ النَّارُ ۖ كُلَّمَا أَرَادُوا أَنْ يَخْرُجُوا مِنْهَا أُعِيدُوا فِيهَا وَقِيلَ لَهُمْ ذُوقُوا عَذَابَ النَّارِ الَّذِي كُنْتُمْ بِهِ تُكَذِّبُونَ ﴿٢٠﴾

"क्या वह व्यक्ति जो ईमानवाला है, उस आदमी की तरह हो जाएगा जो अवज्ञाकारी है? (सच्चाई यह है कि) वे बराबर नहीं होंगे। वे लोग जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, उनके रहने के लिए जन्नतें होंगी। यह अतिथि-सत्कार होगा उन कर्मों के बदले, वे जो कर रहे थे। रहे वे लोग जिन्होंने दुराचार का रवैया अपनाया, उनका ठिकाना जहन्नम होगा। जब कभी वे उससे निकलने का इरादा करेंगे, उसी में लौटा दिए जाएँगे और उनसे कहा जाएगा : चखो जहन्नम का अज़ाब, जिसे तुम झुठलाते रहे।" (क़ुरआन, सूरा-32 सजदा, आयतें—18-20)

एक और स्पष्टीकरण देखिए। पूरे ज़ोर और ताक़त के साथ कहा जा रहा है कि बुरे और भले, नेक और बद, सज्जन और दुर्जन सब का अंजाम एक हो जाए, तो इसका अर्थ यह है कि प्रकृति के इस कारख़ाने का कोई मालिक और कोई शासक नहीं है, कोई हिसाब लेनेवाला और हाकिम नहीं है। इसका कोई उद्देश्य और लक्ष्य नहीं है। यह कारख़ाना यों ही अस्तित्व में आया है और यों ही ख़त्म हो जाएगा। हालाँकि जगत् की एक-एक चीज़ गवाही दे रही है कि वह खेल-तमाशे

और मनोरंजन के रूप में अस्तित्व में नहीं आई है, बल्कि वह एक तत्त्वदर्शी और सर्वज्ञ हस्ती की रचना है। उसने एक महान उद्देश्य के लिए उसे अस्तित्व प्रदान किया है और उसी के तहत वह चल रही है। उसकी अपेक्षा है कि न्याय और इनसाफ़ की तराज़ू क़ायम हो। उसमें तौल कर हर कर्म का फ़ैसला हो। किसी का हक़ न मारा जाए और किसी के साथ अन्याय न होने पाए। सबके सब न्याय और इनसाफ़ से लाभान्वित हों। क़ुरआन में कहा गया है—

اَمْ حَسِبَ الَّذِیْنَ اجْتَرَحُوا السَّیِّاٰتِ اَنْ نَّجْعَلَهُمْ كَالَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا
الصّٰلِحٰتِ سَوَآءً مَّحْیَاهُمْ وَمَمَاتُهُمْ سَآءَ مَا یَحْكُمُوْنَ ﴿۲۱﴾ وَخَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ وَلِتُجْزٰی كُلُّ نَفْسٍۭ بِمَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا یُظْلَمُوْنَ ﴿۲۲﴾

"क्या उन लोगों ने जिन्होंने बुराइयाँ की हैं, यह समझ लिया है कि हम उनको उन लोगों की तरह कर देंगे, जो ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए? उनका जीना और मरना बराबर हो जाएगा? बुरा है जो फ़ैसला वे कर रहे हैं। अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को हक़ के साथ पैदा किया; ताकि हर प्राणी को, जो उसने कमाया है, उसका बदला दिया जाए और उनपर ज़ुल्म न होगा।"

(क़ुरआन, सूरा-45 जासिया, आयतें—21, 22)

परलोक में क्या होगा?

परलोक में सारे इनसान शुरू से आख़िर तक ख़ुदा के सामने होंगे। किसी के छिपने की कोई जगह न होगी। इनसान की पूरी ज़िन्दगी खुली और बेपरदा होगी। हर आदमी का कर्मपत्र उसके हाथ में होगा। उसके मुताबिक़ सदैव के लिए पुरस्कार या दण्ड का फ़ैसला होगा; या तो चिरस्थायी जन्नत होगी या हमेशा की जहन्नम। उस समय इनसान का जो हाल होगा, उसे क़ुरआन के शब्दों में पढ़िए—

يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ مُّحْضَرًا ۛ وَمَا عَمِلَتْ مِن سُوٓءٍ تَوَدُّ لَوْ أَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهُۥٓ أَمَدًۢا بَعِيدًا ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ ٱللَّهُ نَفْسَهُۥ ۗ وَٱللَّهُ رَءُوفٌۢ بِٱلْعِبَادِ ۝

"उस दिन हर आदमी जो कुछ भी उसने (यहाँ) भलाई और बुराई की है, उसे (अपने सामने) हाज़िर पाएगा और तमन्ना करेगा : काश! यह दिन न आता (और) उसके और इस दिन के बीच एक लम्बी अवधि आड़े आ जाती। अल्लाह तुमको अपने-आपसे डराता है और अल्लाह (अपने) बन्दों पर बड़ा मेहरबान (भी) है।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-30)

उस दिन वे सारे सम्बन्ध जिनको भरोसे के लायक़ समझा जाता है और जिनके प्रेम में इनसान ख़ुदा को भूल जाता है, एक-एक करके टूट जाएँगे। माँ-बाप, बीवी-बच्चों और निकटतम सम्बन्धियों में से भी कोई किसी के काम न आएगा। हर आदमी पर त्राहि-त्राहि की दशा छाई होगी; हर किसी को अपनी जान बचाने की चिन्ता होगी। यह वह दिन होगा जब अल्लाह के अज़ाब को देखकर उसके नाफ़रमान कामना करेंगे कि काश! उनके पास पूरी दुनिया और उसका धन-धान्य होता और वह उसे देकर इससे छुटकारा पा जाते, लेकिन इस कामना के पूरी होने का कोई उपाय न होगा—

يَوْمَ تَكُونُ ٱلسَّمَآءُ كَٱلْمُهْلِ ۝ وَتَكُونُ ٱلْجِبَالُ كَٱلْعِهْنِ ۝ وَلَا يَسْـَٔلُ حَمِيمٌ حَمِيمًا ۝ يُبَصَّرُونَهُمْ ۚ يَوَدُّ ٱلْمُجْرِمُ لَوْ يَفْتَدِى مِنْ عَذَابِ يَوْمِئِذٍۭ بِبَنِيهِ ۝ وَصَـٰحِبَتِهِۦ وَأَخِيهِ ۝ وَفَصِيلَتِهِ ٱلَّتِى تُـْٔوِيهِ ۝ وَمَن فِى ٱلْأَرْضِ جَمِيعًا ثُمَّ يُنجِيهِ ۝ كَلَّآ ۖ إِنَّهَا لَظَىٰ ۝ نَزَّاعَةً لِّلشَّوَىٰ ۝

"जिस दिन आसमान पिघले हुए तांबे की तरह हो जाएगा और पहाड़ रंगीन ऊन की तरह हो जाएँगे (और उड़ते फिरेंगे), कोई दोस्त किसी दोस्त को नहीं पूछेगा। हालाँकि वे एक-दूसरे को

दिखाए जाएँगे। (हर एक दूसरे की परेशानी से अवगत होगा), अपराधी चाहेगा कि उस दिन की यातना से बचने के लिए अपने बेटे को, अपनी बीवी को, अपने भाई को और उस परिवार को, जिसने उसे पनाह दे रखी थी और ज़मीन के सारे इनसानों को बदले में दे दे और फिर उस यातना से बच जाए। लेकिन ऐसा हरगिज़ नहीं होगा। वह तो दहकती हुई आग होगी, जो खाल को बुरी तरह निकालकर फेंक देगी।"

(क़ुरआन, सूरा-70 मआरिज, आयतें—8-16)

क़ियामत एक भयानक धमाके के साथ आएगी। जब यह धमाका होगा, तो इनसान रिश्ते-नातों और सम्बन्धों को भुला बैठेगा। कोई किसी के काम न आएगा और इनसान अकेले ही अपने कर्मों के लिए जवाबदेह होगा। अल्लाह तआला के फ़ैसले को सुनकर कुछ लोग आनन्दित और प्रसन्न होंगे। उनके चेहरे ख़ुशी से चमक उठेंगे और कुछ लोग चिन्ताओं और निराशाओं के समन्दर में डूब जाएँगे—

فَإِذَا جَآءَتِ الصَّآخَّةُ ۝ يَوْمَ يَفِرُّ الْمَرْءُ مِنْ أَخِيهِ ۝ وَأُمِّهِ وَأَبِيهِ ۝ وَصَاحِبَتِهِ وَبَنِيهِ ۝ لِكُلِّ امْرِئٍ مِّنْهُمْ يَوْمَئِذٍ شَأْنٌ يُغْنِيهِ ۝ وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ مُّسْفِرَةٌ ۝ ضَاحِكَةٌ مُّسْتَبْشِرَةٌ ۝ وَوُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ عَلَيْهَا غَبَرَةٌ ۝ تَرْهَقُهَا قَتَرَةٌ ۝ أُولَٰئِكَ هُمُ الْكَفَرَةُ الْفَجَرَةُ ۝

"फिर जब कान के परदे फाड़ देनेवाली आवाज़ होगी। उस दिन इनसान भागेगा अपने भाई से, अपनी माँ से और अपने बाप से, अपनी बीवी और अपने बेटों से। हर आदमी अपनी चिन्ता में इस तरह गुम होगा कि दूसरी तरफ़ ध्यान न दे सकेगा। उस दिन कुछ चेहरे रौशन होंगे, मुस्करा रहे होंगे, आनन्दित और प्रसन्न होंगे और कुछ चेहरे उस दिन वे होंगे जो धूसरित होंगे। उनपर स्याही चढ़ी होगी। ये वे लोग हैं जो (हक़ के) इनकारी

और दुराचारी हैं।”

(क़ुरआन, सूरा-80 अ-ब-स, आयतें–33-42)

परलोक हँसी-मज़ाक़ का विषय नहीं है

वे लोग कितने नादान हैं, जो परलोक पर विश्वास नहीं रखते, बल्कि उसका इनकार करते और उसका मज़ाक़ उड़ाते हैं। वे अपने अंजाम से लापरवाह और निश्चिन्त हैं; हालाँकि उनका अंजाम उनके पीछे-पीछे चला आ रहा है। क़ियामत जब आएगी और इनसान खुली आँखों से अपने जीवन के कर्मों और उनके फल देखेगा, तो उसके होश उड़ जाएँगे और वे कहीं भागने के रास्ते नहीं पाएँगे। क़ुरआन कहता है कि आनेवाले उस दिन को मज़ाक़ का विषय न बनाया जाए, बल्कि गम्भीरता और एकाग्रता के साथ अपने अंजाम की चिन्ता की जाए–

يَسْـَٔلُ اَيَّانَ يَوْمُ الْقِيٰمَةِ ۞ فَاِذَا بَرِقَ الْبَصَرُ ۞ وَخَسَفَ الْقَمَرُ ۞ وَجُمِعَ
الشَّمْسُ وَالْقَمَرُ ۞ يَقُوْلُ الْاِنْسَانُ يَوْمَىِٕذٍ اَيْنَ الْمَفَرُّ ۞ كَلَّا لَا وَزَرَ ۞ اِلٰى
رَبِّكَ يَوْمَىِٕذِ الْمُسْتَقَرُّ ۞ يُنَبَّؤُا الْاِنْسَانُ يَوْمَىِٕذٍ بِمَا قَدَّمَ وَاَخَّرَ ۞

“इनसान पूछता है कि क़ियामत का दिन कब है? (बताओ क़ियामत जब आएगी) तो निगाहें पथरा जाएँगी; चाँद मद्धिम पड़ जाएगा; सूरज और चाँद (दूरी ख़त्म करके) मिला दिए जाएँगे। उस दिन इनसान कहेगा कि भागकर कहाँ जाऊँ? हरगिज़ नहीं, पनाह लेने की कोई जगह नहीं है। आज तुम्हारे पालनहार-प्रभु के पास ही ठिकाना है। उस दिन इनसान को बता दिया जाएगा, जो उसने आगे भेजा और जो पीछे छोड़ा है।” (क़ुरआन, सूरा-75 क़ियामह, आयतें-6-13)

परलोक की चिन्ता की जाए

इस विश्व में सबसे बड़ी घटना जो घटित होनेवाली है, वह यह है

कि इनसान ख़ुदा के अज़ाब या सवाब से दो-चार होगा। ख़ुदा के अज़ाब से अधिक भयंकर चीज़ कोई नहीं है। उससे बचने की चिन्ता की जाए और ख़ुदा के सवाब से बड़ी नेमत और कोई नहीं है। इनसान उसकी चाहत करे। क़ुरआन मजीद बार-बार इसी अंजाम से इनसान को आगाह करता है—

رَفِيْعُ الدَّرَجٰتِ ذُو الْعَرْشِ ۚ يُلْقِى الرُّوْحَ مِنْ اَمْرِهٖ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖ لِيُنْذِرَ يَوْمَ التَّلَاقِ ﴿۱۵﴾ يَوْمَ هُمْ بٰرِزُوْنَ ۚ لَا يَخْفٰى عَلَى اللّٰهِ مِنْهُمْ شَيْءٌ ۭ لِمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ ۭ لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ ﴿۱۶﴾ اَلْيَوْمَ تُجْزٰى كُلُّ نَفْسٍۭ بِمَا كَسَبَتْ ۭ لَا ظُلْمَ الْيَوْمَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ﴿۱۷﴾ وَاَنْذِرْهُمْ يَوْمَ الْاٰزِفَةِ اِذِ الْقُلُوْبُ لَدَى الْحَنَاجِرِ كٰظِمِيْنَ ۥ مَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ حَمِيْمٍ وَّلَا شَفِيْعٍ يُّطَاعُ ﴿۱۸﴾

"वह ऊँचे दर्जोंवाला और सिंहासन का मालिक है। अपने बन्दों में से जिसपर चाहता है, अपने हुक्म से वह्य (प्रकाशना) उतारता है; ताकि मुलाक़ात के दिन (क़ियामत) से डराए। जिस दिन वे अल्लाह के सामने होंगे, उनकी कोई चीज़ अल्लाह से छिपी नहीं रहेगी। (सवाल होगा :) आज सत्ता और शासन किसका है? (हर तरफ़ से जवाब आएगा :) अल्लाह का शासन है, जो अकेला और प्रभुत्वशाली है। आज हर प्राणी को जो उसने कमाया है, उसका बदला दिया जाएगा। आज किसी पर ज़ुल्म नहीं होगा। बेशक अल्लाह जल्द हिसाब लेनेवाला है और उन्हें सचेत कर दो उस दिन से जो क़रीब आ लगा है, जबकि कलेजे मुँह को आ रहे होंगे। ग़म से घुट रहे होंगे। अत्याचारियों का न कोई दोस्त होगा और न सिफ़ारिश करनेवाला, जिसकी बात मानी जाए।" (क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयतें-15-18)

सूरा लुक़मान में इस अंजाम से इन शब्दों में सचेत किया गया है—

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمْ وَاخْشَوْا يَوْمًا لَّا يَجْزِيْ وَالِدٌ عَنْ وَّلَدِهٖ ۡ وَلَا مَوْلُوْدٌ

هُوَ جَازٍ عَنْ وَّالِدِهٖ شَيْـًٔا ۭ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ فَلَا تَغُرَّنَّكُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا ۪ وَلَا
يَغُرَّنَّكُمْ بِاللّٰهِ الْغَرُوْرُ ۝۳۳

“ऐ लोगो! अपने पालनहार—रब से डरो और उस दिन से डरो जब कि कोई बाप अपने बेटे के काम नहीं आएगा और न कोई औलाद अपने बाप के कुछ काम आ सकेगी। बेशक अल्लाह का वादा सच्चा है। तो धोखा न दे तुमको दुनिया की ज़िन्दगी और न धोखा दे तुमको ख़ुदा के बारे में ये धोखेबाज़ (शैतान)।” (क़ुरआन, सूरा-31 लुक़मान, आयत-33)

सूरा नबा में कहा गया है—

ذٰلِكَ الْيَوْمُ الْحَقُّ ۚ فَمَنْ شَاۗءَ اتَّخَذَ اِلٰى رَبِّهٖ مَاٰبًا ۝۳۹ اِنَّآ اَنْذَرْنٰكُمْ عَذَابًا قَرِيْبًا ڔ
يَّوْمَ يَنْظُرُ الْمَرْءُ مَا قَدَّمَتْ يَدٰهُ وَيَقُوْلُ الْكٰفِرُ يٰلَيْتَنِيْ كُنْتُ تُرٰبًا ۝۴۰

“उस दिन का आना सत्य है; तो जो आदमी चाहे अपने पालनहार प्रभु के पास ठिकाना बना ले। हमने तुम्हें उस अज़ाब से डरा दिया है, जो क़रीब आ चुका है। जिस दिन इनसान वह सब कुछ देख लेगा, जो उसके हाथों ने आगे भेजा है और (हक़ का) इनकारी कहेगा : ऐ काश, मैं मिट्टी हो जाता!”
(क़ुरआन, सूरा-78 नबा, आयतें—39-40)

दुनिया मिट जानेवाली और परलोक हमेशा रहनेवाला है

दुनिया मिट जानेवाली है। यहाँ कोई चीज़ हमेशा रहनेवाली और स्थायी नहीं है। जो चीज़ भी वुजूद में आती है, उधार का जीवन लेकर आती है और एक दिन विनाश रूपी चादर ओढ़ लेती है। यहाँ जीवन और जवानी, आराम और कष्ट, सुख और दुख, ख़ुशी और ग़म सब क्षणिक हैं। लेकिन एक ऐसी दुनिया भी है, जो अनश्वर है, जो सदा-सर्वदा रहेगी और कभी ख़त्म न होगी; जहाँ इनसान को हमेशा का जीवन प्राप्त होगा,

जहाँ जीवन मौत से अनजान होगा, जहाँ की नेमतें और सुख-चैन, दुख-तकलीफ़ दोनों ही हमेशा रहनेवाली होंगी। जहाँ इनसान को कुछ पाने के बाद उसके छिन जाने का ख़तरा न होगा और किसी चीज़ से वंचित होने के बाद उसके पाने की आशा न होगी। जहाँ सुख-चैन, आराम और ख़ुशहाली भी हमेशा के लिए होगी और कष्ट और यातना, दुख-दर्द, रंज और तकलीफ़ भी कभी ख़त्म न होगी। इसी का नाम परलोक है। परलोक में इनसान के लिए जन्नत है या जहन्नम; जन्नत सदा-सर्वदा रहनेवाली नेमतों का घर और जहन्नम शाश्वत यातना और सज़ा का केन्द्र है। जन्नत ख़ुदा के नेक और आज्ञाकारी बन्दों को मिलेगी और जहन्नम ख़ुदा के अवज्ञाकारी और बाग़ियों का ठिकाना होगी। इनसान के स्वभाव में जन्नत की चाहत पाई जाती है। वह एक ऐसी दुनिया चाहता है, जो दुख-दर्द और शोक और कष्ट से रहित हो और जिसकी नेमतें हमेशा रहनेवाली हों, जहाँ वह हमेशा सुख-चैन का जीवन व्यतीत कर सके। लेकिन अफ़सोस कि वह इस दुनिया की चकाचौंध और रंगीनियों में गुम होकर अपने स्वभाव की इस कामना को भुला बैठता है। वह इस तरह ज़िन्दगी गुज़ारने लगता है, जैसे क़ियामत नहीं आएगी। हिसाब-किताब नहीं होगा और वह जन्नत या जहन्नम से दो-चार न होगा। परलोक की तरफ़ उसका ध्यान आकर्षित भी किया जाता है और उसके पक्ष में प्रमाण भी प्रस्तुत किए जाते हैं, तो उसका इनकार स्वीकार में और उसका अविश्वास, विश्वास में नहीं बदल पाता है—

وَإِذَا قِيلَ إِنَّ وَعْدَ اللَّهِ حَقٌّ وَالسَّاعَةُ لَا رَيْبَ فِيهَا قُلْتُم مَّا نَدْرِي مَا السَّاعَةُ
إِن نَّظُنُّ إِلَّا ظَنًّا وَمَا نَحْنُ بِمُسْتَيْقِنِينَ ﴿٣٢﴾

“जब कहा गया कि अल्लाह का वादा सच्चा है और क़ियामत में कोई शक नहीं, तो तुमने जवाब दिया कि हम नहीं जानते कि क़ियामत क्या है और हम इसके बारे में एक गुमान-सा

रखते हैं और हम उस पर विश्वास नहीं करते।"

(क़ुरआन, सूरा-45 जासिया, आयत-32)

परलोक पर विश्वास से वंचित लोग इस इत्मीनान के साथ दुनिया की रंगीनियों में लथपथ पड़े रहते हैं कि यहाँ का भोग-विलास ही असली आनन्द है। दुनिया ही आदि और अन्त है। इसके बाद फिर कोई जीवन नहीं है, जिसकी चिन्ता की जाए। वे इस कल्पना के साथ जीते हैं—

बाबर बह ऐशकोश कि आलम दोबारा नीस्त

(बाबर कहता है कि खा लो, पी लो, मौज उड़ा लो; क्योंकि यह दुनिया दोबारा मिलनेवाली नहीं है।)

इसी मनोदशा की अभिव्यक्ति इस आयत में हुई है—

وَمَآ اَظُنُّ السَّاعَةَ قَآئِمَةً ۙ وَّلَئِنْ رُّدِدْتُّ اِلٰى رَبِّىْ لَاَجِدَنَّ خَيْرًا مِّنْهَا مُنْقَلَبًا

"मैं नहीं समझता कि क़ियामत आएगी। अगर मैं अपने रब की तरफ़ लौटा दिया भी जाऊँ, तो मुझे ज़रूर इससे बेहतर जगह मिलेगी।" (क़ुरआन, सूरा-18 कह्फ़, आयत-36)

जब दुनिया मन-मस्तिष्क पर छा जाती है

जब दुनिया मन-मस्तिष्क और विचारों पर छा जाती है और इनसान उसकी रंगीनियों में खो जाता है, तो क़ियामत के प्रति लापरवाही छाने लगती है। आख़िरकार इनसान दुनिया का बन्दा बनकर परलोक को तबाह कर बैठता है—

اِنَّ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ زَيَّنَّا لَهُمْ اَعْمَالَهُمْ فَهُمْ يَعْمَهُوْنَ ۝ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَهُمْ سُوْٓءُ الْعَذَابِ وَهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ هُمُ الْاَخْسَرُوْنَ ۝

"बेशक वे लोग जो परलोक पर ईमान नहीं रखते, हमने उनके लिए उनके कर्मों को शोभायमान बना दिया है; तो वे भटकते

फिर रहे हैं। यही लोग हैं जिनके लिए बुरी सज़ा है और वे परलोक में बड़ा घाटा उठानेवाले हैं।"-

(क़ुरआन, सूरा-27 नम्ल, आयतें-4,5)

जिन लोगों के लिए दुनिया लक्ष्य बन जाए, वे इससे आगे न सोचते हैं और न सोचना चाहते हैं। वे दुनिया के लिए जीते हैं और दुनिया के लिए मरते हैं। उनके लिए ख़ुदा और परलोक कोई ऐसा विषय नहीं होता, जिसपर वे समय ख़र्च करें और इसके आधार पर जीवन-निर्माण के बारे में सोचें।

परलोक को भुला देनेवाले इनसान के सामने ख़ुदा का दीन (धर्म) आता भी है, तो वह उसकी तरफ़ से आँखें बन्द करके इस तरह गुज़र जाता है, जैसे उससे उसके बारे में कुछ कहा ही नहीं जा रहा है। वह उसके प्रमाणों के साथ इस लापवाही का प्रदर्शन करता है, जैसे वह उसके ध्यान के योग्य ही नहीं है। वह ख़ुदा के दीन को रद्द ही नहीं करता, बल्कि उसकी राह में भारी पत्थर बन जाता है—

وَوَيْلٌ لِّلْكٰفِرِيْنَ مِنْ عَذَابٍ شَدِيْدِ ۙ﴿۲﴾ الَّذِيْنَ يَسْتَحِبُّوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا عَلَى الْاٰخِرَةِ وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَيَبْغُوْنَهَا عِوَجًا ۭ اُولٰۗىِٕكَ فِيْ ضَلٰلٍۢ بَعِيْدٍ ﴿۳﴾

"और इनकार करनेवालों के लिए अत्यन्त विनाशकारी अज़ाब है, जो कि परलोक के मुक़ाबले में दुनिया की ज़िन्दगी को पसन्द करते हैं और अल्लाह के रास्ते से दूसरों को रोकते हैं और उसमें टेढ़ पैदा करना चाहते हैं। ये लोग गुमराही में बहुत दूर निकल चुके हैं।" (क़ुरआन, सूरा-14 इबराहीम, आयतें-2,3)

दुनिया की ज़िन्दगी में जो लोग खोए हुए हैं और धर्म को मज़ाक़ समझ रहे हैं, हुक्म है कि उनसे नज़र फेर ली जाए। हाँ, यह सच्चाई बार-बार स्पष्ट की जाती रहे कि क़ियामत बहरहाल अपनी सारी भयंकरताओं के साथ आनेवाली है। दुनिया के माया-जाल में फँसे हुए

इनसानों के लिए वह बड़ा बुरा समय होगा। उनकी मुक्ति की कोई सूरत न होगी—

وَذَرِ الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَهُمْ لَعِبًا وَّلَهْوًا وَّغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَذَكِّرْ بِهٖٓ اَنْ تُبْسَلَ نَفْسٌۢ بِمَا كَسَبَتْ ۖ لَيْسَ لَهَا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيٌّ وَّلَا شَفِيْعٌ ۚ وَاِنْ تَعْدِلْ كُلَّ عَدْلٍ لَّا يُؤْخَذْ مِنْهَا ۗ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ اُبْسِلُوْا بِمَا كَسَبُوْا ۚ لَهُمْ شَرَابٌ مِّنْ حَمِيْمٍ وَّعَذَابٌ اَلِيْمٌۢ بِمَا كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ ۝

"और छोड़ दो उन लोगों को, जिन्होंने अपने धर्म को खेल-तमाशा बना रखा है और जिन्हें दुनिया की ज़िन्दगी ने धोखे में डाल रखा है और इस क़ुरआन के द्वारा नसीहत करते रहो कि कोई प्राणी अपने कर्मों के नतीजे में तबाही में न फेंक दिया जाए कि अल्लाह के सिवा न उसका कोई समर्थक और मददगार हो और न सिफ़ारिश करनेवाला। अगर वह पूरा-पूरा बदला (फ़िद्या) भी दे, तो उससे न लिया जाए। ये वे लोग हैं जो अपने कर्मों के कारण तबाही में फेंक दिए गए। उनके पीने के लिए गर्म पानी होगा और उन्हें दर्दनाक अज़ाब होगा, उस इनकार के कारण जो वे कर रहे थे।

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-70)

अल्लाह और परलोक पर ईमान का सम्बन्ध

अल्लाह पर ईमान और परलोक पर ईमान में परस्पर गहरा सम्बन्ध है। अल्लाह पर ईमान से परलोक पर ईमान बढ़ता है और परलोक पर ईमान अल्लाह पर ईमान की तरफ़ ले जाता है। क़ुरआन मजीद में यह सच्चाई बहुत विस्तार से समझाई गई है कि परलोक पर ईमान नहीं है, तो अल्लाह पर और उसके धर्म पर ईमान के लिए दिल नहीं खुलेगा और आदमी घमंड और अहंकार का रवैया अपनाएगा। एक जगह कहा गया है—

اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۚ فَالَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ قُلُوْبُهُمْ مُّنْكِرَةٌ وَّهُمْ مُّسْتَكْبِرُوْنَ ۞ لَا جَرَمَ اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّوْنَ وَمَا يُعْلِنُوْنَ ؕ اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُسْتَكْبِرِيْنَ ۞ وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ مَّاذَاۤ اَنْزَلَ رَبُّكُمْ ۙ قَالُوْۤا اَسَاطِيْرُ الْاَوَّلِيْنَ ۞ لِيَحْمِلُوْۤا اَوْزَارَهُمْ كَامِلَةً يَّوْمَ الْقِيٰمَةِ ۙ وَمِنْ اَوْزَارِ الَّذِيْنَ يُضِلُّوْنَهُمْ بِغَيْرِ عِلْمٍ ؕ اَلَا سَآءَ مَا يَزِرُوْنَ ۞

"तुम्हारा ख़ुदा बस एक ही ख़ुदा है। जो लोग परलोक पर ईमान नहीं रखते, उनके दिल उसके इनकारी हैं और वे अहंकार में ग्रस्त हैं। यह सच्ची बात है कि अल्लाह जानता है, जो कुछ वे छिपा रहे हैं और जिसको प्रकट कर रहे हैं। बेशक वह अहंकारियों को पसन्द नहीं करता। जब उनसे पूछा जाता है कि तुम्हारे पालनहार प्रभु ने क्या उतारा, तो जवाब देते हैं कि पहले लोगों की कहानियाँ हैं; ताकि इसके नतीजे में अपने गुनाहों के पूरे बोझ उठाएँ और उन लोगों के बोझ का भी एक हिस्सा उठाएँ, जिनको ज्ञान के बिना ये गुमराह कर रहे हैं। बहुत बुरा बोझ है, जो ये उठा रहे हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-16 नह्ल, आयतें—22-25)

क़ुरआन मजीद से विचार और कर्म के अन्धेरे छूमन्तर हो जाते हैं। लेकिन परलोक पर ईमान न हो, तो दिल के आईना में चमक न पैदा होगी और क़ुरआन मजीद की छाया उसपर नहीं पड़ेगी। देखिए इस स्थिति का कितने प्रभावशाली शब्दों में वर्णन हुआ है—

وَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ جَعَلْنَا بَيْنَكَ وَبَيْنَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ حِجَابًا مَّسْتُوْرًا ۞ وَّجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْۤ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ؕ وَاِذَا ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِى الْقُرْاٰنِ وَحْدَهٗ وَلَّوْا عَلٰۤى اَدْبَارِهِمْ نُفُوْرًا ۞

"जब आप क़ुरआन पढ़ते हैं, तो हम आपके और उन लोगों के

बीच, जो परलोक पर ईमान नहीं रखते, एक अदृश्य परदा डाल देते हैं।।हम उनके दिलों पर परदा डाल देते हैं कि वे इसे समझ न सकें और उनके कानों में बोझ डाल देते हैं और जब आप क़ुरआन में अपने पालनहार रब का, जो अकेला है, ज़िक्र करते हैं, तो ये नफ़रत के साथ पीठ फेरकर चले जाते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-45,46)

यही विषय एक दूसरी जगह पर इस प्रकार आया है—

وَإِنَّكَ لَتَدْعُوهُمْ إِلَىٰ صِرَاطٍ مُّسْتَقِيمٍ ۝ وَإِنَّ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْآخِرَةِ عَنِ الصِّرَاطِ لَنَاكِبُونَ ۝

"बेशक आप उनको सीधे रास्ते की तरफ़ बुला रहे हैं और जो परलोक पर ईमान नहीं रखते, वे सीधे रास्ते से फिरे हुए हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयतें-73,74)

जिस आदमी को यह एहसास ही न हो कि वह अल्लाह का बन्दा है और मरने के बाद उसे अल्लाह के सामने जवाब देना है, वह उसके दीन (धर्म) की कोई ज़रूरत ही नहीं महसूस करेगा। लेकिन अगर आदमी इस सच्चाई को मान ले कि परलोक आएगा और इस तरह आएगा कि अल्लाह तआला की आज्ञा का पालन करनेवाले उसके इनाम के हक़दार होंगे और उसकी आज्ञा का पालन न करनेवाले बदतरीन सज़ा के हक़दार होंगे। वह कभी यह साहस नहीं कर सकता कि अल्लाह के दीन को रद्द कर दे; क्योंकि दीन के बिना वह हमेशा अपने आप को अल्लाह के अज़ाब के निशाने में महसूस करेगा। इसी कारण क़ुरआन कहता है—

وَالَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِالْآخِرَةِ يُؤْمِنُونَ بِهِ

"जो लोग परलोक पर ईमान रखते हैं, वे इस (किताब) पर ईमान लाते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-92)

परलोक पर ईमान ही से अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी नाफ़रमानी से बचने की भावना उभरती है। जीवन के राजमार्ग पर कोई क़दम उठाने से पहले आदमी यह सोचने पर मजबूर होता है कि कल क़ियामत के दिन अल्लाह उसके बारे में मुझसे ज़रूर सवाल करेगा। अगर मैं ग़लत दिशा में बढ़ा, तो उसकी पकड़ से मुझे कोई चीज़ बचा न सकेगी। अल्लाह तआला के नेक बन्दे क़ियामत में जब नेमत भरी जन्नतों में होंगे और अपने अच्छे कर्म का बदला पा रहे होंगे, उस समय वे सोचेंगे और आपस में कहेंगे कि अल्लाह तआला की ये मेहरबानियाँ हम पर इसलिए हैं कि हमें दुनिया में इस दिन का डर लगा रहा और हम अल्लाह की नाफ़रमानी से बचते रहे—

وَاَقْبَلَ بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ يَّتَسَآءَلُوْنَ ﴿٢٥﴾ قَالُوْٓا اِنَّا كُنَّا قَبْلُ فِيْٓ اَهْلِنَا مُشْفِقِيْنَ ﴿٢٦﴾ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا وَوَقٰىنَا عَذَابَ السَّمُوْمِ ﴿٢٧﴾ اِنَّا كُنَّا مِنْ قَبْلُ نَدْعُوْهُ ۭ اِنَّهٗ هُوَ الْبَرُّ الرَّحِيْمُ ﴿٢٨﴾

"वे एक दूसरे की तरफ़ ध्यान देकर पूछेंगे। कहेंगे कि बेशक हम इससे पहले (दुनिया में) अपने बाल-बच्चों में (परलोक की यातना से) डरते रहते थे। तो अल्लाह ने हमपर एहसान किया और हमें जहन्नम की तपिश के अज़ाब से बचा लिया। हम इससे पहले (दुनिया में) उसे पुकारते थे। बेशक वह बड़ा एहसान करनेवाला और बड़ा दयालु है।"

(क़ुरआन, सूरा-52 तूर, आयतें—25-28)

जन्नतवालों की एक और बातचीत सुनिए और ज़रा उनकी ख़ुशी का हाल देखिए—

فَاَمَّا مَنْ اُوْتِيَ كِتٰبَهٗ بِيَمِيْنِهٖ ۙ فَيَقُوْلُ هَاۤؤُمُ اقْرَءُوْا كِتٰبِيَهْ ﴿١٩﴾ اِنِّيْ ظَنَنْتُ اَنِّيْ مُلٰقٍ حِسَابِيَهْ ﴿٢٠﴾ فَهُوَ فِيْ عِيْشَةٍ رَّاضِيَةٍ ﴿٢١﴾ فِيْ جَنَّةٍ عَالِيَةٍ ﴿٢٢﴾ قُطُوْفُهَا دَانِيَةٌ ﴿٢٣﴾ كُلُوْا وَاشْرَبُوْا هَنِيْٓئًا ۢ بِمَآ اَسْلَفْتُمْ فِي الْاَيَّامِ الْخَالِيَةِ ﴿٢٤﴾

"जिस आदमी को उसका कर्मपत्र उसके दाएँ हाथ में दिया जाएगा, वह कहेगा : लो पढ़ो मेरा कर्मपत्र! मुझे यक़ीन था कि मुझे अपने हिसाब का सामना करना होगा और वह मनचाहे ऐश में होगा, ऊँची जन्नत में होगा। उसके मेवे क़रीब होंगे (कहा जाएगा), खाओ-पियो मज़े के साथ, उन कर्मों के नतीजे में जो तुमने पिछले दिनों में किए थे।"

(क़ुरआन, सूरा-69 हाक़्क़ा, आयतें—19-24)

जीवन पर परलोक की धारणा का प्रभाव

क़ुरआन मजीद अल्लाह तआला के भले बन्दों के चरित्र के रौशन पहलू जहाँ बयान करता है, वहाँ आम तौर उनके परलोक-भय का भी उल्लेख करता है कि परलोक की जवाबदेही की भावना उनपर छाई रहती है और वे हर समय उनसे डरते और काँपते रहते हैं। इसके नतीजे में उनकी ज़िन्दगी में जो धार्मिक और नैतिक क्रान्ति आती है, और आचरण और चरित्र में जो निखार पैदा होता है, उसे भी सामने लाता है। क़ुरआन में एक जगह कहा गया है—

إِنَّ الَّذِينَ هُمْ مِّنْ خَشْيَةِ رَبِّهِمْ مُّشْفِقُونَ ﴿٥٧﴾ وَالَّذِينَ هُمْ بِآيٰتِ رَبِّهِمْ يُؤْمِنُونَ ﴿٥٨﴾ وَالَّذِينَ هُمْ بِرَبِّهِمْ لَا يُشْرِكُونَ ﴿٥٩﴾ وَالَّذِينَ يُؤْتُونَ مَآ اٰتَوْا وَّقُلُوبُهُمْ وَجِلَةٌ اَنَّهُمْ اِلٰى رَبِّهِمْ رٰجِعُونَ ﴿٦٠﴾ أُولٰٓئِكَ يُسٰرِعُونَ فِي الْخَيْرٰتِ وَهُمْ لَهَا سٰبِقُونَ ﴿٦١﴾

"बेशक वे लोग जो अपने पालनहार रब के ख़ौफ़ से डरते रहते हैं, जो अपने रब की आयतों पर ईमान रखते हैं और जो अपने रब के साथ किसी को साझी नहीं ठहराते और जो देते हैं जो कुछ देते हैं; लेकिन उनके दिल काँपते रहते हैं कि उन्हें अपने रब की तरफ़ वापस जाना है। यही वे लोग हैं जो भलाइयों (की राह) में दौड़ते हैं और उन तक सबसे पहले पहुँचते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयतें-57-61)

क़ुरआन में एक और जगह कहा गया है—

وَالَّذِيْنَ يُصَدِّقُوْنَ بِيَوْمِ الدِّيْنِ ۞ وَالَّذِيْنَ هُمْ مِّنْ عَذَابِ رَبِّهِمْ مُّشْفِقُوْنَ ۞ اِنَّ عَذَابَ رَبِّهِمْ غَيْرُ مَاْمُوْنٍ ۞

"वे लोग जो क़ियामत के दिन पर यक़ीन रखते हैं और जो अपने रब के अज़ाब से डरते हैं। बेशक उनके रब के अज़ाब से किसी को निडर नहीं होना चाहिए।"

(क़ुरआन, सूरा-70 मआरिज, आयतें-26-28)

इसी बात को एक और आयत में देखिए—

رِجَالٌ لَّا تُلْهِيْهِمْ تِجَارَةٌ وَّلَا بَيْعٌ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَاِقَامِ الصَّلٰوةِ وَاِيْتَآءِ الزَّكٰوةِ ۙ يَخَافُوْنَ يَوْمًا تَتَقَلَّبُ فِيْهِ الْقُلُوْبُ وَالْاَبْصَارُ ۞

"(अल्लाह के घरों में) ऐसे लोग हैं कि उन्हें कोई व्यापार या लेन-देन अल्लाह के ज़िक्र से, नमाज़ क़ायम करने और ज़कात अदा करने से लापरवाही नहीं करने देता। वे डरते रहते हैं, उस दिन से जिसमें दिल और निगाहें उलट जाएँगी।"

(क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-37)

दुनिया लक्ष्य न बन जाए

इस्लाम ने संसार-त्याग की शिक्षा नहीं दी है। वह संन्यास के विरुद्ध है।[1] हाँ, इस्लाम इससे मना करता है कि दुनिया ज़िन्दगी का मक़सद बन जाए; ज़िन्दगी इसके लिए समर्पित हो जाए और परलोक को भुला दिया जाए। वह चाहता है कि दुनिया की ज़िन्दगी को परलोक की कामयाबी का साधन बनाया जाए, यह सोचकर ज़िन्दगी गुज़ारी जाए कि दुनिया की हर चीज़ नष्ट हो जानेवाली है और परलोक, जो हमेशा

[1] देखिए— क़ुरआन, सूरा-57 हदीद, आयत-27

रहनेवाला है, को छोड़ा नहीं जा सकता वरना यह बड़े घाटे का सौदा होगा। क़ुरआन में कहा गया है—

وَمَآ اُوْتِيْتُمْ مِّنْ شَيْءٍ فَمَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَزِيْنَتُهَا ۚ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ وَّاَبْقٰى ۗ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ﴿٦٠﴾

"जो कुछ तुमको दिया गया है, वह दुनिया की ज़िन्दगी का सामान और उसकी शोभा और साज़-सज्जा है। और जो अल्लाह के पास है, वह इससे बहुत बेहतर और हमेशा बाक़ी रहनेवाला है। तो क्या तुम समझ से काम नहीं लेते हो?"

(क़ुरआन, सूरा-28 क़सस, आयत-60)

परलोक की ज़िन्दगी को प्राथमिकता के बजाय दुनिया का मोह इनसान को तबाही की तरफ़ ले जा रहा है। काश, उसे वह महसूस करे—

بَلْ تُؤْثِرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا ﴿١٦﴾ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ وَّاَبْقٰى ﴿١٧﴾

"तुम तो दुनिया की ज़िन्दगी को प्राथमिकता देते हो। हालाँकि परलोक उससे बहुत ही बेहतर और हमेशा बाक़ी रहनेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-87 आला, आयतें-16,17)

एक और जगह कहा गया—

وَمَا هٰذِهِ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا لَهْوٌ وَّلَعِبٌ ۚ وَاِنَّ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ لَهِيَ الْحَيَوَانُ ۘ لَوْ كَانُوْا يَعْلَمُوْنَ ﴿٦٤﴾

"यह दुनिया की ज़िन्दगी तो केवल खेल-तमाशा है और बेशक परलोक का घर ही हक़ीक़ी ज़िन्दगी है। काश वे इसे जानते!"

(क़ुरआन, सूरा-29 अनकबूत, आयत-64)

दुनिया मिट जानेवाली है

इस दुनिया को, इसकी चमक-दमक और रंगीनी को कोई स्थायित्व नहीं और इसका कोई भरोसा नहीं। यह आज है, कल नहीं है। लेकिन अफ़सोस! इनसान इसकी मिट जानेवाली सुन्दरता पर मोहित है। इसके पीछे अपने आख़िरी अंजाम से बेख़बर दौड़ता-फिरता है। कभी नहीं सोचता कि यह हरियाली और ताज़गी क्षणिक है। गर्म हवा के एक थपेड़े से मुरझा जाएगी और वह हसरत और शर्मिन्दगी से हाथ मलता रह जाएगा। देखिए सूरा हदीद में कितने अच्छे ढंग से यह बात समझाई गई है—

اِعْلَمُوْٓا اَنَّمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا لَعِبٌ وَّلَهْوٌ وَّزِيْنَةٌ وَّتَفَاخُرٌۢ بَيْنَكُمْ وَتَكَاثُرٌ فِى الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ ۭ كَمَثَلِ غَيْثٍ اَعْجَبَ الْكُفَّارَ نَبَاتُهٗ ثُمَّ يَهِيْجُ فَتَرٰىهُ مُصْفَرًّا ثُمَّ يَكُوْنُ حُطَامًا ۭ وَفِى الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ شَدِيْدٌ ۙ وَّمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٌ ۭ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ ۝

"जान लो कि दुनिया की ज़िन्दगी तो बस खेल-तमाशा और शोभा है; एक-दूसरे पर घमंड और बड़ाई जताना और धन और सन्तान में एक-दूसरे से अधिक दिखाना है। इसकी मिसाल ऐसी है, जैसे बारिश से जो वनस्पति निकलती है, वह किसानों को अच्छी लगती है। फिर वह पक जाती है और तुम उसे पीले रंग में देखते हो; फिर (किसी अचानक आफ़त से) वह चूरा-चूरा होकर रह जाती है (यह दुनिया का हाल है) और परलोक में घोर अज़ाब है और अल्लाह का क्षमादान और उसकी प्रसन्नता है और दुनिया की ज़िन्दगी तो बस धोखे का सामान है।" (क़ुरआन, सूरा-57 हदीद, आयत-20)

इस दुनिया की ज़िन्दगी को खेल-तमाशा इसलिए कहा गया है कि खेल-तमाशा अच्छा तो लगता है, लेकिन महत्त्वपूर्ण कामों से लापरवाह

कर देता है। साज़-सज्जा एक दिखावे की चीज़ है। यह इनसान की महानता और बड़ाई का प्रमाण नहीं है। इसकी मिसाल ऐसी ही है जैसे कोई केंसर का रोगी या चरित्रहीन आदमी जब स्वर्णजड़ित लिबास पहन ले, तो इससे वह स्वस्थ और चरित्रवान नहीं हो जाएगा; यही हाल दुनिया का है। इसका मिलना इस बात का सुबूत नहीं है कि इनसान खुदा और लोगों की निगाह में मान-सम्मान और बड़ाई का मालिक है। फिर दुनिया का मिलना भी क्या मिलना है—

मिल-मिल जाए, छिन-छिन जाए।

इस मिट जानेवाली दुनिया पर रीझना और जान देना बड़ी नादानी है। आदमी इच्छा और कामना करे, तो परलोक की करे। लपके और दौड़े तो परलोक की तरफ़; माँगे, तो जन्नत माँगे; चिन्ता करे, तो जन्नत की चिन्ता करे; जो असली सुख-चैन का घर है, जिसकी नेमतें हमेशा रहनेवाली हैं और जिसके पाने के बाद महरूमी का कभी एहसास न होगा। इसलिए सूरा हदीद की जो आयत अभी गुज़री है, उसके तुरन्त बाद इसी तरफ़ ध्यान दिलाया गया है—

سَابِقُوٓا اِلٰى مَغۡفِرَةٍ مِّنۡ رَّبِّكُمۡ وَجَنَّةٍ عَرۡضُهَا كَعَرۡضِ السَّمَآءِ وَالۡاَرۡضِۙ اُعِدَّتۡ لِلَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖؕ ذٰلِكَ فَضۡلُ اللّٰهِ يُؤۡتِيۡهِ مَنۡ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الۡفَضۡلِ الۡعَظِيۡمِ ﴿۲۱﴾

“दौड़ो अपने पालनहार रब के क्षमादान और उस जन्नत की तरफ़, जिसका विस्तार आसमान और ज़मीन के विस्तार की तरह है। यह उन लोगों के लिए तैयार की गई है, जो अल्लाह और उसके पैग़म्बरों पर ईमान रखते हैं। यह अल्लाह का उदार अनुग्रह है, जिसे चाहता है प्रदान करता है और अल्लाह बड़ा अनुग्रहवाला है।” (क़ुरआन, सूरा-57 हदीद, आयत-21)

वह इनसान कितना बड़ा अभागा है, जो अपनी कोशिश और

मेहनत से दुनियां तो बना ले और अपनी परलोक बरबाद कर ले। इसके विपरीत वह व्यक्ति कितना रश्क के क़ाबिल है, जो 'अपने ईमान और अच्छे कर्म के नतीजे में हमेशा के लिए जन्नत का हक़दार क़रार पाए और वहाँ मेहमान बनकर रहे—

قُلْ هَلْ نُنَبِّئُكُمْ بِالْأَخْسَرِينَ أَعْمَالًا ۝ الَّذِينَ ضَلَّ سَعْيُهُمْ فِي الْحَيٰوةِ
الدُّنْيَا وَهُمْ يَحْسَبُونَ أَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ۝ أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيٰتِ
رَبِّهِمْ وَلِقَآئِهٖ فَحَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فَلَا نُقِيمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَزْنًا ۝ ذٰلِكَ
جَزَآؤُهُمْ جَهَنَّمُ بِمَا كَفَرُوا وَاتَّخَذُوٓا اٰيٰتِي وَرُسُلِي هُزُوًا ۝ إِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا
وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ كَانَتْ لَهُمْ جَنّٰتُ الْفِرْدَوْسِ نُزُلًا ۝ خٰلِدِينَ فِيهَا لَا
يَبْغُونَ عَنْهَا حِوَلًا ۝

"कहो : क्या मैं तुम्हें बताऊँ, वे कौन लोग हैं, जो अपने कर्मों के लिहाज़ से सबसे अधिक घाटे में हैं ? ये वे लोग हैं जिनकी सारी कोशिशें दुनिया की ज़िन्दगी में बरबाद हो गईं और वे ये समझते रहे कि वे बड़ा अच्छा काम कर रहे हैं। ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने पालनहार की आयतों और उससे मुलाक़ात का इनकार किया; तो उनके कर्म अकारथ गए। हम क़ियामत के दिन उन्हें कोई वज़न नहीं देंगे। यह है उनका बदला जहन्नम, इस कारण कि उन्होंने (हक़ का) इनकार किया और मेरी आयतों और मेरे पैग़म्बरों को मज़ाक़ बना दिया। (इसके विपरीत) बेशक जो लोग ईमान लाए और अच्छे कर्म किए, उनकी मेहमानी के लिए फ़िरदौस के बाग़ होंगे। उसमें वे हमेशा रहेंगे और उसे छोड़ना नहीं चाहेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-18 कह्फ़, आयतें—103-108)

ईमानवाले और हक़ के इनकारी के बीच एक बड़ा फ़र्क़ यही है कि ईमानवाला हर मामले में परलोक के लाभ-हानि को देखता है और हक़

के इनकारी के सामने केवल दुनिया और उसका लाभ होता है। अल्लाह तआला का क़ानून यह है कि जो आदमी दुनिया पाना चाहे, उसे अल्लाह तआला के नियम, क़ानून और मर्ज़ी के तहत दुनिया मिलती है और जो परलोक पाना चाहे वह अल्लाह की मेहरबानी से परलोक पाता है। क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला का यह नियम इन शब्दों में बयान हुआ है—

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهٗ فِيْهَا مَا نَشَآءُ لِمَنْ نُّرِيْدُ ثُمَّ جَعَلْنَا لَهٗ جَهَنَّمَ ۚ يَصْلٰىهَا مَذْمُوْمًا مَّدْحُوْرًا ﴿١٨﴾ وَمَنْ اَرَادَ الْاٰخِرَةَ وَسَعٰى لَهَا سَعْيَهَا وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ كَانَ سَعْيُهُمْ مَّشْكُوْرًا ﴿١٩﴾ كُلًّا نُّمِدُّ هٰٓؤُلَآءِ وَهٰٓؤُلَآءِ مِنْ عَطَآءِ رَبِّكَ ۚ وَمَا كَانَ عَطَآءُ رَبِّكَ مَحْظُوْرًا ﴿٢٠﴾ اُنْظُرْ كَيْفَ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ ۚ وَلَلْاٰخِرَةُ اَكْبَرُ دَرَجٰتٍ وَّاَكْبَرُ تَفْضِيْلًا ﴿٢١﴾

"जो आदमी दुनिया का लाभ चाहेगा, तो हम जल्द ही उसे जितना चाहेंगे और जिसके लिए चाहेंगे, दे देंगे। फिर हम उसके लिए जहन्नम सुनिश्चित कर देंगे, जिसमें वह तिरस्कृत और दयालुता से वंचित होकर दाख़िल होगा। लेकिन जो परलोक चाहेगा और उसके लिए इस तरह कोशिश करेगा, जैसे करनी चाहिए और वह ईमानवाला भी होगा, तो इस तरह के सब लोगों की कोशिश की क़द्र की जाएगी। हम तुम्हारे पालनहार रब के कृपा-दान ही से (इस दुनिया में) उनको भी देते हैं और इनको भी देते हैं। तुम्हारे रब के कृपा-दान पर कोई बन्दिश नहीं है। देखो, हमने (दुनिया में) किस तरह उनमें से कुछ को कुछ पर बरतरी दी है और परलोक में तो (इसके मुक़ाबले में) बड़े दरजे हैं और बड़ी प्रतिष्ठा है।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें—18-21)

एक और जगह कहा गया—

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ حَرْثَ الْاٰخِرَةِ نَزِدْ لَهٗ فِيْ حَرْثِهٖ ۚ وَمَنْ كَانَ يُرِيْدُ حَرْثَ الدُّنْيَا نُؤْتِهٖ مِنْهَا وَمَا لَهٗ فِي الْاٰخِرَةِ مِنْ نَّصِيْبٍ ﴿۲۰﴾

"जो आदमी परलोक की खेती चाहे, तो हम उसकी खेती में उसके लिए बढ़ौत्तरी कर देते हैं और जो दुनिया की खेती चाहे, तो हम उसमें से कुछ उसे दे देते हैं और परलोक में उसका कोई हिस्सा न होगा।" (क़ुरआन, सूरा-42 शूरा, आयत-20)

इसी अर्थ की एक और आयत है—

وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِهٖ مِنْهَا ۚ وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِهٖ مِنْهَا ۚ وَ سَنَجْزِي الشّٰكِرِيْنَ ﴿۱۴۵﴾

"जो आदमी दुनिया का बदला चाहे, तो हम उसमें से कुछ उसे दे देते हैं और जो परलोक के बदले का इच्छुक हो, तो उसे उसमें से दे देते हैं और शुक्र करनेवाले बन्दों को जल्द ही अच्छा बदला प्रदान करेंगे।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-145)

अल्लाह तआला के इस नियम के तहत जो दुनिया के इच्छुक हैं, उनसे कहा गया है—

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا وَزِيْنَتَهَا نُوَفِّ اِلَيْهِمْ اَعْمَالَهُمْ فِيْهَا وَهُمْ فِيْهَا لَا يُبْخَسُوْنَ ﴿۱۵﴾ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَيْسَ لَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا النَّارُ ۖ وَحَبِطَ مَا صَنَعُوْا فِيْهَا وَبٰطِلٌ مَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۶﴾

"जो लोग बस इस दुनिया की ज़िन्दगी और इसकी शोभा की कामना करें, तो हम उनके कर्मों का पूरा-पूरा बदला इसी दुनिया में दे देते हैं और उनके लिए इस दुनिया में कमी नहीं होती। ये वे लोग हैं, जिनके लिए परलोक में सिवाय जहन्नम की आग के कुछ नहीं होगा। जो कुछ दुनिया में इन्होंने किया, वह व्यर्थ हो

जाएगा और जो कर्म कर रहे हैं, वह बेफ़ायदा ठहरेगा।"

(क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयतें-15,16)

परलोक की सफलता ही वास्तविक सफलता है

वे लोग जिनको ख़ुदा और परलोक पर ईमान नहीं है, वे दुनिया के लिए भाग-दौड़ करते रहते हैं, लेकिन ईमानवालों की नज़र परलोक की सफलता पर होती है। वे उसी के लिए जीते हैं और उसी के लिए भाग-दौड़ करते हैं। यह सफलता अल्लाह और उसके पैग़म्बर के आज्ञापालन से मिलती है। क़ुरआन मजीद की दृष्टि में यही वास्तविक सफलता है और है भी यही सबसे बड़ी सफलता—

وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ يُدْخِلْهُ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ
وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ⑬

"जो अल्लाह और उसके पैग़म्बर का कहा माने, उसे वह ऐसी जन्नतों में दाख़िल करेगा, जिनके नीचे नहरें जारी होंगी। उनमें वे हमेशा रहेंगे और यही बड़ी सफलता है।"

(क़ुरआन, सूरा-4, निसा, आयत-13)

एक जगह कहा गया कि तुम लोग इस दुनिया में ख़ुदा और पैग़म्बर पर ईमान और उसके रास्ते में जी-जान से कोशिश और क़ुरबानी का सुबूत पेश करो, फिर ख़ुदा के इनामों को देखो—

يَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ وَيُدْخِلْكُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ وَمَسٰكِنَ طَيِّبَةً
فِيْ جَنّٰتِ عَدْنٍ ۭ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ⑫

"अल्लाह तुम्हारे गुनाहों को माफ़ कर देगा और तुम्हें ऐसी जन्नतों में दाख़िल करेगा, जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी और उत्तम घर देगा, जो हमेशा रहनेवाली जन्नतों में होंगे। यही बड़ी सफलता है।" (क़ुरआन, सूरा-61 सफ़्फ़, आयात-12)

ईमान और अच्छे कामों से इनसान परलोक में जन्नत का हक़दार होगा। यह उसके लिए बड़ी सफलता है। इससे बड़ी और कोई सफलता नहीं है—

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ ۚ ذَٰلِكَ الْفَوْزُ الْكَبِيرُ ⑪

"बेशक जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, उनके लिए ऐसी जन्नतें हैं जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। यही बड़ी सफलता है।"

(क़ुरआन, सूरा-85 बुरूज, आयत-11)

यही अल्लाह की सबसे बड़ी मेहरबानी है, जो उसके उन भले बन्दों पर होगी, जो ईमान और अच्छे कर्मों की दौलत लेकर उसके दरबार में पहुँचेंगे—

تَرَى الظَّالِمِينَ مُشْفِقِينَ مِمَّا كَسَبُوا وَهُوَ وَاقِعٌ بِهِمْ ۗ وَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فِي رَوْضَاتِ الْجَنَّاتِ ۖ لَهُم مَّا يَشَاءُونَ عِندَ رَبِّهِمْ ۚ ذَٰلِكَ هُوَ الْفَضْلُ الْكَبِيرُ ㉒

"ज़ालिमों को तुम देखोगे कि जो उन्होंने कमाया है उसके कारण डर रहे होंगे; लेकिन अज़ाब उन पर आकर ही रहेगा और जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए उनके लिए जन्नतों के बाग़ हैं। उनके लिए उनके पालनहार रब के पास वह सब कुछ है, जो वे चाहेंगे। यही बड़ा अनुग्रह है।"

(क़ुरआन, सूरा-42 शूरा, आयत-22)

बड़े नसीबवाला है वह इनसान और अत्यधिक रश्क के क़ाबिल भी, जिसके हिस्से में परलोक की कामयाबी आए और वह जन्नत का हक़दार ठहरे।

इस्लाम की दावत और परलोक की चिन्ता

इस्लाम की दावत देना परलोक से लापरवाह इनसानों का काम नहीं है, बल्कि इसके लिए ऐसे लोगों की ज़रूरत है, जो दुनिया पर परलोक को प्राथमिकता दें और जो इस कल्पना से काँपते हों कि वे ख़ुदा के सामने हाज़िर किए जाएँगे और उनसे पूछा जाएगा कि उन्होंने उसके दीन की कुछ ख़िदमत की या नहीं?

इस्लाम की दावत कोई मामूली काम नहीं, बल्कि बहुत बड़ा संघर्ष है। यह एक लम्बी लड़ाई है, जो विभिन्न मोर्चों पर लड़ी जाती है। ख़ुदा का हुक्म है—

وَجَاهِدْهُم بِهِ جِهَادًا كَبِيرًا ۝

"और तुम उनसे इस क़ुरआन के द्वारा भारी संघर्ष (जिहाद) करो।" (क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयत-52)

ख़ुदा ने जिस जीवन-संघर्ष का हुक्म दिया है, उसे शब्दों में बयान करना तो आसान है, लेकिन उसमें शामिल होना और अपना हिस्सा अदा करना आसान नहीं है। उसमें उन अनगिनत लोगों के विरोध का सामना करना होता है, जो ख़ुदा के दीन से मतभेद रखते और इसे नापसन्द करते हैं, बल्कि इसे मिटा देना चाहते हैं। यह वह महान संघर्ष है, जिसमें कभी-कभी अपने बेहतरीन सम्बन्ध तोड़ने पड़ते हैं, ख़ूनी रिश्तों को ख़त्म करना होता है। सगे-सम्बन्धियों तक को आदमी छोड़ने पर मजबूर होता है। इतना बड़ा संघर्ष कोई ऐसा आदमी नहीं कर सकता, जो दीन के वास्ते किसी की नाराज़ी मोल न लेना चाहे, जो किसी सम्बन्ध का टूटना गवारा न करे और जो किसी दोस्त की जुदाई सहन न कर सके। उसको वही आदमी शुरू भी कर सकता है और शुरू करने के बाद जारी भी रख सकता है, जिसको दुनिया की हर चीज़ से अधिक ख़ुदा के दीन से प्रेम हो, जो ख़ुदा को नाराज़ करके किसी को

खुश करने के लिए तैयार न हो; जिसको परलोक पर यक़ीन हो और जो यह जानता हो कि वहाँ इस दुनिया का कोई भी सम्बन्ध उसके काम नहीं आएगा–

لَا تَجِدُ قَوْمًا يُّؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَآدُّوْنَ مَنْ حَآدَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَوْ كَانُوْٓا اٰبَآءَهُمْ اَوْ اَبْنَآءَهُمْ اَوْ اِخْوَانَهُمْ اَوْ عَشِيْرَتَهُمْ ؕ اُولٰٓئِكَ كَتَبَ فِيْ قُلُوْبِهِمُ الْاِيْمَانَ وَاَيَّدَهُمْ بِرُوْحٍ مِّنْهُ ؕ وَيُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ؕ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ ؕ اُولٰٓئِكَ حِزْبُ اللّٰهِ ؕ اَلَآ اِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ﴿٢٢﴾

"जो लोग खुदा और अन्तिम दिन (आख़िरत) पर ईमान रखते हैं, उनको तुम उन लोगों से प्रेम का सम्बन्ध रखते हुए नहीं पाओगे, जो ख़ुदा और उसके पैग़म्बर का विरोध करते हैं, चाहे वे उनके बाप या उनके बेटे या उनके भाई या उनके परिवार के ही लोग क्यों न हों। यही लोग हैं, जिनके दिलों में ख़ुदा ने ईमान रख दिया है और उनको अपने विशेष अनुग्रह से शक्ति दी है। उनको ख़ुदा तआला ऐसी जन्नतों में दाख़िल करेगा, जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, जिनमें वे हमेशा रहेंगे। अल्लाह तआला उनसे राज़ी होगा और वे उससे राज़ी होंगे। यह अल्लाह का गिरोह है और सुन लो, ख़ुदा का गिरोह ही कामयाब होनेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-58 मुजादला, आयत-22)

इस्लाम की दावत देना अपने आपको आज़माइश में डालना है। इस काम को अपनाने के बाद सुख-चैन और आराम की तलाश बेकार है। जो आदमी इस रास्ते में आगे बढ़ता है, कभी-कभी उसे आज़माया जाता है और हर तरह आज़माया जाता है। उसको मानसिक और शारीरिक कष्ट पहुँचाए जाते हैं, डराया और धमकाया जाता है; उसके माल और

दौलत को नुक़सान पहुँचाया जाता है; उसके लिए भारी गलकड़ा और बेड़ियाँ सजाई जाती हैं और उसे क़ैद और बन्धनों से गुज़ारा जाता है। यही नहीं, बल्कि इसमें ऐसे मौक़े भी आ सकते हैं, जबकि आदमी को अपना सिर देकर इस्लाम की सेवा करनी पड़े। इतना बड़ा क़दम वही उठा सकता है, जिसको परलोक पर ईमान हो, जिसको शरीर और जान के सुख-चैन से अधिक परलोक की कामयाबी की फ़िक्र हो; जिसको यहाँ की मुसीबतों और कठिनाइयों से अधिक वहाँ के अज़ाब का डर हो। लेकिन अगर परलोक पर ईमान न हो, तो आदमी मौत से भागने की राहें ढूँढता फिरेगा, ताकि किसी तरह जान बची रहे; क्योंकि वह जो कुछ पाना चाहता है, इसी दुनिया में पाना चाहता है। उसके लिए कोई और दुनिया नहीं होती, जिसमें कुछ पाने की वह आशा कर सके। इसी कारण क़ुरआन कहता है—

لَا يَسْتَأْذِنُكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ اَنْ يُّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ
وَاَنْفُسِهِمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالْمُتَّقِيْنَ ۞ اِنَّمَا يَسْتَأْذِنُكَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ
وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَارْتَابَتْ قُلُوْبُهُمْ فَهُمْ فِيْ رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُوْنَ ۞

"(ऐ पैग़म्बर) जो लोग अल्लाह और अन्तिम दिन (आख़िरत) पर ईमान रखते हैं, वे तुमसे इस बात की इजाज़त नहीं चाहते कि उनको अपनी जान और माल के साथ जीवन-संघर्ष (जिहाद) से अलग रहने दिया जाए और अल्लाह जानता है उन लोगों को जिनके अन्दर ख़ुदा का डर है। यह इजाज़त तो तुमसे वे लोग माँगते हैं, जो ख़ुदा और अन्तिम दिन (आख़िरत) पर ईमान नहीं रखते; जिनके दिलों में शक है और अपने शक की हालत में हैरान हैं कि क्या करें, क्या न करें।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयतें-44,45)

इस्लाम की दावत आसान नहीं है। यह अपने आपको कठिनाइयों और मुसीबतों का निशाना बनाना है। इसमें बड़े नाज़ुक मरहले आते रहे

हैं और आ सकते हैं। वह समय भी आ सकता है, जबकि इस्लाम की चर्चा पर ज़बान हलक़ से खींच ली जाए। खुदा की राह पर चलना अंगारों पर चलने से ज़्यादा मुश्किल हो जाए और दीन (इस्लाम) की हिमायत में जो हाथ उठे, काट दिया जाए। दुनिया यह दृश्य देख चुकी है। इसके बावुजूद हमने और आपने इरादा किया है कि दुनिया को इस्लाम की दावत देंगे और इसे सफल और प्रभावी बनाने की आख़िरी दम तक कोशिश करेंगे। हम अपने इस इरादे पर अमल के क़ाबिल उसी समय हो सकते हैं, जबकि हमारे सामने केवल परलोक और उसका फ़ायदा हो और यह सच्चाई हमारे नस-नस में उतर जाए कि दुनिया मिट जानेवाली है और परलोक हमेशा बाक़ी रहनेवाला है—

مَا عِنْدَكُمْ يَنْفَدُ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ بَاقٍ ۗ وَلَنَجْزِيَنَّ الَّذِيْنَ صَبَرُوْٓا اَجْرَهُمْ بِاَحْسَنِ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿٩٦﴾

"जो कुछ तुम्हारे पास है वह नष्ट-विनष्ट हो जाएगा और जो कुछ अल्लाह के पास है, वही बाक़ी रहनेवाला है और जिन्होंने सब्र किया (और जमे रहे) हम उन बेहतर कर्मों पर, जो वे कर रहे थे, उनका बदला उन्हें ज़रूर देंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-16 नह्ल, आयत-96)

हमारी एक तरफ़ ख़ुदा की जन्नत है, दुख-तकलीफ़ से पाक ज़िन्दगी है और वह सब कुछ है, जिसे न तो किसी आँख ने देखा, किसी कान ने सुना और न किसी आदमी ने उसकी कल्पना की; दूसरी तरफ़ दुनिया का सुख-चैन है, बिना रोक-टोकवाली ज़िन्दगी है और हलाल-हराम के अन्तर के बिना उन्नति के अवसर और सम्भावनाएँ हैं। इन दोनों में से किसी एक चीज़ को हमें अपनाना है; क्योंकि ये दोनों चीज़ें एक साथ नहीं मिल सकतीं। दुनिया की ज़िन्दगी में ही जो आदमी लीन होगा, निश्चय ही परलोक उसके हिस्से में नहीं आएगा और जो अपने लिए परलोक चाहेगा, ज़रूर ही उसकी दुनिया को नुक़सान

पहुँचेगा। खुदा के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने साफ़-साफ़ शब्दों में बता दिया है—

مَنْ أَحَبَّ دُنْيَاهُ أَضَرَّ بِآخِرَتِهِ وَمَنْ أَحَبَّ آخِرَتَهُ أَضَرَّ بِدُنْيَاهُ فَآثِرُوا مَا يَبْقَى عَلَى مَا يَفْنَى

"जो आदमी अपनी दुनिया से प्रेम करेगा, वह अपने परलोक को नुक़सान पहुँचाएगा और जो अपने परलोक से प्रेम करेगा वह अपनी दुनिया को नुक़सान पहुँचाएगा। तो तुम हमेशा रहनेवाले (परलोक) को मिट जानेवाले (संसार) पर प्राथमिकता दो।"[1]

यह हदीस हमें बताती है कि हम इस दुनिया की तुलना में परलोक को प्राथमिकता दें। अगर हम इस बात को मानते हैं और परलोक के फ़ायदे के लिए संसार का नुक़सान सहने के लिए तैयार हैं, तो हम दीन (इस्लाम) की सेवा कर सकते हैं, वरना नहीं कर सकते।

दावत की राह में मुसीबतों ही से आज़माया नहीं जाता, बल्कि सुख-सुविधाओं का लालच देकर भी आज़माया जाता है और कभी-कभी उनसे वंचित करके भी। दावत को ख़त्म करने के लिए यहाँ जेलों के दरवाज़े ही नहीं खुलते, बल्कि राजगद्दियाँ भी पेश की जाती हैं। अत्याचार और उत्पीड़न के बावुजूद दावत अगर फैलती जाए, तो उसके आगे धन-दौलत के बाँध बाँधने की कोशिश की जाती है। यह परीक्षा बड़ी कठिन होती है। जो लोग लोहे की ज़ंजीरों को तोड़ फेंकते हैं, वे सोने की ज़ंजीर में खुशी-खुशी बन्ध जाते हैं। इस परीक्षा में वही आदमी सफल हो सकता है, जो यहाँ की बड़ी से बड़ी खुशी को तुच्छ समझे। जो परलोक की नेमतों को पाने की खुशी में यहाँ के सुख-चैन को भूल जाए, जिसके लिए वहाँ की यातना की कल्पना, यहाँ के हर

[1] हदीस : मिश्कातुल-मसाबीह किताबुर्रिक़ाक़, ब-हवाला मुसनद अहमद, बैहक़ी।

दुख-तकलीफ़ को आसान कर दे, जो परलोक की कामयाबी ही को सच्ची कामयबी और परलोक की नाकामी ही को मूल नाकामी समझे और जिसका ईमान हो—

فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ ؕ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ ﴿۱۸۵﴾

"जो आदमी जहन्नम की आग से दूर हटा दिया गया और जन्नत में दाख़िल कर दिया गया, वही कामयाब हुआ और यह दुनिया तो केवल धोखे का सामान है।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-185)

अल्लाह के दीन की तरफ़ बुलानेवाला जब दुनिया को बताता है कि क़ियामत आएगी और कोई चीज़ इनसान को अपने अंजाम तक पहुँचने से रोक नहीं सकेगी, तो बुद्धि कहती है कि उसको एक पल के लिए भी अपने अंजाम से निश्चिन्त नहीं होना चाहिए; क्योंकि जिस आदमी को क़ियामत के आने की ख़बर नहीं है, वह तो उससे निश्चिन्त हो सकता है, लेकिन यह सम्भव नहीं है कि जो आदमी रात-दिन उसके आने की सूचना दे रहा हो, उसपर लापरवाही की नींद छा जाए। इसलिए परलोक से डरानेवाले की ज़िन्दगी अगर उसके डर से ख़ाली हो, तो इसका मतलब यह समझा जाएगा कि वह एक झूठी सूचना के द्वारा दुनियावालों को धोखा दे रहा है और उनके भोग-विलासपूर्ण जीवन को ख़राब करना चाहता है। खुदा ने जहाँ इनसान को इस बात का हुक्म दिया है कि वह दूसरों को परलोक की यातना से बचाए, वहीं उसे यह भी हिदायत दी है कि वह अपने आपको भी उससे बचाने की कोशिश करे; क्योंकि दुनिया का कोई भी आदमी मुक्ति का जितना इच्छुक हो सकता है, उतना ही वह खुद भी उसका मुहताज है। इससे बड़ी आत्महत्या और कोई नहीं होगी कि आदमी दूसरों को तो जहन्नम से बचाए और खुद उसकी आग में कूद पड़े। खुदा के यहाँ आदमी

के एक-एक कर्म का हिसाब होगा और वह जो कुछ इस दुनिया में कर रहा है, उसका पूरा-पूरा बदला मिलेगा। वहाँ मुक्ति उसी आदमी की होगी, जो पूरे निष्काम भाव से उसके दीन (इस्लाम) को अपना ले और जी-जान से उसके अनुसरण के लिए तैयार हो जाए।

यह एक सच्चाई है कि जिस आदमी के सामने यह भयंकर दिन होगा, वह अपने अंजाम के बारे में हमेशा चिन्तित रहेगा। उसके बारे में यह सोचना भी शायद सही न हो कि वह दूसरों को ख़ुदा के अज़ाब से डराता रहेगा और अपने आपको उसके सामने पेश कर देगा। इतने बड़े साहस की उसी समय उससे आशा है, जबकि वह परलोक का बार-बार नाम लेने के बावुजूद उसको हक़ीक़त में भूल चुका हो और वहाँ के दण्ड और पुरस्कार को एक मज़ाक़ समझ रहा हो।

क़ुरआन मजीद : अल्लाह की आख़िरी किताब

क़ुरआन का परिचय

क़ुरआन मजीद इस ज़मीन पर अल्लाह की आख़िरी किताब है। यह 'हुदल्लिन्नास' (सूरा-2 बक़रा, आयत-185) है। यह क़ियामत तक सारे इनसानों की हिदायत और रहनुमाई के लिए उतरी है। इससे वे इस लोक में सफल और प्रसन्न होंगे और परलोक में भी शाश्वत सफलता और आनन्द प्राप्त करेंगे। यह जीवन का 'सीधा मार्ग' है। इस दुनिया में इनसान के सामने विभिन्न रास्ते खुले हैं। यह किताब वह सीधा और सच्चा रास्ता दिखाती है, जिसपर चलनेवाला कभी गुमराही का शिकार न होगा। और जो इसे छोड़कर दूसरा रास्ता अपनाए, मंज़िल तक उसकी पहुँच सम्भव नहीं है–

قَدْ جَآءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّ كِتٰبٌ مُّبِیْنٌ ﴿۱۵﴾ یَّهْدِیْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ وَ یُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ بِاِذْنِهٖ وَ یَهْدِیْهِمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ ﴿۱۶﴾

"बेशक तुम्हारे पास अल्लाह की तरफ़ से एक रौशनी और स्पष्ट किताब आ गई है। अल्लाह इसके द्वारा उन लोगों को सलामती का रास्ता दिखाता है, जो उसकी इच्छाओं पर चलना चाहें। उन्हें वह अन्धेरों से निकालकर रौशनी में अपनी अनुमति से पहुँचाता है और सीधे रास्ते की तरफ़ उनका मार्गदर्शन करता है।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयतें-15,16)

क़ुरआन मजीद ख़ुशख़बरी का पैग़ाम भी है और डरावा एवं चेतावनी भी। जो लोग इसके बताए हुए रास्ते पर चलते हैं, उन्हें वह ख़ुशख़बरी भी देता है और जो इस रास्ते से हट जाते हैं, उन्हें वह चेतावनी देता है कि वे हमेशा-हमेशा की नाकामी से दो-चार होंगे—

إِنَّ هَٰذَا الْقُرْآنَ يَهْدِي لِلَّتِي هِيَ أَقْوَمُ وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِنِينَ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ الصَّالِحَاتِ أَنَّ لَهُمْ أَجْرًا كَبِيرًا ۝٩ وَأَنَّ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْآخِرَةِ أَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا أَلِيمًا ۝١٠

“बेशक यह क़ुरआन वह रास्ता दिखाता है, जो बिल्कुल सीधा है और ख़ुशख़बरी देता है ईमानवालों को जो भले कर्म करते हैं कि उनके लिए बड़ा बदला है और जो परलोक पर ईमान नहीं रखते उनके लिए हमने दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है।”

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-9,10)

क़ुरआन मजीद इनसान के दिल की आवाज़ है। इस आवाज़ पर उसे दौड़ पड़ना चाहिए। लेकिन आम तौर पर इनसान अपने दिल की इस पुकार को नहीं सुनता है और अगर सुनता है, तो जवाब नहीं देता। इसके बहुत-से बाहरी और आन्तरिक कारण हैं। क़ुरआन इनसान को उसकी प्रकृति का भूला हुआ पाठ याद दिलाता और हक़ को क़बूल करने की दावत देता है। इसी कारण इसे 'ज़िक्र' कहा गया है। हज़रत मूसा और हारून (अलैहि॰) को तौरेत दी गई थी। यह सत्य-असत्य का अन्तर स्पष्ट करती थी। इसमें हिदायत और रौशनी थी। यह अल्लाह और आख़िरत से डरनेवालों के लिए ज़िक्र थी। इसमें अल्लाह के आदेश थे और शरीअत (जीवन-विधान) थी, लेकिन ज़माने की रफ़्तार के साथ ख़ुद इसके माननेवालों के हाथों इसमें मिलावट होती चली गई। इसके बाद यह क़ुरआन उतारा गया। कहा गया—

وَهَٰذَا ذِكْرٌ مُبَارَكٌ أَنْزَلْنَاهُ ۚ أَفَأَنْتُمْ لَهُ مُنْكِرُونَ ۝٥٠

"यह एक मुबारक ज़िक्र है, जो हमने उतारा है। तो क्या तुम इसका इनकार करते हो?"

(क़ुरआन, सूरा-21 अम्बिया, आयत-50)

इनसान जब क़ुरआन का इनकार करता है, तो वह हैरत के साथ कहता है—

بَلْ أَتَيْنَاهُم بِذِكْرِهِمْ فَهُمْ عَن ذِكْرِهِم مُّعْرِضُونَ ﴿٧١﴾

"बल्कि हम तो उनके पास उनके लिए ज़िक्र लाए हैं। लेकिन वे हैं कि अपने इस ज़िक्र से मुँह मोड़ रहे हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयत-71)

ज़िक्र का मतलब याददिहानी है। इसमें प्रतिष्ठा और महानता की धारणा भी है; क्योंकि क़ुरआन मानव-जाति के लिए मान-सम्मान और गौरव का प्रतीक है। क़ुरआन उसे उच्चता और महानता प्रदान करता है—

لَقَدْ أَنزَلْنَا إِلَيْكُمْ كِتَابًا فِيهِ ذِكْرُكُمْ ۖ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿١٠﴾

"हमने तुम्हारी तरफ़ किताब उतारी है। इसमें तुम्हारा ज़िक्र है। क्या तुम बुद्धि से काम नहीं लेते?"

(क़ुरआन, सूरा-21 अम्बिया, आयत-10)

जो आदमी इस ज़िक्र को रद्द कर दे। वह ख़ुद आप अपना दुश्मन है। वह अपना भला नहीं चाह रहा है। इस ग़फ़लत और लापरवाही पर अल्लाह तआला के यहाँ ज़रूर पूछगछ होगी—

وَإِنَّهُ لَذِكْرٌ لَّكَ وَلِقَوْمِكَ ۖ وَسَوْفَ تُسْأَلُونَ ﴿٤٤﴾

"और बेशक यह ज़िक्र है तुम्हारे लिए भी और तुम्हारी क़ौम के लिए भी और बहुत जल्द तुमसे पूछा जाएगा।"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयत-44)

यह किताब पूर्णतः सत्य है। इसमें कण-भर भी असत्य की मिलावट नहीं है और न हो सकती है—

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِالذِّكْرِ لَمَّا جَاءَهُمْ وَإِنَّهُ لَكِتَابٌ عَزِيزٌ ﴿٤١﴾ لَا يَأْتِيهِ الْبَاطِلُ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ وَلَا مِنْ خَلْفِهِ تَنْزِيلٌ مِنْ حَكِيمٍ حَمِيدٍ ﴿٤٢﴾

"बेशक जिन लोगों ने (इस) ज़िक्र (क़ुरआन) का इसके आने के बाद इनकार किया (वे इसके अंजाम से ज़रूर ही दोचार होंगे)। बेशक यह वह किताब है, जो सब पर प्रभावी है। असत्य न इसके आगे से आ सकता है और न पीछे से। उतरी है उस ख़ुदा की तरफ़ से, जो तत्त्वदर्शी और स्वतः प्रशंसित है।"

(क़ुरआन, सूरा-41 हा-मीम-अस-सजदा, आयतें-41,42)

अल्लाह तआला ने इसकी सुरक्षा का वादा किया है—

إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ﴿٩﴾

"बेशक हम ही ने इस ज़िक्र (क़ुरआन) को उतारा है और बेशक हम ही इसकी सुरक्षा करनेवाले हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-15 हिज्र, आयत-9)

अल्लाह तआला का यह वादा पूरा हुआ। आसमानी किताबों में आज केवल क़ुरआन ही को सुरक्षित किताब की हैसियत हासिल है। यह उसी तरह पढ़ा और पढ़ाया जाता है, जिस तरह यह मुहम्मद (सल्ल॰) पर उतरा और मुबारक ज़बान से सुना गया। इसे हर दौर में हज़ारों इनसानों ने कंठस्थ किया और यह उनकी ज़बानों पर जारी हो गया। यही नहीं, बल्कि इसकी हैसियत एक पवित्र ग्रन्थ की है। पहले ही दिन से इसके लिखने का प्रबन्ध किया गया और दुनिया के कोने-कोने में इसका प्रचार-प्रसार हुआ और लगातार हो रहा है। इसमें आज तक एक अक्षर का, बल्कि एक मात्रा का भी न तो बदलाव हुआ है और न होने की कोई सम्भावना है।

यह 'वाज़ेह (स्पष्ट) किताब' है (सूरा-12 यूसुफ़, आयत-1), जो 'वाज़ेह अरबी भाषा' में उतरी है। (सूरा-16 नह्ल, आयत-103) इसके अवतरित होने का उद्देश्य और लक्ष्य बिल्कुल स्पष्ट है। इसकी विषय-सामग्री हर तरह की वैचारिक पेचीदगियों से पाक है—

وَالْكِتٰبِ الْمُبِيْنِ ۝ اِنَّا جَعَلْنٰهُ قُرْءٰنًا عَرَبِيًّا لَّعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ۝

"क़सम है इस किताब की जो वाज़ेह (स्पष्ट) है। हमने इसको अरबी भाषा का क़ुरआन बनाया है; ताकि तुम समझो।"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयतें-2,3)

इस किताब के पढ़ने, समझने और इसकी हिदायतों से परिचित होने में कोई कठिनाई नहीं है। इसने जीवन की कठिन से कठिन समस्याओं का भी इस तरह वर्णन किया है कि एक आम आदमी अपनी समझ के लिहाज़ से उन्हें आसानी से समझ सकता है। किसी समस्या के बारे में उसका उद्देश्य जानने में उसे कोई कठिनाई नहीं होगी। इसी कारण दुनिया का हर आदमी इसके सम्बोधन का लक्ष्य है और इसी कारण वह कहता है—

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُّدَّكِرٍ ۝

"हमने क़ुरआन को नसीहत के लिए आसान कर दिया है; तो है कोई नसीहत हासिल करनेवाला?"

(क़ुरआन, सूरा-54 क़मर, आयत-17)

क़ुरआन की माँग यह है कि उसकी बातें ख़ामोशी और ध्यान से सुनी जाएँ। इससे उसकी सच्चाई स्पष्ट होगी—

هٰذَا بَصَآئِرُ مِنْ رَّبِّكُمْ وَهُدًى وَّرَحْمَةٌ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۝ وَاِذَا قُرِئَ الْقُرْاٰنُ فَاسْتَمِعُوْا لَهٗ وَاَنْصِتُوْا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ۝

"ये प्रमाण हैं तुम्हारे रब की तरफ़ से और हिदायत और रहमत है उन लोगों के लिए जो ईमान रखते हैं और जब क़ुरआन पढ़ा

जाए, तो उसे ध्यान लगाकर सुनो और चुप रहो; ताकि तुमपर (अल्लाह की) रहमत (दया) हो।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयतें-203,204)

क़ुरआन अपनी आयतों पर बार-बार चिन्तन-मनन की दावत देता है। इसमें शक नहीं कि सूझ-बूझ रखनेवाले उसे रद्द नहीं करेंगे, बल्कि उससे नसीहत हासिल करेंगे—

كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ اِلَيْكَ مُبٰرَكٌ لِّيَدَّبَّرُوْٓا اٰيٰتِهٖ وَلِيَتَذَكَّرَ اُولُوا الْاَلْبَابِ ﴿٢٩﴾

"यह एक मुबारक किताब है, जो हमने (ऐ पैग़म्बर) तुम पर उतारी है; ताकि ये लोग इसकी आयतों पर गहन विचार करें और बुद्धिमान लोग इससे नसीहत हासिल करें।"

(क़ुरआन, सूरा-38 सॉद, आयत-29)

विरोधियों का रवैया

अल्लाह तआला की इस किताब के साथ इसके विरोधियों ने आश्चर्यजनक रवैया अपनाया। वे इसकी सत्यता और यथार्थ के तर्कों और प्रमाणों को खुद इस किताब में खोजने की जगह चमत्कारों की माँग करने लगे; हालाँकि यह किताब अपनी विशिष्ट भाषा-शैली और अनुपम शिक्षाओं में खुद ही दुनिया का सबसे बड़ा चमत्कार है। इसके बाद किसी दूसरे चमत्कार की कोई ज़रूरत ही नहीं है। इसी कारण यह कहता है—

وَقَالُوْا لَوْلَآ اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيٰتٌ مِّنْ رَّبِّهٖ قُلْ اِنَّمَا الْاٰيٰتُ عِنْدَ اللّٰهِ وَاِنَّمَآ اَنَا نَذِيْرٌ
مُّبِيْنٌ ﴿٥٠﴾ اَوَلَمْ يَكْفِهِمْ اَنَّآ اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْكِتٰبَ يُتْلٰى عَلَيْهِمْ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ
لَرَحْمَةً وَّذِكْرٰى لِقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ﴿٥١﴾

"वे कहते हैं कि मुहम्मद पर उनके रब की तरफ़ से कुछ निशानियाँ (चमत्कार) क्यों नहीं उतरीं। उनसे कहो कि

निशानियाँ अल्लाह तआला के अधिकार में हैं। मैं तो बस साफ़-साफ़ डरानेवाला हूँ। क्या उनके लिए यह (निशानी) काफ़ी नहीं है कि हमने आपपर किताब उतारी है, जो उनको पढ़कर सुनाई जा रही है। बेशक इसमें रहमत और नसीहत है उन लोगों के लिए जो ईमान रखते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-29 अनकबूत, आयतें-50,51)

क़ुरआन मजीद सूरतों (अध्यायों) में विभाजित है। इसकी सबसे छोटी सूरा (सूरा-108 कौसर) में केवल तीन आयतें हैं। इसकी सबसे बड़ी सूरा सूरा-2 बक़रा है। इसमें 286 आयतें हैं। लेकिन इसकी हर छोटी-बड़ी सूरा चमत्कार है। क़ुरआन ने विरोधियों को चैलेंज किया कि तुम ऐसी कोई एक ही सूरा पेश कर दो। इसका उनके पास कोई जवाब न था। यह स्पष्ट प्रमाण है इस बात का कि क़ुरआन अल्लाह की वाणी है, इनसान की वाणी नहीं है–

وَاِنْ كُنْتُمْ فِيْ رَيْبٍ مِّمَّا نَزَّلْنَا عَلٰى عَبْدِنَا فَأْتُوْا بِسُوْرَةٍ مِّنْ مِّثْلِهٖ وَادْعُوْا شُهَدَآءَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝

"और अगर तुमको शक है इस किताब के बारे में जो हमने अपने बन्दे पर उतारी है, तो इस जैसी एक सूरा तुम ले आओ और अल्लाह को छोड़कर, जो तुम्हारे पूज्य हैं, उनको बुला लो; अगर तुम सच्चे हो (इस दावे में कि यह अल्लाह की तरफ़ से नहीं उतरी है)।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-23)

क़ुरआन मजीद चिन्तन-मनन की दावत दे रहा था, लेकिन विरोधियों को जातीय, नस्ली और क़बाइली पक्षपात इससे रोक रहे थे। किसी बात को प्रमाणों और तर्कों के द्वारा समझने की जगह उन्हें अपनी पुरानी परम्पराओं और जर्जर विचारों पर हठ था। वे यह मानने के लिए तैयार नहीं थे कि ये परम्पराएँ ग़लत हो सकती हैं। वे अतीत के अन्धे

पुजारी थे। उनके नज़दीक उनके बुज़ुर्ग ज्ञान और बुद्धि-विवेक में सबसे बढ़कर और श्रेष्ठ थे। उनसे आगे किसी की पहुँच नहीं हो सकती थी। उन्होंने जो कुछ कहा या किया, सब सही और दुरुस्त है। उनपर आलोचना करने का किसी को कोई हक़ नहीं है। वे इसी बात के समर्थक थे—

'ख़ताए-बुज़ुर्गां गिरफ़्तन ख़ता अस्त।'
(बुज़ुर्गों की ग़लती पकड़ना ख़ुद एक अपराध है।)

यह एक अव्यावहारिक और अनुचित रवैया था। क़ुरआन ने कहा कि अगर सत्य (हक़) की खोज है तो इस रवैए को छोड़ना होगा—

وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَا أَنزَلَ اللَّهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا ۗ
أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا يَهْتَدُونَ ۝

"उनसे जब कहा जाता है कि इस (किताब) की पैरवी करो जो अल्लाह ने उतारी है, तो कहते हैं कि हम तो उस तरीक़े ही पर चलेंगे जिसपर अपने बाप-दादा को पाया है। क्या ये अपने बाप-दादा की पैरवी उस सूरत में भी करेंगे, जबकि वे न कुछ समझते हों और न सही रास्ते पर हों?"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-170)

क़ुरआन मजीद की शिक्षाएँ एक के बाद दूसरे प्रमाणों के साथ सामने आ रही थीं। वह विरोधियों के ग़लत विचारों और कल्पनाओं पर सभ्य तरीक़े से आलोचना करके लोक-परलोक में इनके अंजाम से आगाह कर रहा था। इसके मुक़ाबले में उनकी तरफ़ से उग्र भावनाओं का प्रदर्शन हो रहा था और वे शोर-गुल और हंगामों के द्वारा क़ुरआन की आवाज़ को दबाने की कोशिश कर रहे थे—

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لَا تَسْمَعُوا لِهَٰذَا الْقُرْآنِ وَالْغَوْا فِيهِ لَعَلَّكُمْ تَغْلِبُونَ ۝

"वे लोग जिन्होंने इनकार का रास्ता अपनाया, कहते हैं कि इस क़ुरआन को न सुनो और जब पढ़ा जाए तो बेहूदा बातों का शोर मचाओ। इस तरह उम्मीद है कि तुम प्रभावी हो जाओगे।"
(क़ुरआन, सूरा-41 हा-मीम अस-सजदा, आयत-26)

उन्होंने खेल-तमाशों और कल्चरल प्रोग्रामों का आयोजन किया, ताकि उत्तेजक और मनोरंजक माहौल पैदा हो और क़ुरआन की गम्भीर शिक्षाओं की तरफ़ किसी का ध्यान न जाए। ये हरकतें साफ़ बता रही थीं कि वे ज्ञान, समझ और बुद्धि के मैदान में हार चुके हैं। लेकिन शक्ति और सत्ता के घमंड में वे इसे मानने के लिए तैयार न थे और यह प्रकट कर रहे थे कि क़ुरआन की दावत ध्यान देने योग्य ही नहीं है। इसपर ध्यान देना उनकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है–

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّشْتَرِىْ لَهْوَ الْحَدِيْثِ لِيُضِلَّ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ ۖ وَّيَتَّخِذَهَا هُزُوًا ۭ اُولٰۗىِٕكَ لَهُمْ عَذَابٌ مُّهِيْنٌ ۝ وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِ اٰيٰتُنَا وَلّٰى مُسْتَكْبِرًا كَاَنْ لَّمْ يَسْمَعْهَا كَاَنَّ فِيْٓ اُذُنَيْهِ وَقْرًا ۚ فَبَشِّرْهُ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝

"लोगों में से कुछ वे हैं जो उन बातों को ख़रीदते हैं जो अल्लाह से ग़ाफ़िल करनेवाली हैं; ताकि बेजाने-बूझे अल्लाह के रास्ते से लोगों को भटकाएँ और उसकी हँसी उड़ा दें। ये वे लोग हैं जिनके लिए अपमानजनक यातना है। जब इनमें से किसी को हमारी आयतें सुनाई जाती हैं, तो घमंड से पीठ फेर लेता है, जैसे उसने सुना ही नहीं; तो उसे दर्दनाक अज़ाब की ख़ुशख़बरी दे दो।" (क़ुरआन, सूरा-31 लुक़मान, आयतें-6,7)

इस प्रकार का अनुचित रवैया सत्य-मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। इसे अपनाकर आदमी हक़ को नहीं पा सकता। इसी लिए यह क़ुरआन जिससे असत्य के परदे चाक हो जाने चाहिएँ, वह उसके विरोधियों के लिए ओट बन गया–

وَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ جَعَلْنَا بَيْنَكَ وَبَيْنَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ حِجَابًا مَّسْتُوْرًا ۝ وَّجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِيْۤ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ؕ وَاِذَا ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِى الْقُرْاٰنِ وَحْدَهٗ وَلَّوْا عَلٰۤى اَدْبَارِهِمْ نُفُوْرًا ۝

"जब तुम क़ुरआन पढ़ते हो तो हम तुम्हारे और उन लोगों के बीच, जो परलोक पर ईमान नहीं रखते, एक छिपा हुआ परदा डाल देते हैं और उनके दिलों पर खोल चढ़ा देते हैं; ताकि वे उसे न समझ सकें और उनके कानों में गिरानी पैदा कर देते हैं। और जब तुम क़ुरआन में अपने एकमात्र पालनहार रब की चर्चा करते हो तो नफ़रत से पीठ फेरकर भागने लगते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-45,46)

जो लोग आज क़ुरआन के साथ यह रवैया अपनाएँगे, वे कल अफ़सोस से हाथ मलेंगे और कहेंगे कि हमें हमारे रहनुमाओं ने तबाह किया। काश, हम उनके पीछे न चलते और यूँ न तबाह होते। उस समय अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) भी कहेंगे—

وَقَالَ الرَّسُوْلُ يٰرَبِّ اِنَّ قَوْمِى اتَّخَذُوْا هٰذَا الْقُرْاٰنَ مَهْجُوْرًا ۝

"और पैग़म्बर ने कहा : ऐ मेरे पालनहार! मेरी क़ौम के लोगों ने इस क़ुरआन को छोड़ रखा है।"

(क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयत-30)

ईमानवालों से क़ुरआन की माँग

जो लोग इस बात पर ईमान रखते हैं कि क़ुरआन मजीद अल्लाह तआला की उतारी हुई किताब है और इसे हिदायत की किताब और मुक्ति का साधन समझते हैं, उनसे क़ुरआन की कुछ माँगें हैं, ये माँगें उसपर ईमान की अभीष्ट माँगें हैं। इनसे कोई भी ऐसा आदमी जो क़ुरआन को अल्लाह की किताब मानता है, इनकार नहीं कर सकता।

क़ुरआन को मज़बूती से पकड़े रहो

अल्लाह की किताब की सबसे पहली माँग यह है कि आदमी इसे मज़बूती से पकड़े रहे और इससे उसका हार्दिक और व्यावहारिक लगाव बना रहे। जीवन के कठिन से कठिन समय में भी और किसी भी मरहले में इसका दामन न छूटने पाए और इसकी हिदायत का ठीक-ठीक पाबन्द रहे। हज़रत यह्या (अलैहि॰) को आदेश हुआ—

يٰيَحْيٰى خُذِ الْكِتٰبَ بِقُوَّةٍ

"ऐ यह्या! किताब को मज़बूती से पकड़ लो।"

(क़ुरआन, सूरा-19 मरयम, आयत-12)

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) से कहा गया है—

فَاسْتَمْسِكْ بِالَّذِيْٓ اُوْحِيَ اِلَيْكَ اِنَّكَ عَلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝

"तो तुम उस वह्य को मज़बूती से पकड़े रहो, जो तुमपर की जा रही है। बेशक तुम सीधे रास्ते पर हो।"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयत-43)

यानी जो किताब वह्य (प्रकाशना) के द्वारा उतर रही है, उसे मज़बूती से थामे रहिए और भरोसा रखिए कि जब यह रौशनी आपके पास है तो सीधा रास्ता आप पर स्पष्ट है और आप उसपर चल रहे हैं।

इसमें एक बड़ी सच्चाई बयान हुई है, वह यह कि जो आदमी इस किताब के बताए हुए रास्ते पर चले उसे पूरा भरोसा होना चाहिए कि वह सही रास्ते पर चल रहा है और लक्ष्य तक अवश्य पहुँचेगा। आदमी का यह विश्वास और भरोसा कि वह हक़ पर है और सीधे रास्ते पर चल रहा है, उसके अन्दर संकल्प और साहस पैदा करता और रास्ते की कठिनाइयों को उसके लिए आसान कर देता है। इसी को 'किताब को मज़बूती से पकड़ना' कहा गया है। इससे यही नहीं कि आदमी सीधे

रास्ते पर अडिग रहेगा, बल्कि वह संसार का मार्गदर्शक और सुधारक बनकर उभरेगा। उसके द्वारा दुनिया को सफलता और मुक्ति का रास्ता मिलेगा। क़ुरआन मजीद ने सुधारकों की एक विशेष पहचान यही (किताब को मज़बूती से पकड़ना) बताई है—

وَالَّذِيْنَ يُمَسِّكُوْنَ بِالْكِتٰبِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ ۗ اِنَّا لَا نُضِيْعُ اَجْرَ الْمُصْلِحِيْنَ ۝

"जो लोग किताब को मज़बूती से पकड़ते हैं और नमाज़ क़ायम करते हैं (वही सुधार करनेवाले हैं)। बेशक हम सुधार करनेवालों का बदला बरबाद नहीं करते।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-170)

यह सच्चाई नहीं भूलनी चाहिए कि जो लोग अल्लाह की किताब को मज़बूती से थाम लें और नमाज़ क़ायम करें, उन्हीं के द्वारा दुनिया के सुधार का काम अंजाम पा सकता है। अल्लाह के यहाँ उनकी दौड़-धूप क़बूल होगी और वे बड़े बदले के हक़दार होंगे। अल्लाह उनका बदला कभी नष्ट नहीं करेगा। अल्लाह की किताब से मार्गदर्शन प्राप्त किए और नमाज़ क़ायम किए बिना दुनिया के सुधार का काम न कभी अंजाम पाया है और न आनेवाले समय में इसकी आशा की जा सकती है।

क़ुरआन की तिलावत

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) को हिदायत दी गई—

وَاتْلُ مَآ اُوْحِيَ اِلَيْكَ مِنْ كِتَابِ رَبِّكَ ۚ لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِهٖ ۚ وَلَنْ تَجِدَ مِنْ دُوْنِهٖ مُلْتَحَدًا ۝

"तुम्हारे रब की किताब में से जो वह्य तुमपर की जा रही है, उसकी तिलावत करो। कोई उसकी बातों को बदलनेवाला नहीं है और तुम उसके सिवा पनाह का कोई ठिकाना नहीं पाओगे।"

(क़ुरआन, सूरा-18 कह्फ़, आयत-27)

एक और जगह कहा गया है–

اُتْلُ مَآ اُوْحِیَ اِلَیْکَ مِنَ الْکِتٰبِ وَاَقِمِ الصَّلٰوۃَ

"किताब में से जो वह्य तुमपर की गई है, उसकी तिलावत करो और नमाज़ क़ायम करो।"

(क़ुरआन, सूरा-29 अनकबूत, आयत-45)

तिलावत का जो आदेश अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल॰)* को दिया गया वह आपकी उम्मत (समुदाय) के लिए भी है। क़ुरआन मजीद की तिलावत में केवल उसका पढ़ना ही नहीं, उसका समझना और उसपर चिन्तन-मनन करना भी शामिल है। तिलावत रस्मी नहीं, हक़ीक़ी होनी चाहिए। तिलावत हो तो हृदय और शरीर पर उसके प्रभाव दिखाई पड़ें। दिल काँपने लगे और अंग-प्रत्यंग पर डर और ख़ौफ़ की दशा छा जाए। यह इस बात की पहचान है कि अल्लाह की किताब से इनसान लाभान्वित हो रहा है और हिदायत का रास्ता उसको मिल गया है–

اَللّٰهُ نَزَّلَ اَحْسَنَ الْحَدِیْثِ کِتٰبًا مُّتَشَابِهًا مَّثَانِیَ تَقْشَعِرُّ مِنْهُ جُلُوْدُ الَّذِیْنَ یَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ ثُمَّ تَلِیْنُ جُلُوْدُهُمْ وَقُلُوْبُهُمْ اِلٰی ذِکْرِ اللّٰهِ ذٰلِکَ هُدَی اللّٰهِ یَهْدِیْ بِهٖ مَنْ یَّشَآءُ وَمَنْ یُّضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهٗ مِنْ هَادٍ ﴿۲۳﴾

"अल्लाह ने बेहतर बात उतारी है। यानी ऐसी किताब जो आपस में मिलती-जुलती है, जो जोड़ों के रूप में है, जिससे उन लोगों के शरीर काँपने लगते हैं, जिनको अपने रब का डर है। फिर उनके शरीर और उनके दिल अल्लाह के ज़िक्र के लिए नर्म पड़ जाते हैं। यह है अल्लाह की हिदायत। वह जिसे चाहता है, इसके द्वारा हिदायत देता है और जिसे अल्लाह रास्ते से भटका दे, उसे कोई रास्ता दिखानेवाला नहीं है।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-23)

क़ुरआन मजीद की तिलावत से एक ईमानवाला जिन पवित्र भावनाओं और दिल की दशाओं से दो-चार होता है, क़ुरआन मजीद के सुनने से भी यही भावनाएँ और दशाएँ उसपर छा जाती हैं। वह अल्लाह तआला की आयतें सुनकर काँप उठता है। उसके ईमान में वृद्धि होती है और वह अल्लाह पर भरोसा और विश्वास की भावनाओं से भर जाता है। उसकी इस दशा का बयान इन शब्दों में हुआ है—

إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ إِذَا ذُكِرَ اللَّهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ وَإِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ آيَاتُهُ زَادَتْهُمْ إِيمَانًا وَعَلَىٰ رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَ ۝٢

"ईमानवाले तो बस वे हैं कि जब अल्लाह का ज़िक्र किया जाता है, तो उनके दिल दहलने लगते हैं और जब उन्हें उसकी आयतें पढ़कर सुनाई जाती हैं, तो वे उनके ईमान में बढ़ौत्तरी करती हैं और वे अपने रब पर भरोसा करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-2)

क़ुरआन मजीद को इसके विरोधी 'गुज़रे हुए लोगों की कहानियाँ' कहा करते थे। उनके नज़दीक इसकी हैसियत मात्र एक कहानी या गल्प-कथा की थी। इसकी शिक्षाओं को सुनने के लिए भी तैयार न होते थे, लेकिन ईमानवालों का रवैया बिल्कुल दूसरा था। वे इसे खुली आँखों से देखते और ध्यान लगाकर सुनते थे। इसकी शिक्षाएँ उनके लिए इबरत और नसीहत का सबक़ थीं। क़ुरआन सुनने पर उनकी दशा हक़ के इनकारियों और नाफ़रमानों की दशा से बिल्कुल ही अलग होती थी—

وَالَّذِينَ إِذَا ذُكِّرُوا بِآيَاتِ رَبِّهِمْ لَمْ يَخِرُّوا عَلَيْهَا صُمًّا وَعُمْيَانًا ۝٧٣

"ये वे लोग हैं कि जब उनको उनके रब की आयतों के द्वारा नसीहत की जाती है, तो वे उनपर बहरे और अन्धे बनकर नहीं गिर पड़ते।" (क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयत-73)

यहूदी लोग गम्भीर जातीय और नस्ली पक्षपात में ग्रस्त थे। उनका नस्ली सम्बन्ध हज़रत याक़ूब (अलैहि॰) से था। वे हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के बेटे हज़रत इसहाक़ (अलैहि॰) की सन्तान थे। यहूदी लोग किसी ऐसे व्यक्ति को अल्लाह का पैग़म्बर मानने के लिए तैयार न थे, जो हज़रत इसहाक़ (अलैहि॰) के वंश से न हो। इसलिए उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को अल्लाह का पैग़म्बर और क़ुरआन मजीद को अल्लाह की किताब मानने से साफ़ इनकार कर दिया और आपका घोर विरोध शुरू कर दिया; क्योंकि आप (सल्ल॰) का सम्बन्ध हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के बड़े बेटे हज़रत इसमाईल (अलैहि॰) के वंश से था। लेकिन उनमें ऐसे लोग भी थे, जो पक्षपात से ऊपर उठकर निर्मल मन से तौरात का अध्ययन कर रहे थे। वे इस नतीजे पर पहुँचे कि क़ुरआन मजीद अल्लाह की किताब है। उन्होंने इसकी पुष्टि की और इसपर ईमान लाए। उन सत्यप्रिय लोगों का उल्लेख क़ुरआन में इस तरह किया गया है—

اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَتْلُوْنَهٗ حَقَّ تِلَاوَتِهٖ ۭ اُولٰۗىِٕكَ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِهٖ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ۝

"वे लोग जिनको हमने किताब (तौरात) दी, वे उसकी तिलावत करते हैं, जैसे उसकी तिलावत का हक़ है। वही इस (क़ुरआन) पर ईमान लाते हैं। जो इससे इनकार करेगा, तो ऐसे ही लोग घाटा उठानेवाले हैं।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-121)

यहाँ केवल पढ़ने का ज़िक्र नहीं, पढ़ने के हक़ अदा करने का ज़िक्र है। यहूदियों में से जिन लोगों ने तौरात को उस तरह पढ़ा जिस तरह उसे पढ़ने का हक़ है, उन्हें क़ुरआन पर ईमान लाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जिन्होंने तौरात को पढ़ा नहीं या पढ़ा, तो उसका हक़ अदा नहीं किया, वे ईमान की दौलत से वंचित रहे। यह इस बात का प्रमाण है कि अल्लाह तआला की किताब की तिलावत का जब हक़ अदा होता है, तो

ईमान की दौलत मिलती है। जो लोग इस तरह किताब की तिलावत का हक़ अदा कर रहे थे और क़ुरआन पर ईमान लाने का सौभाग्य प्राप्त किया। उन्हें ज्ञानवान कहा गया है–

لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ
اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ

"लेकिन उनमें जो लोग धर्म के ज्ञान (इल्मे-दीन) में पक्के हैं और ईमानवाले हैं, वे इस किताब पर भी ईमान लाते हैं, जो आप (सल्ल॰) पर अवतरित की गई है। और उसपर भी ईमान लाते हैं, जो आप (सल्ल॰) से पहले अवतरित हुई है।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-162)

अल्लाह की किताब की तिलावत से उनपर जो दशा-भाव पैदा होता है, वही भाव उसकी आयतें सुनने से भी उनपर छा जाता है। क़ुरआन की गवाही है–

قُلْ اٰمِنُوْا بِهٖٓ اَوْ لَا تُؤْمِنُوْا ۭ اِنَّ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْعِلْمَ مِنْ قَبْلِهٖٓ اِذَا يُتْلٰى عَلَيْهِمْ
يَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ سُجَّدًا ۝ وَّيَقُوْلُوْنَ سُبْحٰنَ رَبِّنَآ اِنْ كَانَ وَعْدُ رَبِّنَا
لَمَفْعُوْلًا ۝ وَيَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ يَبْكُوْنَ وَيَزِيْدُهُمْ خُشُوْعًا ۝

"जिन लोगों को इससे पहले किताब का ज्ञान प्रदान किया गया, उनको जब क़ुरआन की आयतें सुनाई जाती हैं, तो वे माथे के बल सजदे में गिर पड़ते हैं और कहते हैं : हमारा रब हर कमज़ोरी से पाक है। इसमें कोई शक नहीं कि हमारे रब का वादा पूरा होकर रहेगा और वे रोते हुए मुँह के बल गिर पड़ते हैं और क़ुरआन उनकी विनम्रता में बढ़ोत्तरी कर देता है।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयतें-107-109)

एक और जगह कहा गया है–

إِذَا تُتْلَىٰ عَلَيْهِمْ آيَاتُ الرَّحْمَٰنِ خَرُّوا سُجَّدًا وَبُكِيًّا ﴿٥٨﴾

"जब उनको रहमान (करुणामय ईश्वर) की आयतें सुनाई जाती हैं, तो वे रोते हुए सजदे में गिर पड़ते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-19 मरयम, आयत-58)

ईसाइयों के सत्यप्रिय ज्ञानियों, संन्यासियों और तपस्वियों के सम्बन्ध में भी एक अवसर पर यही बात कही गई है—

وَإِذَا سَمِعُوا مَا أُنزِلَ إِلَى الرَّسُولِ تَرَىٰ أَعْيُنَهُمْ تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوا مِنَ الْحَقِّ ۖ يَقُولُونَ رَبَّنَا آمَنَّا فَاكْتُبْنَا مَعَ الشَّاهِدِينَ ﴿٨٣﴾ وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَمَا جَاءَنَا مِنَ الْحَقِّ وَنَطْمَعُ أَن يُدْخِلَنَا رَبُّنَا مَعَ الْقَوْمِ الصَّالِحِينَ ﴿٨٤﴾

"जब वे उस किताब को सुनते हैं, जो पैग़म्बर पर उतारी गई है, तो तुम देखोगे कि हक़ को जानने के कारण उनकी आँखों से आँसू बह रहे हैं। वे कहते हैं : ऐ हमारे रब! हम ईमान ले आए। तू हमें भी उन लोगों के साथ लिख ले जो तेरे दीन (जीवन-विधान) के सच होने की गवाही दे रहे हैं। हम क्यों न ईमान लाएँ अल्लाह पर और उस हक़ पर जो हमारे पास आया है। हमें आशा है कि हमारा रब हमें अच्छे लोगों में शामिल करेगा।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयतें-83,84)

यह है अल्लाह तआला की पसन्दीदा तिलावत। इस तरह क़ुरआन पढ़ने और सुनने से दिल का ज़ंग दूर होता है। आदमी को इस आईने में अपनी तस्वीर नज़र आती है। अपने सुधार की तरफ़ ध्यान आकर्षित होता है, अल्लाह से सम्बन्ध और विनम्रता पैदा होती है, क़ुरआन की सच्चाइयाँ और रहस्य खुलते हैं, ईमान की मिठास, सुकर्म का सौभाग्य, साहस और उत्साह और स्थायित्व प्राप्त होता है।

क़ुरआन से मार्गदर्शन प्राप्त करना

क़ुरआन मजीद मार्गदर्शन का स्रोत है। क़ुरआन ही से इनसान वह जीवन पा सकता है, जो अल्लाह तआला को पसन्द है। क़ुरआन इस दुनिया के टेढ़े-मेढ़े रास्ते में इनसान को ठीक उस रास्ते की निशानदेही करता है, जिसपर चलकर वह अल्लाह तआला के इनाम का हक़दार हो सकता है। जो आदमी क़ुरआन को थाम ले, वह अन्धों की तरह दाएँ-बाएँ भटकता नहीं फिरेगा, बल्कि दिन के उजाले में अपने जीवन का सफ़र तय करेगा। क़ुरआन सत्य-असत्य में अन्तर करने का साधन है। जो आदमी इस साधन से वंचित है, वह जान ही नहीं सकता कि सत्य क्या है, असत्य क्या? क़ुरआन एक रौशनी है, जो इनसान पर अल्लाह की मर्ज़ियों को रौशन करता है। जो आदमी आपने आपको क़ुरआन से बेनियाज़ (निस्पृह) समझता है, वह अल्लाह की मर्ज़ी को पा नहीं सकता। उस तक उसकी पहुँच मुमकिन नहीं है—

قَدْ جَآءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّ كِتٰبٌ مُّبِيْنٌ ۝ يَّهْدِيْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ

"बेशक तुम्हारे पास अल्लाह की तरफ़ से एक रौशनी और स्पष्ट किताब पहुँच गई है। अल्लाह इसके ज़रिए उस आदमी को सलामती की राह दिखाता है, जो उसकी इच्छाओं के अनुसार चलना चाहे।" (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयतें-15,16)

हर आदमी स्वाभाविक रूप से कुछ चीज़ों को पसन्द करता है और कुछ चीज़ों को नापसन्द करता है। इसी तरह एक आदमी का रुझान दूसरे आदमी के रुझान से भिन्न होता है। जो आदतें और रुझान आपके स्वभाव का अंग बन चुके हैं और जिनके ख़िलाफ़ आप कभी सोच भी नहीं सकते, हो सकता है कि वे मेरे लिए बिलकुल ही क़बूल करने लायक़ न हों। इनसान ईशपरायण और संयमी उसी समय हो

सकता है, जबकि वह अपने रुझानों को अल्लाह के आदेशों के अधीन कर दे। वह किसी काम को न तो इसलिए करे कि उसकी अभिरुचियों का झुकाव उस तरफ़ है और न किसी काम को इसलिए छोड़ दे कि वह अपने अन्दर उसके प्रति लगाव नहीं पाता, बल्कि हर उस काम को अंजाम देने के लिए तैयार हो जाए, जिसका आदेश उसके स्वामी और मालिक की तरफ़ से उसको मिला है। चाहे वह उसके स्वाभाव, रुझान और अभिरुचि के अनुकूल हो या प्रतिकूल। खुदा का हुक्म हो तो वह उन चीज़ों को भी बेझिझक फेंक दे और अपना दामन झाड़ ले, जिनको वह अपने सीने से लगाए हुए है और जिनके बिना वह ज़िन्दगी की कल्पना तक नहीं कर पा रहा है। जो आदमी इस तरह अपने दृष्टिकोणों को, अपने रुझानों और अपनी आदतों को अल्लाह के आदेश के अधीन न कर सके, वह संयमी और ईशपरायण नहीं है। ऐसा आदमी केवल अपनी अच्छाओं की पैरवी कर रहा है। चाहे अपनी समझ में वह अल्लाह को खुश करने ही की कोशिश क्यों न कर रहा हो। जब उसको क़ियामत के दिन अल्लाह के सामने लाया जाएगा, तो वह देख लेगा कि अल्लाह की फ़रमाँबदारी के ख़याल में वह अपनी भावनाओं के पीछे दौड़ रहा था।

अल्लाह की किताब वह कसौटी या पैमाना है जिससे आदमी मालूम कर सकता है कि वह वास्तव में उसकी मर्ज़ी पर चल रहा है या अपने मन की इच्छा पूरी कर रहा है। अल्लाह की किताब को छोड़कर उसकी प्रसन्नता और अप्रसन्नता को तलाश करनेवाला इनसान जंगल का मुसाफ़िर है। वह ज़िन्दगी भर भटकता फिरेगा, लेकिन कभी मंज़िल तक नहीं पहुँच पाएगा—

يَاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمْ بُرْهَانٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكُمْ نُوْرًا مُّبِيْنًا ۝ فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَاعْتَصَمُوْا بِهٖ فَسَيُدْخِلُهُمْ فِيْ رَحْمَةٍ مِّنْهُ وَفَضْلٍ ۙ وَّيَهْدِيْهِمْ اِلَيْهِ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ۝

"ऐ लोगो, बेशक तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से प्रमाण आ चुका है और हमने तुम्हारी तरफ़ साफ़ रौशनी उतारी है। अब जो लोग अल्लाह पर ईमान लाए और उसे मज़बूती से पकड़े रहे, तो अल्लाह उन्हें अपनी रहमत और अपने अनुग्रह में दाख़िल करेगा और उन्हें अपनी तरफ़ आने के लिए सीधे रास्ते की हिदायत करेगा।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयतें-174,175)

जिस आदमी के पास क़ुरआन है, उसके पास वह कुँजी है, जिससे अल्लाह तआला की रहमत के दरवाज़े खुलते हैं। उसके ज़रिए वह मालूम कर सकता है कि अल्लाह तआला क्या चाहता है और क्या नहीं चाहता है। ज़िन्दगी के कौन-से सिद्धान्त और नियम उसको पसन्द हैं और किन सिद्धान्तों और नियमों को नापसन्द करता है, किन कामों से ख़ुश होता है और कौन-से काम उसकी अप्रसन्नता का कारण हैं? ख़ुशनसीब है वह आदमी जिसको अल्लाह की किताब की तिलावत नसीब हो। जो इसपर रात-दिन चिन्तन-मनन करे, जिसका सीना उसकी आयतों से भरा हुआ हो और जिसके दिल और दिमाग़ पर उसके आदेशों और फ़रमानों का राज हो। ऐसे आदमी पर इस दुनिया के राजसिंहासन पर बैठे बादशाहों और शासकों को भी रश्क करना चाहिए; क्योंकि इनको जो कुछ मिला है वह बहुत जल्द मिट जानेवाला है और उसकी दौलत कभी मिटनेवाली नहीं है। ये अपने सारे साज़ो-सामान के बावुजूद कल अपने आपको अल्लाह के प्रकोप से बचा नहीं सकेंगे और उसपर अल्लाह के इनामों की बारिश हो रही होगी।

क़ुरआन के आदेशों का पालन

क़ुरआन मजीद का मार्गदर्शन प्राप्त करने का मतलब ही यह है कि हर मामले में उसके आदेशों का पालन किया जाए; केवल उसी की अगुवाई और नेतृत्व स्वीकार किया जाए, किसी दूसरे को अगुवाई और नेतृत्व करने का स्थान न दिया जाए। इसकी माँग ही यह है कि पूरी

ज़िन्दगी उसकी हिदायतों की पाबन्द और हर दूसरी हिदायत से आज़ाद हो—

اِتَّبِعُوْا مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَلَا تَتَّبِعُوْا مِنْ دُوْنِهٖٓ اَوْلِيَآءَ ؕ قَلِيْلًا مَّا تَذَكَّرُوْنَ ۝

"पैरवी करो उस किताब की जो तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से आई है और उसे छोड़कर दूसरे सरपरस्तों का अनुसरण न करो। लेकिन तुम बहुत कम नसीहत हासिल करते हो।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-3)

दुनिया में बहुत-सी विचारधाराएँ और दर्शन पाए जाते हैं। ये सब विचारधाराएँ और दर्शन सही नहीं हैं। क़ुरआन उनकी तुलना में ईश्वरीय जीवन-दर्शन प्रस्तुत करता है। यह सर्वश्रेष्ठ और सत्य पर आधारित एकमात्र जीवन-दर्शन है। ईमानवालों के जीवन का निर्माण इसी पर होना चाहिए। यही बुद्धि और विवेक की पहचान है—

وَالَّذِيْنَ اجْتَنَبُوا الطَّاغُوْتَ اَنْ يَّعْبُدُوْهَا وَاَنَابُوْٓا اِلَى اللّٰهِ لَهُمُ الْبُشْرٰى ۚ فَبَشِّرْ عِبَادِ ۝ الَّذِيْنَ يَسْتَمِعُوْنَ الْقَوْلَ فَيَتَّبِعُوْنَ اَحْسَنَهٗ ؕ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ هَدٰىهُمُ اللّٰهُ وَاُولٰٓئِكَ هُمْ اُولُوا الْاَلْبَابِ ۝

"वे लोग जिन्होंने बढ़े हुए फ़सादी (तागूत) की बन्दगी से मुँह फेर लिया और अल्लाह की तरफ़ रुजू हुए उनके लिए खुशख़बरी है; तो तुम खुशख़बरी दे दो मेरे उन बन्दों को जो बात सुनते हैं और उसमें जो सबसे बेहतर (यानी क़ुरआन और इस्लाम) है, उसका अनुसरण करते हैं। ये वे लोग हैं, जिनको अल्लाह ने हिदायत से नवाज़ा है और यही बुद्धिमान हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयतें-17,18)

क़ुरआन के अनुसार आचरण

क़ुरआन मजीद पर ईमान की पहचान यह है कि इनसान की पूरी

ज़िन्दगी उसके साँचे पर ढल जाए। जो आदमी मौखिक रूप से तो क़ुरआन को मार्गदर्शक माने और कर्म और आचरण के मैदान में उसका मार्गदर्शन न स्वीकार करे। वह क़ुरआन के साथ मज़ाक़ करता है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) कहते हैं—

وَأَهْلُهُ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ بِهِ فِي الدُّنْيَا

"क़ुरआनवाले वे हैं जो इस दुनिया में क़ुरआन के अनुसार आचरण करते हैं।"[1]

दुनिया ने अल्लाहवालों की बहुत-सी अलामतें (निशानियाँ) निर्धारित कर रखी हैं; हालाँकि उनकी पहचान केवल एक है। वह यह कि क़ुरआन की आभा उनमें दिखाई दे रही है। क़ुरआन से विमुख होकर कोई आदमी आसमान पर भी पहुँच जाए, तो अल्लाह को और उसके अनुग्रह और उसकी कृपा को पा नहीं सकता।

अल्लाह तआला उस आदमी को मिलता है और उसके आनन्द और कृपादान का वह हक़दार होता है, जो उसकी किताब के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारे और जो उसे देखने के बाद हर तरफ़ से नज़र फेर ले। अल्लाहवालों की पहचान न तो कोई ख़ास लिबास है और न कोई विशेष भोजन, बल्कि उनकी पहचान यह है कि वे अल्लाह की किताब को अपने सारे मामलों में जज बनाते हैं। उनका हर काम अल्लाह की किताब की रौशनी में अंजाम पाता है। वे अपने आपको क़ुरआन के नक़्शे में फ़िट कर लेते हैं कि उनकी ज़िन्दगी पर हर तरफ़ से क़ुरआन की सत्ता क़ायम हो जाती है। जिस आदमी पर अल्लाह की किताब की सत्ता क़ायम नहीं है, वह अभी ख़ुदा से दूर है और ख़ुदा उससे दूर है।

---

[1] हदीस : सहीह मुस्लिम, किताबुस्सलातिल मुसाफ़िरीन, बाबु फ़ज़लि-क़िराअतिल-क़ुरआन, जामेअ तिरमिज़ी, किताबु फ़ज़ाइलिल-क़ुरआन, बाबु माजा-अ फ़ी सू-रति आले-इमरान।

क़ुरआन की तरफ़ बुलावा

क़ुरआन एक दावत है। कोई दावत इनसान के अन्दर चुपके से नहीं दाख़िल होती है, बल्कि क्रान्ति बनकर आती है और उसके आचार-विचार में हलचल पैदा कर देती है। इनसान जब किसी दावत को स्वीकार करता है, तो उसकी पूरी ज़िन्दगी उथल-पुथल और तोड़-फोड़ की क्रिया से दो-चार होती है। उसको अपनी पुरानी विचारधाराओं के क़िलों को ध्वस्त करना पड़ता और उनकी जगह नई विचारधाराओं का निर्माण करना पड़ता है। उसे अपनी अनगिनत प्रिय चीज़ों का त्याग करना पड़ता और बहुत-सी नई चीज़ों को अपनी ज़िन्दगी में शामिल करता है। यही नहीं, बल्कि स्वाभाविक रूप से उसकी इच्छा होती है कि जिस चीज़ से वह वंचित हो रहा है, सब उससे वंचित हो जाएँ और जो दौलत उसे मिली है, सारी दुनिया उससे मालामाल हो जाए, जिन विचारधाराओं और दृष्टिकोणों को वह ग़लत समझता है उनको मिटा दे और जिन विचारधाराओं और दृष्टिकोणों को हक़ समझकर उसने स्वीकार किया है, धरती के एक-एक चप्पे पर उनकी सत्ता क़ायम हो जाए।

इस दुनिया में सफलतम इनसान वह है जो क़ुरआन के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारे और दूसरों को उसके हुक्मों के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने पर लगाए, क्योंकि क़ुरआन का अनुपालन अल्लाह तआला का अनुपालन और क़ुरआन की तरफ़ बुलावा अल्लाह तआला की तरफ़ बुलावा है। इस दुनिया में यही सफल जीवन का एकमात्र तरीक़ा है और यही वह सबसे बेहतर पुकार है, जो किसी इनसान के कान में पड़ सकती है।

क़ुरआन इस दुनिया में प्रतिष्ठा और सफलता का साधन है। जो आदमी क़ुरआन पर आचरण करे और दूसरों को उसके अनुसार आचरण करने की दावत दे, वह ख़ुद भी सफलता के रास्ते पर चलता है और दूसरों को भी सफलता की तरफ़ बुलाता है। उसको कभी इस बात का अफ़सोस नहीं होगा कि उसने अपनी शक्ति और सलाहियत का कोई हिस्सा नष्ट किया। हाँ, क़ुरआन के बताए हुए रास्ते से हटकर जिस

रास्ते में भी इनसान की शक्तियाँ ख़र्च होंगी, उसका नतीजा सिवाय अफ़सोस और शर्मिन्दगी के कुछ नहीं निकलेगा।

पैग़म्बरों का इतिहास गवाह है कि अल्लाह का कलाम (वाणी) इस धरती पर उसकी शक्ति बनकर आता है। जो क़ौम आगे बढ़कर उसको स्वीकार करती है, वह अगर कमज़ोर है तो उसकी कमज़ोरी शक्ति में बदल जाती है। वह पस्ती में पड़ी हो तो उसको ऊँचाई नसीब होती है। उसपर जिन लोगों और क़ौमों को वर्चस्व प्राप्त है, देखते ही देखते वे उसके क़दमों के नीचे आ जाती हैं। शासन और सत्ता उसके अधिकार में चली आती है और क़ौमों और समूहों के बीच फ़ैसले का अधिकार उसको प्राप्त हो जाता है—

وَنُرِيدُ أَنْ نَّمُنَّ عَلَى الَّذِينَ اسْتُضْعِفُوا فِي الْأَرْضِ وَنَجْعَلَهُمْ أَئِمَّةً وَّنَجْعَلَهُمُ الْوٰرِثِينَ ۝

"हम उन लोगों पर एहसान करना चाहते हैं, जो आज धरती में कमज़ोर पड़े हुए हैं। हम उनको इमाम और ख़ुदा की ज़मीन का वारिस बनाएँगे।" (क़ुरआन, सूरा-28 क़सस, आयत-5)

प्रतिष्ठित पैग़म्बर (सल्ल॰) अल्लाह की इस किताब के बारे में कहते हैं—

إِنَّ اللهَ يَرْفَعُ بِهٰذَا الْكِتَابِ أَقْوَامًا وَيَضَعُ بِهِ آخَرِينَ

"अल्लाह तआला इस किताब के द्वारा कुछ क़ौमों को ऊपर उठाएगा और कुछ को पस्ती में फेंक देगा।"[1]

क़ुरआन मजीद यह फ़ैसला करने आया है कि यहाँ सम्मान और सफलता किसके लिए है और अपमान और तिरस्कार किसके हिस्से में

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुसलातिल-मुसाफ़िरीन, बाबु फ़ज़्लि मंय-यक़ूमु बिल-क़ुरआन, व युअल्लिमुहु।

आनेवाला है? जो क़ौम इस किताब को अपनाएगी, दुनिया की क़ौमों में उसका वज़न बढ़ जाएगा और कोई शासन-प्रशासन उसको नीचा नहीं दिखा सकेगा। जो भी उससे टकराएगा चकनाचूर हो जाएगा।

क़ुरआन अल्लाह के साम्राज्य का विधान है। वह जिसके हाथ में होता है अल्लाह का हाथ उसके हाथ में होता है। इसी कारण कहा गया है–

وَمَا رَمَيْتَ إِذْ رَمَيْتَ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ رَمَىٰ

"(ऐ मुहम्मद!) जिस समय तुम (दुश्मन पर) तीर चला रहे थे, तो तुम नहीं चला रहे थे; बल्कि अल्लाह चला रहा था।"

(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-17)

एक दूसरे मौक़े पर कहा–

فَإِنَّهُمْ لَا يُكَذِّبُونَكَ وَلَٰكِنَّ الظَّالِمِينَ بِآيَاتِ اللَّهِ يَجْحَدُونَ ۝٣٣

"(जो लोग तुम्हें झुठलाते हैं) वे वास्तव में तुम्हें नहीं झुठलाते, बल्कि ये ज़ालिम ख़ुदा की आयतों का इनकार करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआ़म, आयत-33)

ज़ाहिर है जिस आदमी को अल्लाह तआला की मदद हासिल हो, किसी का उसपर प्रभावी होना सम्भव नहीं है; क्योंकि उससे युद्ध अल्लाह से युद्ध करने के समान है और जो अल्लाह से पंजा लड़ाने का दुस्साहस करे उसका पंजा सही-सलामत नहीं रह सकता।

नमाज़ और दीन की दावत

अल्लाह तआला की किताब क़ुरआन मजीद खोलिए और नमाज़ का ज़िक्र देखिए। आप देखेंगे कि उसके दीन का सबसे पहला हुक्म और सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी नमाज़ है। दीन जिन बुनियादों पर क़ायम है, उनमें नमाज़ सबसे अहम बुनियाद है। नमाज़ अल्लाह को याद करने का वह साधन है, जिससे बेहतर साधन की कल्पना नहीं की जा सकती। नमाज़ की पाबन्दी हो तो बन्दा अल्लाह तआला से ग़ाफ़िल नहीं हो सकता। नमाज़ से अल्लाह तआला की तरफ़ पलटना नसीब होता है। तौबा का सौभाग्य मिलता है और गुनाह माफ़ होते हैं। नमाज से आत्म-सुधार होता है, चरित्र और आचरण में निखार पैदा होता है, ज़िन्दगी के सारे मामले सँवर जाते हैं। सन्मार्ग स्पष्ट होता और उसपर चलना आसान होता है।

नमाज़ खुदा से डरनेवाले और परहेज़गार इनसान की सबसे बड़ी पहचान है। नमाज़ इस बात का सुबूत है कि इनसान अल्लाह पर पक्का यक़ीन रखता है। वह उसकी इबादत और आज्ञापालन के लिए हर आन तैयार है। बिना किसी असमंजस के उसके हर आदेश का पालन कर सकता है।

नमाज़ अल्लाह तआला के पैग़म्बरों के जीवन-चरित्र में ख़ास तौर पर और उनकी शिक्षाओं में से हर दूसरी शिक्षा पर हावी रही है। वह उनकी ज़िन्दगियों में रची-बसी और उनके कर्मों पर छायी रही है। उन्होंने अपनी उम्मतों को नमाज़ पढ़ने की बार-बार सख़्त ताकीद की।

उसकी पाबन्दी का वचन लिया। नमाज़ के छोड़ने या उसमें लापरवाही बरतने से मना किया और उसके बुरे नतीजों से आगाह किया।

पैग़म्बरों की शिक्षाओं और उनकी हिदायतों से जहाँ लापरवाही और बग़ावत होगी, वहाँ नमाज़ का त्याग भी होगा। अल्लाह तआला के इनकारियों और बाग़ियों के बारे में क़ुरआन साफ़-साफ़ कहता है कि वे एक अल्लाह के सामने झुकने और सजदा करने के लिए तैयार नहीं होते। उनकी ज़िन्दगी नमाज़ से ख़ाली और बेरौनक़ होती है। इसी कारण उनके आचार-विचार का रुख़ ही ग़लत हो जाता है और वे दुनिया में हर तरफ़ भटकते फिरते हैं। जब क़ियामत का दिन आएगा, तो बदक़िस्मती और नाकामी उनकी आँखों के सामने होगी। वे वहाँ की नाकामी से किसी तरह बच नहीं सकेंगे।

नमाज़ दिन में पाँच बार समय की पाबन्दी के साथ फ़र्ज़ की गई है। उन समयों की पाबन्दी ज़रूरी है। फ़र्ज़ नमाज़ों को मस्जिद में अदा करने का हुक्म है। इसके लिए मस्जिदों के निर्माण और उन्हें आबाद करने की हिदायत है और इसे ईमान की पहचान ठहराया गया है। फ़र्ज़ नमाज़ मस्जिद में अदा करना वाजिब है। इसकी बड़ी फ़ज़ीलत (महिमा) बयान हुई है। जो नमाज़ घर पर पढ़ी जाए, हदीस में आता है कि उसकी तुलना में उस नमाज़ का सवाब पचीस गुना और सत्ताईस गुना ज़्यादा है, जो मस्जिद में अदा की जाती है।

फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद सुन्नते-मुअक्कदा की बड़ी अहमियत है। अल्लाह के पैग़म्बर से उनकी पाबन्दी साबित है। उन्हें जान-बूझकर छोड़ा नहीं जा सकता। इनके अलावा नफ़्ल नमाज़ों की भी प्रेरणा दी गई है। एक-एक सजदे से आदमी के गुनाह माफ़ और दरजे ऊँचे होते हैं। तहज्जुद की नमाज़ अल्लाह से निकटता का बहुत बड़ा ज़रिया है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) पर तहज्जुद की नमाज़ ज़रूरी ठहरा दी गई थी। अल्लाह के नेक बन्दों की एक ख़ास पहचान यह बताई गई है कि

वे रातें जागकर गुज़ारनेवाले होते हैं और उस समय अल्लाह के दरबार में हाथ बाँधे खड़े रहते हैं, जबकि दुनिया ग़फ़लत में मदहोशी की मीठी नींद के मज़े ले रही होती है।

नमाज़ के बारे में हुक्म है कि अव्वल वक़्त में ही अदा की जाए। इसमें टाल-मटोल और देरी न की जाए। नमाज़ सुकून और इत्मीनान के साथ अदा होनी चाहिए। नमाज़ जल्दी-जल्दी इस तरह न पढ़ी जाए, जैसे सिर से कोई बोझ उतारा जा रहा हो या दानों पर मुर्ग़ा ठोंगे मार रहा हो। नमाज़ बेदिली और बिना ध्यान के साथ नहीं, बल्कि पूरे लगन से और ध्यान लगाकर पढ़ी जाए। इसमें अल्लाह की तरफ़ लगाव और झुकाव की कैफ़ियत पाई जानी चाहिए।[1]

नमाज़ की दीन में इतनी ज़्यादा अहमियत है और यह अल्लाह से जुड़ने और संबन्ध मज़बूत बनाने का इतना बड़ा साधन है कि ईमानवाला बन्दा कभी उससे ग़ाफ़िल नहीं हो सकता। वह उसकी ज़िन्दगी का एक अनिवार्य अंग होगी और उसके सारे क्रिया-कलापों में उभरी हुई और नुमायाँ रहेगी। जो लोग दीन की दावत का काम अंजाम दे रहे हैं, उन्हें सबसे ज़्यादा नमाज़ का पाबन्द होना चाहिए। वह इससे किसी हाल में ग़फ़लत नहीं बरत सकते। दीन में जो काम सबसे अहम है, उसे हर हाल में अहम ही रहना चाहिए। उसे रोककर या उसे छोड़कर दीन की दावत का हक़ अदा करना सम्भव नहीं है।

दावत और नमाज़ का सम्बन्ध

दावत के साथ नमाज़ का इस क़द्र गहरा सम्बन्ध है कि दोनों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। दावत के शुरू में भी नमाज़ का हुक्म है और इसके आख़िर में भी नमाज़ और तसबीह की

---

[1] इन तमाम पहलुओं पर नमाज़ के बारे में लेखक द्वारा लिखी जा रही किताब में अल्लाह ने चाहा तो विस्तार से दलीलों के साथ बात होगी।

हिदायत है। प्यारे नबी (सल्ल॰) को दावत के काम पर नियुक्त किया गया, तो साथ ही तहज्जुद (की नमाज़) का हुक्म दिया गया। कहा गया कि दिन में तो तुम्हें कितने ही काम करने होते हैं, इसलिए रात में खुदा को याद करो। रात के ज़्यादातर समयों में आधी रात या उससे कुछ कम या ज़्यादा हिस्से में नमाज़ पढ़ो। कहा गया है—

يَاَيُّهَا الْمُزَّمِّلُ ۝١ قُمِ الَّيْلَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝٢ نِّصْفَهٗٓ اَوِ انْقُصْ مِنْهُ قَلِيْلًا ۝٣ اَوْ زِدْ عَلَيْهِ وَرَتِّلِ الْقُرْاٰنَ تَرْتِيْلًا ۝٤ اِنَّا سَنُلْقِيْ عَلَيْكَ قَوْلًا ثَقِيْلًا ۝٥ اِنَّ نَاشِئَةَ الَّيْلِ هِيَ اَشَدُّ وَطْاً وَّاَقْوَمُ قِيْلًا ۝٦ اِنَّ لَكَ فِي النَّهَارِ سَبْحًا طَوِيْلًا ۝٧ وَاذْكُرِ اسْمَ رَبِّكَ وَتَبَتَّلْ اِلَيْهِ تَبْتِيْلًا ۝٨ رَبُّ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ فَاتَّخِذْهُ وَكِيْلًا ۝٩

"ऐ चादर ओढ़नेवाले! खड़े हो रात को, मगर थोड़ा-सा (आराम भी कर लो)। रात का आधा या उससे थोड़ा-सा कम कर दो या उससे कुछ ज़्यादा कर दो। क़ुरआन को ठहर-ठहरकर और साफ़-साफ़ पढ़ो। हम तुमपर एक भारी बात डालनेवाले हैं। बेशक रात का उठना मन को सख़्त रौंदता है और इसके कारण बात अच्छी तरह निकलती है, बेशक तुम्हारे लिए दिन में बड़ी व्यस्तता है। अपने रब के नाम का ज़िक्र करते रहो और सबसे कटकर उसी के हो रहो। वह पूरब और पश्चिम का रब है। उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है। उसी को अपना कार्य-साधक बनाओ।"

(क़ुरआन, सूरा-73 मुज़्ज़म्मिल, आयतें—1-9)

जो आदमी खुदा के दीन के लिए हर समय लगा रहा हो और जिसे दिन भर के दीन के प्रचार-प्रसार के प्रयासों में निढाल कर दिया हो, उसे स्पष्ट रूप से रात में आराम की सलाह देनी चाहिए। लेकिन यहाँ लम्बी नमाज़ का हुक्म दिया गया है। इसमें इस बात की तरफ़ इशारा है कि

दिन में जो ज़बरदस्त दावत का काम अंजाम देता है, उसके लिए ताक़त रात की नमाज़ ही से हासिल होगी। फिर जब 23 साल की कोशिश के बाद यह दावत सफल हुई, क़ुरैश की ताक़त टूट गई, मक्का फ़त्ह हुआ और ख़ुदा का घर ख़ाना काबा ख़ुदा के बन्दों के संरक्षण में आ गया; तो उस समय भी ख़ुदा के सामने सिर झुकाने और उसके गुण-गान और उसकी प्रशंसा का आदेश हुआ—

إِذَا جَآءَ نَصْرُ اللّٰهِ وَالْفَتْحُ ﴿١﴾ وَرَاَيْتَ النَّاسَ يَدْخُلُوْنَ فِيْ دِيْنِ اللّٰهِ اَفْوَاجًا ﴿٢﴾
فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ وَاسْتَغْفِرْهُ ۚ إِنَّهٗ كَانَ تَوَّابًا ﴿٣﴾

"जब अल्लाह की मदद और फ़त्ह आ जाए और तुम देख लो की लोग दल-के-दल अल्लाह के दीन में दाख़िल हो रहे हैं, तो अपने पालनहार रब की प्रशंसा के साथ तसबीह (गुण-गान) करो और उससे माफ़ी की दुआ माँगो। बेशक वह दुआ क़बूल करनेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-110 नस्र, आयतें—1-3)

अब आइए, कुछ विस्तार से देखें कि क़ुरआन मजीद ने दीन की दावत और नमाज़ को किस तरह एक-दूसरे से जोड़ दिया है। क़ुरआन में कहीं दावत का हुक्म है, तो कहीं उसके लिए नमाज़ के एहतिमाम की ताकीद की गई है। यह इस हक़ीक़त की अभिव्यक्ति है कि दावत के काम के लिए जिस शक्ति, ऊर्जा और योग्यता की ज़रूरत है, वह नमाज़ ही से पैदा होती है।

ख़ुदा की याद और नमाज़

दीन की दावत को क़ुरआन ने 'तज़कीर' (ख़ुदा की याद) कहा है यानी इनसान के अन्दर ख़ुदा की याद पैदा करना। ख़ुदा की याद पूरे दीन की जान है। दीन का उद्देश्य ही यह है कि इनसान ख़ुदा को न भूले और हर समय उसे याद रखे। जो आदमी ख़ुदा से बेपरवाह है, उसके दिल की दुनिया वीरान है। वह ऐसा खंडहर है, जिसमें हिदायत

का चिराग़ रौशन नहीं है। इनसान का फ़र्ज़ है कि ख़ुदा को हरदम याद रखे; क्योंकि वह उसका पैदा करनेवाला, मालिक और पूज्य-प्रभु है। लेकिन इनसान कभी अपनी लापरवाही और नादानी के कारण, कभी इच्छाओं की प्रबलता के कारण और कभी ग़लत शिक्षा-दीक्षा के कारण ख़ुदा को भूल जाता है। दीन की दावत यह है कि इनसान को इस लापरवाही से जगाया जाए। उसकी अज्ञानता दूर की जाए और उसे ख़ुदा से क़रीब किया जाए। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) को आदेश दिया गया—

فَذَكِّرْ إِنْ نَّفَعَتِ الذِّكْرٰى ﴿٩﴾ سَيَذَّكَّرُ مَنْ يَّخْشٰى ﴿١٠﴾

"आप याददिहानी कीजिए, अगर याददिहानी फ़ायदा दे। जिस आदमी के दिल में ख़ुदा का डर होगा, वह इससे फ़ायदा उठाएगा।" (क़ुरआन, सूरा-87 आला, आयतें—9-10)

दूसरों को ख़ुदा की तरफ़ बुलाने और उनके दिलों में ख़ुदा की याद पैदा करने के लिए ज़रूरी है कि ख़ुद इस काम का करनेवाला ख़ुदा को भूला हुआ न हो। ख़ुदा की याद अगर ख़ुद उसी के दिल में उतरी हुई न हो, तो किसी दूसरे के दिल में वह ख़ुदा की याद क्या पैदा करेगा? जो आदमी ख़ुदा को याद रखना चाहे, उसके लिए ज़रूरी है कि नमाज़ न छोड़े; क्योंकि नमाज़ ख़ुदा की याद का बेहतरीन ज़रिया, बल्कि पूरी तरह ख़ुदा की याद नमाज़ ही है। इसी लिए कहा गया है—

وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْرِيْ ﴿١٤﴾

"नमाज़ क़ायम करो मेरी याद के लिए।"

(क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयत-14)

नमाज़ ख़ुदा के ज़िक्र का दूसरा नाम है और क़ुरआन के शब्दों में 'ख़ुदा का ज़िक्र बहुत बड़ी चीज़ है'। सच्चाई यह है कि मुर्दा दिलों को ज़िन्दगी ख़ुदा की याद से मिलती है और ख़ुदा की याद नमाज़ से

हासिल होती है। नमाज़ इनसान को ख़ुदा की तरफ़ आकृष्ट करती और उसे ख़ुदा की याद से लापरवाह होने नहीं देती। ज़ाहिर है जो आदमी ख़ुदा की याद से ग़ाफ़िल न हो, यह उसी का काम है कि दूसरों को ख़ुदा के ज़िक्र की दावत दे और उनमें ख़ुदा की याद पैदा करे।

इनसानों पर गवाही और नमाज़

दीन की दावत को क़ुरआन ने 'शहादत अलन्नास' (इनसानों पर गवाही) का नाम भी दिया है। यानी इनसानों के सामने ख़ुदा के दीन को पेश करना और उसके सच होने की गवाही देना। इतना बड़ा काम वही आदमी अंजाम दे सकता है, जिसकी ज़िन्दगी दीन के साँचे में ढल चुकी हो। जो आदमी अपने कर्म और आचरण से दीन की गवाही न दे सके, मुमकिन ही नहीं है कि वह 'इनसानों पर गवाही' का फ़र्ज़ पूरा कर दे। नमाज़ से इनसान की ज़िन्दगी दीन का नमूना बन जाती है और इनसान इस योग्य होता है कि जिस दीन को वह दुनिया के सामने पेश कर रहा है अपने कर्म और आचरण से भी उसकी गवाही दे। यह तथ्य सूरा हज की अन्तिम आयत को पढ़ने से सामने आता है, जिसमें इनसानों पर गवाही के हुक्म के तुरन्त बाद नमाज़ की हिदायत की गई है। इसलिए कहा गया है—

لِيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ شَهِيْدًا عَلَيْكُمْ وَتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ ۚ فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاعْتَصِمُوْا بِاللّٰهِ ؕ هُوَ مَوْلٰىكُمْ ۚ فَنِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيْرُ ۝

"ताकि पैग़म्बर गवाह हो तुमपर और तुम गवाह हो लोगों पर। अतः तुम नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो और अल्लाह को मज़बूत पकड़ो। वह तुम्हारा संरक्षक है। तो क्या ही अच्छा संरक्षक है वह और क्या ही अच्छा मददगार!"

(क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयत-78)

भलाई का हुक्म देना, बुराई से रोकना और नमाज़

दीन की दावत के लिए क़ुरआन मजीद ने पारिभाषिक शब्दों 'भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना' का इस्तेमाल किया है। इसका मतलब है दुनिया को उन भलाइयों का हुक्म देना, जिनका ख़ुदा ने हुक्म दिया है और उन बुराइयों से रोकना, जिनसे उसने मना किया है। इस उम्मत को ख़ैरे-उम्मत कहा गया है; क्योंकि यह एक तरफ़ ख़ुदा पर ईमान रखती है और उसके हुक्म का पालन करती है और दूसरी तरफ़ दुनिया को भलाई का हुक्म देती और बुराई से रोकती है।

'भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना' उच्च आचरण और मज़बूत चरित्र की माँग करता है। इसके लिए ज़रूरी है कि इनसान ख़ुद भी भला काम करे और बुराई से बचे। जो आदमी आचरण का कच्चा है और जिसके चरित्र में खोट है, उसके लिए भलाई का हुक्म देने और बुराई से रोकने जैसा भारी काम आसान नहीं है। नमाज़ इनसान में भलाई पर चलने और बुराई से बचे रहने की सलाहियत पैदा करती है। इसी कारण ख़ुदा का हुक्म है—

اَقِمِ الصَّلٰوةَ ؕ اِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِ ؕ

"नमाज़ क़ायम करो। निश्चय ही नमाज़ अश्लील और बुरे कामों से रोकती है।" (क़ुरआन, सूरा-29 अनकबूत, आयत-45)

क़ुरआन मजीद ने अहले-किताब के आम लोगों, उनके ज्ञानियों और संन्यासियों की कड़ी आलोचना की है। उनकी दुनियादारी, परलोक को भुला देने और नैतिक बिगाड़ों की कड़े शब्दों में निन्दा की है। लेकिन इसके साथ उनके भले और नेक लोगों की प्रशंसा भी की है। कहा—

لَيْسُوْا سَوَآءً ؕ مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اُمَّةٌ قَآئِمَةٌ يَّتْلُوْنَ اٰيٰتِ اللّٰهِ اٰنَآءَ الَّيْلِ وَهُمْ

يَسْجُدُوْنَ ۞ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَيَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُسَارِعُوْنَ فِي الْخَيْرٰتِ ۭ

"सब एक जैसे नहीं हैं। उनमें एक गरोह अल्लाह के दीन पर क़ायम है। ये लोग रात के पहरों में अल्लाह की आयतों की तिलावत करते हैं और उसके सामने सजदे करते हैं। अल्लाह और परलोक पर ईमान रखते हैं। भलाई का हुक्म देते और बुराई से रोकते हैं। भलाई के कामों में ही लगे रहते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-3, आले-इमरान, आयतें-113, 114)

अहले-किताब के भले और नेक बन्दों की आठ ख़ूबियाँ यहाँ बयान हुई हैं। ये ख़ूबियाँ एक-दूसरे के ज़रूरी तक़ाज़े के तौर पर उभरती हैं, जहाँ एक ख़ूबी होगी, वहाँ दूसरी भी पाई जाएगी। ये एक-दूसरे को ताक़त भी पहुँचाती हैं। भलाई का हुक्म देने और बुराई से रोकने की भावना, इरादा और साहस आदमी में उसी समय पाया जाएगा, जब दूसरी ख़ूबियाँ भी उसमें मौजूद हों। उनमें एक नुमायाँ ख़ूबी यह है कि आदमी अल्लाह की आयतों की तिलावत करे, रात में जागता हो और उसको सजदे करता रहे। इससे भलाई का हुक्म देने और बुराई से रोकने में नमाज़ की अहमियत को समझा जा सकता है।

नमाज़ ख़ुदा का सबसे बड़ा हुक्म और सबसे बड़ी नेकी है। जो आदमी नमाज़ जैसी इबादत को छोड़ दे, उसके लिए दूसरी नेकियों का छोड़ना बहुत आसान है। क़ुरआन ने एक जगह कुछ महान पैग़म्बरों के उत्तराधिकारियों का ज़िक्र इन शब्दों में किया है—

فَخَلَفَ مِنْۢ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ اَضَاعُوا الصَّلٰوةَ وَاتَّبَعُوا الشَّهَوٰتِ

"फिर उनके बाद ऐसे अयोग्य लोग पैदा हुए जिन्होंने नमाज़ को गँवा दिया और मनोकामनाओं के पीछे पड़ गए।"

(क़ुरआन, सूरा-19 मरयम, आयत-59)

इससे मालूम हुआ कि इनसान जब नमाज़ को छोड़ता है, तो कामनाओं का दास बन जाता है। ज़ाहिर है कि इसके बाद वह बुराई का एजेंट तो हो सकता है, खुदा के दीन का सेवक नहीं बन सकता।

दुनिया के सुधार की कोशिश और नमाज़

दीन की दावत को सुधार की कोशिश भी कहा गया है; क्योंकि यह अल्लाह की ज़मीन को बिगाड़ से पाक करने की कोशिश है। क़ुरआन की दृष्टि में जो लोग अल्लाह के दीन को नहीं मानते और उसकी बताई हुई सीमाओं और प्रतिबन्धनों के पाबन्द नहीं हैं, उनका लक्ष्य दुनिया का सुधार नहीं है। वे धरती पर बिगाड़ पैदा करने का काम कर रहे हैं और इस योग्य नहीं हैं कि दुनिया का नेतृत्व और मार्गदर्शन करें। वे दुनिया को अल्लाह की नाफ़रमानी का रास्ता दिखा रहे हैं और उसे तबाही और बरबादी की तरफ़ ले जा रहे हैं। उनसे दूर रहने में ही भलाई है। समूद की क़ौम से हज़रत सालेह (अलैहि॰) कहते हैं—

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوْنِ ﴿۱۵۰﴾ وَلَا تُطِيْعُوْٓا اَمْرَ الْمُسْرِفِيْنَ ﴿۱۵۱﴾ الَّذِيْنَ يُفْسِدُوْنَ فِي الْاَرْضِ وَلَا يُصْلِحُوْنَ ﴿۱۵۲﴾

"तो अल्लाह से डरो और मेरी आज्ञा का पालन करो और हद से बढ़े हुए लोगों के हुक्म पर न चलो, जो कि ज़मीन में बिगाड़ फैलाते हैं और सुधार नहीं करते।"

(क़ुरआन, सूरा-26 शुअ़रा, आयतें—150-152)

हज़रत शुऐब (अलैहि॰) अपनी कोशिशों के बारे में कहते हैं—

اِنْ اُرِيْدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ ۭ وَمَا تَوْفِيْقِيْٓ اِلَّا بِاللّٰهِ ۭ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ اُنِيْبُ ﴿۸۸﴾

"मैं तो बस सुधार चाहता हूँ, जहाँ तक मुझसे हो सके। मुझे

इसकी तौफ़ीक़ अल्लाह ही से होगी। उसी पर मेरा भरोसा है और उसी की तरफ़ मैं पलटता हूँ।"

(क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयत-88)

इसका मतलब यह है कि अल्लाह के पैग़म्बर दुनिया के सुधार के लिए आते हैं। इस महान काम के लिए दो ख़ूबियों का पाया जाना ज़रूरी है। एक यह कि अल्लाह तआला की किताब से मार्गदर्शन हासिल किया जाए और दूसरे यह कि नमाज़ के ज़रिए अल्लाह से लगाव को मज़बूत किया जाए। कहा गया है—

وَالَّذِيْنَ يُمَسِّكُوْنَ بِالْكِتٰبِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ ۭ اِنَّا لَا نُضِيْعُ اَجْرَ الْمُصْلِحِيْنَ ۝

"वे लोग जो अल्लाह की किताब को मज़बूती से पकड़ते हैं और नमाज़ क़ायम करते हैं, तो हम (ऐसे) नेक चलन लोगों का किया-धरा अकारथ नहीं करेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-170)

यह इस सच्चाई का बयान है कि अल्लाह तआला के नज़दीक क़ौमों के सुधारक वे हैं, जो उसकी किताब को मज़बूती से थामे हुए हों और जो नमाज़ क़ायम करें। उन्हीं के हाथों क़ौमों के सुधार का काम अंजाम पाएगा। उनकी कोशिशें बेकार नहीं जाएँगी। अल्लाह तआला उन्हें भरपूर बदला प्रदान करेगा।

दीन क़ायम करना और नमाज़

दीन की दावत का काम वास्तव में दीन क़ायम करने का काम है। यह काम उसी समय हो सकता है, जबकि इनसान पहले अपने आप पर दीन क़ायम करे। जिस आदमी में इतनी हिम्मत नहीं है कि अपने आप पर दीन क़ायम करे, उसके लिए खुदा की ज़मीन पर खुदा के दीन को क़ायम करना सम्भव नहीं है। नमाज़ इनसान को ज़िन्दगी के हर मामले में दीन पर चलने के योग्य बनाती है। इससे यह ताक़त और

सलाहियत पैदा होती है कि वह दीन पर पूरी तरह अमल कर सके। इसलिए हदीस में है—

الصلوة عماد الدين، من اقامها فقد اقام الدين ومن هدمها فقد هدم الدين

"नमाज़ दीन का सुतून है। जिसने नमाज़ क़ायम की, उसने दीन को क़ायम किया और जिसने नमाज़ को ढा दिया, उसने दीन को ढा दिया।"[1]

हज़रत उमर (रज़ि॰) ने अपने गवर्नरों को नमाज़ के समयों के सिलसिले में कुछ हिदायतें दी थीं। इसके शुरू के शब्द ये हैं—

ان اهم امورکم عندی الصلوة، من حفظها و حافظ علیها حفظ دینه و من ضیعها فهو لما سواها اضیع

"तुम्हारे कामों में सबसे अहम काम मेरे नज़दीक नमाज़ है। जिसने इसे बरबाद न होने दिया और इसकी पाबन्दी की, उसने अपने दीन को बरबाद होने से बचा लिया। जिसने इसे नष्ट कर दिया वह और चीज़ों (आदेशों) को ज़्यादा नष्ट करनेवाला

[1] यह हदीस लेखक को इन शब्दों के साथ याद है, लेकिन इसका स्रोत ज़ेहन में नहीं है। इमाम ग़ज़ाली (रह॰) ने इहयाउ-उलूमिद्दीन में इसे इन शब्दों में नक़ल किया है, "नमाज़ दीन का सुतून है। जिसने इसे छोड़ दिया, उसने दीन को ढा दिया।" ये शब्द संक्षिप्त हैं। अल्लामा इराक़ी इसपर लिखते हैं कि 'इस हदीस की रिवायत बैहिक़ी ने शो-अबुल-ईमान में हज़रत उमर (रज़ि॰) से की है और इसे ज़ईफ़ क़रार दिया है।' हाकिम (रह॰) कहते हैं कि 'इक्रमा ने इसकी रिवायत हज़रत उमर (रज़ि॰) से की है। इक्रमा को हज़रत उमर (रज़ि॰) से हदीस का सुनना साबित नहीं है।' हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से भी यह रिवायत आई है। इब्ने-सलाह ने इससे अपनी नावाक़फ़ियत का इज़्हार किया है। 'मुश्किलुल-वसीत' में इसे ग़ैर- मारूफ़ (अपरिचित) क़रार दिया है। (इहयाउ-उलूमिद्दीनि-म-अ मुग़नी अनिल्-अस्फ़ार 1/175, दारुल-कुतुबुल-इल्मियह, बेरूत)

होगा।"[1]

सच्चाई यह है कि नमाज़ के बिना इनसान न दीन पर क़ायम रह सकता है और न इसकी तरफ़ दुनिया को दावत दे सकता है।

दावत के लिए अपेक्षित गुण और नमाज़

दीन की दावत के लिए जिन गुणों और ख़ूबियों की ज़रूरत है, वे भी नमाज़ ही से पैदा होती हैं। यहाँ उनमें से कुछ गुणों और ख़ूबियों का ज़िक्र किया जा रहा है—

सब्र और दीन पर मज़बूती से जमे रहना

दीन की दावत खेल नहीं है। इसके लिए बेहद सब्र और पहाड़ की तरह अटलता और जमाव चाहिए। यह ख़ूबी इनसान के अन्दर नमाज़ के ज़रिए ही पैदा हो सकती है। क़ुरआन में है—

إِنَّ الْإِنسَانَ خُلِقَ هَلُوعًا ۝ إِذَا مَسَّهُ الشَّرُّ جَزُوعًا ۝ وَإِذَا مَسَّهُ الْخَيْرُ مَنُوعًا ۝ إِلَّا الْمُصَلِّينَ ۝

"बेशक इनसान थुड़दिला पैदा किया गया है। जब उसको तकलीफ़ पहुँचती है तो घबरा जाता है और जब राहत मिलती है, तो हाथ रोक लेता है सिवाय नमाज़ियों के। (वे इससे अलग हैं)।"

(क़ुरआन, सूरा-70 मआरिज, आयतें—19-22)

किसी काम को कुछ दिन अंजाम देना आसान है, लेकिन लगातार उसे करते रहना आसान नहीं है। कुछ लोग पूरे जोश और जज़्बे के साथ दावत की शुरुआत तो करते हैं, लेकिन बहुत जल्द उनका जज़्बा ठंडा पड़ जाता है और वे उसे छोड़ बैठते हैं। इसका स्पष्ट अर्थ यह है

---

[1] मुवत्ता इमाम मालिक, बाबुल-वक़ूत

कि उनकी नज़र में इस काम की कोई अहमियत नहीं है। जिस समय उन्होंने दीन की दावत शुरू की, न तो उस समय उनको एहसास था कि वे कितना बड़ा काम शुरू कर रहे हैं और न उस समय जबकि उन्होंने इस दावत को छोड़ा, न उनको एहसास हुआ कि वे कितना अहम काम छोड़ रहे हैं। हालाँकि दीन की दावत का जज़्बा इनसान के अन्दर इस तरह दाख़िल होना चाहिए कि मरते दम तक उसकी ऊर्जा ख़त्म न हो। नमाज़ आपके अन्दर निरन्तरता और जमे रहने का गुण पैदा करती है। इसलिए अगर सही अर्थ में आप नमाज़ी हैं तो दीन के काम में भी आप को अटलता नसीब होगी, वरना आप इससे वंचित होंगे। क़ुरआन ने नमाज़ियों का गुण यह बयान किया है—

الَّذِيْنَ هُمْ عَلٰى صَلَاتِهِمْ دَآئِمُوْنَ ۝

"जो अपनी नमाज़ की हमेशा पाबन्दी करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-70 मआरिज, आयत-23)

नमाज़ में हमेशा की पाबन्दी आपको स्वाभाविक रूप से दीन के अनुपालन और पैरवी में पाबन्दी की आदी बनाएगी। आप उसके आदेशों के हमेशा पाबन्द होंगे और दावत का काम भी लगातार जारी रख सकेंगे।

नमाज़ से सब्र पैदा होता है

नमाज़ से दीन पर जमे रहने का गुण और संयम प्राप्त होता है। इसे सब्र भी कहा जा सकता है। सब्र के बहुत-से पहलू हैं। एक पहलू यह है कि आदमी हर तरह की कठिनाइयों और आज़माइशों में दीन पर क़ायम रहे। इससे बिलकुल ही मुँह न मोड़े और दावत का काम जारी रखे। इस विशेष गुण को पैदा करने का ज़रिया नमाज़ है। नमाज़ से हर तरह की परिस्थितियों में सब्र और सत्य पर जमे रहने की सलाहियत नसीब होती है। इसका प्रमाण क़ुरआन मजीद की शिक्षाओं और इस्लामी इतिहास से मिलता है।

इस्लामी दावत का मक्की दौर सब्र और जमे रहने का दौर था। उस दौर में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) निस्स्वार्थ, चरित्रवान, सज्जन और मासूम हस्ती के रास्ते में काँटे बिछाए गए, पत्थर बरसाए गए, अल्लाह माफ़ करे, मजनूँ कहा गया, अधर्मी कहा गया, कहानी सुनानेवाला कहा गया, दूसरों का लिखाया-पढ़ाया दोहरानेवाला कहा गया। इतिहास गवाह है कि आप इन निराधार आरोपों और लांछनों पर कभी उत्तेजित नहीं हुए, बल्कि सब्र और सुकून के साथ अपनी दावत पेश करते रहे। विरोध करनेवालों की अन्तरात्मा को झिंझोड़ा। उनकी अक़्ल से अपील की। उन्हें सोच-विचार करने पर उभारा और अन्धे-बहरे विरोध के बुरे परिणामों से आगाह किया। इस तरह वैर और दुश्मनी के उस माहौल में हुज्जत तमाम कर दी।

नबी (सल्ल॰) के पवित्र आदर्श को आपके प्यारे साथियों (रज़ि॰) ने अपनाया और विरोधों की आँधी में सब्र का पहाड़ बने रहे। उनका जिहाद बेमिसाल था, तो सब्र भी बेमिसाल था। फिर यह कि यह बुज़दिलों और नामर्दों का सब्र न था, बल्कि बहादुरों और मौत से खेल जानेवालों का सब्र था। यह उस क़ौम के सपूतों का सब्र था, जिसके यहाँ बात-बात पर तलवारें खिंच जाती थीं, जिसके ग़ुस्से और क्रोध की आग विरोधी से बदला लिए बिना बुझती न थी, जो अपने सन्धि-मित्रों और समर्थकों पर किसी को हाथ उठाने की अनुमति नहीं देती थी, जिसका हर आदमी चोट खाने के बाद शेरों की तरह बिफर जाता था, जिसके नज़दीक ज़ुल्म को सहना बुज़दिली के समान था, जो अज्ञानता और क्रूरता का जवाब उससे बढ़कर अज्ञानता और क्रूरता से देना ज़रूरी समझती थी। हैरत है उस क़ौम के लोगों को, जिनमें से अधिकतर नौजवान थे, इस्लाम ने धैर्य और संयम का पाबन्द बनाया कि मक्का के पूरे इतिहास में इसका कोई उदाहरण नहीं मिलता कि किसी झूठे आरोप या ग़लत बयानी पर वे बेक़ाबू हो गए हों। ज़ुल्म-ज़्यादती के मुक़ाबले में बदला लेने का जोश उभर आया हो। बदज़बानी के जवाब

में बदज़बानी और बदसुलूकी की हो। ख़ंज़र के मुक़ाबले में ख़ंज़र उठाया हो, तलवार के मुक़ाबले में तलवार निकल आई हो। सब्र की यह ग़ैर-मामूली ताक़त नमाज़ से पैदा होती है। इसी कारण क़ुरआन मजीद ने जहाँ कहीं सब्र का हुक्म दिया है, आम तौर पर नमाज़ की नसीहत की है। एक उदाहरण देखिए—

فَاصْبِرْ عَلٰى مَا يَقُوْلُوْنَ وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ قَبْلَ طُلُوْعِ الشَّمْسِ وَقَبْلَ الْغُرُوْبِ ۝ وَمِنَ الَّيْلِ فَسَبِّحْهُ وَاَدْبَارَ السُّجُوْدِ ۝

"जो कुछ ये कह रहे हैं उसपर सब्र करो और अपने पालनहार रब की हम्द (प्रशंसा) के साथ उसकी तसबीह (गुणगान) करते रहो। सूरज निकलने से पहले भी और सूरज डूबने से पहले भी और रात में भी उसकी तसबीह करो और सजदा कर लेने के बाद भी।" (क़ुरआन, सूरा-50 क़ाफ़ , आयतें-39,40)

सब्र की अहमियत

जो लोग दीन की दावत का काम करने खड़े हों, उनके लिए सब्र की आज भी उसी तरह ज़रूरत है, जिस तरह कल ज़रूरत थी। इस समय एक तरफ़ धर्म के दुश्मन और अधर्मी लोग उनके ख़िलाफ़ मोर्चाबन्द हैं और दूसरी तरफ़ पैग़म्बर का नाम लेनेवाले उनसे लड़ने-मारने पर तुले हैं। धर्म-विमुख वर्ग उन्हें रूढ़िवादी और दक़ियानूस, ज़माने से बेख़बर, देश का बुरा चाहनेवाला, क़ौम का दुश्मन और सम्प्रदायिक सिद्ध करने की पूरी कोशिश कर रहा है। इसका कारण यह नहीं है कि उन्होंने धर्म के सेवकों को इसी तरह देखा है और उनके अनथक प्रयासों को ऐसा ही पाया है, बल्कि इसका कारण यह है कि वह उनको अपने रास्ते की सबसे बड़ी रुकावट समझता है और इनकी आड़ में ख़ुदा के दीन, उसके अक़ीदों और उसके जीवन-दर्शन को निशाना बना रहा है। जो लोग दीनदार समझे जाते हैं, उनकी तरफ़ से भी उनपर झूठे आरोप बरस रहे हैं। कभी कहा जाता है कि इन लोगों

का अक़ीदा ख़राब है। ये ख़ुदा को तो मानते हैं, उसके पैग़म्बर पर इनका ईमान नहीं है। कभी कहा जाता है कि ख़ुदा और पैग़म्बर को तो मानते हैं, लेकिन उस तरह नहीं मानते जिस तरह हम मान रहे हैं। कभी कहा जाता है कि इनका धर्म राजनीतिक है। ये शासन-सत्ता चाहते हैं। परहेज़गारी और ईश-भय इनका लक्ष्य और उद्देश्य नहीं है। कहीं से आवाज़ आती है कि ये सहाबियों (रज़ि॰), उम्मत के बुज़ुर्गों की तौहीन करते हैं। कभी कहा जाता है कि ये अपने अलावा किसी को मुसलमान नहीं समझते। कभी बताया जाता है कि इनके नज़दीक सिवाय इनके किसी ने आज तक दीन ही को नहीं समझा है। आप जानते हैं यह सब कुछ सरासर झूठ है, लांछन और ग़लत बयानी है। झूठ और आरोपों के इस तूफ़ान में सब्र और सत्य पर जमे रहने की दौलत आपको नमाज़ ही से मिल सकती है।

नमाज़ से सत्य पर जमे रहने का गुण पैदा होता है

किसी ग़ैर-इस्लामी माहौल में सही इस्लामी दावत का उठना और उसपर उसके कार्यकर्ताओं का अटल रहना बड़ा ही मुश्किल काम है। जहाँ इस्लामी विचारधारा पर ग़ैर-इस्लामी विचारधाराएँ हर तरफ़ से आक्रमण कर रही हों, जहाँ विरोधी माहौल अपना प्रबल प्रभाव और दबाव डाल रहा हो, जहाँ हिम्मत तोड़ देनेवाली परिस्थितियों में दावत का काम करना पड़े, जहाँ किसी कार्यकर्ता की किसी ख़ूबी को तो न माना जा रहा हो; हाँ, उसकी ग़लती और कमियों की प्रशंसा और प्रोत्साहन का माहौल हो, जहाँ कमज़ोरी को हिकमत और मसलिहत कहा जाए, जहाँ पेशक़दमी की निन्दा की जाए और पीछे हटने पर वाहवाही मिले, वहाँ अटल जमाव को कारनामा कहा जाए, तो अतिशयोक्ति न होगी। जब कभी इस्लाम को विरोधी शक्तियाँ उभरता हुआ देखती हैं, तो वे बलपूर्वक उसे कुचल देना चाहती हैं। लेकिन यह उनके लिए आसान नहीं होता; क्योंकि आन्दोलन शक्ति और बल से दबाए नहीं जाते। इसलिए उनकी यह इच्छा होती है कि उसके झंडाबरदार ख़ुद उसे ख़त्म

कर दें। इसकी वे कभी खुली हुई माँग नहीं करते। उनकी माँग केवल इतनी होती है कि इस्लाम के माननेवाले अपने दृढ़ निश्चय से कुछ पीछे हटें। वे दूसरों के सोच-विचारों की प्रामाणिकता और सच्चाई को स्वीकार करें और दूसरे उनकी विचारधाराओं के गुणों को स्वीकार करें। कुछ बातों को वे सहन करें और कुछ को उनके विरोधी बरदाश्त करें; ताकि परस्पर दोनों के बने रहने की कोई सूरत निकल आए। यह बड़ा नाज़ुक मरहला होता है। यही मौक़ा होता है, जबकि इस्लाम के लिए काम करनेवालों के अन्दर भी लचक या समझौतावादी नीति पैदा हो सकती है और वे अपने विचारों पर दोबारा नज़र डालने के लिए तैयार हो सकते हैं। इस तरह का हर क़दम तहरीक (संगठन) की मौत है और उसके कार्यकर्ताओं की भी; क्योंकि ऊँचाई से जब इनसान लुढ़कने लगता है तो बीच में रुकता नहीं है, बल्कि नीचे पहुँचकर ही दम लेता है। जहाँ परिस्थितियों के सामने उसका सिर ज़रा झुकता है, तो परिस्थितियाँ उससे सजदा करा के रहती हैं। जब वह अपनी एक चीज़ दुश्मन के हवाले करता है, तो दुश्मन उसे हर चीज़ से वंचित करके रख देता है।

ग़लत और झूठी शक्तियों के मुक़ाबले में सत्य पर जमे रहने का गुण और अल्लाह तआला की याद नमाज़ ही से मिलती है। देखिए क़ुरआन कितने स्पष्ट शब्दों में कहता है—

فَاسْتَقِمْ كَمَآ اُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطْغَوْا ۭ اِنَّهٗ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ۝ وَلَا تَرْكَنُوْٓا اِلَى الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ ۙ وَمَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ اَوْلِيَاۗءَ ثُمَّ لَا تُنْصَرُوْنَ ۝ وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ طَرَفَيِ النَّهَارِ وَزُلَفًا مِّنَ الَّيْلِ ۭ اِنَّ الْحَسَنٰتِ يُذْهِبْنَ السَّـيِّاٰتِ ۭ ذٰلِكَ ذِكْرٰي لِلذّٰكِرِيْنَ ۝ وَاصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ ۝

“तो ऐ नबी! तुम और तुम्हारे वे साथी जो तुम्हारे साथ अल्लाह की तरफ़ पलट आए हों, सीधे रास्ते पर इस तरह जमे रहो,

जैसा कि तुम्हें हुक्म दिया गया है और हद से न बढ़ो। बेशक जो कुछ तुम कर रहे हो, उसे वह देख रहा है और उन लोगों की तरफ़ ज़रा भी न झुको, जिन्होंने ज़ुल्म का रवैया अपनाया है, वरना जहन्नम की लपेट में आ जाओगे। तुम्हारे लिए अल्लाह के सिवा कोई मददगार न होगा और कहीं से तुम्हारी मदद न होगी। और नमाज़ क़ायम करो दिन के दोनों सिरों पर और रात के कुछ पहरों में। बेशक नेकियाँ बुराइयों को मिटा देती हैं। यह याददिहानी है उनके लिए जो ख़ुदा को याद रखते हैं। बेशक अल्लाह नेक काम करनेवालों का बदला अकारथ नहीं करता।" (क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयतें—112-115)

सत्य पर जमे रहने के हुक्म के साथ ज़ालिमों और ख़ुदा के बाग़ियों की तरफ़ कण भर भी झुकने से मना किया गया है। इसके बाद रात और दिन के विभिन्न हिस्सों में नमाज़ क़ायम करने की ताकीद की गई है। इस तरह यह बता दिया गया कि नमाज़ ही के सहारे आदमी अटल जमाव दिखा सकता है। नमाज़ न हो तो उसके क़दम उखड़ जाएँगे। वह कमज़ोर पड़ जाएगा और ज़ालिम उसे अपनी तरफ़ खींच ले जाएँगे।

दीन की सच्ची अभिव्यक्ति

दीन की दावत की एक माँग यह है कि दीन को बिना कमी-बेशी के सही और पूरे रूप में पेश किया जाए। इसकी सलाहियत आपके अन्दर उस समय पैदा होगी, जबकि आप नमाज़ को भी ठीक-ठीक अदा करें और इसमें किसी प्रकार की कोताही न करें। क़ुरआन ने नमाज़ियों के बारे में कहा है—

وَالَّذِيْنَ هُمْ عَلٰى صَلَوٰتِهِمْ يُحَافِظُوْنَ ۝

"और जो अपनी नमाज़ों की पूरी सुरक्षा करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयत-9)

जब आप नमाज़ के एक-एक अंश, उसकी एक-एक माँग को पूरा करेंगे, तो सही अर्थों में नमाज़ के रक्षक होंगे और ख़ुदा के दीन को भी ठीक-ठीक इस तरह दुनिया के सामने पेश कर सकेंगे, जिस तरह उसे पेश करने का हुक्म है।

कुरआन और हदीस के पढ़ने से मालूम होता है कि ख़ुदा ने सबसे ज़्यादा अहमियत नमाज़ ही को दी है। आपकी ज़िन्दगी में भी नमाज़ ही को सबसे ज़्यादा अहमियत हासिल होनी चाहिए। नमाज़ ख़ुदा का सबसे ज़्यादा पसन्दीदा अमल है। आपका पसन्दीदा अमल भी नमाज़ ही को होना चाहिए। प्यारे नबी (सल्ल०) कहते हैं—

"नमाज़ में मेरी आँखों की ठंढक रख दी गई है।"[1]

ज़रूरी है कि नमाज़ आपकी भी आँखों की ठंढक हो। आपको इससे आनन्द और सुख मिले और इसके एक-एक काम से परम आनन्द प्राप्त हो। जो नमाज़ इन ख़ूबियों से भरी होगी, वह आपकी सफलता की ज़मानतदार है। नमाज़ आपके लिए ख़ुदा की रहमतें लाती है और आपको इस योग्य बनाती है कि कठिन से कठिन परिस्थितियों और विरोध के तूफ़ान के बावुजूद ख़ुदा के दीन को पेश करने का सौभाग्य प्राप्त करें। लेकिन अगर आपकी नमाज़ इन ख़ूबियों से भरी हुई नहीं है, तो आप नमाज़ पढ़ने के बावुजूद ख़ुदा को भूले हुए होंगे। जो आदमी ख़ुदा को भूल जाए, ख़ुदा भी उसे भूल जाता है। उसके लिए सम्भव नहीं है कि दीन की दावत जैसा बड़ा काम अंजाम दे।

✧✧✧

[1] सुनने-नसाई, किताबु इश्रतिन्निसा, बाबु हुब्बिन्निसा; मुसनद अहमद, 3/128।

अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना[1]

जिस आदमी के पास धन-दौलत होती है, वह सुख-चैन और ऐश की ज़िन्दगी गुज़रता है, अपने मन की मनोकामनाएँ पूरी करता है। बड़े-बड़े महल बनाता है। ख़ुदा के बन्दों को अपना ग़ुलाम बनाता है और उनके बीच अपनी ऊँची हैसियत का प्रदर्शन करता है। लेकिन इस्लाम ने उसे अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने का आदेश दिया है। इसका मतलब यह है कि इनसान को अपना माल ख़ुदा की राह में ख़र्च करना चाहिए; क्योंकि ख़ुदा के बन्दे को ख़ुदा ही के रास्ते में ख़र्च करने का हक़ है। अगर किसी दूसरी मद में वह अपना माल ख़र्च करता है, तो अपनी हद से आगे बढ़ता है।

ख़ुदा के एहसानों को मानना

ख़र्च करना अल्लाह के एहसानों को व्यावहारिक रूप से मानना है। अल्लाह तआला ने इनसानों पर अनगिनत एहसान किए हैं। उनकी अपेक्षा है कि वे अपने जैसे दूसरे इनसानों के साथ एहसान का रवैया अपनाएँ। इसका बेहतरीन रूप उनकी आर्थिक मदद है। जब आदमी मेहनत से कमाई हुई अपनी दौलत किसी मुहताज पर ख़र्च करता है, तो यह इस बात का प्रमाण होता है कि उसे अल्लाह के इनामों का एहसास है और वह उसका शुक्र अदा करना चाहता है। ईमानवाले और हक़ के इनकारी में यही अन्तर है। ईमानवाला अल्लाह तआला का शुक्रगुज़ार बन्दा होता है और हक़ का इनकारी अल्लाह को भूला हुआ और नाशुक्रा होता है। सूरा बलद में अल्लाह तआला ने इनसान पर अपने कुछ एहसानों का ज़िक्र करते हुए कहा है—

فَلَا اقْتَحَمَ الْعَقَبَةَ ﴿١١﴾ وَمَا أَدْرَاكَ مَا الْعَقَبَةُ ﴿١٢﴾ فَكُّ رَقَبَةٍ ﴿١٣﴾ أَوْ إِطْعَامٌ فِي
يَوْمٍ ذِي مَسْغَبَةٍ ﴿١٤﴾ يَتِيمًا ذَا مَقْرَبَةٍ ﴿١٥﴾ أَوْ مِسْكِينًا ذَا مَتْرَبَةٍ ﴿١٦﴾

---

[1] "दौलत में ख़ुदा और बन्दों का हक़" के नाम से लेखक की किताब इससे पहले प्रकाशित हो चुकी है। यह लेख उसी किताब के अंशों से तैयार किया गया है।

1. "दौलत में ख़ुदा और बन्दों का हक़" के नाम से लेखक की हिन्दी किताब इससे पहले प्रकाशित हो चुकी है। यह लेख उसी किताब से उधृत अंशों से तैयार किया गया है।

"लेकिन वह घाटी में नहीं दाख़िल हुआ। क्या तुम्हें मालूम है कि वह घाटी क्या है? वह है गर्दन को ग़ुलामी से छुड़ाना या भूख के दिनों में निकटवर्ती अनाथों या असहाय मुहताज को खाना खिलाना।" (क़ुरआन, सूरा-90 बलद, आयतें—11-16)

ख़ुदा की राह में ख़र्च करना उससे प्रेमपूर्वक डरने का प्रमाण

अल्लाह तआला के रास्ते में ख़र्च करना उससे डरने और विनम्र होने की दलील है। अल्लाह तआला ने ख़र्च करने को परलोक की यातना से बचने का साधन बताया है। इसलिए जिस व्यक्ति के दिल में परलोक का भय होगा, वह निश्चय ही अपना माल ख़र्च करके परलोक की यातना से बचने की कोशिश करेगा। क़ुरआन कहता है कि यतीमों और मुहताजों को वही धक्का देगा जो ख़ुदा और परलोक को भूला हुआ है—

أَرَءَيْتَ الَّذِى يُكَذِّبُ بِالدِّينِ ① فَذٰلِكَ الَّذِى يَدُعُّ الْيَتِيمَ ② وَلَا يَحُضُّ عَلٰى طَعَامِ الْمِسْكِينِ ③

"क्या तुमने देखा उस व्यक्ति को जो आख़िरत के प्रतिदान और सज़ा को झुठलाता है? वही तो है जो अनाथ को धक्के देता है और मुहताज को खाना देने पर नहीं उकसाता।"

(क़ुरआन, सूरा-107 माऊन, आयतें—1-3)

जिन लोगों के दिल और दिमाग़ पर अल्लाह का डर और परलोक की चिन्ता छायी रहती है, उनसे ऐसी कठोरता की आशा नहीं की जा सकती। उनका हाल बिलकुल दूसरा होता है—

وَيُطْعِمُوْنَ الطَّعَامَ عَلٰى حُبِّهٖ مِسْكِيْنًا وَّيَتِيْمًا وَّاَسِيْرًا ۝۸ اِنَّمَا نُطْعِمُكُمْ لِوَجْهِ اللّٰهِ لَا نُرِيْدُ مِنْكُمْ جَزَآءً وَّلَا شُكُوْرًا ۝۹ اِنَّا نَخَافُ مِنْ رَّبِّنَا يَوْمًا عَبُوْسًا قَمْطَرِيْرًا ۝۱۰

"वे खाने की इच्छा और ज़रूरत के बावजूद उसे मुहताज, यतीम और क़ैदी को खिला देते हैं (मन-ही-मन कहते हैं कि) हम तो केवल ख़ुदा की ख़ुशी के लिए खिला रहे हैं। हम तुमसे इसका बदला और शुक्रगुज़ारी नहीं चाहते। हमको उस सख़्त और भयानक दिन का डर है, जिसका आना हमारे रब की तरफ़ से यक़ीनी है।" (क़ुरआन, सूरा-76 दह्र, आयतें—8-10)

धन-दौलत के द्वारा जनसेवा

आदमी के पास धन-दौलत हो तो वह उसे अपने आप पर ख़र्च करता है; अपने रिश्तेदारों पर ख़र्च करता है। इससे आगे बढ़कर उसकी दानशीलता क़ौम और क़बीला के लिए भी हो सकती है। लेकिन इस्लाम उसके सामने अत्यन्त व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। वह इनसान पर इनसान की हैसियत से ख़र्च करने का हुक्म देता है। वह एक मुसलमान का यह फ़र्ज़ क़रार देता है कि जो आदमी भूखा है उसे खाना खिलाए; जो नंगा है उसे कपड़ा पहनाए और जो मुहताज और असहाय है उसकी मदद करे, चाहे वह उसका अपना हो या पराया; अजनबी हो या जाना-पहचाना; उसके देश का हो या परदेशी; अपने धर्म को माननेवाला हो या दूसरे धर्म को; जब भी वह किसी ज़रूरतमन्द की ज़रूरत पूरी करने की स्थिति में हो उसे ज़रूर ही उसकी मदद करनी होगी। हाँ, अगर वह इस फ़र्ज़ के पूरा करने में असमर्थ है, तो उसकी पकड़ न होगी। ख़ुदा की राह में ख़र्च करना उसकी रहमत (दयालुता) को दावत देना है। जो आदमी मुहताज है, वह इस बात का मौक़ा मुहैया करता है कि उसकी ज़रूरत पूरी करके आदमी ख़ुदा की रहमत

का हक़दार हो जाए। इसी कारण हदीस में कहा गया है—

الرَّاحِمُونَ يَرْحَمُهُمُ الرَّحْمٰنُ، ارْحَمُوا مَنْ فِي الْأَرْضِ يَرْحَمْكُمْ مَنْ فِي السَّمَاءِ،

"रहम करनेवालों पर अल्लाह तआला रहम करता है। तुम ज़मीनवालों पर रहम करो; आसमानवाला तुमपर रहम करेगा।"[1]

अल्लाह की राह में ख़र्च करने के मामले में इस विस्तृत दृष्टिकोण को हमेशा पेशे-नज़र रखना होगा। यही दीन व ईमान का तक़ाज़ा और इसका फ़ितरी मुतालबा हैं।

नमाज़ क़ायम करने और अल्लाह की राह में ख़र्च करने का आदेश

नमाज़ दीन का सुतून है। क़ुरआन मजीद ने ज़कात या अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने को नमाज़ के साथ जोड़ दिया है। जहाँ वह नमाज़ का ज़िक्र करता है, आम तौर पर उसके साथ ही अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने का भी उल्लेख करता है। क़ुरआन मजीद के शुरू में ही ख़ुदा से डरनेवाले और परहेज़गार इनसानों का ज़िक्र इन शब्दों में आया है—

الَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِالْغَيْبِ وَيُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُونَ ۝

"वे ग़ैब (परोक्ष) पर ईमान रखते हैं और नमाज़ क़ायम करते हैं और जो कुछ हमने उनको दिया है, उसमें से ख़र्च करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-3)

इस तरह की और बहुत-सी आयतें हैं, जिनमें नमाज़ के साथ अल्लाह की राह में ख़र्च करने या ज़कात का उल्लेख है। इन दोनों का उद्देश्य और लक्ष्य एक है। इस्लाम की अपने माननेवालों से माँग यह है कि एक तरफ़ तो वे नमाज़ क़ायम करने का प्रबन्ध करें और दूसरी

[1] हदीस : जामेअ तिरमिज़ी, अबवाबुल-बिर्रवस्सिला, बाबु-मा जाअ फ़ी रहमतिल-मुस्लिमीन।

तरफ़ अल्लाह के रास्ते में अपना माल ख़र्च करें। इसी पर लोक-परलोक की सफलता निर्भर करती है। इसके बिना सफलता की कल्पना नहीं की जा सकती।

तहज्जुद की नमाज़ और अल्लाह की राह में ख़र्च करना

तहज्जुद की नमाज़ अल्लाह के नेक बन्दों की ख़ास पहचान है। कुरआन मजीद इसके साथ उनके ख़र्च करने का हवाला ज़रूर देता है। इसका मतलब यह है कि अल्लाहवाले केवल रात में इबादत के लिए ही जगनेवाले नहीं होते, बल्कि अल्लाह ने उन्हें धन-दौलत से नवाज़ा है तो उसका एक हिस्सा उसके रास्ते में लुटाते भी हैं। अल्लाह के यहाँ उनका बदला कल्पना और सोच से भी परे होगा—

تَتَجَافَىٰ جُنُوبُهُمْ عَنِ الْمَضَاجِعِ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ خَوْفًا وَطَمَعًا وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنفِقُونَ ۝ فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَّا أُخْفِيَ لَهُم مِّن قُرَّةِ أَعْيُنٍ جَزَاءً بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝

"उनकी पीठें बिस्तरों से अलग रहती हैं। वे अपने रब को डर और लालच के साथ पुकारते हैं और जो कुछ हमने उनको दिया है, उसमें से ख़र्च करते हैं। उनकी आँखों की ठंडक के लिए (अल्लाह के यहाँ) जो छिपाकर रखा गया है, वह किसी प्राणी को नहीं मालूम है। यह बदला है उन कर्मों का जो वे करते थे।" (क़ुरआन, सूरा-32 सजदा, आयतें-16,17)

नमाज़ क़ायम करना और अल्लाह की राह में ख़र्च करना शरीअत की बुनियाद है

नमाज़ और अल्लाह की राह में ख़र्च करने की यह अहमियत इसलिए है कि ये शरीअत के लिए बुनियाद मुहैया करते हैं। इनसे उसकी एक सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था वुजूद में आती है। नमाज़ अल्लाह से

इनसान के लगाव को मज़बूत करती और उसे अल्लाह की इताअत और फ़रमाँबरदारी के लिए तैयार करती है। ज़कात और ख़र्च करना स्पष्ट रूप से आर्थिक मदद का एक रूप है। लेकिन इसके द्वारा इनसान के अन्दर बन्दों के हक़ अदा करने और उनकी परेशानियों में काम आने का जो जज़्बा उभरता है, उसकी बड़ी अहमियत है। इससे सेवा, अच्छा व्यवहार, त्याग, हमदर्दी, भलाई जैसे उच्च नैतिक गुण पलते-बढ़ते हैं। अल्लाह तआला की इबादत और फ़रमाँबरदारी और उसके बन्दों से मन की निर्मलता और भलाई का सम्बन्ध ये दो ऐसे विषय हैं जिनके तहत पूरी शरीअत (इस्लामी जीवन-व्यवस्था) आ जाती है। इन पर ठीक-ठीक आचरण इनसान को इस क़ाबिल बनाता है कि वह पूरे दीन (इस्लाम) पर चल सके। यही कारण है कि क़ुरआन मजीद में दीन और ईमान के जो तक़ाज़े बयान हुए हैं, उनमें नमाज़ और अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना सबसे नुमायाँ हैं। ईमानवालों से उनकी एक समान माँग है। क़ुरआन में कहा गया है—

قُلْ لِّعِبَادِيَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يُقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَيُنْفِقُوْا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا
وَّعَلَانِيَةً مِّنْ قَبْلِ اَنْ يَّاْتِيَ يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيْهِ وَلَا خِلٰلٌ ۝

"कहो मेरे उन बन्दों से जो ईमान लाए हैं कि नमाज़ क़ायम करें और जो कुछ हमने उनको दिया है, उसमें से खुले और छिपे तरीक़े से ख़र्च करें; इससे पहले कि वह दिन आ जाए, जिसमें न तो ख़रीद-बिक्री होगी और न कोई दोस्ती होगी।"

(क़ुरआन, सूरा-14 इबराहीम, आयत-31)

जान-माल की क़ुरबानी पर जन्नत का वादा

धन-दौलत के लिए व्यापारी व्यापार करता है; दुकानदार अपनी दुकान सजाता है; पूँजीपति कारख़ाने और फ़ैक्टरियाँ खोलता है; मज़दूर अपना ख़ून-पसीना बहाता है—अगर ये सारी कोशिशें उचित सीमाओं में हों, तो इस्लाम इससे मना नहीं करता। हाँ, वह यह सच्चाई हमारे सामने

रखता है कि मेहनत से कमाई हुई पूँजी को अगर इनसान अल्लाह तआला के हाथ बेच दे, तो परलोक में उसे जन्नत जैसी दुखों से पाक और हमेशा रहनेवाली सुख की जगह मिलेगी और वह हमेशा ऐश की ज़िन्दगी गुज़ारेगा। जो आदमी उस जन्नत के लिए अपनी जान और अपना माल अल्लाह के हवाले कर दे, वह पक्का ईमानवाला है। अल्लाह का वादा है कि उसके इस त्याग और क़ुरबानी का बदला उसे जन्नत के रूप में मिलेगा—

إِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِاَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ ؕ

"निश्चय ही अल्लाह ने ईमानवालों से उनकी जान और उनके माल जन्नत के बदले ख़रीद लिए हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-111)

इससे बड़ी सफलता और क्या हो सकती है कि इनसान अपना तुच्छ और क्षणभंगुर जीवन, अस्थायी और मिट जानेवाला माल अल्लाह के रास्ते में देकर जन्नत की हमेशा-हमेशा रहनेवाली नेमतों और सदा रहनेवाले ऐश और आराम का हक़दार हो जाए।

अल्लाह की राह में ख़र्च करने पर उभारना

क़ुरआन और हदीस में बार-बार ज़कात की ताकीद की गई है और भलाई के कामों में ख़र्च करने पर उभारा गया है और इसका महत्त्व, पुण्य और प्रतिदान बयान हुआ है। सूरा मुज़्ज़म्मिल के आख़िर में कहा गया है—

وَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاَقْرِضُوا اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا ؕ وَمَا تُقَدِّمُوْا لِاَنْفُسِكُمْ مِّنْ خَيْرٍ تَجِدُوْهُ عِنْدَ اللّٰهِ هُوَ خَيْرًا وَّاَعْظَمَ اَجْرًا ؕ وَاسْتَغْفِرُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

"नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो और अल्लाह को क़र्ज़ दो

अच्छा क़र्ज़ और जो भी नेक अमल तुम अपने लिए आगे भेजोगे, उसे अल्लाह के पास पाओगे कि वह बेहतर और सवाब में बहुत बड़ा होगा। अल्लाह से माफ़ी माँगते रहो। बेशक अल्लाह माफ़ करनेवाला और रहम करनेवाला है।”

(क़ुरआन, सूरा-73 मुज़्ज़म्मिल, आयत-20)

यह इस बात की हिदायत है कि नमाज़ के साथ ज़कात पर अमल हो और नेकी के कामों में ख़ुशी-ख़ुशी दौलत लगाई जाए। नेकी के रास्ते में जो दौलत ख़र्च होती है, वह उस पूँजी से बेहतर है, जिसे इनसान इस दुनिया में छोड़ जाता है; क्योंकि उसका बेहिसाब पुण्य और प्रतिदान अल्लाह के यहाँ मिलनेवाला है।

अल्लाह की राह में ख़र्च करना बड़ा फ़ायदेमन्द सौदा है

ख़ुदा के रास्ते में ख़र्च करना इतने बड़े लाभ का सौदा है कि आदमी आसानी से उसकी कल्पना नहीं कर सकता है। उसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई एक दाना बोए और सात सौ दाने काटे—

مَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْۢبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْۢبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍ ۗ وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَآءُ ۗ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝

“उन लोगों की मिसाल, जो अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करते हैं, ऐसी है जैसे एक दाना (बोया जाए), उससे सात बालें निकलें और प्रत्येक बाल में सौ दाने हों। अल्लाह जिसे चाहता है (इससे भी अधिक) बढ़ाता है। अल्लाह समाईवाला और सब कुछ जाननेवाला है।” (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-261)

इनसान बहुत बड़ा नादान है। वह समझता है कि अल्लाह की राह में ख़र्च करने में उसका अपना घाटा है; हालाँकि यह नुक़सान का नहीं,

बल्कि सरासर लाभ का सौदा है। वह आज जो माल ख़र्च करेगा, कल उसका बेहतरीन बदला उसे मिलेगा॥ यहाँ एक पैसा ख़र्च करेगा, तो बढ़कर दस, बल्कि सात सौ पैसे के रूप में उसके सामने आएगा। यही नहीं, बल्कि कहा, "अल्लाह जिसे चाहेगा, इससे भी बड़ा बदला प्रदान करेगा और अल्लाह समाईवाला और सब कुछ जाननेवाला है।" यानी इनसान ने इस दुनिया में जो कुछ ख़र्च किया है, अल्लाह तआला परलोक में उसका बदला सात सौ गुना से भी अधिक दे सकता है। उसके पास किसी चीज़ की कमी नहीं है। ज़रा सोचिए, जो बदला अल्लाह तआला की तरफ़ से मिले और अधिक बढ़कर मिले उस बदले और बढ़ोत्तरी को किन शब्दों में बयान किया जा सकता है? अल्लाह का जो बन्दा इस बड़े बदले का हक़दार क़रार पाए, कौन है जो उसके सौभाग्य पर रश्क न करे?

> हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) ने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) से पूछा : सदक़े का पुण्य और प्रतिदान क्या है? आप (सल्ल॰) ने बताया : इसका प्रतिदान बढ़ा-चढ़ा कर दिया जाएगा और अल्लाह के पास तो इससे भी ज़्यादा है।[1]

ख़ुशनसीब हैं वे लोग जो अपना माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं और खुले दिल से ख़र्च करते हैं; क्योंकि उनका माल बेहिसाब बढ़ोत्तरी के साथ उनको लौटाया जाएगा और उस समय लौटाया जाएगा, जबकि वे ख़ाली हाथ होंगे और पूँजी के मुहताज होंगे।

अल्लाह की राह में ख़र्च करने से धन-दौलत में बढ़ोत्तरी होती है

दुनिया का सामान्य नियम है कि किसी भी चीज़ के ख़र्च करने से उसमें कमी आ जाती है, लेकिन अल्लाह की राह में माल ख़र्च करने का

---

[1] हदीस : मुसनद अहमद, 5/265।

मामला इससे विपरीत है। यहाँ ख़र्च करने से माल में बरकत और बढ़ोत्तरी होती है। अल्लाह तआला के रास्ते में कोई चीज़ दी जाए, तो वह उसका बेहतर बदला प्रदान करता है—

قُلْ إِنَّ رَبِّي يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَن يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ وَيَقْدِرُ لَهُ ۚ وَمَا أَنفَقْتُم مِّن شَيْءٍ فَهُوَ يُخْلِفُهُ ۖ وَهُوَ خَيْرُ الرَّازِقِينَ ۝

"उनसे कहो : मेरा रब अपने बन्दों में से जिसे चाहता है, रोज़ी में कुशादगी कर देता है और जिसे चाहता है, कम देता है। जो चीज़ भी तुम (अल्लाह की राह में) ख़र्च करोगे, अल्लाह उसका बदला देगा और वह सबसे बेहतर रोज़ी देनेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-34 सबा, आयत-39)

हज़रत अबू-हुरैरा (रजि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

"सदक़े और ख़ैरात से कभी माल में कमी नहीं होती। बन्दा माफ़ी और अनदेखी से काम ले, तो अल्लाह उसकी इज़्ज़त में बढ़ोत्तरी करता है और विनम्रता का रास्ता अपनाए, तो उसे बुलन्द दरजा प्रदान करता है।"[1]

कंजूसी की निन्दा

दुनिया की नज़र में मान-अपमान का मानदण्ड धन-दौलत है। धन-दौलत से यहाँ आदमी का मान-सम्मान ऊँचा होता है। वह सम्माननीय समझा जाता है और उसका आदर-सम्मान किया जाता है, चाहे वह ख़ुदा का आज्ञाकारी हो या उसका बाग़ी और इनकारी। इसका मतलब यह है कि दुनिया उस मान-अपमान से अनजान है, जिसका फ़ैसला कल क़ियामत के दिन होनेवाला है, जबकि वे सब लोग

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-बिर्रि-वस्सिला, बाबु इस्तिहबाबिल-अफ़वि वत्तवाज़ुअ।

अपमानित और निन्दित होंगे, जो दुनिया की धन-दौलत पाकर अल्लाह को भूल गए थे। वहाँ वह पूँजी काम नहीं आएगी, जो जमा की गई है, बल्कि वह पूँजी काम आएगी, जो अल्लाह के रास्ते में ख़र्च कर दी गई। इसी लिए क़ुरआन कहता है—

وَيْلٌ لِّكُلِّ هُمَزَةٍ لُّمَزَةٍ ۝١ الَّذِي جَمَعَ مَالًا وَّعَدَّدَهُ ۝٢ يَحْسَبُ أَنَّ مَالَهُ أَخْلَدَهُ ۝٣
كَلَّا لَيُنْبَذَنَّ فِي الْحُطَمَةِ ۝٤ وَمَا أَدْرَاكَ مَا الْحُطَمَةُ ۝٥ نَارُ اللَّهِ الْمُوقَدَةُ ۝٦ الَّتِي
تَطَّلِعُ عَلَى الْأَفْئِدَةِ ۝٧ إِنَّهَا عَلَيْهِم مُّؤْصَدَةٌ ۝٨ فِي عَمَدٍ مُّمَدَّدَةٍ ۝٩

"तबाही है उस आदमी के लिए जो (आमने-सामने) लोगों पर ताने मारने और (पीठ-पीछे) बुराइयाँ करने का अभ्यस्त है; जिसने माल जमा किया और उसे गिन-गिनकर रखा, वह समझता है कि उसका माल हमेशा उसके पास रहेगा। हरगिज़ नहीं, वह आदमी तो चकनाचूर कर देनेवाली जगह में फेंक दिया जाएगा। और तुम क्या जानो कि क्या है वह चकनाचूर कर देनेवाली जगह? वह अल्लाह की ख़ूब भड़काई हुई आग है, जो दिलों तक पहुँचती। वह उनपर ढाँककर बन्द कर दी जाएगी (इस हालत में कि वे) ऊँचे-ऊँचे स्तम्भों में (घिरे हुए होंगे)।"

(क़ुरआन, सूरा-104 हु-म-ज़ह, आयतें—1-9)

कंजूसी का बुरा अंजाम

इनसान माल पर साँप की तरह कुंडली मारे बैठा रहता है और उसे एक मज़बूत सहारा समझता है, ऐसा सहारा जो मुश्किल में उसके काम आए। हालाँकि क़ियामत के दिन जबकि सबसे ज़्यादा सहारे की ज़रूरत होगी, उसका जमा किया हुआ माल कुछ भी उसके लिए लाभदायक साबित न होगा, बल्कि यह 'सुरक्षित पूँजी' उसके लिए अज़ाब बन जाएगी—

وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۙ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝ يَّوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ ۭ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ۝

"जो लोग सोना और चाँदी जमा करते हैं और उसे अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते, उनको दर्दनाक अज़ाब की ख़ुशख़बरी दे दो। एक दिन आएगा, जबकि उसी सोने और चाँदी को जहन्नम की आग में तपाया जाएगा और उससे उनकी पेशानियों, पहलुओं और पीठों को दाग़ा जाएगा और कहा जाएगा : यह है वह ख़ज़ाना जो तुमने अपने लिए जमा किया था। लो मज़ा चखो इस दौलत का जिसे तुम जमा कर रहे थे।"
(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयतें-34,35)

इस आयत का स्पष्टीकरण हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) की बयान की हुई हदीस से होता है। वे कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

"जो आदमी सोने और चाँदी का मालिक है और वह उसका हक़ अदा नहीं कर रहा है, क़ियामत के दिन उसके माल की तख़्तियाँ बनाई जाएँगी। उनको जहन्नम की आग में तपाया जाएगा और उनसे उसके बाज़ुओं को, उसकी पेशानी और उसकी पीठ को दाग़ा जाएगा। जब वे ठंडी होने लगेंगी तो जहन्नम में फिर गरम की जाएँगी और वे उनसे उसे दाग़े जाते रहेंगे।" (यह सिलसिला जारी रहेगा।)[1]

सफलता उन भाग्यशाली लोगों की प्रतीक्षा में है, जो अल्लाह का दिया हुआ माल उसके के रास्ते में ख़र्च करते हैं। अफ़सोस है उन

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुज़्ज़कात, बाबु इसमि मानिइज़्ज़कात।

अभागों पर जो धन-दौलत के प्रेम में सफलता के द्वार अपने लिए बन्द कर लें।

दीन की दावत और अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना

अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करना दीन का एक महत्त्वपूर्ण आधार है। इसके बिना दीन की कल्पना मुश्किल ही से की जा सकती है। इसके साथ ही दीन की दावत और इसके प्रचार-प्रसार और वर्चस्व के लिए भी इसका बड़ा महत्त्व है। यहाँ इसके कुछ विशेष पहलुओं पर रौशनी डालने की कोशिश की जा रही है—

इनसानों की सेवा और भलाई की कामना करना

दीन की दावत इनसानों के साथ भलाई करने का काम है। इसकी ज़रूरी माँग है कि हर उस आदमी की मदद की जाए, जो इसका हक़दार हो और जिसकी मदद व्यावहारिक रूप से आप कर सकते हैं। दीन की दावत असल में इनसानों को परलोक की यातना से बचाने की कोशिश है। जो आदमी इतनी बड़ी सेवा के लिए उठे, वह मानव-जाति का बहुत बड़ा हितैषी है। अगर वह अपने इस काम में सच्चा है, तो स्वाभाविक रूप से इस दुनिया में भी उनका हितैषी होगा और उनके दुख-दर्द में काम आएगा। जो आदमी इनसानों को कल के अज़ाब से बचाने के लिए बेचैन है, मुमकिन ही नहीं है कि वह आज उनकी तकलीफ़ पर बेचैनी और परेशानी महसूस न करे और उन्हें इससे निकालने की अपनी सी कोशिश न करे। अगर दावत देनेवाले के अन्दर इनसानों की तकलीफ़ पर दया की भावना नहीं उभरती, तो इसका मतलब यह है कि वह अपनी दावत में सच्चा नहीं है। अगर वह दुनियावालों के सामने उनकी भलाई करनेवाले की हैसियत से आएगा, तो अपना एक फ़र्ज़ अदा करेगा और उसकी बातों में एक तरह का आकर्षण और सम्मोहन पैदा हो जाएगा। उसकी दावत को लोग ध्यान से सुनेंगे और उसकी तरफ़ आकर्षित होंगे। इस तरह ख़र्च करने

के द्वारा दावत देनेवाला अपना फ़र्ज़ भी पूरा करेगा और इस दावत के लिए भी रास्ता आसान करेगा, जिसका वह अलमबरदार है।

सफ़र के साथियों के साथ हमदर्दी

दीन की दावत देनेवालों को उन लोगों का ख़याल रखना भी ज़रूरी है, जो उनके साथ मिलकर दावत के काम में एक जमाअत बन गए हैं। उनमें मुहताज और ग़रीब भी होंगे, कमज़ोर और बेसहारा भी होंगे और ऐसे भी होंगे, जो साधनों से वंचित हैं। जमाअत की मज़बूती के लिए ज़रूरी है कि उसके मालदार लोग उन लोगों की मदद करें जिनको इसकी ज़रूरत है, जो अपनी बदहाली के कारण जमाअत की रफ़्तार का साथ नहीं दे पा रहे हैं। जमाअत के अन्दर जो हैसियतवाले लोग हैं और जिनको अल्लाह तआला ने खुशहाली और सम्पन्नता प्रदान की है, उन्हें यह सच्चाई नहीं भूलनी चाहिए कि उनका सम्बन्ध दीन की सेवा करनेवाली जमाअत से है। जमाअत के लोगों के बीच प्यार-मुहब्बत का वह रिश्ता होना चाहिए, जो भाइयों के बीच होता है। उन्हें अपने सफ़र के साथियों के दुख-दर्द में इस तरह शामिल होना चाहिए, जिस तरह परिवार के लोग एक-दूसरे के दुख-दर्द में शामिल होते हैं। जो आदमी इस हाल में ज़िन्दगी गुज़ारे कि उसको अपने साथियों की तकलीफ़ और राहत का ख़याल न हो, तो उसके बारे में यही कहा जाएगा कि उसके अन्दर इज्तिमाइयत (सामूहिकता) का एहसास अभी नहीं उभरा है।

दीन की दावत देनेवालों का सहयोग

इसी तरह उन लोगों का मामला भी है, जो दीन की दावत और उसकी सेवा में लगे हुए हैं। उनके समय दीन के लिए समर्पित हैं। इसी कारण वे अपनी रोज़ी-रोटी की तरफ़ ध्यान नहीं दे पाते। उनके साधन-संसाधन ऐसे नहीं हैं, जो उन्हें रोज़ी-रोटी से निश्चिन्त कर दें। वे किसी के सामने हाथ नहीं फैला सकते कि यह उनके आत्म-सम्मान और

स्वाभिमान के ख़िलाफ़ है।

दावत के काम को जारी रखने के लिए ज़रूरी है कि मालदार और सम्पन्न लोग उनकी ज़रूरतों की चिन्ता करें। उन्हें एकाग्रता मुहैया करें। जब लड़ाई का मैदान गरम हो, तो कुछ लोग लड़ाई के मैदान में अपनी जान लड़ाते हैं। ज़्यादातर वे होते हैं जो जंग के मोर्चे पर नहीं होते; लेकिन उनका सहयोग जान निछावर करनेवालों को हासिल हो, तो उनकी हिम्मत बढ़ती है और वे पूरे जोश के साथ आगे बढ़ना जारी रख सकते हैं। इसके बिना जीत हासिल कर पाना मुश्किल है।

हदीस में आता है कि अल्लाह की राह में जिहाद करनेवाले और उनका सहयोग करनेवाले पुण्य और प्रतिदान में बराबर के साझीदार होंगे। हज़रत ज़ैद-बिन-ख़ालिद (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा–

> "जिसने दीन के लिए किसी जान लड़ानेवाले को साज़ो-सामान से लैस किया, उसने भी जिहाद किया; जिसने किसी जान लड़ानेवाले की अनुपस्थिति में उसके बाल-बच्चों की देख-रेख की और उनकी ज़रूरतें पूरी कीं, तो उसने भी जिहाद किया।"[1]

जिहाद का अर्थ बड़ा व्यापक है। इसमें दीन की दावत और प्रचार-प्रसार भी आता है, बल्कि सबसे पहले आता है। इसी से दीन के वर्चस्व की राहें खुलती हैं। जो लोग दीन की दावत और उसकी सेवा में लगे हुए हैं, वे बहुत बड़ी मुहिम को अंजाम दे रहे हैं। उनका सहयोग करनेवाले भी व्यावहारिक रूप से उसमें शामिल हैं। वे व्यावहारिक रूप से सामने नहीं हैं, लेकिन उनकी सहायता और हिमायत दीन फैलानेवालों को हासिल है। इसलिए उम्मीद है कि अल्लाह के यहाँ पुण्य और प्रतिदान में वे भी शामिल और साझीदार होंगे।

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुलजिहादि वस्सियर, बाबु फ़ज़्लि मन जह्हज़ग़ाज़ियन औ ख़ल्ल-फ़-हु बिख़ैरिन, मुस्लिम, किताबुलजिहाद।

दावत के लिए माली ज़रूरतों की पूर्ति

यह दुनिया साधनों-संसाधनों की दुनिया है। बिना साधन के यहाँ कोई उद्देश्य पूरा नहीं होता। जो आदमी अल्लाह के दीन की दावत लेकर उठे और उसे सफल भी देखना चाहे, तो इसके लिए उसे ज़रूरी साधन-संसाधन भी अपनाने होंगे; उनमें बहुत-से वे साधन-संसाधन भी होंगे, जिनका सम्बन्ध रुपये-पैसे से है। इसके बिना वे मुहैया नहीं हो सकते। अल्लाह का दीन दावत और प्रचार-प्रसार के लिए साधनों-संसाधनों की माँग करता हो और आप ये साधन-संसाधन मुहैया करने की हैसियत में होने के बावुजूद मुहैया न करें, तो यह आपके दीन और ईमान के विरुद्ध कर्म होगा।

इस्लाम के प्रचार-प्रसार और उसका वर्चस्व क़ायम करने की भरपूर कोशिश जिन आर्थिक संसाधनों की माँग करता है, वे अगर मुहैया न हों, तो जमाअत और संगठन कमज़ोर होगा, जो इस उद्देश्य के लिए काम कर रहा है। वह अपनी शक्ति और ऊर्जा खोता चला जाएगा और विरोधी शक्तियाँ अपने संसाधनों के इस्तेमाल से मज़बूत से मज़बूततर होती और ताक़त पकड़ती रहेंगी। यह किसी एक आदमी की नहीं, बल्कि एक जमाअत या संगठन की क्षति है। इसे एक और पहलू से भी देखा जा सकता है। वह यह कि दावत का काम पूरे मुस्लिम समुदाय की ज़िम्मेदारी है। अगर यह अंजाम न पाए, तो पूरा समुदाय बड़े घाटे में पड़ जाएगा। यह अपने हाथों अपनी मौत का सामान करना है। इसी सन्दर्भ में क़ुरआन मजीद ने कहा है—

وَاَنۡفِقُوۡا فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ وَلَا تُلۡقُوۡا بِاَيۡدِيۡكُمۡ اِلَى التَّهۡلُكَةِ ۛۚ وَاَحۡسِنُوۡا ۛۚ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الۡمُحۡسِنِيۡنَ ۝

"और ख़र्च करो अल्लाह के रास्ते में और ख़ुद को अपने हाथों मौत के मुँह में मत डालो और एहसान करो। बेशक अल्लाह एहसान करनेवालों से मुहब्बत करता है।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-195)

आज दुनिया आर्थिक दृष्टि से बहुत उन्नति कर चुकी है। इसके पास किसी भी विचारधारा के फैलाने और उसे सफल और प्रभावी बनाने के इतने व्यापक और शक्तिशाली संसाधन मौजूद हैं, जो इससे पहले कभी नहीं थे। इन संसाधनों को अल्लाह के दीन के प्रचार-प्रसार करने, फैलाने और इसका वर्चस्व क़ायम करने के रास्ते में ख़र्च होना चाहिए। लेकिन अफ़सोस है कि वे नास्तिकता, हक़ के इनकार और बुराई के फैलाने और भलाई के मिटाने में इस्तेमाल हो रहे हैं। आज दीन के किसी भी सेवक में यह शक्ति नहीं है कि साधनों-संसाधनों का रुख़ मोड़ दे और उनको दीन की दावत के रास्ते में लगा दे। हाँ, वह यह कर सकता है कि उसके पास जो भी संसाधन हैं, उनको अल्लाह के दीन के लिए निछावर कर दे। बेशक ये संसाधन बहुत ही कम होंगे। लेकिन अल्लाह तआला ने चाहा, तो उसका दीन इन सीमित साधनों और उपायों के बावुजूद सफल और हक़ का इनकार करनेवाली शक्तियाँ अपने विशाल संसाधनों के बावुजूद असफल होंगी—

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا يُنفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ لِيَصُدُّوا عَن سَبِيلِ
اللَّهِ فَسَيُنفِقُونَهَا ثُمَّ تَكُونُ عَلَيْهِمْ حَسْرَةً ثُمَّ يُغْلَبُونَ

"जिन लोगों ने ख़ुदा का इनकार किया, वे अपना माल ख़ुदा के रास्ते से रोकने के लिए ख़र्च कर रहे हैं; तो वे इसे ख़र्च करेंगे, मगर यह उनके लिए पछतावे का कारण होगा। फिर वे पराधीन होंगे।" (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-36)

एक और अवसर पर कहा गया कि अल्लाह के इनकारी और बाग़ी अपनी प्रतिष्ठा, दिखावा, प्रशंसा और अभिमान की भावना से या अल्लाह के दीन को क्षति पहुँचाने के लिए जो कुछ ख़र्च कर रहे हैं, वह ऐसे बेकार जाएगा जैसे खेती को पाला मार जाए। ये अपनी ग़लत हरकतों से तबाह होंगे और अपने उद्देश्य में कभी सफल न होंगे।

क़ुरआन में कहा गया है—

مَثَلُ مَا يُنْفِقُونَ فِي هَٰذِهِ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا كَمَثَلِ رِيحٍ فِيهَا صِرٌّ أَصَابَتْ حَرْثَ
قَوْمٍ ظَلَمُوا أَنْفُسَهُمْ فَأَهْلَكَتْهُ ۚ وَمَا ظَلَمَهُمُ اللَّهُ وَلَٰكِنْ أَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿١١٧﴾

"जो लोग इस दुनिया की ज़िन्दगी में ख़र्च करते हैं, उसकी मिसाल ऐसी है जैसे हवा में कड़ी ठंडक हो और वह ऐसी क़ौम की खेती को लग जाए, जिसने अपने ऊपर ज़ुल्म किया है और उसे ख़त्म करके रख दे। अल्लाह ने उनके साथ कोई ज़्यादती नहीं की। वे ख़ुद ही अपने ऊपर ज़्यादती कर रहे थे।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-117)

ज़रूरी कामों पर ख़र्च करने की अहमियत

अल्लाह का दीन इस समय बड़े नाज़ुक दौर से गुज़र रहा है। इनसानों पर इसकी पकड़ ढीली पड़ चुकी है। सत्य-विरोधी संगठन और बिगाड़ फैलानेवाली विचारधाराएँ हर तरफ़ फैलती जा रही हैं। ख़ुदा और आख़िरत से बेज़ारी पूरी दुनिया पर छायी हुई है और अल्लाह के दीन को उसके माननेवालों तक ने अपनी ज़िन्दगियों से बेदख़ल कर रखा है। इस हालत में किसी का अपने पैसे से दीन को शक्ति पहुँचाना बड़ा ही मूल्य और महत्त्व रखता है।

आम हालतों में भी अगर कोई आदमी अल्लाह के दीन के लिए कुछ ख़र्च करता है, तो उसका बड़ा अच्छा बदला है। लेकिन इससे कहीं ज़्यादा पुण्य और प्रतिदान का वह उस समय हक़दार होगा, जबकि दीन बेहद अत्याचार-पीड़ित हो और समर्थन और सहायता के लिए उसे पुकार रहा हो। क़ुरआन मजीद ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि जिन लोगों ने मक्का की जीत से पहले अल्लाह के रास्ते में ख़र्च किया और जिन लोगों ने मक्का-विजय के बाद ख़र्च किया दोनों बराबर नहीं हो सकते। पहले वर्ग ने उस समय अपना सहयोग दिया, जबकि अल्लाह के दीन को उसकी बेहद ज़रूरत थी और दूसरे वर्ग का सहयोग उस समय मिला, जबकि इस्लामी राज्य का परचम पूरे हिजाज़ पर लहरा रहा था। क़ुरआन

में कहा गया है—

لَا يَسْتَوِىْ مِنْكُمْ مَّنْ اَنْفَقَ مِنْ قَبْلِ الْفَتْحِ وَقٰتَلَ ؕ اُولٰٓئِكَ اَعْظَمُ دَرَجَةً مِّنَ الَّذِيْنَ اَنْفَقُوْا مِنْۢ بَعْدُ وَقٰتَلُوْا ؕ وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ۝

"तुममें से जिन लोगों ने मक्का-विजय से पहले ख़ुदा के रास्ते में ख़र्च किया और उसके दुश्मनों से लड़े, वे उन लोगों के बराबर नहीं हैं, जिन्होंने मक्का-विजय के बाद ख़र्च किया और दुश्मनों से लड़े। (बल्कि पहले वर्ग का) प्रतिदान दूसरे वर्ग के मुक़ाबले में बहुत ज़्यादा है और हर एक से अल्लाह ने भलाई का वादा किया है और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे बाख़बर है।" (क़ुरआन, सूरा-57 हदीद, आयत-10)

मक्का-विजय के बाद जो लोग ईमान लाए और क़ुरबानियाँ दीं, एक अवसर पर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने उनको सम्बोधित करने हुए कहा—

"मेरे साथियो! (मक्का-विजय से पहले ईमान लानेवालों) की शान में कोई अनुचित बात न कहो। तुममें से कोई उहुद पहाड़ के बराबर सोना ख़र्च कर दे, तो भी उन्होंने एक मुद्द (लगभग एक सेर का पैमाना) या आधा मुद्द जो ख़र्च किया, उसके बराबर नहीं हो सकता।"[1]

कुछ माल ख़र्च करने का हुक्म

क़ुरआन और हदीस में कहीं यह नहीं कहा गया है कि माल का हासिल करना और रखना गुनाह है और न यह हिदायत दी गई है कि

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबु अस्हाबिन्नबी; मुस्लिम, किताबु फ़ज़ाइलिस्सहाबह्, बाबु तहरीमि सब्बिस्सहाबह्।

इनसान अपना पूरा माल अल्लाह की राह में ख़र्च करे, बल्कि अपने माल का एक हिस्सा अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने का हुक्म है। ईमानवालों की यह ख़ूबी क़ुरआन मजीद में बहुत-सी जगहों पर बयान हुई है–

وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ۝

"और जो कुछ हमने दिया है, उसमें से वे ख़र्च करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-3)

इसमें सबसे पहले तो ज़कात आती है। वाजिब सदक़ों का भी यही हुक्म है। जब कोई सदक़ा शरीअत की नज़र में वाजिब हो जाए, तो उसका अदा करना ज़रूरी है। इसी तरह बीवी-बच्चों और सम्बन्धित लोगों का खाना-ख़र्च भी इसमें शामिल है। उनकी भौतिक ज़रूरतों का पूरा करना और उनके माली हक़ों का अदा करना ज़रूरी है।

अल्लाह के रास्ते में धन-दौलत लुटानेवाले

इनसान जब अल्लाह के हुक्म से अपना माल उन मदों में ख़र्च करता है, जो फ़र्ज़ और वाजिब हैं, तो उनके अन्दर उन मदों पर भी ख़र्च करने का जज़्बा उभरता है जो फ़र्ज़ नहीं हैं। वह फ़र्ज़ के अदा कर देने ही पर सन्तुष्ट नहीं होता, बल्कि नफ़्ल के पूरा करने का लाभ भी प्राप्त करना चाहता है। वह ख़र्च करने का कोई मौक़ा बरबाद नहीं करता, बल्कि हर उस मौक़े पर अपनी दौलत ख़र्च करने के लिए तैयार हो जाता है, जब अल्लाह का दीन उससे ख़र्च की माँग करे। इस तरह आदमी अपनी थोड़ी-सी दौलत देकर इस बात का एलान करता है कि उसकी पूरी दौलत अल्लाह की है और जब भी उसके दीन को ज़रूरत होगी, वह बेझिझक उसके लिए ख़र्च होगी। अगर यह जज़्बा किसी के अन्दर उभर आए, तो उसके लिए नामुमकिन नहीं है कि अपना सब कुछ अल्लाह की राह में लुटा दे और ख़ाली हाथ घर चला आए। इसके

उदाहरण इस्लामी इतिहास में मौजूद हैं। हज़रत उमर (रज़ि॰) कहते हैं (तबूक़ की लड़ाई के मौक़े पर) कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने हम लोगों को अल्लाह की राह में ख़र्च करने का हुक्म दिया। उस समय मेरे पास सौभाग्य से काफ़ी माल मौजूद था। मैंने सोचा कि आज, बस! अबू-बक्र (रज़ि॰) से बाज़ी ले जाने का मौक़ा है। इसी लिए मैं अपना आधा माल लेकर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) की ख़िदमत में पहुँच गया। आपने पूछा कि घरवालों के लिए क्या छोड़ा है? मैंने कहा : इतना ही उनके लिए भी छोड़ आया हूँ। लेकिन हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) अपना पूरा ही माल लेकर हाज़िर हो गए। आप (सल्ल॰) ने उनसे भी यही पूछा कि घरवालों के लिए क्या छोड़ा है। उन्होंने कहा कि उनके लिए अल्लाह और पैग़म्बर (सल्ल॰) को छोड़ आया हूँ। इसपर मैंने कहा कि अबू-बक्र (रज़ि॰) से मैं किसी मामले में आगे नहीं बढ़ सकता।[1] तबूक की लड़ाई ही के मौक़े पर अल्लह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने अल्लाह की राह में ख़र्च करने पर उभारा, तो हज़रत उसमान (रज़ि॰) खड़े हुए और कहा : ऐ अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰), मेरे ज़िम्मे सौ ऊँट हैं। मैं उन्हें पीठ पर डाले जानेवाले कपड़ों और कजावों के साथ मुहैया करूँगा। दोबारा आप (सल्ल॰) ने प्रेरित किया, तो हज़रत उसमान (रज़ि॰) खड़े हुए और कहा कि मैं इस तरह के दो सौ ऊँट की ज़िम्मेदारी लेता हूँ। इसके बाद अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने और उभारा, तो हज़रत उसमान (रज़ि॰) ने कहा : मैं तीन सौ ऊँट की ज़िम्मेदारी लेता हूँ। हदीस के रावी (उल्लेखकर्ता) हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-ख़ब्बाब (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) मिम्बर से यह कहते हुए उतरे कि इसके बाद उसमान कुछ भी करें, उन्हें कोई नुक़सान न होगा। (यानी इसके बाद उनसे कोई ग़लती हो भी जाए, तो

[1] हदीस : सुनन अबी-दाऊद, किताबुज़्ज़कात, बाबुर्रुख़्सति-फ़ी ज़ालिक; जामिउत्तिरमिज़ी, किताबुलमनाक़िब।

अल्लाह तआला इस महान सेवा के बदले में उन्हें माफ़ कर देगा।)[1]

अब्दुर्रहमान-बिन-अबू-समरा (रज़ि॰) इस लड़ाई का ज़िक्र करते हैं कि हज़रत उसमान (रज़ि॰) अपनी आस्तीन में एक हज़ार दीनार लाए और अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) के दामन में डाल दिए। मैंने देखा कि आप (सल्ल॰) उन्हें उलट-पलट रहे थे और बार-बार कह रहे थे कि उसमान आज के बाद कुछ भी करें, उन्हें नुक़सान न होगा।[2]

---

[1] हदीस : जामिउत्तिरमिज़ी, अबवाबुल-मनाक़िब, बाबु फ़ी मनाकिबि उसमानिबनि-अफ़्फ़ान।

[2] उपर्युक्त; मुसनद अहमद, 5/63।

क़ुरबानी

इनसानों का भला चाहनेवाले क़ुरबानी देते हैं

दुनिया में जो लोग मानव-जाति पर किसी तरह का उपकार करते हैं, वे हम ही जैसे इनसान होते हैं। हमारी ही जैसी भावनाएँ और सम्वेदनाएँ रखते हैं। उनकी भी इच्छाएँ होती हैं। उनको भी जान-माल से प्रेम और लगाव होता है। लेकिन वे इसलिए मानव-उपकारक समझे जाते हैं कि वे उनके हित के लिए अपनी भावनाओं और सम्वेदनाओं की निरन्तर क़ुरबानी देते रहते हैं। वे ख़ुद को मिटा देते हैं, ताकि दूसरे ज़िन्दगी पा सकें। उनका सीना ज़ुल्म के तीरों से छलनी हो जाता है और वे ख़ुशी-ख़ुशी ज़ुल्म सहते हैं, ताकि उन्हीं की हस्ती पर दुनिया का सारा ज़ुल्म ख़त्म हो जाए और उनके बाद कोई किसी पर ज़ुल्म न कर सके। वे भूखे रहते हैं और ग़रीबी और भुखमरी उनकी शक्तियों को कमज़ोर कर देती है; ताकि दुनिया ग़रीबी और भूख-प्यास से सुरक्षित रहे।

इस्लाम की दावत क़ुरबानी चाहती है

जब हम इस्लाम की दावत के लिए उठे हैं, तो इसका मतलब यह है कि हम मानव-जाति के साथ सबसे बड़ी भलाई का इरादा रखते हैं। यह बड़ा काम सही अर्थों में उसी समय अंजाम पाएगा, जबकि हम इसके पीछे अपने-आपको घुला दें। इसके लिए अपने सुख-चैन और आराम को, अपने समय और ज़िन्दगी के पलों को, अपने माल और दौलत को यानी हर उस चीज़ को क़ुरबान कर दें, जिसके हम मालिक

हैं। इसके बिना इस काम का हक़ न पहले अदा हुआ है और न अब अदा हो सकेगा।

मुश्किल हालात में भी दावत जारी रहे

यह बात बार-बार आपके सामने आ चुकी है कि जिस दीन (इस्लाम) को आपने हक़ समझकर स्वीकार किया है, उसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है। इसे हर हालत में दूसरों तक पहुँचाना है। हक़ को मानने के बाद कोई चीज़ उसकी अभिव्यक्ति में बाधक नहीं होनी चाहिए, वरना यह अपनी कायरता का प्रमाण और हक़ के साथ बहुत बड़ा अत्याचार और अन्याय होगा। आप ख़ुदा के दीन की जब दावत देनेवाले हैं, तो आपकी पूरी ज़िन्दगी दावत देनेवाले की हैसियत से बसर होनी चाहिए। आपकी दावत सुनने के लिए जब तक दुनिया में इनसान मौजूद हैं आप उनको ख़ुदापरस्ती की दावत देते रहेंगे, चाहे उसमें आपका सब कुछ छिन जाए और आपपर अत्याचार और उत्पीड़न का आलम छा जाए, यहाँ तक कि आप के शरीर और प्राण का वह रिश्ता भी कट जाए, जिसका कटना दुनिया के हर आदमी को नागवार गुज़रता है। ख़ुदा न करे, अगर कभी वह समय भी आ जाए कि आप आज़ादी से, जो आपका स्वाभाविक और क़ानूनी अधिकार है, वंचित कर दिए जाएँ और आपको सच बात कहने की इजाज़त न हो या आपके और ख़ुदा के बन्दों के बीच क़ैदो-बन्द की दीवारें खड़ी हो जाएँ, तो आपके सामने यूसुफ़ (अलैहि॰) का नमूना होना चाहिए, जो बताता है कि जेल भी हक़ के बुलावे के रास्ते में रुकावट नहीं बन सकती। आपको इसी नमूने पर अमल करना होगा। हज़रत यूसुफ़ (अलैहि॰) से उनकी आज़ादी छीन ली गई और क़ैद कर दिया गया, तो जेल का वातावरण भी हक़ की दावत से गूँजने लगा। अगर आज़ाद इनसानों तक उनकी आवाज़ नहीं पहुँच सकती थी, तो अपराधी क़ैदियों को ही उन्होंने अपना पैग़ाम सुनाना शुरू कर दिया—

يٰصَاحِبَيِ السِّجْنِ ءَاَرْبَابٌ مُّتَفَرِّقُوْنَ خَيْرٌ اَمِ اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ۝ مَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖٓ اِلَّآ اَسْمَآءً سَمَّيْتُمُوْهَآ اَنْتُمْ وَاٰبَآؤُكُمْ مَّآ اَنْزَلَ اللّٰهُ بِهَا مِنْ سُلْطٰنٍ ۭ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ ۭ اَمَرَ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ ۭ ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝

"ऐ जेल के साथियो! बताओ, क्या बहुत-से अलग-अलग रब बेहतर हैं या वह ख़ुदा जो अकेला है और सबपर प्रभुत्व रखता है? उस ख़ुदा को छोड़कर तुम जिनकी बन्दगी करते हो, वे तो केवल कुछ नाम हैं, जो तुमने और तुम्हारे बाप-दादा ने रख लिए हैं। अल्लाह ने उनके पक्ष में कोई प्रमाण नहीं उतारा है। शासन-सत्ता तो केवल ख़ुदा के लिए है। उसका हुक्म है कि तुम उसके सिवा किसी की बन्दगी न करो। यही सीधा तरीक़ा है बन्दगी का। लेकिन ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-12 यूसुफ़, आयतें—39-40)

क़ुरबानी से दीन का वर्चस्व क़ायम होगा

आपके सामने बहुत बड़ा लक्ष्य है। आप इस ज़मीन पर ख़ुदा का का राज देखना चाहते हैं। इतने बड़े लक्ष्य को आप उसी समय प्राप्त कर सकते हैं, जबकि आप अपनी ज़िन्दगी की सारी पूँजी उसमें लगा दें और उन सारी व्यस्तताओं और गतिविधियों से आज़ाद हो जाएँ, जो इस लक्ष्य के रास्ते में रुकावट हैं। जिस दिन आपकी ये क़ुरबानियाँ अपनी आख़िरी हद को पहुँच जाएँगी, यक़ीन है कि उसी दिन हक़ की कामयाबी के लक्षण भी उभरने लगेंगे। गरमी जब हद से बढ़ जाती है और ज़मीन तपने लगती है, तो बारिश होती है। रात का अन्धेरा जब अपनी जवानी को पहुँच जाता है, तो सुबह के आसार नज़र आने लगते हैं। अगर परिस्थितियाँ गम्भीर हैं तो इनसे निराश और भयभीत होने की ज़रूरत नहीं है। परिस्थितियों की गम्भीरता हमेशा इस बात की तरफ़

इशारा करती है कि अब क्रान्ति आनेवाली है और परिस्थितियाँ बदलनेवाली हैं। ऐसा बहुत हुआ है और अब भी हो सकता है कि अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में हक़ की आवाज़ बुलन्द हुई और परिस्थितियों के ख़िलाफ़ लड़ते हुए कामयाबी के मक़ाम तक पहुँच गई। विरोधों के तूफ़ान उठे और गुज़र गए, लेकिन इसको मिटा न सके। क्या आप नहीं देखते कि यूसुफ़ (अलैहि०) मिस्र के क़ैदख़ाने की अन्धेरी कोठरी से हुकूमत के तख़्त पर पहुँचा दिए गए। मूसा (अलैहि०) की क़ौम अपनी कमज़ोरी और बेबसी के बाद 'पाक भूमि' की वारिस बनाई गई और मुहम्मद (सल्ल०) को सत्य-विरोधी अत्याचार और उत्पीड़न ने मक्का छोड़ने पर मजबूर कर दिया, लेकिन पूरे दस साल भी गुज़रने न पाए थे कि हक़ की कामयाबी का कलमा बुलन्द करते हुए आप (सल्ल०) काबा की पवित्र हद में दाख़िल हुए—

لَا إِلَٰهَ إِلَّا اللهُ وَحْدَهُ، أَنْجَزَ وَعْدَهُ، وَنَصَرَ عَبْدَهُ، وَهَزَمَ الْأَحْزَابَ وَحْدَهُ،

"अकेले ख़ुदा के सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है। उसने अपना वादा पूरा किया। अपने बन्दे की मदद की और अकेले हक़ के दुश्मनों की सारी सेनाओं को हरा दिया।"[1]

ये हक़ के ऐतिहासिक उदाहरण हैं। अगर आपके अन्दर परिस्थितियों से लड़ने का साहस है, तो ये उदाहरण आज भी दोहराए जा सकते हैं। यहाँ सफलता कठिन परिस्थितियों में कार्य करनेवालों के लिए लिखी जा चुकी है। अगर आप यह फ़ैसला कर चुके हैं कि हक़ के लिए जीना और मरना है और हक़ के लिए आप अपना सब कुछ लुटा सकते हैं, तो वह दिन दूर नहीं, जबकि आप ख़ुदा की ज़मीन पर अपनी आँखों से महान सफलता का वह दृश्य भी देख लें, जो देखना चाहते हैं—

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-हज्ज, बाबु हज्जतिन्नबी (सल्ल०)।

وَأُخْرٰى تُحِبُّوْنَهَا ۖ نَصْرٌ مِّنَ اللّٰهِ وَفَتْحٌ قَرِيْبٌ ۗ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝

"अल्लाह तआला जन्नत के सिवा एक दूसरी चीज़ भी तुम्हें देगा, जिसे तुम चाहते हो और वह है अल्लाह की मदद और 'निकटतम जीत' और तुम ईमानवालों को ख़ुशख़बरी दे दो।"

(क़ुरआन, सूरा-61 सफ़्फ़, आयत-13)

निरन्तर प्रयासों से ही नतीजे निकलेंगे

यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि यह दुनिया अमल की दुनिया है। यहाँ अमल के बाद ही उसका नतीजा सामने आता है। बिना अमल के नतीजे की उम्मीद नहीं की जा सकती। अगर आपने अमल छोड़ दिया और हाथ पर हाथ धरकर बैठ गए, तो मानो नतीजे का दरवाज़ा बन्द कर दिया। कोशिश और सतत् प्रयास के बाद तो हक़ कामयाब हो सकता है। लेकिन सतत् प्रयास के बिना वह कभी कामयाब नहीं हो सकता। हक़ के रास्ते में जब आपकी कोशिश अपनी सारी शर्तें पूरी कर देगी, तो अल्लाह के क़ानून के तहत अपने नतीजे भी ज़रूर पैदा करेगी। बहुत-से काम ऐसे होते हैं, जिनके नतीजे तुरन्त प्रकट हो जाते हैं। लेकिन कुछ काम अपने नतीजों के प्रकट होने के लिए एक लम्बी मुद्दत चाहते हैं। इन कामों के अंजाम देने के लिए ज़रूरी है कि आदमी का हौसला इन्तिहाई बलन्द हो। वह जल्दबाज़ी न करे और वह सब्र और जमाव का रवैया अपनाए। अगर आप हक़ की दावत की शुरुआत कर चुके हैं, तो इसके साथ ही उसकी कामयाबी का बीज भी बो चुके हैं। अब अपने जिगर का ख़ून उसपर छिड़क दीजिए। यक़ीन है कि यह बीज बेकार न जाएगा। देर-सवेर अपना फल ज़रूर लाएगा और उसके फल से वंचित नहीं रहेंगे—

فَلْيُقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يَشْرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ ۭ وَمَنْ يُّقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ اَوْ يَغْلِبْ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ۝

"जिन लोगों ने अपनी दुनिया की ज़िन्दगी को परलोक के बदले बेच दिया है, उन्हें ख़ुदा की राह में लड़ना चाहिए। जो आदमी ख़ुदा की राह में लड़े, चाहे वह मारा जाए या जीत जाए, हम उसको ज़रूर बड़ा बदला देंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-74)

यह बात जिहाद के बारे में कही गई है। इसी पर दीन की दावत और दीन के प्रभावी होने के सतत् प्रयास को समझा जा सकता है; क्योंकि यह भी एक तरह का जिहाद ही है।

आज दीन क़ुरबानी चाहता है

आज ख़ुदा का दीन बेहद मज़लूम (अत्याचार-पीड़ित) है। वह आपकी मदद चाहता है। वह आपकी उम्दा सलाहियतें चाहता है। वह आपका बेहतरीन समय और माल चाहता है। वह आपकी नींद, आपकी राहत और आपका सुकून चाहता है। वह दिन बड़ा शुभ दिन होगा, जब कि हम दीन की इस माँग को पूरा करने का फ़ैसला करेंगे। समय तेज़ी से गुज़र रहा है और मौत हर आदमी के पीछे लगी हुई है। नहीं मालूम कल जो सूरज उगनेवाला है, वह हममें से किसको कहने और किसको सुनने के लिए बाक़ी रखे। ख़ुशनसीब है वह जो अपने आज को कल के इन्तिज़ार में बरबाद न करे और इससे पहले कि मौत उससे फ़ैसले का अधिकार छीन ले, दीन के समर्थन और सहयोग के लिए खड़ा हो जाए।

मन की निर्मलता दीन की रूह है

निर्मलता दीन की रूह है। कोई चीज़ मैल-कुचैल और मिलावट से साफ़ कर दी जाती है, तो निर्मल हो जाती है। दीन भी ग़लत विचारों और ख़यालों, ग़लत भावनाओं और कारकों की गन्दगियों से पाक-साफ़ हो तो वह शुद्ध रहता है, वरना कभी-कभी उसकी शक्ल और सूरत और बनावट भी बिगड़ जाती है और वह ज़रूर ही अपनी सच्ची रूह खो देता है। 'मन की निर्मलता' में किसी चीज़ को चुनने और पसन्द करने का यह अर्थ भी है कि अल्लाह का सच्चा बन्दा वह है, जो अपने विचार और कर्म में उसकी हिदायतों का पाबन्द और उसकी प्रसन्नता प्राप्त करने का इच्छुक हो। उसके सिवा कोई दूसरा उद्देश्य उसका न हो। अल्लाह का प्यारा बन्दा वह है, जिसे अल्लाह तआला ख़ास कर ले। उसे वैचारिक और व्यावहारिक हर तरह की गन्दगियों से पाक कर दे और अपनी मेहरबानियों का हक़दार ठहरा दे। इसी पहलू से क़ुरआन मजीद में पैग़म्बरों को 'मुख़्लसीन' (चुना हुआ बन्दा) कहा गया है।

आस्था की निर्मलता

मन की निर्मलता आस्था और कर्म दोनों में ज़रूरी है। आस्था की निर्मलता यह है कि आदमी एकेश्वरवादी हो; अल्लाह तआला को केवल एक और अकेला माने; उसकी हस्ती, उसके गुणों और कामों में किसी को उसका साझीदार और शरीक न ठहराए। क़ुरआन मजीद का मूल आधार ही एकेश्वरवाद है। इसी धुरी के चारों तरफ़ इसकी सभी शिक्षाएँ घूमती हैं। उसने एकेश्वरवाद की इतनी स्पष्ट और विशुद्ध अवधारणा प्रस्तुत की है कि बहुदेववाद के लिए कोई गुंजाइश नहीं रह

गई है। वह पूरी स्पष्टता और शक्ति के साथ बार-बार एलान करता है—

وَإِلَٰهُكُمْ إِلَٰهٌ وَاحِدٌ ۖ لَّا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الرَّحْمَٰنُ الرَّحِيمُ

"तुम्हारा पूज्य-प्रभु एक ही पूज्य-प्रभु है। उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। वह बड़ा मेहरबान और रहम करनेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-163)

आयतलकुर्सी क़ुरआन मजीद की सबसे महत्त्वपूर्ण आयत है। इसका आरम्भ इन शब्दों से होता है—

اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ

"अल्लाह कि उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। वह ज़िन्दा है और सबको थामे हुए है।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-255)

तौहीद (ईश्वर के एक होने) की गवाही अल्लाह का पैदा किया हुआ पूरा विश्व दे रहा है। इस व्यवस्था को चलानेवाले फ़रिश्ते और बुद्धि-विवेक रखनेवाले ज्ञानी और चिन्तक दे रहे हैं—

شَهِدَ اللَّهُ أَنَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ وَالْمَلَائِكَةُ وَأُولُو الْعِلْمِ قَائِمًا بِالْقِسْطِ ۚ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ

"अल्लाह ने गवाही दी है कि उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है और फ़रिश्तों ने और ज्ञानियों ने भी यही गवाही दी है। अल्लाह वह है जो न्याय और सच्चाई को क़ायम किए हुए है। उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-18)

सूरा इख़लास में अल्लाह के एक होने के एलान के साथ बहुदेववादी विचारधाराओं का खण्डन भी है। कहा गया है कि अल्लाह

की हस्ती सबसे महान और बढ़कर है और हर तरह की ज़रूरतों से पाक है। सब उसके अधीन और मुहताज हैं। वह सबका सहारा और संरक्षक है। उसका कोई परिवार नहीं, जिसमें ख़ुदाई का सिलसिला चल रहा हो। वह आदि और अन्त, यकता और अकेला है, कोई उस जैसा नहीं है—

قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ۝ اَللّٰهُ الصَّمَدُ ۝ لَمْ يَلِدْ وَلَمْ يُوْلَدْ ۝ وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ ۝

"कह दो : अल्लाह एक है। अल्लाह बेनियाज़ (निरपेक्ष) है। उसने किसी को नहीं जना और न किसी ने उसे जना (उसका बाप या बेटा नहीं है) और न कोई उसका समकक्ष और साझीदार है।" (क़ुरआन, सूरा-112 इख़लास, आयतें—1-4)

अल्लाह की हस्ती में वे सारी ख़ूबियाँ और कमाल हैं, जिनकी हम कल्पना कर सकते हैं। सारे अच्छे नाम उसी के हैं। ये उसकी ख़ूबियाँ हैं। उसका हर नाम उसकी किसी ख़ूबी को प्रकट करता है—

اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۭ لَهُ الْاَسْمَاۗءُ الْحُسْنٰى

"वह अल्लाह है। उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं है, उसके लिए सारे अच्छे नाम हैं।" (क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयत-8)

एक और जगह कहा गया है—

قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ ۭ اَيًّا مَّا تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَاۗءُ الْحُسْنٰى

"कहो : उसे अल्लाह के नाम से पुकारो या रहमान के नाम से पुकारो; जिस नाम से पुकारो, सब अच्छे नाम उसी के हैं।"
(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-110)

अल्लाह तआला की हस्ती हर तरह की ख़ामियों और ऐबों से पाक-साफ़ है। बहुदेववादियों ने अल्लाह को उसके द्वारा पैदा की गई चीज़ों पर कल्पित करके वे सारी कमज़ोरियाँ उसकी तरफ़ सम्बद्ध कर

दी गई हैं, जो उनमें पाई जाती हैं। अल्लाह की हस्ती इन सबसे पाक, बढ़कर और उच्चतर है—

سُبْحٰنَ رَبِّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ رَبِّ الْعَرْشِ عَمَّا يَصِفُوْنَ ۝

"पाक है आसमान और ज़मीन का रब और अर्श का रब उन बातों से जो ये बयान करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-43 ज़ुख़रुफ़, आयत-82)

एक और जगह कहा गया है—

سُبْحٰنَ رَبِّكَ رَبِّ الْعِزَّةِ عَمَّا يَصِفُوْنَ ۝ وَسَلٰمٌ عَلَى الْمُرْسَلِيْنَ ۝ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝

"पाक है तुम्हारा रब, जो इज़्ज़तवाला और प्रभुत्त्वशाली है, उन बातों से जो ये बयान करते हैं और सलामती है पैग़म्बरों पर। सारी प्रशंसा है अल्लाह के लिए, जो सारे जहान का पालनहार है।" (क़ुरआन, सूरा-37 साफ़्फ़ात, आयतें—180-182)

सच्ची बात यह है कि अल्लाह के पैग़म्बरों के ज़रिए एकेश्वरवाद की जो शिक्षा मिली है, वही हक़ है। उसी में सलामती और मुक्ति है। जो बहुदेववाद का रास्ता अपनाए, उसकी मुक्ति का कोई उपाय नहीं है।

एकेश्वरवाद की धारणा को मानने की अनिवार्य शर्त यह है कि इस बात पर सच्चे दिल से ईमान हो कि अल्लाह तआला की हस्ती सदा से है और सदा रहनेवाली है। वह जीवन्त सत्ता है। वह ज़मीन, आसमान और सम्पूर्ण जगत् का बनानेवाला है। वही इसका मालिक है। यहाँ की हर चीज़ उसी की मिल्कियत है। वही इस जगत् का नियन्ता और संचालक है। वही इसे चला रहा है। वह सारे जहान का पालनहार और सारी सृष्टि का मालिक है। वही सबको रोज़ी देनेवला, सबकी ज़रूरतें पूरी करनेवाला और मुसीबतों को दूर करनेवाला है। वही ज़िन्दगी और

मौत का मालिक है। वही सब कुछ जाननेवाला और सबकी ख़बर रखनेवाला और खुली-छिपी हर चीज़ का जाननेवाला है। वह मेहरबान और दयालु है। हानि-लाभ उसी के हाथ में है। वह जिसे लाभ पहुँचाना चाहे, उसे कोई हानि नहीं पहुँचा सकता; जिसे हानि पहुँचाना चाहे, उसे कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता। उसकी शक्ति और सत्ता अनन्त हैं। वह जो चाहे, पल भर में हो जाता है। उसके फ़रिश्ते सृष्टि (कायनात) में हर जगह मौजूद हैं और बिना किसी आनाकानी के उसके आदेश के पालन में लगे हुए हैं। वह जीवन-विधान का बनानेवाला है। वही अस्ल बादशाह और सर्वशक्तिमान शासक है। उसने इनसानों की हिदायत के लिए पैग़म्बर भेजे; किताबें उतारीं; अपने आदेश और फ़रमान भेजे। मुहम्मद (सल्ल॰) अल्लाह के आख़िरी पैग़म्बर और क़ुरआन मजीद उसकी आख़िरी किताब है। उसमें क़ियामत तक सारे इनसानों के लिए हिदायत का सामान है। वह इनसाफ़ करनेवाला, हिसाब लेनेवाला और सारे अधिकारों का रखनेवाला है। उसके हुक्म से एक दिन क़ियामत बरपा होगी और हर इनसान को उसके कर्म के अनुसार (प्रलय में) पुरस्कार या दण्ड मिलेगा।

एक अल्लाह पर ईमान लाने के बाद इस तरह की उन सारी ख़ूबियों को अवश्य ही मानना होगा, जो क़ुरआन मजीद में बयान हुई हैं और यह भी मानना होगा कि उन ख़ूबियों की मालिक अल्लाह के सिवा कोई दूसरी हस्ती नहीं है। वह अपनी हस्ती और ख़ूबियों में अकेला और उसका कोई साझीदार नहीं है। इसी से आदमी के ईमान में निर्मलता पैदा होगी।

कर्म की निर्मलता

यही निर्मलता इबादत में भी अनिवार्य है। इसमें ख़ुदा के साथ किसी को साझीदार बनाने को इस्लाम गवारा नहीं करता। बहुत ही वाज़ेह तौर पर कहा गया है—

إِنَّآ أَنزَلْنَآ إِلَيْكَ ٱلْكِتَٰبَ بِٱلْحَقِّ فَٱعْبُدِ ٱللَّهَ مُخْلِصًا لَّهُ ٱلدِّينَ ۝٢

"बेशक हमने आप पर हक़ के साथ किताब उतारी है। इसलिए आप अल्लाह की इबादत उसी के लिए दीन को ख़ालिस (विशुद्ध) करके कीजिए।" (क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-2)

सूरा ज़ुमर के शुरू ही में यह आयत आई है। इसी सूरा में कुछ आगे चलकर अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) को मन की इसी निर्मलता के एलान की हिदायत है—

قُلْ إِنِّىٓ أُمِرْتُ أَنْ أَعْبُدَ ٱللَّهَ مُخْلِصًا لَّهُ ٱلدِّينَ ۝١١ وَأُمِرْتُ لِأَنْ أَكُونَ أَوَّلَ ٱلْمُسْلِمِينَ ۝١٢ قُلْ إِنِّىٓ أَخَافُ إِنْ عَصَيْتُ رَبِّى عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيمٍ ۝١٣ قُلِ ٱللَّهَ أَعْبُدُ مُخْلِصًا لَّهُۥ دِينِى ۝١٤

"आप कह दीजिए कि मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं अल्लाह की इबादत उसी के लिए दीन (इताअत) को ख़ालिस (विशद्ध) करते हुए करूँ और मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं सबसे पहला आज्ञाकारी बनूँ। कह दीजिए कि अगर मैं अपने रब की नाफ़रमानी करूँ तो मुझे बड़े दिन (क़ियामत) के अज़ाब का डर है। कह दीजिए कि मैं तो अल्लाह की इबादत अपने दीन (इताअत) को उसके लिए ख़ालिस करते हुए करता हूँ।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयतें—11-14)

इन आयतों में हुक्म है अल्लाह तआला की इबादत का, इस बात का कि सिर्फ़ अल्लाह तआला की इबादत और बन्दगी हो। उसकी बड़ाई, बुज़ुर्गी और प्रभुत्व की कल्पना दिल-दिमाग़ पर छाई रहे। उसके सामने विनम्रता और बेचारगी अपनाई जाए। उसके लिए नमाज़, सजदा, क़ुरबानी, दुआ, ज़िक्र और गुण-गान हो। साथ ही यह हुक्म भी है कि उसी की बन्दगी और फ़रमाँबरदारी हो। उसी के आदेशों और हिदायत पर अमल किया जाए। उसकी उतारी हुई शरीअत (जीवन-विधान) की

पाबन्दी की जाए। उससे वह सम्बन्ध हो जो बन्दा और ख़ुदा, ग़ुलाम और आक़ा का होता है। इसी का नाम दीन (इताअत) है। इख़लास (हृदय की निर्मलता) यह है कि पूरा दीन अल्लाह तआला के लिए हो जाए। वह हर तरह की मिलावट से पाक हो। इसमें अल्लाह के अलावा किसी का कण भर भी हिस्सा न रहे। इसी कारण क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला की इबादत के हुक्म के साथ किसी को उसका साझीदार ठहराने से दूर रहने की हिदायत है। कहा गया है—

وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْـًٔا

"और अल्लाह की इबादत करो और किसी चीज़ को उसके साथ शरीक न करो।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-36)

इस्लाम की जहाँ यह माँग है कि अल्लाह तआला की इबादत हो, वहीं इसपर ज़ोर देता है कि इस जगत् की किसी भी छोटी-बड़ी चीज़ को उसका साझी न ठहराया जाए। अल्लाह के साथ किसी को साझी ठहराने का मतलब ही यह है कि इबादत उसके लिए विशुद्ध न होगी। तौहीद (एकेश्वरवाद) की सीधी-सीधी और ज़रूरी शर्त यह है कि बन्दगी और इबादत केवल अल्लाह की हो। किसी दूसरे की इसमें बिलकुल ही साझेदारी न हो—

اَنَّمَاۤ اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۚ فَمَنْ كَانَ يَرْجُوْا لِقَآءَ رَبِّهٖ فَلْيَعْمَلْ عَمَلًا صَالِحًا وَّلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّهٖۤ اَحَدًا ﴿۱۱۰﴾

"बेशक तुम्हारा पूज्य-प्रभु मात्र एक पूज्य-प्रभु है। इसलिए जो आदमी अपने पालनहार से मिलने की आशा रखता है, वह अच्छे कर्म करे और अपने रब की इबादत में किसी को साझीदार न ठहराए।" (क़ुरआन, सूरा-18 कहफ़, आयत-110)

इस्लाम अक़ीदा और इबादत में कण भर शिर्क की किसी मिलावट को भी बरदाश्त नहीं करता। तौहीद का दामन जिसके हाथ से छूट गया

और जिसने शिर्क से अपना रिश्ता जोड़ लिया वह जहन्नम की राह पर चल पड़ा और अल्लाह के क्षमादान से हमेशा के लिए वंचित हो गया–

إِنَّ اللَّهَ لَا يَغْفِرُ أَنْ يُشْرَكَ بِهِ وَيَغْفِرُ مَا دُونَ ذَٰلِكَ لِمَنْ يَشَاءُ ۚ وَمَنْ يُشْرِكْ بِاللَّهِ فَقَدِ افْتَرَىٰ إِثْمًا عَظِيمًا ﴿٤٨﴾

"बेशक अल्लाह माफ़ नहीं करेगा इस गुनाह को कि उसके साथ किसी को साझी ठहराया जाए; इसके अलावा जो दूसरे गुनाह हैं अगर वे हो जाएँ तो जिसे अल्लाह माफ़ करना चाहे, माफ़ कर देगा। जो अल्लाह के साथ शिर्क करे, उसने बहुत ही बड़ा अपराध किया।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-48)

कपटाचार और दिखावा निर्मलता के प्रतिकूल है

निर्मलता का विलोम कपटाचार और दिखावा है। कपटाचार का अर्थ प्रदर्शन और दिखावा है। जहां ढोंग पाया जाएगा, वहाँ निर्मलता न होगी और जिस कर्म के पीछे निर्मलता होगी वह दिखावे और कपटाचार से पाक होगा। ये दोनों इकट्ठे नहीं हो सकते। कपटाचार से कर्मों की सच्ची सुन्दरता ख़त्म हो जाती है। अल्लाह तआला ने इस लम्बे-चौड़े और विशाल संसार में इनसान को इसलिए पैदा किया है कि वह उसका कर्म ही नहीं, 'सुकर्म' देखना चाहता है–

لِيَبْلُوَكُمْ أَيُّكُمْ أَحْسَنُ عَمَلًا

"ताकि तुम्हें आज़माए कि तुममें से कौन अच्छा कर्म करता है।" (क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयत-7)

अच्छे कर्म की दो शर्तें बयान की जाती हैं। पहली शर्त यह है कि ठीक-ठीक अल्लाह और उसके पैग़म्बर (सल्ल.) की हिदायत के मुताबिक़ हो और दूसरी शर्त यह है कि उसमें निर्मलता हो। वह केवल अल्लाह तआला की प्रसन्नता और ख़ुशनूदी के लिए हो। इसके अलावा इसका

कोई दूसरा प्रेरक न हो। दूसरे शब्दों में, किसी कर्म का उचित और ठीक होना ही काफ़ी नहीं, बल्कि उसके प्रेरक का सही होना भी ज़रूरी है। जब कोई कर्म सुकर्म का रूप धारण कर लेगा, तो उसका पुण्य और प्रतिदान कभी अकारथ न जाएगा। अल्लाह तआला उसका पूरा-पूरा बदला प्रदान करेगा—

إِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ إِنَّا لَا نُضِيْعُ اَجْرَ مَنْ اَحْسَنَ عَمَلًا ۞
اُولٰٓئِكَ لَهُمْ جَنّٰتُ عَدْنٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهٰرُ يُحَلَّوْنَ فِيْهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ
ذَهَبٍ وَّيَلْبَسُوْنَ ثِيَابًا خُضْرًا مِّنْ سُنْدُسٍ وَّاِسْتَبْرَقٍ مُّتَّكِـِٕيْنَ فِيْهَا عَلَى
الْاَرَآئِكِ ۭ نِعْمَ الثَّوَابُ ۭ وَحَسُنَتْ مُرْتَفَقًا ۞

"बेशक जो लोग ईमान लाए और अच्छे कर्म किए (उन्हें उनका अच्छा बदला ज़रूर मिलेगा)। हम किसी ऐसे आदमी का प्रतिदान अकारथ नहीं करते, जिसने कर्म अच्छा किया। ऐसे लोगों के लिए हमेशा के बाग़ होंगे। उनके नीचे नहरें बह रही होंगी। वहाँ उन्हें सोने के कंगन पहनाए जाएँगे और वे रेशम के बारीक और मोटे हरे रंग के कपड़े पहनेंगे। तख़्तों पर तकिए लगाए होंगे। कितना अच्छा बदला है और कितना अच्छा आराम है!" (क़ुरआन, सूरा-18 कहफ़, आयतें-30, 31)

किसी भी कर्म के पीछे विशुद्ध भावना काम कर रही है या वह पाखंड और दिखावे के तहत अंजाम पा रहा है, इसकी निर्भरता इनसान की नीयत और इरादे पर है। इसी बुनियाद पर वह ख़ुदा के दरबार में मान-सम्मान प्राप्त करेगा या वहाँ से रद्द कर दिया जाएगा। हज़रत उमर (रज़ि॰) की मशहूर रिवायत है। कहते हैं—

سَمِعْتُ رَسُوْلَ اللّٰهِ ﷺ يَقُوْلُ: إِنَّمَا الْأَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ، وَإِنَّمَا لِكُلِّ امْرِءٍ مَا نَوٰى،
فَمَنْ كَانَتْ هِجْرَتُهُ إِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ فَهِجْرَتُهُ إِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَمَنْ كَانَتْ هِجْرَتُهُ
إِلٰى دُنْيَا يُصِيْبُهَا أَوْ إِلَى امْرَأَةٍ يَنْكِحُهَا، فَهِجْرَتُهُ إِلٰى مَا هَاجَرَ إِلَيْهِ۔

"मैंने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) को कहते हुए सुना है कि कर्मों का दारोमदार नीयतों पर है। हर आदमी को वही मिलेगा, जिसकी उसने नीयत की। जिसने अल्लाह और उसके रसूल की ख़ातिर हिजरत की तो सचमुच उसकी हिजरत अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ थी, लेकिन जिसकी हिजरत दुनिया को पाने के लिए या किसी औरत से शादी करने के लिए थी; तो उसकी हिजरत उसी उद्देश्य के लिए थी, जिसके लिए उसने हिजरत की (उसका कोई पुण्य और प्रतिदान उसे नहीं मिलेगा।)।"[1]

हदीस का मतलब यह है कि कर्मों के पुरस्कार और दण्ड का दारोमदार इनसान की नीयत पर है। अगर आदमी अल्लाह की ख़ुशी के लिए काम करे तो वह इनाम और सम्मान का हक़दार होगा और अगर कोई दुनिया का मक़सद उसके पीछे काम कर रहा हो, तो उसपर किसी पुण्य और प्रतिदान की आशा नहीं की जा सकती। हिजरत एक पवित्र, श्रेष्ठ और उच्च कर्म है। इसके लिए भी मन की निर्मलता अनिवार्य है। जिस किसी ने ख़ुदा की ख़ुशी के लिए हिजरत की हो, उसे बेहिसाब पुण्य और प्रतिदान से नवाज़ा जाएगा और जिसने दुनिया कमाने या काम-भावना के तहत यह क़दम उठाया हो, तो सकता है कि वह अपने उद्देश्य में सफल हो जाए; लेकिन कल क़ियामत के दीन वहाँ के इनामों और प्रतिदानों से वंचित रहेगा।

मन की पूरी निर्मलता से अच्छे से अच्छा कर्म करने के बावजूद ईमानवाले काँपते रहते हैं कि उनकी निष्ठा में कहीं कोई कमी न रह जाए और अल्लाह तआला के दरबार में वे अस्वीकृत न ठहरें। उनकी मनोदशा का वर्णन क़ुरआन में एक जगह इन शब्दों में है—

وَالَّذِيْنَ يُؤْتُوْنَ مَآ اٰتَوْا وَّقُلُوْبُهُمْ وَجِلَةٌ اَنَّهُمْ اِلٰى رَبِّهِمْ رٰجِعُوْنَ ۝ اُولٰٓئِكَ
يُسٰرِعُوْنَ فِى الْخَيْرٰتِ وَهُمْ لَهَا سٰبِقُوْنَ ۝

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुल-ईमान, बाबु इन-नमल आमाल-बिन्नीयह; मुस्लिम, किताबुल- इमारह, बाबु क़ौलिही इन-नमल आमालु-बिन्नीयह।

"वे लोग जो देते हैं, जो कुछ देते हैं और इस तरह देते हैं कि उनके दिल इस डर से काँपते रहते हैं कि उन्हें अपने रब की तरफ़ लौटकर जाना है। यही लोग नेकियों में आगे बढ़ रहे हैं और ये उन्हें पाकर रहेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयतें-60, 61)

हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने अल्लाह के नबी (सल्ल॰) से पूछा कि क्या इन आयतों में ग़लत काम करनेवालों का ज़िक्र है, जो शराब पीते और चोरी करते हैं? आप (सल्ल॰) ने कहा–

لَا يَا بِنْتَ الصِّدِّيقِ، وَلَكِنَّهُمُ الَّذِينَ يُصَلُّونَ، وَيَصُومُونَ، وَيَتَصَدَّقُونَ، وَهُمْ يَخَافُونَ أَنْ لَا تُقْبَلَ مِنْهُمْ، أُولَئِكَ الَّذِينَ—

"ऐ सिद्दीक़ (रज़ि॰) की बेटी! यह बात नहीं है, बल्कि ये वे लोग हैं जो नमाज़ पढ़ते हैं, रोज़ा रखते हैं और सदक़ा-ख़ैरात करते हैं, लेकिन इन्हें डर लगा रहता है कि कहीं ऐसा न हो कि उनके कर्म स्वीकार न किए जाएँ। इन्हीं के बारे में कहा गया है कि वे नेकियों में आगे बढ़नेवाले और उन्हें पानेवाले हैं।"[1]

जो कर्म कपटाचार और दिखावे से पाक हो और केवल अल्लाह के लिए किया जाए, वह उसे अत्यन्त प्रिय है। चाहे वह सदक़ा या ख़ैरात हो; नमाज़ और इबादत हो या जिहाद के मैदान की बहादुरी हो। इसलिए हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से हदीस उल्लिखित है कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा–

ثَلَاثَةٌ يُحِبُّهُمُ اللهُ، وَثَلَاثَةٌ يُبْغِضُهُمُ اللهُ، فَأَمَّا الَّذِينَ يُحِبُّهُمُ اللهُ: فَرَجُلٌ أَتَى قَوْمًا فَسَأَلَهُمْ بِاللهِ وَلَمْ يَسْأَلْهُمْ بِقَرَابَةٍ بَيْنَهُ وَبَيْنَهُمْ فَمَنَعُوهُ فَتَخَلَّفَ

[1] हदीस : तिरमिज़ी अबवाबुत्तफ़सीर, सू-रतुल-मोमिनून।

رَجُلٌ بِأَعْقَابِهِمْ فَأَعْطَاهُ سِرًّا لَا يَعْلَمُ بِعَطِيَّتِهِ إِلَّا اللّٰهُ وَالَّذِي أَعْطَاهُ، وَقَوْمٌ سَارُوا لَيْلَتَهُمْ حَتّٰى إِذَا كَانَ النَّوْمُ أَحَبَّ إِلَيْهِمْ مِمَّا يُعْدَلُ بِهِ نَزَلُوا فَوَضَعُوا رُءُوسَهُمْ فَقَامَ أَحَدُهُمْ يَتَمَلَّقُنِي وَيَتْلُو آيَاتِي، وَرَجُلٌ كَانَ فِي سَرِيَّةٍ فَلَقِيَ الْعَدُوَّ فَهُزِمُوا وَأَقْبَلَ بِصَدْرِهِ حَتّٰى يُقْتَلَ أَوْ يُفْتَحَ لَهُ. وَالثَّلَاثَةُ الَّذِينَ يُبْغِضُهُمُ اللّٰهُ: الشَّيْخُ الزَّانِي، وَالْفَقِيرُ الْمُخْتَالُ، وَالْغَنِيُّ الظَّلُومُ

"तीन तरह के इनसानों से अल्लाह तआला मुहब्बत करता है और तीन तरह के इनसानों से नफ़रत करता है। जिन लोगों से अल्लाह तआला मुहब्बत करता है, उनमें से एक का आचरण यह है कि एक आदमी कुछ लोगों के पास आया और अल्लाह का वास्ता देकर उनसे सवाल किया। उसका सवाल किसी रिश्तेदारी की वजह से, जो उसके और उनके बीच हो, नहीं था (अल्लाह के वास्ते के बावजूद) उन लोगों ने उसे कुछ देने से इनकार कर दिया। यह देखकर अल्लाह का एक प्यारा बन्दा आगे बढ़ा और उसे ख़ामोशी से जो देना था, दे दिया। उसके दान को सिवाय अल्लाह तआला के और जिसे उसने दान दिया था, उसके कोई नहीं जानता। दूसरा आदमी वह है जिसका हाल यह है कि एक फ़ौजी दल रात में चला, जब (थकान की वजह से) फ़ौजियों के लिए नींद उसके बराबर की चीज़ों में सबसे ज़्यादा प्यारी मालूम होने लगी और वे सिर रखकर लेट गए, तो वह मुझसे (नमाज़ में) दुआएँ माँगने, सरगोशी और मेरी आयतों की तिलावत करने लगा। तीसरा आदमी वह है जो फ़ौज के दल में था, दुश्मन से मुक़ाबला हुआ तो दल पराजित हो गया। लेकिन वह अपना सीना तानकर आगे बढ़ा कि या तो जान चली जाए या जीत और कामयाबी हासिल हो। वे तीन तरह के इनसान जिनसे अल्लाह तआला

नफ़रत करता है, वे हैं— बूढ़ा व्यभिचारी, घमंडी भिखारी और अत्याचारी धनवान।"[1]

कपटाचार और दिखावा शिर्क की एक क़िस्म है

हदीस में कपटाचार और दिखावे को शिर्क कहा गया है; क्योंकि इसमें कर्मों का यही एक प्रेरक नहीं होता कि अल्लाह तआला को ख़ुश किया जाए, बल्कि उसके साथ दूसरे प्रेरक भी शामिल हो जाते हैं। एकेश्वरवाद जिस शुद्धता और निर्मलता की माँग करता है, यह उसके प्रतिकूल है— हज़रत शद्दाद-बिन-औस (रज़ि॰) ने कुछ सहाबियों (रज़ि॰) के बीच सवाल किया :

لَوْ رَأَيْتُمْ رَجُلًا يُصَلِّي لِرَجُلٍ، أَوْ يَصُومُ لَهُ، أَوْ يَتَصَدَّقُ لَهُ، أَتَرَوْنَ أَنَّهُ قَدْ أَشْرَكَ؟

अगर तुम देखो कि एक आदमी दूसरे के (दिखाने के) लिए नमाज़ पढ़ता है या उसके लिए रोज़ा रखता है या उसके लिए सदक़ा और ख़ैरात करता है, तो बताओ कि वह शिर्क कर रहा है या नहीं? सबने एक मत होकर जवाब दिया—

نَعَمْ وَاللهِ، إِنَّهُ مَنْ صَلَّى لِرَجُلٍ، أَوْ صَامَ لَهُ، أَوْ تَصَدَّقَ لَهُ، لَقَدْ أَشْرَكَ.

ख़ुदा की क़सम, जिसने किसी के (दिखाने के) लिए नमाज़ पढ़ी या रोज़ा रखा या सदक़ा किया, उसने निस्सन्देह शिर्क का काम किया।

इसपर हज़रत शद्दाद (रज़ि॰) ने कहा—

فَإِنِّي قَدْ سَمِعْتُ رَسُولَ اللهِ يَقُولُ مَنْ صَلَّى يُرَائِي فَقَدْ أَشْرَكَ، وَمَنْ صَامَ

---

[1] हदीस : मुसनद अहमद 5/152; तिरमिज़ी अबवाबु सिफ़तिल-जन्नह, बाबु मा जाअ फ़ी सिफ़ति अन्हारिल जन्नह; नसाई, किताबुज़्ज़कात, बाबु सवाबि मैंयुअती।

يُرَائِي فَقَدْ أَشْرَكَ، وَمَنْ تَصَدَّقَ يُرَائِي فَقَدْ أَشْرَكَ

"बेशक मैंने अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल०) को कहते हुए सुना है कि जो दिखावे के लिए नमाज़ पढ़े, उसने निश्चय ही शिर्क किया; जिसने दिखावे के लिए रोज़ा रखा, उसने भी शिर्क किया और जिसने दिखावे के लिए सदक़ा किया उसने भी शिर्क किया।"[1]

कपटाचार और दिखावे में शिर्क का जो पहलू है, उसे यह हदीस अच्छी तरह वाज़ेह करती है। इससे उसकी गम्भीरता बहुत बढ़ जाती है।

वे लोग भी शिर्क करते हैं जो ख़ुदा को नहीं मानते और उन लोगों के कर्म भी उससे पाक नहीं होते, जो ख़ुदा पर ईमान का दावा करते हैं। आख़िर आदमी कपटाचार और दिखावा क्यों करते हैं? इससे वे क्या हासिल करना चाहते हैं? इसके बहुत-से उद्‌देश्य हो सकते हैं।

इनसान के अन्दर अपनी प्रशंसा और बड़ाई की चाहत मौजूद है। हर आदमी चाहता है कि उसका ज़िक्र अच्छे शब्दों में किया जाए। उसे अच्छे कर्म और अच्छे गुण से याद किया जाए। अवगुणों से उसे याद न किया जाए। यह भावना एक विशेष सीमा के अन्दर नापसन्दीदा नहीं है। लेकिन जब वह हद से बढ़ जाती है, तो उसके सारे कर्मों पर छा जाती है। वह कोई भला काम अंजाम देता है, तो प्रशंसा की चाहत भरी नज़रों से चारों तरफ़ देखने लगता है। वह उम्मीद रखता है कि जब उसने एक अच्छा काम किया है, तो उसको माना ही जाना चाहिए। उसके नज़दीक यह उसका अधिकार है कि लोग उसकी प्रशंसा और बड़ाई का बखान करें। अगर कहीं से उसके 'अच्छे कर्म' की दाद न मिले, तो नाक़द्री की शिकायत करने लगता है। जब तक वाहवाही न मिल जाए, उसकी इस भावना की तुष्टि नहीं होती।

---

[1] हदीस : मुसनद अहमद 4/126।

कभी-कभी बेअमल और बदअमल इनसान भी ख़ूबसूरत दलीलों के द्वारा यही नहीं कि अपने ग़लत कामों और कोताहियों पर परदा डालना चाहता है, बल्कि उन्हें बुद्धि-विवेक की माँग और समझदारी के काम साबित करके वाहवाही चाहता है। यहूदी अपनी धर्म-विमुखता के बावुजूद चाहते थे कि उन्हें सच्चा धर्माचारी माना जाए। मुनाफ़िक़ों की इच्छा होती थी कि उनकी साज़िशों को भुलाकर उन्हें समुदाय का सेवक माना जाए। क़ुरआन मजीद ने इसपर टिप्पणी करते हुए कहा है—

لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ يَفْرَحُوْنَ بِمَآ اَتَوْا وَّيُحِبُّوْنَ اَنْ يُّحْمَدُوْا بِمَا لَمْ يَفْعَلُوْا فَلَا تَحْسَبَنَّهُمْ بِمَفَازَةٍ مِّنَ الْعَذَابِ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝

"यह हरगिज़ मत समझो कि जो लोग अपनी करतूतों पर ख़ुश हैं और चाहते हैं कि जो उन्होंने नहीं किया है उसपर भी उनकी सराहना की जाए। क्या वे अज़ाब से छूट जाएँगे? उनके लिए दर्दनाक अज़ाब है।"[1] (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-188)

हदीस में इस बात से मना किया गया है कि आदमी 'झूठे लिबास' में लोगों के सामने आए। ख़ाली हाथ हो और धनवान साबित करने की कोशिश करे। पेट ख़ाली हो और पेटभरा बताए। तन ढाँकने की ताक़त न हो और माँगे के तड़क-भड़कवाले जोड़ों से ऊँची हैसियत का एलान करता फिरे। हज़रत असमा-बिन्ते-अबू-बक्र (रज़ि॰) की रिवायत है। वे कहती हैं—

أَنَّ امْرَأَةً قَالَتْ يَا رَسُوْلَ اللهِ : إِنَّ لِي ضُرَّةً، فَهَلْ عَلَيَّ جُنَاحٌ إِنْ تَشَبَّعْتُ مِنْ زَوْجِي غَيْرَ الَّذِي يُعْطِي ؛ فَقَالَ رَسُوْلُ اللهِ ﷺ الْمُتَشَبِّعُ بِمَا لَمْ يُعْطَ، كَلَابِسِ ثَوْبَيْ زُوْرٍ......

"एक औरत ने कहा : ऐ अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰)! मेरी एक सौतन है। क्या इसमें कोई गुनाह है कि मेरे शौहर ने

[1] आयत की पृष्ठभूमि के लिए देखिए— तफ़सीर इब्ने-कसीर, 1/436।

जो मुझे दिया है, उसपर झूठ-मूठ को यह ज़ाहिर करूँ कि इसके अलावा भी कुछ उन्होंने दिया है?' आपने कहा : किसी को जो चीज़ न दी गई हो, उसके बारे में यह ज़ाहिर करना कि वह उसे दी गई है, ऐसा ही है जैसे कोई झूठा लिबास पहन ले।"[1]

यह हदीस इस सन्दर्भ में आई है कि इस तरह के झूठे दिखावे से औरत की सौतन और उसके शौहर के बीच झगड़ा और मतभेद पैदा हो सकता है। यह एक निन्दनीय हरकत है। उलमा के नज़दीक परहेज़गारी का झूठा दिखावा भी इसी में आता है। वे दुनियादार भी इसमें शामिल हैं, जो ख़ुदा से डर रखनेवाले और परहेज़गार इनसानों का लिबास पहनकर अपनी नेकी और परहेज़गारी का फ़रेब देता फिरता है।[2]

वाहवाही और प्रशंसा की चाहत जब हद से बढ़ जाती है तो प्रसिद्धि और वाहवाही की इच्छा में बदल जाती है। आदमी की सारी कोशिश इसी केन्द्र के चारों तरफ़ घूमने लगती है। वाहवाही की यह चाहत अपने अन्दर बेहिसाब ताक़त रखती है और आदमी को सक्रिय बनाने के लिए काफ़ी है। इसके पीछे वह जान और माल लुटाने के लिए भी तैयार रहता है। वाहवाही की चाह में उसकी ताक़त और सलाहियत के चकित कर देनेवाले दृश्य देखने को मिलते हैं। वाहवाही की चाहत से आत्मप्रशंसा का रोग जन्म लेता है। वाहवाही की भूख जब नहीं मिटती तो आदमी ख़ुद ही अपनी शान में प्रशंसा-गीत और ग्रंथ लिखने लगता है। उसे उस समय तक चैन नहीं आता, जब तक उसके कारनामों को खुल्लम-खुल्लम न माना जाने लगे। हदीस में आता है कि जो आदमी कोई भला काम करे और उसकी चर्चा करता फिरे, क़ियामत के दिन अल्लाह तआला उसकी नीयत के खोट को पूरा खोलकर रख देगा और

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुन्निकाह, बाबुत्-तशब्बुअ़ बिमा लम यनल .... आख़िर तक; मुस्लिम, किताबुल्-लिबास, बाबुन्-नहि अनित्तज़वीरि फ़िल-लिबास।

[2] नववी, शरह् सहीह मुस्लिम, 2/706।

वह सबके सामने रुसवा और अपमानित होगा।' हज़रत जुन्दुब (अबू-अब्दुल्लाह-अल-बदरी रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

مَنْ سَمَّعَ سَمَّعَ اللّٰهُ بِهٖ وَمَنْ يُرَائِيْ يُرَائِيْ اللّٰهُ بِهٖ

"जिसने अपने कारनामे दूसरों को सुनाए और उन्हें प्रचारित किया, अल्लाह तआला क़ियामत के दिन सबको सुना देगा कि उसने किस नीयत से सब कुछ किया था। जो अपने काम दूसरों को दिखाएगा, अल्लाह तआला क़ियामत के दिन दिखाएगा कि उसने किस नीयत से ये काम किए थे।"[1]

वाहवाही और दिखावे के लिए भले काम को अंजाम देना ख़ुदा के अज़ाब को दावत देना है। इससे उसका ग़ुस्सा भड़कता है। इसपर जो डरावा और चेतावनी आई है उसे बयान करते हुए हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) पर बार-बार बेहोशी छा गई और हज़रत मुआविया (रज़ि॰) सुनकर फूट-फूटकर रोने लगे। अबू-हुरैरा (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

"क़ियामत में अल्लाह तआला जब बन्दों के कर्मों का फ़ैसला करने के लिए आएगा तो सबसे पहले तीन (तरह के) आदमियों का फ़ैसला करेगा। उनमें से एक तो शहीद होगा। वह पेश होगा, तो अल्लाह तआला ने उसे दुनिया में जो ताक़त और सलाहियत प्रदान की थी, उसे वह याद दिलाएगा। वह उसको स्वीकार करेगा। इसपर सवाल होगा कि तूने इस एहसान का क्या शुक्र अदा किया और यह तेरी शक्ति और ताक़त कहाँ ख़र्च हुई? कहेगा : ऐ अल्लाह! तूने जिहाद का हुक्म दिया था।

---

[1] हदीस : सहीह बुख़ारी, किताबुर्रिक़ाक़, बाबुर्रिया-वस्सुमअ;
सहीह मुस्लिम, किताबुज़्ज़ुह्द, बाबु तहरीमुर्रिया।

मैंने उसका पालन किया। अपनी ताक़त को तेरी राह में लगा दिया और तेरे दुश्मनों से लड़ते हुए जान दे दी। कहा ज़ाएगा : तुम झूठ बोल रहे हो। तुमने जिहाद इसलिए किया था कि तुम्हें साहसी और बहादुर कहा जाए। दुनिया में तुम्हारी बहादुरी और साहस के ख़ूब चर्चे हुए और तुम्हारी मुराद पूरी हो गई। इसके बाद आदेश होगा कि इसे चेहरे के बल घसीट कर जहन्नम में फेंक दिया जाए।"

दूसरा आदमी क़ुरआन का पढ़नेवाला और ज्ञानी होगा। अल्लाह तआला उसे याद दिलाएगा कि क्या हमने तुम्हें अपनी किताब के ज्ञान से नहीं नवाज़ा था? वह उसे मान लेगा। सवाल होगा कि तुमने उसका क्या शुक्र अदा किया? कहेगा : तूने मुझे जो ज्ञान दिया था, मैंने उसे फैलाया। क़ुरआन मजीद पढ़ा और उसे ज़बानी याद किया और दिन-रात उसे पढ़ता रहा। कहा जाएगा : तुम झूठ बोल रहे हो। तुमने यह सब कुछ इसलिए किया था कि तुम्हें क़ारी (क़ुरआन के पढ़नेवाले) और ज्ञानी के रूप में प्रसिद्धि मिले। तुम्हें प्रसिद्धि मिल चुकी। तुम्हारा बदला तुम्हें मिल गया। हुक्म होगा कि मुँह के बल घसीट कर उसे भी जहन्नम में फेंक दिया जाए। वह फेंक दिया जाएगा।

तीसरा आदमी मालदार होगा। वह पेश होगा। अल्लाह तआला कहेगा : क्या हमने तुम्हें हर तरह के माल और दौलत से नहीं नवाज़ा था? वह अल्लाह के एहसानों को स्वीकार करेगा। सवाल होगा कि तुमने मेरे उन एहसानों का क्या किया?
वह कहेगा : मैंने रिश्तेदारों का हक़ अदा किया। नेकी के कामों में ख़र्च किया। जिस रास्ते में भी पैसा ख़र्च करना तुझे पसन्द था, मैंने उसमें ख़र्च किया। कहा जाएगा : झूठ बोल रहे हो। तुमने यह सब इसलिए किया था कि तुम्हें दानी और दाता कहा

जाए। यह हो गया। दुनिया में तुम्हारी दानशीलता के चर्चे हो गए। फिर उसे भी मुँह के बल घसीट कर जहन्नम में फेंक दिया जाएगा।[1]

खुदा के उन कपटाचारी बन्दों से जिन कामों के बारे में सबसे पहले सवाल होगा, उनका सम्बन्ध कुछ मुख्य धार्मिक सेवाओं से है। ज्ञान को फैलाने, भलाई के कामों में अपना धन ख़र्च करने और अल्लाह तआला के दीन को क़ायम और ग़ालिब करने, दुनिया से अन्याय, अत्याचार और अपराध को मिटाने के लिए जिहाद करने और जान की बाज़ी लगाने जैसे महान कार्यों के पीछे प्रसिद्धि की इच्छा हो, तो केवल यही नहीं कि उनका पुण्य और प्रतिदान अकारथ हो जाता है, बल्कि आदमी खुदा के प्रकोप का निशाना बनता है।

जो काम मन की निर्मलता से ख़ाली और दूसरों को खुश करने के लिए हो, हदीस में आता है कि उससे अल्लाह तआला ने अपना मुँह फेरने का एलान किया है। हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

قَالَ اللّٰهُ تَبَارَكَ وَتَعَالَىٰ: أَنَا أَغْنَى الشُّرَكَاءِ عَنِ الشِّرْكِ. مَنْ عَمِلَ عَمَلًا أَشْرَكَ فِيهِ مَعِي غَيْرِي تَرَكْتُهُ وَشِرْكَهُ

"अल्लाह तआला कहता है कि मैं साझीदारों में सबसे अधिक साझे से बेनियाज़ (निस्पृह) हूँ। जिसने कोई कर्म किया और उसमें मेरे साथ किसी और को भी शामिल कर दिया, तो मैं उसे और उसके शिर्क को छोड़ देता हूँ।"[2]

[1] यह हदीस 'मुस्लिम' में कुछ संक्षेप में बयान हुई है। किताबुल-इमारह्, बाबु मन-क़ा-त-ल, लिर्रियाइ वस्सुमअ्ह् आख़िर तक; तिरमिज़ी में पूर्ण विवरण है। अबवाबुज़्ज़ुह्द, बाबु मा जा-अ फ़िर्रियाइ वस्सुमअ्। और देखिए—नसाई, किताबुलजिहाद, बाबु मन क़ा-त-ल, लियुक़ालु फ़ुलानुन जरिय्युन।

[2] हदीस : मुस्लिम, किताबुज़्ज़ुह्द, बाबु तहरीमिर्रियाइ।

मतलब यह है कि जो काम ख़ुदा के साथ दूसरों को भी नज़र के सामने रखकर किया जाए, उसकी अल्लाह तआला को कोई ज़रूरत नहीं है। वह चाहता है कि जो काम किया जाए, उसकी हिदायत के ठीक मुताबिक़ और केवल उसी के लिए किया जाए। उसका स्वाभिमान साझीदार बनना गवारा नहीं करता कि कुछ उसके लिए हो और कुछ दूसरों के लिए। जो काम इसलिए किया जाए कि उसके साथ दूसरे भी ख़ुश हों, वह उसे उन्हीं के लिए छोड़ देता और उससे अलग हो जाता है। इस हदीस का आख़िरी वाक्य इन शब्दों के साथ भी बयान हुआ है—

مَنْ عَمِلَ عَمَلًا أَشْرَكَ فِيهِ مَعِي غَيْرِي، فَأَنَا مِنْهُ بَرِيءٌ، وَهُوَ لِلَّذِي أَشْرَكَ

"जिसने कोई अमल (कर्म) किया और उसमें मेरे साथ किसी दूसरे को भी शामिल कर दिया, तो मैं उससे बरी हूँ (मेरा उससे कोई सम्बन्ध नहीं होगा)। वह अमल उसी के लिए है, जिसे उसने साझी किया है।"[1]

अल्लाह तआला अत्यन्त स्वाभिमानी है। वह शिर्क (साझीदार बनाने) को सहन नहीं करता। वह हर कर्म में मन की निर्मलता चाहता है। जिस कर्म के पीछे केवल उसकी ख़ुशी ही नहीं, दूसरों की प्रसन्नता भी अपेक्षित हो वह उसके लिए स्वीकार्य नहीं होता। इससे हो सकता है दूसरे ख़ुश हो जाएँ, लेकिन अल्लाह तआला की प्रसन्नता हासिल नहीं हो सकती।[2]

---

[1] हदीस : इब्ने-माजा, अबवाबुज़्ज़ुह्द, बाबुर्रियाइ वस्सुमअ; मुसनद अहमद, 2/301, 434।

[2] हदीस : इख़्लास के विषय पर और अधिक जानकारी के लिए देखिए लेखक की किताब 'इस्लाम में ख़िदमते-ख़ल्क़ का तसव्वुर', के शीर्षक 'इख़्लास ज़रूरी है।'

दीन पर जमे रहना

ईमान और सत्य पर जमे रहना

'ईमान' और 'सत्य पर जमे रहना' ये दो शब्द इस्लाम का निचोड़ है। इस्लाम, जो इनसान की पूरी ज़िन्दगी पर फैला हुआ है, इन दोनों शब्दों में सिमट कर आ गया है। ईमान का सम्बन्ध अक़ीदा (आस्था) से है और जमे रहने का सम्बन्ध अमल (कर्म) से है। अक़ीदा और अमल को मिलाने के बाद इनसान का धर्म पूर्ण हो जाता है। अब उसको अपने धर्म के सिलसिले में किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं रहती। हमारे लगातार कोशिश का मक़सद अल्लाह तआला की ख़ुशी हासिल करना और परलोक की कामयाबी है। क़ुरआन ने स्पष्ट कर दिया है कि यह चीज़ ईमान और हक़ पर जमे रहने ही से मिल सकती है। आनेवाले भयंकर दिन के डर से वह आदमी सुरक्षित होगा और उसी को अल्लाह तआला के फ़रिश्ते जन्नत की ख़ुशख़बरी देंगे, जिसे इस दुनिया में ईमान और हक़ पर जमे रहने की ज़िन्दगी नसीब होगी—

إِنَّ الَّذِينَ قَالُوا رَبُّنَا اللَّهُ ثُمَّ اسْتَقَامُوا تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةُ أَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَأَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ الَّتِي كُنتُمْ تُوعَدُونَ ۝٣٠ نَحْنُ أَوْلِيَاؤُكُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْآخِرَةِ ۚ وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَشْتَهِي أَنفُسُكُمْ وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَدَّعُونَ ۝٣١ نُزُلًا مِّنْ غَفُورٍ رَّحِيمٍ ۝٣٢

"जिन लोगों ने कहा कि हमारा रब अल्लाह है; फिर उसपर जम गए, तो उनपर फ़रिश्ते उतरेंगे कि तुम न डरो और न दुखी हो। तुम्हारे लिए ख़ुशख़बरी है जन्नत की, जिसका तुमसे वादा किया गया था। हम तुम्हारे दोस्त रहे हैं दुनिया की ज़िन्दगी में और परलोक में भी रहेंगे। और तुम्हारे लिए जन्नत में वह सब कुछ

है, जो तुम्हारा जी चाहे और जो कुछ तुम माँगो, वह तुमको (यहाँ) मिलेगा। यह मेहमानी है मेहरबान और दयावान की तरफ़ से।" (क़ुरआन, सूरा-41 हा-मीम सजदा, आयत—30-32)

हज़रत सुफ़ियान-बिन-अब्दुल्लाह सक़फ़ी (रज़ि०) ने अपने और हमारे और सारी दुनिया के उपकारक हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) से पूछा कि आप (सल्ल०) इस्लाम के बारे में मुझे एक ऐसी बात बता दीजिए कि आप (सल्ल०) के बाद फिर किसी से कुछ पूछने की ज़रूरत न रहे। आप (सल्ल०) ने कहा—

قُلْ آمَنْتُ بِاللّٰهِ ثُمَّ اسْتَقِمْ

"कहो कि मैं ख़ुदा पर ईमान लाया और फिर उसपर जम जाओ।"[1]

इस्लाम की दावत के लिए जो बुनियादी ख़ूबियाँ ज़रूरी हैं, उनकी शुरुआत अल्लाह पर ईमान से की गई थी। अब इनके आख़िर में हक़ पर जमे रहने का उल्लेख किया जा रहा है।

ईमान और हक़ पर जमे रहने के बीच सम्बन्ध

अल्लाह तआला पर ईमान एक महान क्रान्ति है, जो इनसान के आचार-विचार की दुनिया में प्रकट होती है और उसे एकदम बदलकर रख देती है। यह क्रान्ति किसी वक़्ती उमंग-उत्साह का नाम नहीं है, बल्कि सही बात यह है कि जब यह किसी के जीवन में प्रकट होती है, तो आख़िर वक़्त तक बाक़ी रहती है। ईमान की ज़िन्दगी हक़ पर जमे रहने की ज़िन्दगी है। अगर कोई आदमी पूरे होश के साथ ईमान लाए तो उसे हक़ पर जमे रहने का भी सौभाग्य प्राप्त होगा। उसे ऐसी रूह मिलेगी, जिसके साहस और संकल्प को दुनिया की कोई भी शक्ति पराजित नहीं कर सकती है। वह हर हाल में हक़ पर जमा रहेगा। कोई

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाबु जामेअ औसाफ़िल-इस्लाम।

बड़े से बड़ा डर और कोई बड़े से बड़ा लालच उसे हक़ के रास्ते से न हटा सकेगा।

अल्लाह तआला पर ईमान की माँग है कि आदमी के पूरे वुजूद पर उसकी हुकूमत क़ायम हो जाए और उसका हर क़दम अल्लाह की मर्ज़ी के अधीन होकर रह जाए। इनसान की ज़िन्दगी उसकी सबसे क़ीमती पूँजी है। एक ईमानवाले के अन्दर यह इरादा और हौसला होना चाहिए कि ज़रूरत पड़ने पर उस क़ीमती पूँजी को अल्लाह के नाम पर क़ुरबान कर देगा। हर इनसान इस दुनिया में सुख-चैन और आराम का इच्छुक है। ईमानवाले आदमी के अन्दर यह जज़्बा होना चाहिए कि वह अल्लाह के लिए अपने हर सुख-चैन को छोड़ देगा। धन-दौलत, जिसकी चाह में हर आदमी भाग रहा है और जिसे कोई भी आदमी खोना नहीं चाहता, उसका फ़ैसला होना चाहिए कि उसमें उसका दामन नहीं उलझेगा। ज़िन्दगी की तमन्ना, माल की मुहब्बत और आराम की चाहत इनसान को क़ुरबानी से रोके रखती है, लेकिन सच्ची बात यह है कि ईमान के दरजे लगातार क़ुरबानी ही से तय होते हैं। यहाँ पाता वह आदमी नहीं है, जो अपने लिए सब कुछ समेट कर रखता है, बल्कि वह आदमी पाता है, जो अपना सब कुछ लुटा देता है। धन्य है वह, अल्लाह से जिसकी मुहब्बत हर दूसरी मुहब्बत पर प्रभावी हो जाए और अल्लाह की ख़ुशी के लिए वह हर उस चीज़ से दामन बचा ले, जो उसकी नाराज़ी का कारण बने।

अल्लाह ने हमें और आपको इस तरह पैदा नहीं किया है कि ईमान की राह बिलकुल आसान कर दी गई हो, बल्कि हमारे अपने मन के अन्दर इस राह से बग़ावत और सरकशी के जज़्बे पाए जाते हैं। हमें ईमान की ज़िन्दगी उस समय नसीब होगी, जबकि हम मन की उस बग़ावत को कुचलने में कामयाब हो जाएँ। ईमान जिस तरह की ज़िन्दगी चाहता है, वह आराम और सुख-चैन के साथ हासिल नहीं होती, बल्कि

इसके लिए कठोर परिश्रम और संघर्ष करना पड़ता है। इनसान के मन की सबसे बड़ी कामना यह है कि वह आज़ाद रहे और उसको अपनी इच्छाओं के पूरा करने में कोई रुकावट न हो; लेकिन ईमान स्वच्छन्द और आज़ाद जीवन जीने की इजाज़त नहीं देता। वह हमें ख़ुदा की इच्छाओं का पाबन्द बनाता है। यह दुनिया, जो हमारे चारों तरफ़ फैली हुई है, इसमें बड़ा आकर्षण और सम्मोहन है। हमारा मन चाहता है कि हर क़ीमत पर उसको हासिल किया जाए, चाहे इसके लिए अपना ईमान ही क्यों न बेचना पड़े। अगर हमारे लिए ईमान सबसे क़ीमती पूँजी है तो इस लुभावनी और आकर्षक दुनिया के छोड़ देने और अपना लेने में अल्लाह के आदेशों का पाबन्द होना पड़ेगा। यह निश्चय ही एक कठिन काम है। लेकिन जो आदमी अल्लाह को ख़ुश करना चाहे, उसे निश्चित रूप से यह कठिन काम करना पड़ेगा और जीवन भर करते रहना होगा।

दीन की दावत हक़ पर जमे रहने की माँग करती है

दीन की दावत हक़ पर जमे रहने की माँग करती है। इसके लिए ज़रूरी है कि इनसान को अपने मन पर पूरी तरह क़ाबू हासिल हो। उसके इरादे में इतनी मज़बूती हो कि मन की इच्छाएँ अपनी तरफ़ खींच रही हों, तो वह उनको ठुकराकर हक़ से चिपका रहे। उसे अपने ईमान से इतनी मुहब्बत हो कि दुनिया उसे किसी क़ीमत पर ख़रीद न सके। इसके बिना मुँह पर तो बार-बार दीन का नाम आता रहेगा, लेकिन उस राह को अमली तौर पर अपनाना और साहस के साथ उस पर चलना आसान न होगा।

आख़िरी साँस तक दीन पर जमे रहना

अल्लाह तआला की राह में यह हक़ पर जमे रहना केवल कुछ समय के लिए नहीं है, बल्कि इसको ज़िन्दगी की आख़िरी साँस तक बाक़ी रहना चाहिए। पल भर का जोश-ख़रोश दुनिया का हर घटिया

उद्देश्य पैदा कर सकता है, लेकिन इस्लाम इनसान के अन्दर ठोस और चिरस्थायी क्रान्ति चाहता है। वह न केवल किसी ख़ास समय या किसी ख़ास मामले में क़ुरबानी का इच्छुक है, बल्कि हर हाल में और हर मामले में क़ुरबानी की माँग करता है। पल भर के जोश और जज़्बे के तहत बड़ी से बड़ी क़ुरबानी आसान है, लेकिन किसी भी छोटी से छोटी चीज़ को हमेशा के लिए अपनी ज़िन्दगी से निकाल देना आसान नहीं है। ऐसा बहुत देखा गया है कि एक आदमी किसी वक़्ती माहौल से प्रभावित होकर आश्चर्यजनक त्याग और बलिदान का प्रदर्शन करता है। लेकिन अधिक समय गुज़रने नहीं पाता कि उसका यह जोश ठंडा पड़ जाता है। जिसको न अपने माल की परवाह थी और न अपनी जान की, वह हर समय अपनी जान और अपने माल के लिए चिन्तित रहने लगता है। जो सीना ईमान के जज़्बे से भरा था, वह अपनी गरमी खो बैठता है। जो सिपाही दीन की मुहब्बत में रात भर जाग सकता था, अब दुनिया के कामों में इतना व्यस्त हो जाता है कि वह उसी दीन की ख़ातिर एक घंटा नहीं दे पाता है। जो आदमी अपनी अत्यन्त व्यस्तताओं में दीन से लापरवाह नहीं होता था, वह फ़ुरसत के पलों में भी अल्लाह को और उसके दीन को कम ही याद करता है। जो आदमी ग़रीबी और तंगी में भी दीन के तक़ाज़ों से लापरवाह नहीं था, वह प्रचुरता और सम्पन्नता के बावजूद उन तक़ाज़ों को भुला बैठता है। जो आदमी दीन की फ़िक्र में अपने आराम और सुख-चैन को भूल जाता था, वह अपने रोज़मर्रा के कामों में कोई बदलाव नहीं लाना चाहता। यह इस बात प्रमाण है कि ये क़ुरबानियाँ वक़्ती जोश-ख़रोश और क्षणिक प्रेरक का परिणाम थीं, लेकिन वह इसको ईमान की मुहब्बत का नतीजा समझ रहा था। ईमान जब सही अर्थों में दिल में उतर जाता है, तो हर क़दम पर शहादत का शौक़ बढ़ता ही चला जाता है। ईमान का मज़ा सुबह और शाम की गर्दिश के साथ कम नहीं होता, बल्कि हर आनेवाला दिन उसमें और बढ़ोत्तरी करता है--

यह वो नशा नहीं जिसे तुरशी उतार दे।

अल्लाह का दीन आज अपने माननेवालों को आवाज़ दे रहा है कि वे उसके प्रचार-प्रसार और उसके बोलबाला करने के लिए कमर कस लें। इस रास्ते में अपनी पूरी शक्ति लगा दें और अपने आपको इसमें खपा दें। ईमान और ईश-प्रेम का जीवन संन्यास का जीवन नहीं है कि आदमी किसी कोने में बैठकर अल्लाह की याद में मस्त हो जाए और अपने अन्दर के जज़्बे में इस तरह गुम रहे कि उसे बाहर की दुनिया की ख़बर तक न हो। ईमान दिल और जान से ख़ुदा की ग़ुलामी में लग जाने और उसके रास्ते में सतत् प्रयास और परिश्रम करते रहने का नाम है। अगर कोई आदमी अपनी मनोदशा में इस तरह खो जाए कि अल्लाह के दीन की भी उसे चिन्ता न हो, तो मानो उसने उन मनोदशाओं की पूजा शुरू कर दी। वह अल्लाह तआला के आदेशों का पालन करनेवाला नहीं, अपनी कामनाओं और मनोदशाओं का ग़ुलाम बन गया।

दावत लगातार जारी रहनेवाला काम है

अल्लाह पर ईमान अपने अन्दर बहुत बड़ा क्रान्तिकारी सन्देश रखता है। जो आदमी ईमान लाता है, वह स्वाभाविक रूप से इस क्रान्ति का दूत बन जाता है। अल्लाह तआला इनसान के अन्दर आचार-विचार का बदलाव देखना चाहता है, वह इस बदलाव का माध्यम बन जाता है। हक़ जिन इनसानों तक नहीं पहुँच सका है, यह उसकी ज़िम्मेदारी क़रार पाती है कि इसे उन तक पहुँचाए। ख़ुदा का जो बन्दा लापरवाही की नींद सो रहा है, उसका कर्तव्य है कि उसे जगाए और जिन सच्चाइयों से वह अनजान है, उसे आदेश है कि उन सच्चाइयों से उसे अवगत कराए। ईमान का दावा करके उसने कुछ चीज़ों को पाया है और कुछ चीज़ों को खोया है। यह पाना और खोना उसका सोचा-समझा अमल है। उसने जो कुछ पाया वह उसके इरादे के बिना उसे नहीं मिल गया और जो कुछ खोया है, लापरवाही और अनजाने में उसने नहीं खोया

है। यह दुनिया जिसकी चाहत में अनगिनत इनसान अपने रात और दिन काट रहे हैं, उसको उसने अकारण नहीं छोड़ा है, बल्कि ख़ुदा की ख़ुशी की चाह में छोड़ा है। उसने अपने मन की ग़लत इच्छाओं को बिना मक़सद के नहीं कुचला और रौंदा है, बल्कि ख़ुदा की मुहब्बत में रौंदा और कुचला है। उसने अपने और अपने परिवार के हित को अकारण नुक़सान नहीं पहुँचाया है, बल्कि ख़ुदा की चाह में नुक़सान पहुँचाया है। अगर वह अपने इस क़दम को हक़ समझता है, तो इस हक़ की माँग है कि इसे दूसरों तक पहुँचाया जाए। उसके अन्दर इस बात की अथाह तड़प होनी चाहिए कि जो क्रान्ति उसके अपने अन्दर पैदा हो चुकी है, वह दूसरों के अन्दर भी पैदा हो। उसने जिन विचारों और कर्मों को छोड़ा है, सारी दुनिया उनसे अलग-थलग हो जाए और जिस विचार और कर्म से उसे चमक-दमक मिली है, उससे हर एक की ज़िन्दगी चमक उठे। यह बात ईमानी ग़ैरत के ख़िलाफ़ है कि आदमी के कानों में ख़ुदा से बग़ावत की आवाज़ गूँज रही हो और उसके अन्दर उसे मिटाने के लिए कोई बेचैनी और तड़प न पाई जाए।

दीन की दावत का यह फ़र्ज़ जो ईमान लाने के बाद आदमी पर अपने आप आ जाता है, ज़बरदस्त अटल जमाव चाहता है। अल्लाह तआला पर ईमान और उसके दीन का झंडा उठाना कोई मामूली काम नहीं है। यह दुनिया भर की शैतानी शक्तियों को चैलेंज करने के समान है। यह असत्य का सामना करने की दावत देता है। इसलिए कुछ असम्भव नहीं कि असत्य अपनी सारी शक्तियों के साथ उसे कुचलने के लिए मैदान में आ जाए। दीन की दावत देनेवाले को कठिन से कठिन परिस्थितियों से गुज़रना पड़े और हर सम्भव तरीक़े से उसकी परीक्षा ली जाए।

विचार और कर्म की आज़ादी का राग अलापा जा रहा है। इसके बावजूद अपनी आँखों से देखा जा सकता है कि दुनिया अल्लाह के दीन को उसके सही रूप में सहन करने को तैयार नहीं है। वह उसे नमाज़,

रोज़े और इनसान की निजी ज़िन्दगी तक सीमित रखना चाहती है। ज़िन्दगी के कारोबार से दीन का सम्बन्ध उसे किसी क़ीमत पर गवारा नहीं है। सच्चाई यह है कि यह असत्य के स्वभाव के प्रतिकूल है कि वह हक़ को सहन करे और उसे फूलने-फलने का मौक़ा मुहैया करे। वह हक़ के उन अनुयायियों को कभी चैन की नींद सोने नहीं देगा, जो अपने अक़ीदे के मुताबिक़ आदमी का सुधार और समाज के निर्माण की लगातार कोशिश करेंगे। खुदा की यह विशाल धरती उनके लिए तंग कर दी जाएगी और दोस्ती का दम भरनेवाले भी दुश्मन की पंक्ति में जा खड़े होंगे। ऐसे ही नाज़ुक मौक़े के लिए ख़ुदा के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने अपने एक निकटतम साथी हज़रत मुआज़ (रज़ि॰) को नसीहत की थी—

لا تُشْرِكْ بِاللّٰهِ شَيْئًا، وَإِنْ قُتِّلْتَ أَوْ حُرِّقْتَ،

"अल्लाह के साथ किसी चीज़ को शरीक न करो, चाहे तुम्हें क़त्ल कर दिया जाए या जला दिया जाए।"[1]

दीन की तरफ़ बुलानेवाले के अन्दर यह साहस और संकल्प होना चाहिए कि वह एक अल्लाह का बन्दा बनकर रहेगा और जीते जी उसके आदेशों का उल्लंघन नहीं करेगा। इसके नतीजे में चाहे उसका सिर धड़ से अलग कर दिया जाए और उसे जलाकर राख के ढेर में बदल दिया जाए।

हक़ पर जमे रहना कठिन है

हक़ पर जमे रहना बड़ा कठिन काम है। इस रास्ते में बड़े-बड़े महापुरुषों के भी क़दम लड़खड़ा जाते हैं। इनसान पर जब चारों तरफ़ से मुसीबतें आ पड़ती हैं और अल्लाह के फ़ैसले के तहत उसको आज़माया जाता है, तो वह घबरा उठता है। वह हक़ को छोड़ना नहीं चाहता, लेकिन क़ुरबानी के जज़्बे उसके अन्दर ठंडे पड़ जाते हैं। वह

---

[1] हदीस : मुसनद अहमद

आज़माइशों के बिना अल्लाह की जन्नत में पहुँचना चाहता है; हालाँकि अल्लाह का क़ानून है कि वह आज़माए बिना किसी को उस नेमत भरे घर में दाख़िल नहीं करता। इनसान का सम्बन्ध जब हक़ से कमज़ोर पड़ जाता है, तो उसके सोचने का अन्दाज़ बदल जाता है और उसकी मानसिकता में बदलाव आ जाता है, वह शारीरिक रूप से तो ज़िन्दा होता है, लेकिन भावनात्मक रूप से उसकी मृत्यु हो चुकी होती है। वह अब यह नहीं देखता कि उससे हक़ की क्या माँग है, बल्कि यह देखने लगता है कि दूसरे क्या कर रहे हैं। उसको अगर उसकी ज़िम्मेदारियाँ याद दिलाई जाती हैं, तो वह उन ज़िम्मेदारियों का इनकार नहीं करेगा, बल्कि वह नसीहत करनेवाले की ज़िन्दगी का जाइज़ा लेने लगेगा; ताकि वह बता सके कि वह भी अपनी ज़िम्मेदारियों से ग़ाफ़िल है और वह उसको नसीहत करते हुए ख़ुद को भूल रहा है। अगर कोई उससे कहे कि हक़ तुमसे तुम्हारी जान-माल की क़ुरबानी चाहता है, तो वह यह नहीं कहेगा कि उसको जान और माल हक़ से अधिक प्यारा हैं; बल्कि उसका जवाब यह होगा कि फ़लाँ साहब भी तो सो रहे हैं। आप उनको क्यों नहीं जगाते? अगर वे अपने कारोबार में मगन हैं, तो मैंने ही कौन-सा अपराध किया है; अगर अपना समय न निकाल सका? ऐसा आदमी हक़ से लगाव रखेगा भी तो अपने लिए महानता का मार्ग पसन्द न करेगा। उसकी ज़िन्दगी में उसका अपना हित ही प्रमुख होगा और हक़ को वह बड़ी आसानी से पीठ पीछे डाल देगा। उसकी पस्ती इस हद को पहुँच सकती है कि उसकी ज़बान सच को प्रकट करने में असमर्थ हो जाए। वह जब देखेगा कि हक़ का सही प्रतिनिधित्व उसको आज़माइशों में डाल रहा है और असत्य अपना क्रोध प्रकट कर रहा है, तो वह ऐसी राहें तलाश करेगा जो सत्य को असत्य के निकट कर दे। वह क़दम-क़दम पर असत्य को विश्वास दिलाने की चिन्ता में रहेगा कि वह उसका साथी है। वह उसको उखाड़ फेंकना और अल्लाह का दीन क़ायम करना नहीं चाहता, बल्कि उसकी छत्रछाया में

जीने का इच्छुक है। हिकमतें और मस्लहतें उसकी आवाज़ को कमज़ोर कर देंगी। वह हक़ पर चलते-चलते थक-सा जाएगा। उसके क़दम लड़खड़ाने लगेंगे और उसके संकल्प और इरादे कमज़ोरी का शिकार हो जाएँगे। उसने जिन हौसलों और इरादों के साथ अपने सफ़र की शुरुआत की थी, वे सारे हौसले और इरादे पस्त हो जाएँगे। वह सुख-चैन का अभिलाषी और आराम का इच्छुक होगा। वह अपनी मंज़िल की दूरी और रास्ते की भयंकरता से घबरा उठेगा। अब उसकी ज़बान पर दीन की बड़ी-बड़ी बातों के बजाय परिस्थितियों की प्रतिकूलता का शिकवा होगा। वह कभी-कभी अपनी 'मजबूरियों' और 'विवशताओं' की एक लम्बी सूची सामने रखने के बाद यह कहकर ख़ुश और सन्तुष्ट हो जाएगा कि इन परिस्थितियों में दीन की जो कुछ भी ख़िदमत हो रही है, वह भी बहुत है।

हक़ पर जमे रहने की अपेक्षाएँ

सच्चाई यह है कि ख़ुदा के दीन की दावत बड़े ही धैर्य का काम है। यह बड़ी दुर्गम घाटी है। इसे हर आदमी आसानी से पार नहीं कर सकता है। इसपर वही आदमी चल सकता है, जो पैरों के ज़ख़्मी होने और हाथों के शिथिल होने की शिकायत न करे। जो रास्ते की ठोकरों से घबराकर अपना रास्ता न छोड़े, बल्कि हर ठोकर पर अपने अन्दर नई शक्ति महसूस करे; जो विरोधों के तूफ़ान में पीछे न हटे, बल्कि पहाड़ की तरह अपनी जगह अटल रहे। दुश्मन को देखकर जिसका ईमान न डगमगाए, बल्कि हर आज़माइश को अपनी कामयाबी का ज़रिआ समझे—

الَّذِينَ اسْتَجَابُوا لِلَّهِ وَالرَّسُولِ مِنْ بَعْدِ مَا أَصَابَهُمُ الْقَرْحُ ۚ لِلَّذِينَ أَحْسَنُوا مِنْهُمْ وَاتَّقَوْا أَجْرٌ عَظِيمٌ ۝

"जो ज़ख़्म खाने के बाद भी ख़ुदा और पैग़म्बर की आवाज़ पर हाज़िर हो गए, उनमें जो नेक और परहेज़गार हैं, उनके लिए बड़ा प्रतिदान है।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-172)

दीन की दावत पैग़म्बरों का काम है। जो आदमी इसके लिए उठे उसे उन मरहलों से भी गुज़रना पड़ सकता है, जिन मरहलों से पैग़म्बर और उनके साथियों को गुज़रना पड़ा। उनकी क़ौमों ने उनके साथ वह मामला किया, जो दुश्मनों के साथ किया जाता है। उन्हें हर तरह सताया और तंग किया गया। उनको बेदीन क़रार दिया गया। वे घर से बेघर किए गए। उनकी अपनी कमाई हुई दौलत उनसे छीन ली गई; यहाँ तक कि उनमें से कितनों के सिर धड़ से अलग कर दिए गए। यह सब कुछ केवल इसी एक अपराध के बदले में था कि वे एक अल्लाह पर ईमान रखते थे और उसी के दीन की तरफ़ लोगों को बुलाते थे—

الَّذِينَ أُخْرِجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ بِغَيْرِ حَقٍّ إِلَّا أَنْ يَقُولُوا رَبُّنَا اللَّهُ

"जो अपने घरों से नाहक़ निकाल दिए गए, केवल इस कारण कि वे ख़ुदा को अपना पालनहार रब और मालिक कहते हैं।"
(क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयत-40)

आज का दौर भी अपनी रूह की दृष्टि से पैग़म्बरों के दौरों से अलग नहीं है। दुश्मन बहुत ताक़तवर है और दीन की दावत देनेवाले और इसके सेवक बहुत कमज़ोर हैं। लेकिन याद रखिए कि ख़ुदा के रास्ते में आनेवाली आज़मइशों से घबराकर जो आदमी अपने क़दम पीछे हटाता है, वह अपने ईमान के दावे का अपमान करता है। उसने अपने कर्म से उस चीज़ को झुठलाया है, जिसकी पुष्टि अपनी ज़बान से कर चुका है। उसने वह घृणित रवैया अपनाया है, जिससे उसकी पवित्र आस्था का अपमान होता है। उसने हक़ की तुलना में दुनिया को प्राथमिकता देकर इस बात का प्रमाण दिया है कि हक़ की क़द्र और

क़ीमत उसकी निगाह में यह नहीं है कि उसके लिए दुनिया क़ुरबान की जा सके। उसके नज़दीक हक़ पसन्दीदा नहीं रहा, बल्कि दुनिया प्यारी बन गई। उसने ईमान के ज़रिए इस बात का इज़हार किया था कि ज़िन्दगी उसकी नहीं, बल्कि ख़ुदा की है। अब सत्य-मार्ग से पीछे हटकर यह ज़ाहिर कर रहा है कि ज़िन्दगी वह पूँजी है, जिसको वह ख़ुदा के हाथ भी बेचना नहीं चाहता। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने हज़रत मुआज (रज़ि॰) को यह नसीहत की थी और यही नसीहत मेरे और आपके लिए भी है—

إِيَّاكَ وَالْفِرَارَ مِنَ الزَّحْفِ وَإِنْ هَلَكَ النَّاسُ

"जिहाद के मैदान से कभी भी न भागो, चाहे सब लोग मारे ही क्यों न जाएँ।"[1]

दीन की दावत देनेवालों को अच्छी तरह समझना चाहिए कि परिस्थितियाँ गम्भीर हो जाएँ; ज़माने का रुख़ बदल जाए; दीन की मुहब्बत पर दुनिया की मुहब्बत छा जाए; लोग दुनिया बनाने की चिन्ता में लग जाएँ और इच्छाओं के पीछे दौड़ने लगें; ज्ञान और बुद्धि-विवेक का दावा करनेवाले और प्रतिष्ठित लोग भी दीन के लिए अपने सुख-चैन और ऐशो-आराम छोड़ने के लिए तैयार न हों; इससे बढ़कर सत्य धर्म की गवाही देनेवाले एक-एक करके ख़त्म हो रहे हों और अल्लाह का नाम लेनेवाले मैदान छोड़कर भाग रहे हों, तब भी दीन की दावत देनेवालों के अटल क़दमों में लड़खड़ाहट नहीं आनी चाहिए। यह उनका बहुत बड़ा सौभाग्य है कि हक़ के लिए भाग-दौड़ और क़ुरबानी का सुनहरा मौक़ा उन्हें मिल रहा है। अल्लाह के दीन की राह में पेश आनेवाली आज़माइशें भलाई और कामयाबी का ज़रिया हैं। ये तरक़्क़ी की सीढ़ियाँ हैं, जो इसलिए मुहैया कराई गई हैं कि इनके ज़रिए अल्लाह के बन्दे और उसके दीन के सेवक उसकी ख़ुशी के सबसे ऊँचे दरजे

[1] हदीस : मुसनद अहमद, 5/238।

तक पहुँच सकें। परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं। जहाँ कहीं अल्लाह के बन्दों को उसके दीन की दावत और उसके वर्चस्व के लिए लगातार कोशिश करने के मौक़े हासिल हैं और उनकी राह में ज़्यादा आज़माइशें नहीं हैं, तो उन्हें अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए कि उसने उन्हें किसी बड़ी परीक्षा में नहीं डाला और आज़माइशों से सुरक्षित रखा है। लेकिन मान लीजिए कि कभी हालात बद से बदतर हो जाएँ, आपको कठिन से कठिन आज़माइशों का सामना करना पड़े; जेलों की अन्धेरी कोठरियाँ आपकी प्रतीक्षा करने लगें; आग के अंगारों के बीच से आपको गुज़रना पड़े या आपके लिए फाँसी का फन्दा सजने लगे, तो समझ लीजिए की आपको कामयाबी मिलने ही वाली है। यह इस बात की पहचान है कि अल्लाह तआला की कृपादृष्टि आपपर है। उसने अपने अपार इनाम और उपहार के लिए आपको चुन लिया है। हक़ वह सबसे बहुमूल्य पूँजी है, जो किसी इनसान को मिलती है। उसके लिए अगर जान भी देनी पड़े, तो यह मामूली क़ुरबानी होगी। अगर आप सत्य-मार्ग को इसलिए छोड़ते हैं कि यह अजनबियत की राह है और कोई आपका साथ देनेवाला नहीं है, तो आपने हक़ का मूल्य नहीं पहचाना। इसी तरह अगर आप हक़ का अनुपालन इस कारण करते हैं कि आपका माहौल हक़ पर चलनेवाला है या असत्य आपके मूल्य को नहीं पहचानता है तो यह सत्य का अनुपालन नहीं, बल्कि माहौल का अनुपालन है। ख़ूब याद रखिए कि ख़ुदा की अदालत में यह बड़ा अपराध है कि सत्य के मार्ग में आप अपना बढ़ाया हुआ क़दम वापस लें। जब ख़ुदा का दीन आपसे आपकी ज़िन्दगी चाह रहा हो और जब आपको यह मौक़ा मिला हो कि अपनी सबसे प्यारी पूँजी को देकर अल्लाह तआला की रहमत और मेहरबानी के हक़दार हो जाएँ, तो यह आपके ईमान के प्रतिकूल है कि आप इस मौक़े को खो दें। आपकी कामयाबी इसी में है कि सत्य के मार्ग में अपनी सारी पूँजी लुटा दें और दामन झाड़कर अल्लाह तआला के पास पहुँच जाएँ; क्योंकि इस तरह कल आपके

हिस्से में वह दौलत आनेवाली है जिससे बहुत-से वे इनसान वंचित होंगे, जिन्हें आज अपनी ख़ुशनसीबी पर गर्व है और जो उस क़ियामत के दिन आपकी कामयाबी को देखकर हसरत के साथ कहेंगे : काश, हमने भी अपने मौला को ख़ुश किया होता; काश, हमारी दुनिया हमसे छीन ली जाती; काश, हमारा परलोक बरबाद न होता।

दावत और संगठन

संगठन की ज़रूरत

किसी भी आन्दोलन और उसकी दावत के लिए संगठन बहुत ज़रूरी समझा जाता है। इसलिए बुद्धि कहती है कि इस्लाम की दावत के लिए के लिए भी संगठन अवश्य होना चाहिए। लेकिन यह अजीब बात है कि हमारे कई गिरोहों में इस काम के लिए संगठन की ज़रूरत और अहमियत महसूस नहीं की जाती। दुनिया की किसी भी विचारधारा की बुनियाद पर उठनेवाली दावत अपना संगठन बना सकती है। लेकिन इस्लाम की दावत के लिए अगर कोई संगठन वुजूद में आता है, तो कुछ लोग इसपर नागवारी का इज़हार करते हैं और कुछ लोगों को तो इसपर घोर आपत्ति होती है। उनके नज़दीक इस्लाम की दावत का सही तरीक़ा यह है कि इस मैदान में जो आदमी जो काम अंजाम दे सकता है, अपने आप अंजाम दे या फिर अधिक से अधिक यह कि ज़रूरत पड़ने पर कुछ लोग मिल-जुलकर इस्लाम की कोई ख़िदमत अंजाम दे लें। वे इस बात को सही नहीं समझते कि केवल इस उद्देश्य से एक स्थायी संगठन वुजूद में आए, जो इस्लाम की दावत देने और उसे प्रभावी बनाने के उपाय सोचे। उसके लिए कोई योजना बनाए। उस योजना के तहत लोगों को काम पर लगाए और इस तरह काम करे, जिस तरह दुनिया के दूसरे संगठन काम करते हैं। अतः आप देखेंगे कि उनमें से बहुत-से लोग दिल से सोचते हैं कि इस्लाम के बारे में जो ग़लतफ़हमियाँ हैं, वे दूर हों और इस्लाम ख़ूब फैले। उनमें ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है, जो बड़ी मेहनत से इस्लाम पर रिसर्च करते हैं। उसके विभिन्न पहलुओं पर शोध-पत्र भी लिखते हैं। उसके सिद्धान्त और विचारधाराओं को सिद्ध करने में अपनी बेहतरीन सलाहियतें भी लगा

देते हैं। ग़ैर-इस्लामी विचारधाराओं पर आलोचना करने और उनकी कमियों को स्पष्ट करने में भी आगे-आगे हैं। इससे बढ़कर जो लोग उनकी रुचि के अनुसार इस्लाम की सेवा करते हैं, वे उनका उत्साहवर्द्धन और सराहना भी करते हैं और अपनी हद तक उसके साथ सहयोग करने में भी उन्हें हिचकिचाहट नहीं होती। लेकिन इस्लाम की यही सेवा अगर व्यक्ति के बजाय कोई संगठन करना चाहे, तो उसका सारा काम उनकी नज़र में ग़लत क़रार पाता है और वे उसके साथ किसी भी तरह के सहयोग के लिए तैयार नहीं होते। जैसे लोगों का अपनी व्यक्तिगत हैसियत में इस्लाम के लिए लगातार कोशिश और मेहनत करना तो सही है, लेकिन उनका अपनी शक्तियों को इकट्ठा करके उस राह पर लगाना सही नहीं है। उनके विचार और चिन्तन के ढंग की कोई दलील आप पूछें तो शायद वे एक ही जवाब दे सकेंगे और वह यह कि इस्लाम की दावत के लिए संगठन बनाने का क़ुरआन और हदीस और पहले दौर में कोई प्रमाण नहीं मिलता। अगर आप उनके इस तर्क को न मानें और तर्कों और दलीलों के ज़रिए संगठन की अहमियत साबित करना चाहें, तो वे तुरन्त कहेंगे कि तुम्हारा ज़ेहन ग़ैर-इस्लामी संगठनों से प्रभावित है। आजकल चूँकि किसी भी विचारधारा के लिए संगठन को ज़रूरी माना जाता है, इसलिए तुम्हारी समझ में यह बात नहीं आती कि संगठन के बिना इस्लाम की दावत का काम कैसे किया जाए?

लेकिन सोचने का यह ढंग बुद्धिसंगत नहीं है और जैसा कि हम आगे चलकर बयान करेंगे कि क़ुरआन, हदीस और इस्लामी इतिहास में भी इसके लिए कोई प्रमाण नहीं है। मौजूदा दौर की विचारधाराएँ संगठन को अगर ज़रूरी समझती हैं तो इसके लिए ये अर्थ कहाँ से निकल आए कि इस्लाम संगठन का विरोधी है। यह भी तो हो सकता है कि दावत चाहे इस्लाम की हो या ग़ैर-इस्लाम की संगठन या जमाअत दोनों के लिए अनिवार्य है। यह कहना ग़लत न होगा कि इनसान चलने के लिए पैर और काम करने के लिए हाथ का जिस क़द्र मुहताज है,

उससे ज़्यादा दावत अपनी कामयाबी के लिए संगठन या जमाअत की मुहताज है। संगठन के बिना कोई भी विचारधारा कभी कामयाब नहीं हो सकती। दुनिया में ग़लत और सही हर तरह की विचारधाराएँ पैदा होती रहती हैं। उनमें से कुछ विचारधाराओं ने बड़ी-बड़ी क्रान्तियाँ पैदा की हैं। लेकिन पूरे इतिहास में किसी ऐसी क्रान्ति की निशानेदही नहीं की जा सकती, जो असंगठित और बिखरे हुए लोगों की काशिश से वुजूद में आयी हो। अगर आप विभिन्न विचारधाराओं के उद्भव और विकास का जाइज़ा लें, तो मालूम होगा कि जिस तरह यह एक सच्चाई है कि विचारधाराएँ पहले व्यक्तियों ही के मन-मस्तिष्क में पैदा होती हैं और व्यक्ति ही आम आदमी को उनकी तरफ़ दावत देते हैं। इसी तरह यह भी एक सच्चाई है कि जब उनमें से किसी विचारधारा से कुछ लोग सहमत हो जाते हैं, तो उनका एक संगठन बन जाता है। अगर यह संगठन शक्तिशाली हो, तो इसमें आनेवाले लोग अपने विचार को उसकी विचारधारा में, अपने कर्म को उसके कर्म में, यहाँ तक कि अपने व्यक्तित्व को उसके अस्तित्व में गुम कर देते हैं। उन्हीं लोगों के कारण संगठन आगे बढ़ता और फैलता है; दूसरों को क़रीब करता और उनको प्रभावित करने की कोशिश करता रहता है। अगर किसी दावत के पीछे इस तरह का मज़बूत संगठन न हो, तो उसकी आवाज़ हवा में विलीन होकर रह जाती है और वह समकालीन विचारधाराओं पर अपना कोई प्रभाव छोड़े बिना ख़त्म हो जाती हैं। इसी लिए यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है कि ग़लत विचारधाराएँ भी, अगर उनको फैलाने और प्रभावी बनाने का संगठित प्रयास किया गया, तो सफल हो गईं और सही विचारधारा को भी इस कारण सफलता न मिल सकी कि उसको अच्छा संगठन प्राप्त नहीं था।

किसी दावत के बड़े पैमाने पर फैलने के लिए ज़रूरी है कि जिस समय जो काम करना उसके लिए ज़रूरी हो, उसे वह अंजाम दे सके। जो उपाय सोचे, उसको अपनाना उसके लिए सम्भव हो; जो

साधन-संसाधन उसको हासिल हों, उनका बेहतरीन इस्तेमाल जानता हो; उसके पास इतनी शक्ति हो कि ज्ञान और साहित्य, संस्कृति और नैतिकता, शासन और राजनीति का रुख़ मोड़ सके। ज़ाहिर है कि इतने बड़े काम की शक्ति आज तक किसी एक आदमी को न हासिल हुई है और न आगे इसकी आशा की जा सकती है; क्योंकि किसी भी आदमी के अन्दर हर काम की योग्यता और क्षमता नहीं होती। वह अधिक से अधिक एक-आध काम ही कर सकता है और जो काम भी कर सकता है, वह इतने बड़े पैमाने पर नहीं कर सकता कि वह हर पहलू से पूर्ण हो और सारी ज़रूरतें पूरी हो जाएँ। लेकिन एक अच्छे संगठन के लिए यह सब कुछ मुमकिन है। पानी की एक बून्द से बाढ़ नहीं आती, लेकिन बून्द-बून्द पानी जमा होकर नदी का रूप धारण कर ले, तो वह ज़मीन के सीने को चीरती और पहाड़ों को काटती हुई आगे बढ़ जाती है। इसी तरह आदमी की सलाहियतें हालाँकि महदूद होती हैं, लेकिन बहुत-से लोग जब किसी विचारधारा के तहत संगठित हो जाएँ तो उनमें इतनी शक्ति आ जाती है कि वे विभिन्न विचारधाराओं को उखाड़ फेंकें एवं चिन्तन और विचारधारा की एक नई दुनिया बसा सकते हैं। एक अच्छे और मज़बूत संगठन में तरह-तरह की सलाहियतोंवाले व्यक्तियों का पाया जाना नामुमकिन नहीं है। इस कारण जिस काम के लिए जिन सलाहियतों की ज़रूरत है, वह उन सलाहियतों के आदमियों को उसमें लगा सकता है और यह भी उसके लिए मुमकिन है कि जिस मोर्चे पर एक आदमी अपर्याप्त साबित हो, वहाँ वह दस आदमियों को भेज दे।

सही बात यह है कि जो लोग इस्लाम की दावत के लिए संगठन का विरोध करते हैं, वे यह नहीं जानते कि यहाँ कोई दावत किस तरह कामयाब होती है और इसके लिए उसे क्या तरीक़ा अपनाना पड़ता है?

विचित्र बहाने

कुछ लोग इस्लाम की दावत के लिए संगठन को ग़लत नहीं समझते, बल्कि उसकी अहमियत को महसूस करते हैं। लेकिन इसके बावुजूद वे इसके लिए न तो कोई अमली क़दम उठाने के लिए तैयार होते हैं और न किसी ऐसे संगठन ही में शामिल होना चाहते हैं, जो यह काम कर रहा हो। अपने इस अलगाव के लिए उनके पास कुछ बहाने हैं। हम चाहते हैं कि यहाँ उन बहानों पर भी थोड़ी-सी बातचीत की जाए। इससे अन्दाज़ा हो सकेगा कि जो आदमी इस्लाम की सेवा करना चाहता हो, उसके उन बहानों की बुनियाद पर बिना संगठन के काम करते रहना कहाँ तक सही है?

1. एक बहाना तो यह किया जाता है कि बेशक दावत के लिए संगठन ज़रूरी है, लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में इस तरह के संगठन से लाभ कम और हानि अधिक होगी; क्योंकि हम ऐसे माहौल में घिरे हुए हैं, जहाँ ग़ैर-इस्लामी विचारधाराओं की सत्ता है और इस्लाम के ख़िलाफ़ दुर्भावनाएँ पाई जाती हैं। इस माहौल में इस्लाम को फैलाने और उसको प्रभुत्वशाली बनाने के लिए संगठित और सतत् प्रयास और परिश्रम में इस बात का गम्भीर ख़तरा है कि सत्ताधारी विचारधाराएँ इसको अपना प्रतिद्वन्द्वी समझ बैठें और माहौल इसे सहन करने से बिलकुल ही इनकार कर दे। इस ख़तरे से इसी तरह बचा जा सकता है कि लोग अपने तौर पर दावत का काम अंजाम देते रहें और इसे किसी ऐसे संगठित प्रयास में परिवर्तित न करें, जिससे मौजूदा शासन से संघर्ष की स्थिति पैदा हो। इसलिए बुद्धि-विवेक की माँग यह है कि काम का वही रूप अपनाया जाए, जिसके जारी रहने की सम्भावनाएँ हों और उस तरीक़े को न अपनाया जाए जो काम ही को सिरे से ख़त्म कर दे।

सोचिए, क्या यह कोई उचित बहाना है? ज़ाहिर बात है कि इस्लाम

की दावत के लिए अगर संगठन ज़रूरी है और बिना संगठन के उसका हक़ अदा नहीं हो सकता है, तो ज़रूर ही संगठन को वुजूद में लाना होगा, चाहे परिस्थितियाँ अनुकूल हों या प्रतिकूल। फिर यह विचार भी सही नहीं है कि विरोध केवल संगठित दावत ही का होगा, व्यक्तिगत प्रयास का नहीं होगा; क्योंकि इस्लाम की दावत बहरहाल एक क्रांति की दावत है। वह इस बात का एलान बनकर सामने आती है कि ख़ुदा की इस ज़मीन पर ख़ुदा ही की सत्ता होनी चाहिए, सिवाय उसकी सत्ता के किसी की सत्ता उचित नहीं है। यह बात जब भी कही जाएगी, चाहे उसको कहनेवाली ज़बान एक ही क्यों न हो, समय की सत्ता उसको अपने ख़िलाफ़ बग़ावत ही समझेगी और इसके साथ वही मामला करेगा, जो किसी बाग़ी के साथ किया जा सकता है। आप किसी ऐसे दौर की निशानदेही नहीं कर सकते, जिसमें इस्लाम की दावत उठी हो और तत्कालीन शासन ने आगे बढ़कर उसका स्वागत किया हो। सच्चाई यह है कि इस काम में आज़माइशें हैं और बड़ी कठोर आज़माइशें हैं। इनसे किसी भी हाल में बचा नहीं जा सकता। इसका साहस वही लोग कर सकते हैं जिनमें समकालीन शासन के ग़ुस्से को सहन करने की हिम्मत हो। डरपोक आदमी इस रास्ते में दो क़दम भी नहीं चल सकता।

2. दूसरा बहाना यह किया जाता है कि हमारे अन्दर बड़ी कमियाँ हैं। इन कमियों के होते हुए हम किसी ऐसे संगठन में शामिल होने के योग्य नहीं हैं, जो इस्लाम की दावत का नेक काम कर रहा हो। जब तक हम अपनी इन कमियों को दूर न कर लें, उसका साथ नहीं दे सकते।

इस बहाने को अगर बेकार बहाना कहा जाए, तो शायद ग़लत न होगा। कमियों का मौजूद होना किसी दावती संगठन में शामिल न

होने का कारण मुहैया नहीं करता है, बल्कि यह ज़िम्मेदारी का भार डालता है कि उन्हें जल्द से जल्द दूर किया जाए। अगर किसी आदमी के कपड़े पाक-साफ़ नहीं हैं, तो उसके लिए सही रवैया यह न होगा कि वह नमाज़ ही छोड़ बैठे, बल्कि सही बात यह होगी कि अपने कपड़े पाक-साफ़ करे और नमाज़ पढ़े। ठीक इसी तरह जिस आदमी की कमियाँ इस तरह की हैं कि वह किसी इस्लामी संगठन में शामिल नहीं हो सकता, तो उसको हर काम छोड़कर तुरन्त अपने सुधार की तरफ़ ध्यान देना चाहिए और अपने-आपको इस्लाम की संगठित सेवा के लिए तैयार करना चाहिए। इन कमियों की मौजूदगी में निश्चिन्तता और चैन के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना उसके लिए सही नहीं है।

कमियों के दूर करने का जब ज़िक्र आता है, तो कुछ लोग कहते हैं कि हमें अपनी कमज़ोरियों का एहसास है और हम उनके सुधार से ग़ाफ़िल नहीं हैं। लेकिन देखा यह गया है कि ज़माना गुज़रता चला जाता है और उनकी हालत में कोई बदलाव नहीं आता। अपनी कमियों का बहाना उनको ज़िन्दगी भर इस्लाम की राह में अपना हिस्सा अदा करने से रोके रखता है। इसका मतलब यह है कि वास्तव में उन्हें अपनी कमियों का एहसास ही नहीं है और वे इस स्वीकृति को कर्तव्य से बचने के लिए एक ढाल के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं; क्योंकि सही एहसास के पैदा होने के बाद मुमकिन नहीं है कि इनसान स्थायी रूप से अपनी ग़लतियों पर अटल रहे और उनपर क़ाबू न पा सके।

3. तीसरा बहाना यह बयान किया जाता है कि पहले वह संगठन वुजूद में आना चाहिए, जो सही दिशा में इस्लाम की दावत का काम कर रहा हो और जिसके अन्दर परहेज़गारी, ख़ुदा का डर, अच्छा अख़्लाक़, दीन से मुहब्बत, उसके लिए त्याग और क़ुरबानी

जैसे गुण अवश्य ही मौजूद हों और वे अपनी ख़ूबियों के कारण श्रेष्ठ नज़र आने लगे; क्योंकि ख़ुदा के दीन की दावत के लिए ऐसे ही संगठन की ज़रूरत है। चूँकि इस दौर में ऐसा कोई संगठन नहीं पाया जाता, इसलिए हम इस्लाम के लिए संगठित प्रयास करना चाहें भी तो नहीं कर सकते।

हमारे विचार में यह बात ग़लत है कि आज कोई इस्लामी संगठन ही मौजूद नहीं है। यह अल्लाह की मेहरबानी है कि इस समय दुनिया के विभिन्न भागों में बहुत-से संगठन सही दिशा में इस्लाम की सेवा कर रहे हैं। उन संगठनों के बारे में अगर इनसान अकारण भ्रम में ग्रस्त न हो, तो देख सकता है कि उनमें वे गुण भी एक हद तक निश्चय ही मौजूद हैं, जो इस्लाम की दावत के लिए अपेक्षित हैं। इसलिए जो आदमी इस्लाम की दावत का काम करना चाहे उसके लिए काम का सही तरीक़ा यह है कि वह मन की निर्मलता के साथ अपने आसपास के माहौल का जाइज़ा ले और उसमें जो संगठन इस्लाम की दावत का काम अंजाम दे रहा हो, उससे जुड़ जाए। इस तरह के संगठन से अलग रहना उसके लिए उसी समय सही होगा, जबकि उसके अन्दर कोई ऐसी नुमायाँ ख़राबी हो कि उसके बाद वह दीन की दावत के योग्य ही न रहे। लेकिन अगर उसमें छोटी-मोटी कमियाँ पाई जाती हों, तो एक ईमानवाले की शान के मुताबिक़ न तो यह बात है कि उसको कमज़ोर करने या रुसवा करने की कोशिश करे और न यह बात कि उससे दूरी बना ले, बल्कि उसके लिए सही रवैया यह है कि उसके पवित्र उद्देश्य में उसका साथ दे और साथ ही उसकी कमियों के सुधार की कोशिश भी करता रहे।

थोड़ी देर के लिए अगर यह मान भी लिया जाए कि किसी देश में, बल्कि सारी दुनिया में ऐसा कोई संगठन ही नहीं है जिसको विशुद्ध इस्लामी संगठन कहा जा सके तो इसके कारण इस्लाम के लिए

सामूहिक प्रयास की जो ज़िम्मेदारी ख़ुदा की तरफ़ से एक मुसलमान पर आती है वह निरस्त नहीं हो जाएगी, बल्कि नियमतः शेष रहेगी और दोहरी हो जाएगी; क्योंकि उस समय दो काम करने होंगे– एक यह कि पहले सही दिशा में इस्लाम की सेवा करनेवाले संगठन क़ायम करने का अथक प्रयास किया जाए; दूसरे यह कि जब ऐसा संगठन अस्तित्व में आ जाए तो उसके साथ मिलकर दावत का काम अंजाम दिया जाए; क्योंकि जिस तरह इस्लाम की दावत अनिवार्य है, उसी तरह काम को अंजाम देने के लिए जो साधन आवश्यक हैं, उनको अपनाना भी ज़रूरी है।

क़ुरआन और हदीस की हिदायत

अब आइए, यह देखें कि क़ुरआन और हदीस ने इस्लाम की दावत का क्या तरीक़ा बताया है? सबसे पहली बात यह कि क़ुरआन और हदीस दोनों ही ने बिलकुल स्पष्ट शब्दों में मुसलमानों को संगठन और एकता का आदेश दिया है और बिखराव और अलगाव से रोका है। क़ुरआन की हिदायत है--

وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا تَفَرَّقُوا

"सब मिलकर अल्लाह की रस्सी को मज़बूत पकड़ो और अलग-अलग न हो जाओ।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-103)

इस विषय के बारे में बहुत-सी हदीसें हैं। यहाँ केवल एक हदीस पेश की जा रही है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा है–

عَلَيْكُمْ بِالْجَمَاعَةِ وَإِيَّاكُمْ وَالْفُرْقَةَ

"जमाअत को मज़बूती से पकड़े रहो और बिखराव से बचो।"[1]

क़ुरआन और हदीस की इन हिदायतों के साथ आप इस सच्चाई

---

[1] हदीस : जामेअ तिरमिज़ी, अबवाबुलफ़ितन, बाबु मा जा-अ फ़ी लुज़ूमिल जमाअति; मुसनद अहमद, 5/370,371।

को भी सामने रखें कि इस्लाम की दावत एक ऐसा गुण या कर्म है, जो मुसलमानों को कुफ़्र और शिर्क की तरफ़ बुलानेवालों से अलग करता है। जो लोग दुनिया को गुमराही की राह दिखाते हैं, उनमें और मुसलमानों में अन्तर यह है कि वे लोगों को गुमराही से बचाकर इस्लाम की तरफ़ बुलाते हैं। इन दोनों बातों को सामने रखकर अब इस सवाल पर विचार कीजिए कि इस्लाम की दावत का सही तरीक़ा क्या होगा? क्या यह क़ुरआन और हदीस की दृष्टि से हर आदमी का अपना काम है या इसके लिए वे संगठित प्रयास को अनिवार्य ठहराते हैं? इस सवाल का एक ही जवाब दिया जाएगा और वह यह कि इस्लाम की दावत के लिए संगठन अनिवार्य है; क्योंकि मुसलमानों को जिस संगठन और एकता का यह सार्वजनिक और सर्वव्यापक आदेश दिया गया है, उसका सम्बन्ध स्वाभाविक रूप से न केवल यह कि उस काम से भी होना चाहिए, बल्कि सबसे पहले होना चाहिए जो उनके और दूसरों के बीच विभाजन-रेखा खींचता है और जो यह बताता है कि उनकी विशिष्ट पहचान हैसियत क्या है और वे क्यों सबसे अलग अपनी एक विशिष्ट पहचान रखते हैं। अगर उनका संगठन इस महान कार्य के लिए न हो तो और किस उद्देश्य के लिए होगा? फिर यह मुमकिन भी कैसे है कि कुफ़्र और शिर्क के लिए अथक प्रयास करनेवाले तो संगठित हों और इस्लाम की दावत देनेवालों को यह हिदायत दी जाए कि अपनी दावत की माँगों को पूरा करने के लिए वे अपनी शक्ति को इकट्ठा न करें और अपने-अपने व्यक्तिगत प्रयासों पर ही सन्तुष्ट रहें। क़ुरआन तो साफ़-साफ़ कहता है कि जिस तरह हक़ के इनकारी और विधर्मी इस्लाम के विरुद्ध संगठित हैं, उसी तरह मुसलमानों को भी संगठित और एकमत होकर उनका सामना करना चाहिए—

وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَافَّةً كَمَا يُقَاتِلُونَكُمْ كَافَّةً

"मुशरिकों (ख़ुदा के साथ साझी ठहरानेवालों) से सब मिलकर

लड़ो, जिस तरह वे सब मिलकर तुमसे लड़ते हैं।”

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-36)

मतलब यह कि क़ुरआन और हदीस के शब्दों का वाज़ेह मक़सद यह है कि मुसलमानों में एकता और संगठन हो और यह असल में इस्लाम की दावत के लिए हो। इसलिए अगर वे दावत का काम करें और उसके लिए अपनी शक्तियों को इकट्ठा न करें तो यह काम उस तरीक़े पर हरगिज़ न होगा, जिस तरीक़े पर क़ुरआन और हदीस चाहते हैं। इसी तरह उनका संगठन तो हो, लेकिन वह इस्लाम की दावत के बजाय कोई और काम कर रहा हो, तो यह वह संगठन न होगा, जिसकी खुदा और उसके पैग़म्बर (सल्ल॰) ने उनको ताकीद की है। यही बात आपको क़ुरआन की इन दो आयतों में मिलेगी—

كُنْتُمْ خَيْرَ أُمَّةٍ أُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ تَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَتُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ ؕ

“तुम बेहतरीन उम्मत (उत्तम समुदाय) हो, जिसे लोगों (की हिदायत और रहनुमाई) के लिए वुजूद में लाया गया है। तुम भलाई का हुक्म देते हो और बुराई से रोकते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो।”

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-110)

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ أُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا ؕ

“और इसी तरह हमने तुमको एक कल्याणकारी उम्मत बनाया है, ताकि तुम लोगों पर (खुदा के दीन की) गवाही देनेवाले हो और खुदा का पैग़म्बर तुम पर गवाही देनेवाला हो।”

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-143)

इन आयतों से मालूम हुआ कि मुसलमान एक उत्तम समुदाय

हैं, ऐसा समुदाय जिसको पहली आयत (अरबी) में 'ख़ैरे-उम्मत' (भलाई करनेवाली उम्मत) और दूसरी आयत में 'उम्मते-वस्त' (मध्यमार्गी समुदाय) का ख़िताब दिया गया है। उम्मत (समुदाय) का शब्द प्रकट करता है कि मुसलमान एक दीनी बन्धन में बन्धे हुए हैं और उनकी ज़िन्दगी संगठित और सामूहिक ज़िन्दगी है; क्योंकि समुदाय बिखरे हुए और बेजोड़ लोगों का नाम नहीं है, बल्कि यह शब्द ऐसे संगठन के लिए बोला जाता है, जिसको किसी लक्ष्य ने एक केन्द्र पर जमा किया हो। क़ुरआन के शब्दों में दुनिया का यह कल्याणकारी और न्यायप्रिय समुदाय जिस उद्देश्य के लिए अस्तित्व में आया है, वह यह है कि वह लोगों को भलाई का हुक्म दे और बुराई से रोके और उनके बीच ख़ुदा के दीन की गवाही दे। इसी को सरल शब्दों में 'इस्लाम की दावत' कहते हैं। इस्लाम की दावत के लिए एक समुदाय का उठना इस बात का प्रमाण है कि यह काम संगठन चाहता है; क्योंकि किसी भी लक्ष्य के लिए संगठन उसी समय वुजूद में आता है, जबकि वह उसकी पूर्ति के लिए ज़रूरी हो। जो काम निजी तौर पर पूरा हो सकता हो, उसके लिए संगठन वुजूद में नहीं आता।

मुहम्मद (सल्ल०) का आदर्श

अब यह भी देखिए कि मुहम्मद (सल्ल०) ने इस्लाम की दावत का फ़र्ज़ किस तरह अंजाम दिया है और इसके लिए क्या तरीक़ा अपनाया है? क्योंकि इस दावत के लिए वही तरीक़ा सही हो सकता है, जिसे आप (सल्ल०) ने पसन्द किया और अपनाया। इतिहास का अध्ययन करने से आप (सल्ल०) के काम का जो तरीक़ा सामने आता है वह यह है कि आप (सल्ल०) ने एक तरफ़ इस्लाम की दावत दी और दूसरी तरफ़ इस दावत को जिन लोगों ने क़बूल किया उनको जोड़कर एक समुदाय बनाया। यह दावत जैसे-जैसे फैलती गई, इसका दायरा भी विशाल से विशालतर होता गया। शुरुआत में यह समुदाय गिनती के

कुछ लोगों से मिलकर बना था। लेकिन जब पैग़म्बर (सल्ल॰) का देहान्त हुआ, तो उस समय तक लाखों इनसान इस समुदाय का हिस्सा बन चुके थे।

नबी (सल्ल॰) ने एक सुसंगठित उम्मत बना दिया

कुछ लोग जब देखते हैं कि आजकल जिन तरीक़ों से संगठन बनाए जाते हैं, आप (सल्ल॰) की उम्मत का निर्माण उनमें से किसी तरीक़े से नहीं हुआ था और जिस तरह वे संगठित होते हैं उस तरह आप (सल्ल॰) की उम्मत का गठन नहीं हुआ था, तो मान बैठते हैं कि आप (सल्ल॰) की उम्मत एक संगठित उम्मत थी ही नहीं। लेकिन यह विचार संगठन की वास्तविकता से अपरिचित होने का प्रमाण है। इसमें शक नहीं कि मुहम्मद (सल्ल॰) की उम्मत में जैसा कि आजकल की जमाअतों का तरीक़ा है, शामिल होने की कोई फ़ीस नहीं थी। इसका फ़ॉर्म भरना नहीं पड़ता था और इसका कोई विशेष यूनीफ़ॉर्म नहीं था। लेकिन इस तरह की सतही बातों के आधार पर यह हरगिज़ नहीं कहा जा सकता कि आप (सल्ल॰) की उम्मत असंगठित और बिखरी हुई थी; क्योंकि इन बातों का संगठन के मूल और वास्तविक स्वरूप से कोई सम्बन्ध नहीं है। इनके बिना भी एक उच्च श्रेणी का संगठन अस्तित्व में आ सकता है और इनके होते भी संगठन खोखला रह सकता है।

आदमियों को दो चीज़ें संगठित करती हैं। एक है उद्देश्य और उससे सम्बन्ध और दूसरी चीज़ है नेतृत्व और उसका अनुपालन। उद्देश्य के आसपास लोग अपनी जगह से उठ-उठकर जमा होते हैं और उससे जितना लगाव होता है, उतना ही उसको पाने की कामना उनमें होती है और वे इसके लिए लगातार कोशिश करते और क़ुरबानियाँ देते हैं। उद्देश्य और लक्ष्य न हो तो विभिन्न लोगों के बीच कोई ऐसा साझा मूल्य न होगा, जो उनको जोड़ सके और उससे लगाव न हो तो उसकी तरफ़ बढ़ने और उसके प्राप्त करने की भावना लुप्त होगी और

उसके लिए कोई कोशिश नहीं कर सकेंगे। नेतृत्व वह सुनिश्चित मार्ग दिखाता है जिससे उद्देश्य प्राप्त हो सकता है और लोग उसका अनुपालन इसलिए करते हैं, ताकि वास्तव में वह उद्देश्य उनको प्राप्त हो जाए। नेतृत्व के बिना संगठन में या तो जड़ता होगी या निरंकुशता। नेतृत्व से लोगों में हरकत भी पैदा होती है और उनकी कोशिशों को एक विशेष दिशा भी प्राप्त होती है।

लोगों को संगठित करनेवाली ये दोनों चीज़ें मुहम्मद (सल्ल०) की उम्मत में पूरी तरह मौजूद थीं। वह एक महान उद्देश्य के लिए वुजूद में आया था। इसी उद्देश्य को हम 'इस्लाम की दावत' कहते हैं। उस उद्देश्य से उसको गहरी मुहब्बत थी। उसके प्रचार-प्रसार का उसमें बेहद जोश और जज़्बा था। उसको फैलाने और प्रभावी बनाने की बड़ी तड़प थी और उसके लिए त्याग और क़ुरबानी, इन्तिहाई जोश और जज़्बा था। इसी लिए यह एक सच्चाई है और इस्लामी इतिहास को जाननेवाला कोई भी आदमी इस सच्चाई से इनकार नहीं कर सकता कि इस उम्मत ने इस्लाम और उसकी दावत को कामयाब बनाने के लिए अपनी पूरी ताक़त लगा दी; अपनी बेहतरीन पूँजी निछावर कर दी। उसका हर आदमी उसको फैलाने में लगातार लगा रहा और जिस आदमी में उसकी जिस माँग को पूरी करने की सलाहियत थी, उसने उसे तुरन्त पूरी की। इस समुदाय ने इस तरह की मिसालें भी पेश कीं कि जिस दीन को इसने क़बूल किया है, उसको माल की ज़रूरत हुई तो एक आदमी ने अपनी आधी दौलत पेश कर दी और दूसरे ने उठकर अपनी कुल पूँजी उसके हवाले कर दिया। एक मौक़े पर अकेले एक आदमी ने पूरी सेना को साज़ो-सामान से लैस कर दिया। उम्मत के जिन लोगों के पास दौलत थी, वे तो इस तरह अपनी दौलत लुटा रहे थे और जो ग़रीब और निर्धन थे, वे इस ग़म में आँसू बहा रहे थे कि उन्हें इस रास्ते में ख़र्च करने की सलाहियत नहीं है। उस उम्मत को जब आवाज़ दी गई तो वह अपनी हरी-भरी लहलहाती खेतियों, चलते हुए कारोबार,

प्यारी औलाद और चहेती बीवियों से मुँह फेरकर लड़ाई के मैदान की तरफ़ इस तरह दौड़ पड़ी, जैसे उनमें से किसी चीज़ से उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। उम्मत के एक-एक आदमी को इस दावत से इतनी मुहब्बत थी कि जो इससे मुहब्बत करता उसका दोस्त होता और जो इससे दुश्मनी रखता वह उसका दुश्मन ठहरता। सगे-सम्बन्धी भी अगर इस दावत को मिटाने के लिए आगे बढ़ते, तो वह उनके विरुद्ध पंक्तिबद्ध हो जाता और कट्टर दुश्मन भी उसके समर्थन के लिए खड़ा होता तो वह उसको अपना बिछड़ा हुआ यार समझकर सीने से लगा लेता। मतलब यह कि इस उम्मत ने और इसके एक-एक आदमी ने दावत के लिए वह सब कुछ किया जो कोई इनसानी गिरोह कर सकता है। बड़ी-बड़ी क़ुरबानियाँ दीं; रात की नींद छोड़ी; दिन का काम छोड़ा; जान माँगी जान भेंट कर दी; माल चाहा तो माल पेश कर दिया; यही नहीं, बल्कि जिस समय जिस-जिस तरह के सहयोग की उसको ज़रूरत पड़ी उन्होंने वह सहयोग इस तरह दिया जैसे उनकी कोई मुराद पूरी हो गई हो और जैसे वे पहले से ही उसके लिए तैयार हों।

फिर इस पूरे काम में मुहम्मद (सल्ल०) ख़ुद अपने आप इस उम्मत की रहनुमाई कर रहे थे, बल्कि इस उम्मत में वही आदमी शामिल होता था, जो इस सच्चाई को दिल से मान चुका होता कि आप (सल्ल०) ख़ुदा के पैग़म्बर हैं और आप (सल्ल०) के हर आदेश का पालन अनिवार्य है। इस तरह एक ऐसी उम्मत बन रही थी जिसमें लोग आप (सल्ल०) की रहनुमाई में सच्चे दिल से जमा हो रहे थे और आप (सल्ल०) की हिदायत के मुताबिक़ अमल कर रहे थे। इस उम्मत के आज्ञापालन का हाल यह था कि मुहम्मद (सल्ल०) की तरफ़ से जिस आदमी को जो हुक्म दिया जाता वह उसके पालन के लिए बेचैन हो जाता। आप (सल्ल०) ने उन्हें हिजरत का हुक्म दिया, तो उनको वतन छोड़ने में कोई दुविधा न हुई। परिवार और क़बीले से सम्बन्ध तोड़ने का हुक्म दिया, तो ख़ुशी-ख़ुशी अलग हो गए। दुखों और मुसीबतों पर सब्र की नसीहत

की तो ज़बान से शिकायत का शब्द भी निकालना भूल गए। जिहाद का हुक्म दिया तो सिर-धड़ की बाज़ी लगाने में गर्व महसूस करने लगे। आज्ञापालन की यह भावना न तो इससे पहले किसी संगठन में देखी गई और न इसके बाद ऐसी कोई मिसाल देखने में आई। इस पहलू से देखिए तो यह कहना ग़लत न होगा कि इस उम्मत में वे सारी ख़ूबियाँ अन्तिम सीमा तक मौजूद थीं, जो किसी आदर्श संगठन के लिए अपेक्षित हैं। इन ख़ूबियों ने पूरी उम्मत को 'एक जिस्म' बना दिया था और उसमें उससे अधिक एकता और अनुशासन पैदा कर दिया था, जितना दुनिया के किसी दूसरे संगठन में हो सकता है। इस उम्मत का हर आदमी वही काम रहा था, जो उम्मत कर रही थी और उम्मत वही काम अंजाम दे रही थी, जो उसका एक-एक आदमी अंजाम दे रहा था। जब पूरी उम्मत ने मुहम्मद (सल्ल॰) के नेतृत्व में रात-दिन इस तरह काम किया तो इस्लाम को वर्चस्व और इसकी दावत को कामयाबी मिली।

दावत की कामयाबी का मतलब केवल यह नहीं है कि वह विरोधी शक्तियों को हराकर शासन-सत्ता हासिल कर ले, बल्कि उसकी कामयाबी के लिए यह ज़रूरी है कि सत्ता पाने के बाद अपने नक़्शे के मुताबिक़ ज़िन्दगी के कारोबार को चलाकर दिखाए। यह काम उसी समय मुमकिन है जबकि उसके पास ऐसे लोग हों, जो शासन-सत्ता के नशे में अपनी विचारधारा को भूल न जाएँ; ख़ुशी और ग़म, राहत और तंगी किसी भी हाल में ऐसे जीवन-दर्शन से न फिर जाएँ; जो यह मानने के लिए कभी तैयार न हों कि विचार और कर्म की कोई सांसारिक व्यवस्था उनके विचार और कर्म की व्यवस्था से बेहतर है और उसे अपनाया जा सकता है। जिनको यह पूरा विश्वास हो कि वे हक़ पर हैं और उस हक़ को जीवन के हर क्षेत्र में लागू करना उनका परम कर्तव्य है। अगर इस तरह के लोग किसी संगठन के पास न हों, तो वह राजनीतिक क्रान्ति बरपा करने में कामयाब होने के बावुजूद वैचारिक और सांस्कृतिक क्रान्ति लाने में नाकाम रहेगा और जिन विचारधाराओं

को स्थापित करने और प्रभावी बनाने के लिए वह दुनिया से लड़ रहा था, अपने ही हाथों से उनको मिटाने लगेगा।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के नेतृत्व में जो संगठन वुजूद में आया, उसका कमाल यह है कि उसमें केवल राजनीतिक क्रान्ति लाने की ही क्षमता नहीं थी; बल्कि वह एक वैचारिक और सांस्कृतिक क्रान्ति लाने में भी कामयाब रहा; क्योंकि इस क्रान्ति के लिए जितने ऊँचे दरजे के लोग अपेक्षित थे, वे सब इस संगठन से उपलब्ध होने लगे और ज़िन्दगी के किसी क्षेत्र में यह महसूस नहीं हुआ कि वह अपनी विचारधारा को लागू करने में नाकाम है। जब आप (सल्ल॰) की दावत प्रभावी हुई तो मालूम होता था कि उसको चलाने के लिए पूरी तरह प्रशिक्षित शिक्षक हैं; क़ाज़ी और जज भी हैं; वक्ता और कवि भी हैं; गवर्नर और वायसराय भी हैं; फ़ौज के कमांडर और सिपहसालार भी हैं; राजदूत और प्रवक्ता भी हैं; राजनीतिज्ञ और शासक भी हैं। अर्थात् एक पूरी जमाअत है, जो दावत की हर ज़रूरत पूरी सकती है। विचार कीजिए, क्या यह सब कुछ बिना संगठन के हुआ? अगर इसमें भी संगठन नहीं था, तो कहना चाहिए कि आज तक इस दुनिया में कोई संगठन ही वूजूद में नहीं आया।

मुस्लिम उम्मत के संगठन का भंग होना

यह है वह कार्य-प्रणाली जो मुहम्मद (सल्ल॰) ने इस्लाम की दावत के लिए अपनायी। जब आप *(सल्ल॰)* इस दुनिया से चल बसे, तो आप *(सल्ल॰)* की उम्मत हर पहलू से संगठित और एकजुट थी। आप *(सल्ल॰)* के बाद भी उम्मत का यह संगठन बाक़ी रहा और इसके द्वारा इस्लाम की ज़बरदस्त ख़िदमत अंजाम पाई। इसने दूर-दूर के देशों में इस्लाम का प्रचार-प्रसार किया। इसे फैलाया; इसके लिए जिहाद किया; यहाँ तक कि विकसित और सभ्य दुनिया के एक बड़े हिस्से में इस्लामी शासन क़ायम कर दिया। लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता गया, उम्मत का संगठन

कमज़ोर होता चला गया। आख़िरकार एक समय आया जबकि उम्मत तो मौजूद थी, लेकिन उसकी जमाअत और एकता ख़त्म हो चुकी थी। हालाँकि अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल.)* ने बार-बार सचेत किया था कि लोग संगठन से जुड़े रहें; क्योंकि संगठन से अलगाव इनसान को इस्लाम से दूर कर देता है। इसी लिए नबी *(सल्ल.)* ने कहा है–

إِنَّهُ مَنْ خَرَجَ مِنَ الْجَمَاعَةِ قِيدَ شِبْرٍ فَقَدْ خَلَعَ رِبْقَةَ الْإِسْلَامِ مِنْ عُنُقِهِ

"जो आदमी संगठन से बालिश्त भर भी बाहर निकल आया, इसमें कोई शक नहीं कि उसने अपने आपको इस्लाम के दायरे से बाहर कर लिया।"[1]

प्यारे नबी (सल्ल.) की हिदायत तो यह थी कि मुसलमानों के छोटे से छोटे संगठन को यहाँ तक कि जंगल में रहनेवाले तीन आदमियों को भी संगठित होना चाहिए। लेकिन मुसलमान करोड़ों की संख्या में होते हुए भी इस तरह बिखर गए, जैसे कोई चीज़ उनको जोड़नेवाली नहीं है। आप (सल्ल.) कितने स्पष्ट शब्दों में कहते हैं–

لَا يَحِلُّ لِثَلَاثَةِ نَفَرٍ يَكُونُونَ بِأَرْضِ فَلَاةٍ إِلَّا أَمَّرُوا عَلَيْهِمْ أَحَدَهُمْ

"ऐसे तीन आदमियों के लिए भी जो बियाबान में हों (बिना किसी संगठन के रहना उचित नहीं है, उनके लिए) ज़रूरी है कि वे अपने में से किसी एक को अपना अमीर बनाएँ और उसके मातहत रहें।"[2]

नबी (सल्ल.) ने कहा–

अगर मुसलमानों में एकता है और वे एक संगठन बन गए हैं, तो कोई बड़े से बड़ा आदमी भी उनके संगठन और

---

[1] हदीस : जामेअ तिरमिज़ी, अबवाबुल-अदब, बाबु मा जा-अ फ़ी मिस्लिस्-सलाति वस्-सियामि वस्सदक़ह; मुसनद अहमद, 1/275, 297।

[2] हदीस : मुसनद अहमद, 2/177।

उनकी एकता में रुकावट डालने की कोशिश करे, तो उसका सिर धड़ से अलग कर दिया जाए—

مَنْ أَرَادَ أَنْ يُفَرِّقَ أَمْرَ هَذِهِ الْأُمَّةِ وَهِيَ جَمِيعٌ، فَاضْرِبُوهُ بِالسَّيْفِ كَائِنًا مَنْ كَانَ

"यह उम्मत जब संगठित हो तो जो आदमी उसमें फूट डालना चाहे तो उसको तलवार से उड़ा दो, चाहे वह कोई भी हो।"[1]

अफ़सोस है, इन हिदायतों पर अमल नहीं हुआ वरना मुसलमानों की एकता न टूटती और वे उन हानियों से सुरक्षित रहते, जो इस एकता के टूटने के कारण उनको उठानी पड़ी। क्या आपने सोचा कि मुसलमानों के संगठन में फूट डालनेवाला कारक इतना अधिक असहनीय क्यों है कि उसका ख़ून करना तक हलाल हो जाए? इसका कारण केवल यह है कि इस्लाम दुनिया की व्यवस्था जिस ढंग से चलाना चाहता है, वह उसी समय मुमकिन है, जबकि इस्लाम के माननेवाले एकजुट और अनुशासित हों। उनके अन्दर संगठन न हो, तो इस व्यवस्था के चलने की भी कोई सम्भावना नहीं। इसलिए जो आदमी मुसलमानों की एकता और संगठन को ख़त्म कर रहा है, वह वास्तव में इस्लाम द्वारा क़ायम की हुई व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर रहा है। इसी लिए आप देखेंगे कि मुसलमानों की एकता ख़त्म होते ही इस्लाम, जिसे धरती के एक बहुत बड़े भाग पर वर्चस्व प्राप्त था, पराधीन होकर रह गया। इसके साथ दूसरी हानि यह हुई कि मुसलमानों ने एक भलाई चाहने और करनेवाली उम्मत की हैसियत से इस्लाम की दावत का काम छोड़ दिया। इसमें शक नहीं कि इसके बाद भी दावत का काम अंजाम पाता रहा। लेकिन इसको अंजाम देनेवाले अधिकतर अलग-अलग लोग थे या मुसलमानों के कुछ छोटे-छोटे गिरोह। उन सबकी सेवाओं को मान लेने के बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि मुस्लिम

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-इमारा, बाबु हुक्मि मन फ़र-र-क़ अमरल-मुस्लिमीन।

उम्मत अगर पूरी की पूरी इस काम में लगी रहती तो इसके नतीजे उन नतीजों से निश्चय ही कई गुना बेहतर होते, जो अलग-अलग लोगों और कुछ छोटे-छोटे गिरोहों की कोशिश से सामने आए।

करने का काम

मुस्लिम उम्मत की एकता और उसका संगठन जब टूट गया तो उसके लिए सही उपाय यही था कि वह जल्द से जल्द अपनी पहली दशा की तरफ़ लौटती और नए सिरे से इस्लाम की दावत में लग जाती। लेकिन यह एक अफ़सोसनाक सच्चाई है कि ऐसा नहीं हुआ। इस सिलसिले में कुछ कोशिशें हुईं भी तो वे पूरी तरह सफल नहीं हो सकीं। इसके कारण जो कुछ भी रहे हों, लेकिन उम्मत की यह स्थिति बहरहाल वह स्थिति नहीं थी जिसमें मुहम्मद (सल्ल॰) ने उसे छोड़ा था और जिसपर उसे क़ायम रहने की ताकीद की थी। अब जिन लोगों को इस स्थिति का एहसास है उनके करने का असल काम यह है कि पहले वे ख़ुद चारों तरफ़ से खिंच कर संगठित हों, जिसके लिए उनके पूर्वज मुहम्मद (सल्ल॰) के नेतृत्व में संगठित हुए थे। फिर उम्मत के अन्य लोगों और गिरोहों को इसी उद्देश्य के लिए जमा करने की कोशिश करें। अगर यह उम्मत सही अर्थ में संगठित हो जाए और इसकी यह एकता इस्लाम के लिए हो तो कुछ असम्भव नहीं कि दुनिया में फिर वही क्रान्ति आए, जिसका नमूना वह चौदह सौ साल पहले एक बार देख चुकी है—

وَمَا ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ بِعَزِيْزٍ

"और ऐसा करना अल्लाह के लिए कोई बड़ी बात नहीं है।"

✧✧✧

जमाअत कैसे मज़बूत होती है?

जमाअत को शक्ति अन्दर से मिलती है। अगर वह आन्तरिक रूप से मज़बूत है, तो उसे ख़त्म करना आसान नहीं है। लेकिन जो संगठन अन्दर से खोलला हो वह बिना किसी बाधा के भी ख़त्म हो सकता है। संगठन की सच्ची पूँजी उससे जुड़े लोग हैं। जो आदमी संगठन से बाहर है, वह उसका हितैषी तो सकता है, लेकिन उसकी शक्ति का मूल आधार और उचित साधन न होगा। इसलिए संगठन को बाक़ी रखना, उसे मज़बूत बनाना और उसे तरक़्क़ी देना संगठन से बाहर के लोगों का काम नहीं है, बल्कि उन लोगों का परम कर्तव्य है जो उसमें शामिल हैं। इसके साथ यह भी एक सच्चाई है कि हर वह आदमी जो किसी संगठन से सम्बन्ध रखता हो, उसकी मज़बूती और स्थायित्व का माध्यम नहीं बन जाता, बल्कि उन्हीं लोगों से संगठन को शक्ति प्राप्त होती है जिनमें कुछ ख़ूबियाँ हों। यहाँ उन्हीं ख़ूबियों को बयान करने की कोशिश की गई है।

स्पष्ट रूप से इसके सम्बोधित वे लोग हैं जो ख़ुदा के दीन का ठीक-ठीक अनुपालन और उसके चहुँमुखी विकास और प्रचार-प्रसार के लिए अपने आपको सुसंगठित कर चुके हैं।

सामूहिकता का एहसास

पिछले पन्नों में यह बात प्रामाणिक रूप से और विस्तार से बयान हो चुकी है कि ख़ुदा और उसके पैग़म्बर (सल्ल०) ने मुसलमानों के लिए व्यक्तिगत जीवन नहीं, बल्कि सामूहिक जीवन पसन्द किया है। इनको विभिन्न संगठनों में नहीं बाँटा गया है, बल्कि एक संगठन बनाया है।

लेकिन यह एक सच्चाई है कि मुसलमान एक लम्बे समय से इस हिदायत को भुला चुके हैं। वे एक उम्मत थे, लेकिन गिरोहों में बट गए। उनको एक सुसंगठित मिल्लत होना चाहिए था, लेकिन वे विभाजित और बिखरे हुए हैं। इसका कारण केवल एक है। वह यह कि उनको जोड़ने और संगठित करनेवाली चीज़ ख़ुदा की किताब थी। इस किताब को उन्होंने अपनी अमली ज़िन्दगी से निकाल दिया। इसके साथ उन्होंने इस तरह व्यवहार किया जैसे यह उनके लिए नहीं है। ख़ुदा का हुक्म था कि ये अपने मतभेदों में इस किताब को जज बनाएँ, लेकिन उन्होंने अपने मतभेदों के समाधान के लिए वे सब तरीक़े अपनाए, जो दुनियावाले अपनाते हैं और इस किताब की तरफ़ बिलकुल ध्यान नहीं दिया। उनको आदेश था कि वे अपनी पूरी ज़िन्दगी ख़ुदा की किताब के मुताबिक़ ढालें, लेकिन उन्होंने ज़िन्दगी को बनाने के लिए ख़ुदा के दुश्मनों के बताए हुए तरीक़ों को अपनाया और उसकी किताब के आदेशों और उपदेशों को त्याग दिया। उनको हिदायत थी कि इबादत, नैतिकता, सामाजिक रहन-सहन, शासन-प्रशासन अर्थात् हर काम में ख़ुदा की किताब को मार्गदर्शक बनाएँ, लेकिन उन्होंने इन सारे मामलों में अपनें मन की, परिवार और क़बीले की, रस्म-रिवाज की, सत्ता और शासन का अनुपालन किया और ख़ुदा की किताब को नज़रअन्दाज़ कर दिया। इन परिस्थितियों में आप ख़ुदा की किताब के आधार पर जमा हुए हैं और मिल-जुलकर उसकी रस्सी को मज़बूत पकड़ने का संकल्प और इरादा किया है। यह बहुत बड़ा सौभाग्य है जो आपको उम्मत के मतभेद और बिखराव के इस दौर में प्राप्त हुआ है। इसका दिल से मान-सम्मान करना और इसको मज़बूत बनाना आपका परम कर्तव्य है।

आपकी जमाअत की एकता का एक दूसरा पहलू भी है। वह यह कि आप ख़ुदा की किताब के द्वारा केवल अपनी ही ज़िन्दगी सँवारना नहीं चाहते, बल्कि दुनिया को इस मार्गदर्शक किताब की तरफ़ बुलाना भी चाहते हैं। आप जानते ही हैं कि मुसलमान हालाँकि ख़ुदा के दीन से

बहुत दूर हैं, लेकिन इसके बावजूद आज भी उनमें ख़ुदा की इबादत और फ़रमाँबरदारी का जज़्बा रखने और उसके दीन की ख़िदमत करनेवाले मौजूद हैं। उनमें जिस चीज़ की कमी है वह यह है कि उनमें एकता नहीं है। वे एकमत, संगठित और अनुशासित होकर यह ख़िदमत अंजाम नहीं दे रहे हैं। इसी कारण इसके वे नतीजे नहीं निकल रहे हैं, जो सचमुच निकल सकते थे। आज बुराई इस क़द्र संगठित और शक्तिशाली है कि कोई बड़ी से बड़ी हस्ती भी अकेले उसे ख़त्म नहीं कर सकती। इसके लिए ज़रूरी है कि भलाई भी संगठित हो। यही काम आपकी नज़र के सामने है।

जब ख़ुदा के दीन की ख़िदमत करनेवाले बिखरे हुए हैं, आपने दीन की सेवा के लिए सामूहिक रूप से फ़ैसला किया है और जब आपके चारों तरफ़ बुराई संगठित है तो आप भलाई के लिए संगठित हुए हैं। आपका यह क़दम ख़ुदा और उसके पैग़म्बर (सल्ल॰) की मर्ज़ी को पूरा करने के लिए है। इसपर ख़ुदा का शुक्र अदा कीजिए और मज़बूती से जमे रहने की दुआ कीजिए।

आप एक ऐसे संगठन से सम्बन्ध रखते हैं जो दीन की सेवा के लिए अस्तित्व में आया है; जो दुनिया से बुराई को मिटाना और भलाई को फैलाना चाहता है। इसको किसी भी पहलू से नुक़सान पहुँचाना दीन को नुक़सान पहुँचाना है। इसलिए कोई भी काम करने से पहले आपको यह देखना होगा कि वे इस संगठन के लिए हानिकारक तो नहीं हैं। अगर आप अपने कामों में उसके लाभ-हानि को भूल जाएँ तो इसका मतलब यह है कि आपके अन्दर उसकी अहमियत का एहसास नहीं है।

कोई भी संगठन या जमाअत उसी समय मज़बूत होती है जब कि लोगों को उसकी मज़बूती की चिन्ता हो। यह सोच सामूहिकता के एहसास से पैदा होती है। सामूकिता का एहसास जितना अधिक होगा, संगठन से लगाव भी उतना ही मज़बूत होगा। अगर यह एहसास

कम हो जाए, तो उससे सम्बन्ध भी कमज़ोर हो जाएगा। सामूहिकता का एहसास ज़िन्दा और ताक़तवर है, तो आदमी न केवल यह कि संगठन के लिए बड़े-से-बड़ा नुक़सान सह लेता है, बल्कि वह हर उस कोशिश को पूरी शक्ति से असफल बना देता है, जो उसकी एकता को छिन्न-भिन्न करनेवाली है। लेकिन अगर सामूहिकता के एहसास की कमी है तो मामूली बात पर भी आदमी संगठन से अलग हो जाना चाहता है। इससे आगे अगर सामूहिकता का एहसास ही ख़त्म हो जाए, तो इनसान संगठन की पाबन्दियों से घबराकर उससे अलग हो जाने के लिए बहाने तलाश करने लगता है।

यह भी देखने में आता है कि कुछ लोग संगठन के अन्दर जब कोई बात अपने मन के ख़िलाफ़ देखते हैं या उसका कोई फ़ैसला उनकी राय और इच्छा के विपरीत होता है तो वे उससे सम्बन्ध तोड़ लेते हैं; मानो संगठन के साथ उनका लगाव इस शर्त के साथ है कि उसके फ़ैसले उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ हों। वे अपने आपको तो उसकी राय के सामने झुका नहीं सकते, बल्कि उसको उनकी राय और फ़ैसले के मुताबिक़ झुक जाना चाहिए। अगर किसी संगठन या जमाअत का हर आदमी इस चीज़ की माँग करने लगे, तो संगठन न कोई फ़ैसला कर सकता है और न किसी मामले में कोई क़दम उठाना उसके लिए सम्भव है।

कुछ लोगों के लिए संगठन या जमाअत से अलग होने के लिए इतनी बात काफ़ी होती है कि उनको फ़लाँ आदमी से शिकायत है। अगर उनकी इस शिकायत को शत-प्रतिशत सही भी मान लिया जाए तो इसका मतलब यह है कि वे संगठन या जमाअत के लिए किसी के ग़लत रवैए या किसी की कड़वी बात को भी सहन नहीं कर सकते। ऐसे लोग बिलकुल ही इस योग्य नहीं हैं कि किसी संगठन में शामिल हों। वे संगठन या जमाअत के लिए बोझ हैं। उनका संगठन से अलग हो जाना खुद संगठन के लिए ही फ़ायदेमन्द है।

यह भी देखा गया है कि कुछ लोग अपने व्यक्तिगत दोषों को संग़ठन से जोड़कर उससे अलग होने का एलान कर देते हैं। मिसाल के तौर पर उनके अन्दर संगठन के उद्देश्य से भटकाव है तो इसे वह अपनी ग़लती समझने के बजाय संगठन को अपने उद्देश्य से हटा हुआ ठहरा देंगे। अगर उनमें बेअमली या कमी है तो उस बेअमली को दूर करने के बजाय संगठन ही को बेअमल साबित करेंगे। अगर उनमें परहेज़गारी, नेकी, ईमानदारी और अमानतदारी की कमी है तो बजाय अपने सुधार के पूरे संगठन ही को ख़ुदा के डर से रहित और ईमानदारी और अमानतदारी से ख़ाली साबित करेंगे। इसका मतलब यह है कि उन्हें अपने सुधार से अधिक संगठन को बदनाम करने की चिन्ता है। हालाँकि अगर वे अपना सुधार कर सकें तो यह उनके अपने आप के लिए भी बेहतर है और उस संगठन के लिए भी जिससे वे जुड़े हैं।

ये सारी ख़राबियाँ नतीजा हैं इस बात का कि आदमी में सामूहिकता का एहसास नहीं है और अगर है तो बहुत कमज़ोर है। अगर सामूहिकता का गहरा एहसास हो और दीन की सेवा के लिए सामूहिकता को ज़रूरी समझे तो इस नेमत की क़द्र करेगा कि उसे जमाअत मिल रही है। वह कभी भी उससे भागने की कोशिश नहीं करेगा, बल्कि उसकी कोशिश यह होगी वह हर हाल में उससे जुड़ा रहे। अगर उसमें कोई ऐसा दोष या कमी है, जिसके कारण वह इस जमाअत या संगठन के लिए उपयुक्त नहीं है तो अपनी कमी को दूर करेगा; ताकि उसमें खप सके और कभी कोई ऐसा क़दम नहीं उठाएगा, जिससे एक ऐसे संगठन को नुक़सान पहुँचे जो किसी दुनियावी फ़ायदे के लिए नहीं, बल्कि ख़ुदा के दीन की सेवा के लिए उठा है।

आज्ञापालन

हर संगठन इस बात की माँग करता है कि उसका कोई मार्गदर्शक हो। बिना किसी मार्गदर्शक या रहनुमा के संगठन की कल्पना नहीं की जा सकती; क्योंकि कोई भी संगठन उसी समय अस्तित्व में आता है,

जबकि कुछ लोग किसी को अपना मार्गदर्शक और रहनुमा मानें और उसके आज्ञापालन के लिए तैयार हो जाएँ। संगठन की स्वाभाविक माँग यह है कि रहनुमा जो आदेश दे, संगठन के लोग उसका पालन करें। अगर संगठन का कोई आदमी अपने रहनुमा का आदेश न माने, तो संगठन उसे सहन नहीं कर सकता; क्योंकि उसे सहन करने का मतलब यह है कि संगठन ख़त्म हो गया और उसमें कोई हुक्म देनेवाला और कोई हुक्म माननेवाला नहीं रहा।

हर संगठन के कुछ सिद्धान्त और विचारधाराएँ होती हैं, जिनके लिए वह वुजूद में आता है और काम करता है। संगठन के रहनुमा का कर्तव्य है कि वह ख़ुद भी उन सिद्धान्तों के अनुसार काम करे और दूसरों को भी उनके अनुसार लेकर चले। जब तक वह यह काम कर रहा है, संगठन के हर आदमी को उसके हर हुक्म को मानना चाहिए, चाहे उसे पसन्द हो या नापसन्द; चाहे वह उसके रुझान के अनुकूल हो या प्रतिकूल, बल्कि कभी-कभार उनके सामने बहुत-सी चीज़ें ऐसी भी आएँगी, जिनको वे अपने लिए ही नहीं, बल्कि संगठन के लिए भी नुक़सानदेह समझेगा। अगर ये चीज़ें उन सिद्धान्तों के अन्तर्गत हैं, जिनपर संगठन की बुनियाद है तो उसे उन चीज़ों को भी सहन करना होगा। अमीर या रहनुमा के आज्ञापालन से हटने का अधिकार केवल उसी समय उसे हासिल है, जबकि उसका कोई हुक्म उन नियमों और विचारधाराओं के बिलकुल विरुद्ध हो, जिनके लिए संगठन अस्तित्व में आया है। हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) का बयान है कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

السَّمْعُ وَالطَّاعَةُ عَلَى الْمَرْءِ الْمُسْلِمِ فِيمَا أَحَبَّ وَكَرِهَ مَا لَمْ يُؤْمَرْ بِمَعْصِيَةٍ
فَإِذَا أُمِرَ بِمَعْصِيَةٍ فَلَا سَمْعَ وَلَا طَاعَةَ

"मुस्लिम मर्द पर अपने शासक और अधिकारी की आज्ञा का पालन करना अनिवार्य है; उस मामले में भी जिसको वह पसन्द

करता है और उस मामले में भी जिसे वह नापसन्द करता है, जब तक कि उसको गुनाह का हुक्म न दिया जाए। अगर गुनाह का हुक्म दिया जाए, तो फिर उसके लिए सुनना और मानना उचित नहीं है।"[1]

इसी अर्थ की हदीस हज़रत उम्मुल-हसीन (रज़ि॰) के ज़रिए बयान हुई है कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा है—

إِنْ أُمِّرَ عَلَيْكُمْ عَبْدٌ مُجَدَّعٌ يَقُودُكُمْ بِكِتَابِ اللهِ تَعَالَى، فَاسْمَعُوا لَهُ وَأَطِيعُوا

"कोई ग़ुलाम जिसके नाक-कान कटे हों, अगर वह भी तुम्हारा अमीर बना दिया जाए तो उसकी बात सुनो और उसका पालन करो, अगर वह ख़ुदा की किताब के अनुसार तुम्हारा मार्गदर्शन कर रहा है।"[2]

हज़रत उबादा-बिन-सामित (रज़ि॰) कहते हैं—

بَايَعْنَا رَسُولَ اللهِ ﷺ عَلَى السَّمْعِ وَالطَّاعَةِ فِي الْعُسْرِ وَالْيُسْرِ، وَالْمَنْشَطِ وَالْمَكْرَهِ، وَعَلَى أَثَرَةٍ عَلَيْنَا وَعَلَى أَنْ لَا نُنَازِعَ الْأَمْرَ أَهْلَهُ، وَعَلَى أَنْ نَقُولَ بِالْحَقِّ أَيْنَمَا كُنَّا لَا نَخَافُ فِي اللهِ لَوْمَةَ لَائِمٍ وَ فِي رِوَايَةٍ وَعَلَى أَنْ لَا نُنَازِعَ الْأَمْرَ أَهْلَهُ إِلَّا أَنْ تَرَوْا كُفْرًا بَوَاحًا عِنْدَكُمْ مِنَ اللهِ فِيهِ بُرْهَانٌ

"हमने अल्लाह के नबी (सल्ल॰) से बैअत की कि हम अपने अमीर का आदेश मानेंगे और उसका पालन करेंगे; चाहे हम सुख-चैन में हों यह दुख-तकलीफ़ में; चाहे उसके आदेश से प्रसन्न हों या अप्रसन्न और चाहे हमें नज़रअन्दाज़ किया जाए

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुल-जिहाद व किताबुल-अहकाम; मुस्लिम, किताबुल-इमारा, बाबु वुजूबि-ताअतिल-उ-मराइ फ़ी ग़ैरि मासियतिन।

[2] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-हज, बाबु इस्तिहबाबि-रमी ज-म-र-तुल-अक़बह्... आख़िर तक।

और हमारे मुक़ाबले में दूसरों को प्राथमिकता दी जाए। हमने इस बात की भी बैअत की कि हम अपने शासक से शासन छीनने की कोशिश नहीं करेंगे। (इसके साथ यह भी कि) हम सच बात ही कहेंगे, जहाँ भी होंगे और अल्लाह के (दीन के) मामले में किसी निन्दा करनेवाले की निन्दा की परवाह नहीं करेंगे। एक हदीस के शब्द इस प्रकार हैं कि हम शासन करनेवाले से शासन छीनने की कोशिश नहीं करेंगे, सिवाय इसके कि तुम उससे ख़ुदा की खुली नाफ़रमानी देखो, जिसके ख़ुदा की नाफ़रमानी का तुम्हारे पास ख़ुदा की तरफ़ से स्पष्ट प्रमाण हो; तो तुम्हें उससे शासन-सत्ता छीनने का भी अधिकार है।"[1]

इससे मालूम हुआ कि मुसलमान के लिए देखने की बात केवल यह है कि उसके शासक का कोई आदेश ख़ुदा और नबी (सल्ल॰) के आदेश के विरुद्ध है अथवा नहीं? अगर विरुद्ध नहीं है, तो उसका पालन मुस्लिम-समाज पर अनिवार्य है, लेकिन अगर उसका आदेश ख़ुदा और नबी (सल्ल॰) के आदेश के प्रतिकूल है तो वह बिलकुल ही उसका पालन नहीं करेगा, बल्कि उसको उसके पद से हटाने का अधिकार भी उसे प्राप्त है।

इन हदीसों में अस्ल में मुसलमानों के अन्दर वुजूद में आनेवाले किसी ऐसे संगठन के रहनुमा की हैसियत नहीं बयान हुई है, जिसको राजसत्ता प्राप्त नहीं है, बल्कि इनमें उस मुस्लिम शासक का उल्लेख है जो मुसलमानों के धार्मिक और सांसारिक मामलों में उनके नेतृत्व का क़ानूनी तौर पर ज़िम्मेदार हो और बलपूर्वक उनको क़ुरआन और हदीस के अनुसार लेकर चल सकता हो। लेकिन इन हदीसों से बहरहाल उस

---

[1] हदीस : बुख़ारी, किताबुल-फ़ितन, बाबु क़ौलिन्-नबीयि (सल्ल॰) स-त-रौ-ना बअ़दी उमूरन तुनकिरू-नहा;मुस्लिम, किताबुल-इमारा, बाबु वुजूबि-त्ताअ़तिल-उ-मराइ फ़ी ग़ैरि मासियतिन...आख़िर तक।

सम्बन्ध के स्वरूप को समझा जा सकता है, जो इससे निचले दरजे के मुसलमान रहनुमा और उसकी पैरवी करनेवालों के बीच होना चाहिए। मुसलमानों का राजनीतिक शासक ताक़त के द्वारा उनपर अपना आदेश लागू कर सकता है। लेकिन राजसत्ता के बिना जो आदमी उनका मार्गदर्शक और रहनुमा होगा, उसके लिए बलपूर्वक अपना आदेश लागू मुमकिन नहीं है। उसकी शक्ति और सत्ता बिलकुल नैतिक होगी। लेकिन जब कोई आदमी किसी को यह हैसियत दे दे कि वह उसका दीनी रहनुमा है, तो जब तक उसकी रहनुमाई दीन के ख़िलाफ़ न हो, उसके लिए उसकी फ़रमाँबरदारी ज़रूरी है; वरना यह उस वचन का उल्लंघन होगा, जो उसने अपने रहनुमा से किया है। एक मुसलमान के लिए यह बहुत बड़ी परीक्षा है कि वह किसी आदमी को राज़ी-ख़ुशी से अपना शासक समझे और बिना किसी राजनीतिक दबाव के केवल इसलिए उसकी आज्ञा का पालन करता रहे कि अल्लाह ने संगठित जीवन को पसन्द किया है और सामूहिकता के बिना दीन की सही ख़िदमत नहीं हो सकती। यह परीक्षा चूँकि बहुत कठिन है, लेकिन जो लोग दीन की ख़िदमत के लिए एक संगठन या जमाअत बन गए हैं, उनको इस परीक्षा में सफल होना पड़ेगा; वरना कभी वे अपने उद्‌देश्य में सफल नहीं हो सकते।

अच्छा गुमान

शरीअत ने लोगों के धर्म और चरित्र के बारे में ग़लत अनुमान लगाने तथा गुमान करने से मना किया है। इसका कारण यह बताया गया है—

إِنَّ بَعْضَ الظَّنِّ إِثْمٌ

"बेशक कुछ गुमान गुनाह होते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-49 हुजुरात, आयत-12)

जो आदमी अकारण किसी के बारे में सन्देह और अनुमान से काम

ले, वह उसकी तरफ़ ऐसी बातें भी जोड़ सकता है, जिनकी कोई बुनियाद न होगी। ज़ाहिर है कि इसका उसे कोई अधिकार नहीं है। बिना किसी अपराध के किसी को अपराधी समझना एक धार्मिक और नैतिक कमज़ोरी का प्रमाण है, जिससे एक सच्चे मुसलमान को बचना चाहिए। क़ुरआन के शब्दों में ईमानवाले भाई-भाई हैं। भाइयों के बीच जिस प्रकार का सम्बन्ध अपेक्षित है, उसकी बुनियाद अच्छा गुमान है। अगर अच्छा गुमान ख़त्म हो जाए, तो भाई, भाई का दुश्मन बन जाता है और बाप को बच्चे पर भरोसा नहीं रहता। अच्छे गुमान और धारणा से बिगड़े हुए सम्बन्ध सुधर और सँवर जाते हैं और बुरे गुमान से अच्छे से अच्छे सम्बन्ध भी ख़राब होने लगते हैं।

एक मुसलमान को दूसरे मुसलमान पर पूरा भरोसा होना चाहिए। वह उसको अपना हितैषी, राज़दार, हमदर्द और अमानतदार समझे और उसकी तरफ़ से अपनी जान-माल, इज़्ज़त और आबरू के लिए कोई ख़तरा न महसूस करे। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) कहते हैं–

> "मुसलमान मुसलमान का भाई है। वह न तो उसपर ज़ुल्म करता है और न उसको बेसहारा छोड़ता है और न उसका अपमान करता है। एक मुसलमान पर दूसरे मुसलमान की हर चीज़ हराम है। उसका ख़ून भी, उसका माल भी और उसकी इज़्ज़त और आबरू भी।"[1]

अच्छे गुमान से भरोसा पैदा होता है और बदगुमानी उस भरोसे को ख़त्म कर देती है। जब कोई आदमी किसी से बदगुमान हो जाए, तो उसकी हर चीज़ उसे खटकने लगती है। कभी यह बदगुमानी इतनी अधिक बढ़ जाती है कि आदमी जिस व्यक्ति से बदगुमान हो उसके भाषण को, लेखन को, उसकी बातचीत को, उसकी भाग-दौड़ को, बल्कि उसकी हर हरकत को इस नज़रिए से देखने लगता है कि वह उसे नुक़सान पहुँचाने या अपमानित करने का उपाय और प्रयास है। वह

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-बिर्रवस्सिलह्, बाबु तह्रीमु ज़ुल्मिल-मुस्लिम...आख़िर तक।

पहले से अपने मन में यह धारणा बना लेता है कि उसकी हर बात और उसका हर काम अवश्य ही उसके विरुद्ध होगा। फिर वह उसी धारणा के तहत उस आदमी से अपना रवैया तय करता है। जब यह बीमारी किसी संगठन में पैदा हो जाती है, तो उसकी व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करके रख देती है। ऐसा महसूस होने लगता है कि मानो संगठन का हर आदमी एक-दूसरे के ख़िलाफ़ साज़िश कर रहा है और संगठन किसी ऊँचे उद्देश्य के लिए गतिशील नहीं है, बल्कि उसका काम केवल यह है कि अपने साथियों के विरुद्ध षड्यंत्र रचे और उन्हें खुले-आम अपमानित करे। यह चीज़ संगठन के गौरव और उसकी सरगर्मियों के लिए जानलेवा ज़हर है और उन्हें ख़त्म करके रख देता है।

संगठन के अन्दर ऐसा वातावरण होना चाहिए कि हर आदमी दूसरे को अपना सच्चा दोस्त, हितैषी और हमदर्द समझे। यह वातावरण अच्छे गुमान के बिना पैदा नहीं हो सकता। इसके लिए ज़रूरी है कि संगठन का कोई भी आदमी किसी आदमी को ग़लत काम करनेवाला न समझे, बल्कि भला और सच्चा समझे। अगर उसके ख़िलाफ़ उस तक कोई बात पहुँचे तो तुरन्त उसपर विश्वास न कर ले, बल्कि उसकी कोई अच्छी-सी व्याख्या (तावील) कर दे या उसको बयान करनेवाले की ग़लतफ़हमी समझकर नज़रअन्दाज़ कर जाए। किसी आदमी की कमियों के बारे में जानकारियाँ हासिल करना ज़रूरी हो, तो जब तक पूरी जानकारी हासिल न हो उन कमियों का बिलकुल ही ज़िक्र न करे; क्योंकि बिना जाँचे-समझे बात कहना बड़ा गुनाह है। अगर जानकारियाँ हासिल करना उसके लोक-परलोक के लिए लाभदायक न हो, तो चुप्पी साध ले। इसी में उसके दीन-दुनिया दोनों का फ़ायदा है।

संगठन के लोगों के बीच कुछ ख़ास पहलुओं से अच्छे गुमान का पाया जाना ज़रूरी है—

1. जो जमाअत (संगठन) दीन की पैरवी के लिए वुजूद में आई है, उसके आदमियों को एक-दूसरे के मज़हब और नैतिकता, चरित्र और

आचरण के बारे में ज़रूर ही अच्छा गुमान होना चाहिए; क्योंकि इसमें जो लोग भी शामिल होते हैं, वे इस संकल्प और इरादे के साथ शामिल होते हैं कि वे अपनी ज़िन्दगी को दीन के साँचे में ढालेंगे। हमें उनको अपने इस संकल्प और इरादे में सच्चा समझना चाहिए; क्योंकि हमारे पास उनके सच्चा न होने का कोई प्रमाण नहीं है। यहाँ हमें इस सच्चाई को भी नहीं भूलना चाहिए कि संगठन में कमज़ोर इरादे और कमज़ोर स्वभाव के लोग भी होते हैं, जो इच्छा और कोशिश के बावजूद दीन पर पूरी तरह अमल नहीं कर पाते। ऐसे लोग भी होते हैं जिनके अन्दर एक दीनी जमाअत से जुड़े होने के बावजूद दीन के ख़िलाफ़ कुछ ख़याल और रुझान अनजाने तौर पर मौजूद होते हैं। इस कारण जाने-अनजाने उनसे तरह-तरह की कमियों का इज़हार होता रहता है। यह सुधार की कमी का नतीजा है। अगर उनका सुधार हो जाए, तो आशा है कि वे ख़ुद अपनी कमियों पर क़ाबू पा लेंगे। सबसे बड़ी बात जिसे किसी भी समय हमें नज़रअन्दाज़ नहीं करना चाहिए, वह यह है कि भलाई के इरादे के कारण इनसान फ़रिश्ता नहीं बन जाता, बल्कि इनसान ही रहता है। इसलिए वह ग़लतियों से बिलकुल पाक नहीं हो सकता। उससे भूल-चूक निश्चय ही होगी। देखने की चीज़ यह है कि उसके अन्दर दीन पर चलने का जज़्बा है या नहीं। अगर यह जज़्बा है, तो बड़ी से बड़ी ग़लती के बाद भी वह दीन से दूर नहीं होगा, बल्कि दीन ही की तरफ़ पलटेगा और कभी इतनी शक्ति से पलटेगा कि अपनी सारी कमज़ोरियों पर क़ाबू पा लेगा। इसलिए जिस आदमी के अन्दर दीन पर अमल करने का जज़्बा मौजूद है उसकी किसी ग़लती को देखकर आप उसके दीन और ईमान के बारे में बदगुमान न हों, बल्कि उसे इनसानी कमज़ोरी समझकर उसके सुधार की कोशिश करें। यह आपके लिए भी फ़ायदेमन्द है और उसके लिए भी।

2. संगठन के अन्दर मतभेद का पाया जाना स्वाभाविक है। यह मतभेद सत्यनिष्ठता पर आधारित हो, तो संगठन के लिए हानिकारक नहीं है, बल्कि संगठन के वैचारिक विकास के लिए एक हद तक ज़रूरी भी है। संगठन के अन्दर अगर मतभेद ही नहीं है, तो इसका मतलब यह होगा कि संगठन की वैचारिक शक्ति ख़त्म हो गई है। जब भी सोचने-समझनेवाले चार आदमी किसी मसले पर बहस करेंगे तो उनके विचारों में पूरी समानता नहीं हो सकती। वे अगर किसी संगठन से सम्बन्ध रखते हैं, तो सिद्धान्त की हद तक उनके बीच परस्पर सहमति होगी, बल्कि अवश्य सहमति होनी चाहिए। लेकिन व्याख्या में ज़रूरी नहीं है कि सहमति ही हो। यहाँ मतभेद भी हो सकता है। सिद्धान्त में मतभेद होने लगे तो संगठन और जमाअत बाक़ी नहीं रह सकती और व्याख्याओं में भी मतभेद के रास्ते बन्द कर दिए जाएँ, तो स्वतंत्र रूप से सोच-विचार करने की सलाहियत ख़त्म हो जाएगी और संगठन में वैचारिक जड़ता पैदा हो जाएगी। जमाअत या संगठन में ऐसा माहौल होना चाहिए कि जिन मसलों में एक से अधिक मत हों, उनमें एक-दूसरे के मत का सम्मान किया जाए और इसके बारे में किसी बदगुमानी को जगह न दी जाए। आपको यह अधिकार है कि आप अपनी राय को सही और दूसरे की राय को ग़लत कहें, लेकिन यह अधिकार नहीं कि अपनी राय को तो सत्यनिष्ठा पर आधारित समझें और दूसरे की राय को सत्यनिष्ठा से ख़ाली समझें; क्योंकि संगठन के बारे में जिस तरह आप सच्चे और निष्ठावान हैं, उसी तरह वह आदमी भी सच्चा है, जिसकी राय से आपको मतभेद है। उससे संगठन के मामलों में उचित हल खोजने में ग़लती तो हो सकती है, जानते-बूझते भटकाव नहीं होगा। आप उसपर संगठन की विचारधारा से हटने और बग़ावत का आरोप भी लगा सकते हैं, लेकिन इसके लिए मज़बूत दलीलों की ज़रूरत होगी, केवल बदगुमानी काफ़ी नहीं है।

3. आचरण के मैदान में संगठन के सारे लोग एक सतह पर नहीं होते। कुछ धीमी गति से चलनेवाले होते हैं और कुछ तेज़ गति से चलनेवाले; कुछ संगठन के काम में रात-दिन लगे रहते हैं और कुछ इसके लिए कम समय निकाल पाते हैं; संगठन में ऐसे लोग भी होते हैं जो उसके लिए अपना सब कुछ कुरबान कर देते हैं और ऐसे भी होते हैं जिनके अन्दर ख़र्च करने का जज़्बा कम होता है। इसका कारण यह है कि संगठन के सारे लोग उस उद्देश्य को समान रूप से नहीं अपनाते, बल्कि उनमें इस पहलू से कमी-बेशी होती है। इस कमी-बेशी का इज़हार अमल से होता है। जहाँ यह कमज़ोरी हो, आप उसको दूर करने की कोशिश कीजिए। लेकिन इसे संगठन से बेवफ़ाई और लगाव न होने का प्रमाण न ठहराइए। हाँ, कभी-कभी यह कमज़ोरी संगठन से बेवफ़ाई का कारण भी बन सकती है। उस समय निश्चय ही आपको उसपर टिप्पणी करनी चाहिए, ताकि संगठन इसकी क्षति से सुरक्षित रहे। अगर यह स्थिति नहीं हो तो केवल किसी के अमल की कमज़ोरी को उसकी नीयत का बिगाड़ न कहिए और यह न समझिए कि हर ग़लत काम संगठन से ग़द्दारी है। इससे किसी की कमज़ोरी तो दूर नहीं होगी; हाँ, उसके सुधार के दरवाज़े बन्द हो जाएँगे।

नसीहत और ख़ैरख़्वाही

हज़रत तमीमदारी (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने तीन बार कहा—

الدين النصيحة

"दीन नसीहत और ख़ैरख़्वाही है।"

हमने पूछा ख़ैरख़्वाही किसके साथ हो? आप (सल्ल॰) ने कहा—

لله ولكتابه ولرسوله ولائمة المسلمين وعامتهم

"ख़ैरख़ाही हो अल्लाह के साथ, उसकी किताब के साथ, उसके पैग़म्बर के साथ, मुसलमानों के रहनुमा और उनके आम लोगों के साथ।"[1]

यह एक व्यापक हदीस है। इससे आप समझ सकते हैं कि जो संगठन दीन की ख़िदमत और उसके पुनरूद्धार के लिए वुजूद में आया है। उसके लिए नसीहत और ख़ैरख़ाही पर अमल कितना ज़्यादा ज़रूरी है।

ख़ैरख़ाही का अर्थ सीमित नहीं है, बल्कि यह शब्द अपने अन्दर बहुत व्यापक अर्थ रखता है। आप किसी ऐसे सम्बन्ध को अपने सामने रखिए, जो भलाई की भावना पर आधारित हो। इससे आपको उसकी व्यापकता का अन्दाज़ा होगा। आप जानते हैं बाप अपने बच्चे का हितैषी होता है। इस हितैषिता का विश्लेषण कीजिए, तो मालूम होगा कि वह बच्चे की सुख-सुविधा और आराम को अपने सुख-चैन और आराम पर प्राथमिकता देता है। खुद तकलीफ़ उठाता और बच्चे को आराम पहुँचाता है। उसका विकास, उसकी शिक्षा-दीक्षा और उसकी सेहत का ध्यान रखता है और फिर यह कि उन सारे मामलों में वह निस्वार्थ और निर्मल मन होता है। वह उसकी निस्वार्थ सेवा करता है और किसी पहलू से भी उसका बुरा नहीं चाहता है।

ख़ैरख़ाही की यह भावना अगर संगठन के अन्दर उभर आए, तो हर तरफ़ मुहब्बत, हमदर्दी, सहानुभूति, अपनेपन का माहौल छा जाता है और सम्बन्धों की वही मनोदशा पैदा हो जाए, जो बाप और बेटे के बीच होती है। ख़ैरख़ाही का जज़्बा संगठन की पूँजी है। इसके बिना संगठन ज़िन्दा नहीं रह सकता। संगठन के अन्दर विभिन्न पहलुओं से ख़ैरख़ाही का जज़्बा का पाया जाना ज़रूरी है।

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-ईमान, बाबु बयान अन्नदुदीनन्-नसीहा। इस विषय पर और अधिक जानकारी के लिए देखिए लेखक की किताब 'मारूफ़ व मुनकर'।

विचारधारा के प्रति लगाव

प्रत्येक जमाआत और संगठन का एक लक्ष्य होता है। उसके अपने कुछ सिद्धान्त और विचारधाराएँ होती हैं। उन्हीं के कारण दूसरी जमाअतों या संगठनों की तुलना में उसकी विशेष पहचान बनती है। जब तक उसके सामने उसका लक्ष्य होता है और वह अपने सिद्धान्तों और विचारधाराओं के प्रति प्रतिबद्ध है, जीवित रहेगा और आगे बढ़ेगा, वरना ख़त्म हो जाएगा और अगर बचा रहा भी तो उसमें और दूसरे संगठनों में कोई अन्तर नहीं रहेगा। जो संगठन दीन की दावत और उसके वर्चस्व के लिए बना है, उसके साथ ख़ैरख़ाही का तक़ज़ा यह है कि उसके लक्ष्य और विचारधाराओं की रक्षा की जाए और इस बात की पूरी कोशिश की जाए कि संगठन अपनी विचारधारा से हटने न पाए। अगर संगठन अपनी विचारधारा को छोड़ दे और आप इसपर चुप रह जाएँ, तो इसका अर्थ यह है कि आपको जमाअत या संगठन से प्रेम नहीं है। आप न तो उसके वैचारिक अस्तित्व से दिलचस्पी रखते हैं और न उसके वुजूद के न होने से। आपको संगठन के हर क़दम को इस पहलू से देखना होगा कि क्या वह उसकी विचारधारा के अनुकूल है या प्रतिकूल? जहाँ आप संगठन का कोई क़दम उसकी विचारधारा से हटा हुआ देखें, तो आपका कर्तव्य है कि उसे संगठन की विचारधारा के अधीन बनाने की कोशिश करें। जब तक संगठन के लोग उसकी विचारधारा की सुरक्षा के लिए चौकस न हों, तो संगठन का अपनी विचारधाराओं पर बने रहना कठिन है।

जमाअत के कामों के प्रति ख़ैरख़ाही

जमआत के साथ ख़ैरख़ाही का एक पहलू यह भी है कि आप उसके कामों में पूरा सहयोग करें। संगठन की ख़िदमत इस तरह अंजाम

दें, जैसे आप अपना निजी काम अंजाम देते हैं। जमाअत में आपको जिस जगह भी लगाया जाए, पूरे जमाव और मज़बूती के साथ डटे रहें और जो काम आपके हवाले किया जाए उसे लगन, सुकून और इत्मीनान के साथ अंजाम दें। आप जमाअत के अच्छे ख़ैरख़ाह हैं। अगर आपके दिल और दिमाग़ पर केवल एक विचार छा जाए, वह यह कि जमाअत जिस दावत को लेकर उठी है, वह दुनिया में फैले, उन्नति करे और हर तरफ़ छा जाए। अगर आपकी इस मनोदशा में कमी है, तो संगठन के प्रति आपके हित की भावना अधूरी है।

अमीर के साथ ख़ैरख़ाही

ख़ैरख़ाही का एक पहलू यह भी है कि आप अपने अमीर, रहनुमा और शासक के ख़ैरख़ाह हों। उसकी भलाई चाहें, उसकी कामयाबी के इच्छुक हों और उसके लिए दुआ करें। उसे अच्छी सलाह दें और ख़ुशदिली से उसकी पैरवी करें। जिस तरह सही कामों में उसका सहयोग न करना उसके लिए बुरा चाहना है, उसी तरह ग़लत कामों पर उसे न टोकना भी बुरा चाहना है।

मातहतों के साथ ख़ैरख़ाही

जमाअत के अमीर और शासक का भी कर्तव्य है कि वह अपने मातहतों का ख़ैरख़ाह हो। उन्हें दीन पर क़ायम रखे; उनकी सही रहनुमाई करे; उनके साथ बराबरी का बरताव करे; किसी को किसी पर प्राथमिकता न दे; किसी का बुरा न चाहे; किसी के ख़िलाफ़ अपने दिल में वैर न रखे और सबके साथ मुहब्बत से पेश आए। जमाअत के अमीर और मातहतों के बीच जिस तरह का दिली लगाव, प्रेम और ख़ैरख़ाही का जज़्बा होना चाहिए, यह बात हज़रत औफ़-बिन-मालिक अशजई (रज़ि॰) के द्वारा बयान की गई एक हदीस से वाज़ेह होती है। वह कहते हैं कि अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने कहा—

خِيَارُ أَئِمَّتِكُمُ الَّذِينَ تُحِبُّونَهُمْ وَيُحِبُّونَكُمْ، وَيُصَلُّونَ عَلَيْكُمْ وَتُصَلُّونَ عَلَيْهِمْ، وَشِرَارُ أَئِمَّتِكُمُ الَّذِينَ تُبْغِضُونَهُمْ وَيُبْغِضُونَكُمْ، وَتَلْعَنُونَهُمْ وَيَلْعَنُونَكُمْ،

"तुम्हारे बेहतरीन इमाम वे हैं, जिनसे तुम मुहब्बत करते हो और जो तुमसे मुहब्बत करते हैं, जिनको तुम दुआएँ देते हो और जो तुमको दुआएँ देते हैं। तुम्हारे बदतरीन इमाम वे हैं, जिनको तुम नापसन्द करते हो और जो तुमको नापसन्द करते हैं; जिनपर तुम लानत भेजते (श्राप देते) हो और जो तुमपर लानत भेजते हैं।"[1]

आम लोगों के साथ ख़ैरख़ाही

संगठन के आम लोगों के बीच भी ख़ैरख़ाही का जज़्बा होना चाहिए। वे एक-दूसरे को भलाई का हुक्म दें और बुराई से रोकें। सीधे रास्ते पर चलने के लिए उभारें और दीन पर क़दम जमाए रखने की कोशिश करें। दीन के मामलों में ही नहीं, दुनिया के कामों में भी एक-दूसरे के साथी, बेहतरीन सलाहकार और मददगार हों। इस तरह उनके बीच भाइयों-जैसा सम्बन्ध और लगाव पाया जाए और वे दिल से एक-दूसरे का भला चाहनेवाले, सच्चे हितैषी और सहानुभूति रखनेवाले बने रहें। जब आप दीन की ख़िदमत के लिए किसी जमाअत या संगठन से जुड़े हैं तो यह बात आपको नहीं भूलनी चाहिए कि उसका सुधार और प्रशिक्षण उसके ज़िम्मेदारों ही का नहीं, बल्कि आपका भी फ़र्ज़ है। यह आपका भी काम है कि जमाअत के किसी आदमी में जहाँ कोई कमी देखें, उसे दूर करने की कोशिश करें। इसमें शक नहीं कि यह बहुत कठिन काम है, लेकिन यह कठिन काम आसान हो सकता है, अगर आपके अन्दर जमाअत के लोगों के प्रति हित की

---

[1] हदीस : मुस्लिम, किताबुल-इमारह, बाबु ख़ियारिल अइम्मति व शिरारिहिम।

सच्ची भावना मौजूद हो और आप उनके ऐब निकालनेवाले और आलोचक बनकर नहीं, बल्कि उनके हितैषी और शुभचिन्तक बनकर उनके सुधार की कोशिश करें। इस भावना के बिना उसके सुधार की कोई स्थायी कोशिश नहीं कर सकते और किसी वक़्ती जज़्बा के तहत करें भी, तो उसके अच्छे नतीजे नहीं निकल सकते। जब तक कोई आदमी आपको अपना हितैषी न समझे, आपकी बात नहीं सुनेगा और सुनेगा भी तो उससे वह असर न लेगा, जो लेना चाहिए। लेकिन अगर खुदा न करे, वह आपको अपना शुभचिन्तक न समझे, तो आपकी बात का उसपर उल्टा असर पड़ेगा। भलाई की भावना कोई ऐसी चीज़ नहीं है कि आप उसका दावा करें और सम्बोधित व्यक्ति उसपर तुरन्त ईमान ले आए, बल्कि इसके लिए आपको अपना पूरा रवैया बदलना होगा। इसके लिए ज़रूरी है कि आप अपनी बातचीत से, अपने चरित्र और आचरण से शुभचिन्तक होना साबित करें। सुधार का वह अन्दाज़ अपनाएँ, जिससे दिल न दुखे, बल्कि मुहब्बत और हमदर्दी पैदा हो और यह महसूस हो कि आप सममुच सुधार चाहते हैं। किसी में कोई कमी देखें, तो तुरन्त उसका इज़हार न करें, बल्कि अकेले में उसे बताएँ।

इमाम शाफ़ई (रह॰) बयान करते हैं, "जो नसीहत तन्हाई में हो, वह निश्चय ही नसीहत है और जो नसीहत लोगों के बीच में हो, वह फ़ज़ीहत है।"

याद रखिए किसी के ऐब को उजागर करना बहुत बड़ा गुनाह है। जो आदमी किसी को अपमानित करना चाहे, खुदा उसको अपमानित कर देता है और जिसे खुदा अपमानित करे, उसकी इज़्ज़त कोई नहीं बचा सकता।

ᘛ ᘚ